BT-07

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

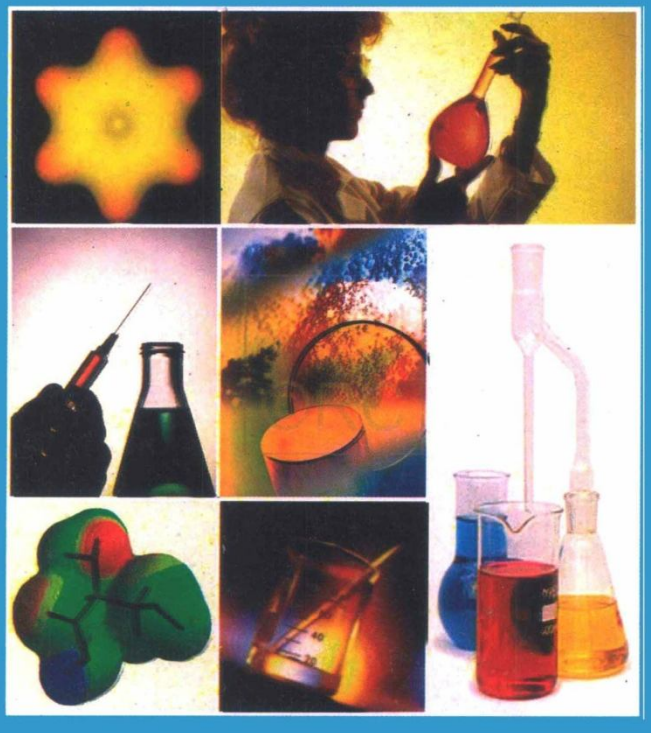

प्रायोगिक जैव प्रौद्योगिकी

BT-07

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

प्रायोगिक जैव प्रौद्योगिकी

पाठ्यक्रम अभिकल्प समिति

अध्यक्ष

प्रो. नरेश दाधीच
कुलपति
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा(राज.)

संयोजक/ समन्वयक एवं सदस्य

विषय समन्वयक
प्रो. एच. सी. जैन (से. नि.)
वनस्पति शास्त्र विभाग
राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर(राज.)

सदस्य सचिव / समन्वयक
डॉ. अशोक शर्मा
एसोसियेट प्रोफेसर
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

सदस्य

1. **प्रो. एस. चाँद**
   स्कूल ऑफ लाइफ साइन्स
   देवी अहिल्या बाई विश्वविद्यालय, इंदौर(म.प्र.)
2. **प्रो. आर. सी. दुबे**
   वनस्पति शास्त्र विभाग
   गुरुकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार(उत्तराखण्ड)
3. **प्रो. के. के. शर्मा**
   विभागाध्यक्ष, प्राणीशास्त्र विभाग
   महर्षि दयानन्द सरस्वती विश्वविद्यालय अजमेर,(राज.)
4. **प्रो. पी. एल. स्वर्णकार**
   वनस्पति शास्त्र विभाग
   राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर(राज.)
5. **प्रो. एस. डी. पुरोहित**
   वनस्पति शास्त्र विभाग
   मोहनलाल सुखड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.)
6. **प्रो. सी. के. ओझा**
   निदेशक अकादमिक
   महात्मा गांधी इंस्टीट्यूट ऑफ एप्लाइड साइंसेज, जयपुर (राज.)
7. **डॉ. विद्या पाटनी**
   वनस्पति शास्त्र विभाग
   राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर(राज.)
8. **डॉ. अरविन्द पारीक**
   वनस्पति शास्त्र विभाग
   महात्मा गांधी इंस्टीट्यूट ऑफ एप्लाइड साइंसेज, जयपुर (राज.)

सम्पादन तथा पाठ-लेखन

सम्पादक

प्रो. वी. एम. राव
वनस्पति शास्त्र विभाग
राज. विश्वविद्यालय, जयपुर (राज.)

लेखक

1. **अभिषेक वशिष्ठ**
   सुक्ष्मजैविकी विभाग,
   महात्मा गांधी इंस्टीट्यूट ऑफ एप्लाइड साइंसेज, जयपुर (राज.)
2. **डॉ. अनिल भटनागर**
   वनस्पति शास्त्र विभाग
   राज. महाविद्यालय, सवाईमाधोपुर (राज.)
3. **डॉ. अरविन्द पारीक**
   वनस्पति शास्त्र विभाग
   महात्मा गांधी इंस्टीट्यूट ऑफ एप्लाइड साइंसेज, जयपुर (राज.)
4. **डॉ.(श्रीमती) ज्योत्सना शर्मा**
   वनस्पति शास्त्र विभाग
   वैदिक कन्या पी.जी. महाविद्यालय, जयपुर (राज.)
5. **डॉ. कैलाश अग्रवाल**
   वनस्पति शास्त्र विभाग
   अग्रवाल पी.जी. महाविद्यालय, जयपुर (राज.)
6. **डॉ. कनिका शर्मा**
   वनस्पति शास्त्र विभाग
   मो. ला. सु. विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.)
7. **डॉ. नेहा शर्मा**
   सुक्ष्मजैविकी विभाग,
   महात्मा गांधी इंस्टीट्यूट ऑफ एप्लाइड साइंसेज, जयपुर (राज.)
8. **डॉ. पवन दाधीच**
   वनस्पति शास्त्र विभाग
   राजकीय महाविद्यालय, अजमेर
9. **डॉ. सीमा भदौरिया**
   वनस्पति शास्त्र विभाग
   महात्मा गांधी इंस्टीट्यूट ऑफ एप्लाइड साइंसेज, जयपुर (राज.)
10. **डॉ. सोनाली पाण्डे**
    वनस्पति शास्त्र विभाग
    महात्मा गांधी इंस्टीट्यूट ऑफ एप्लाइड साइंसेज, जयपुर (राज.)

अकादमिक एवं प्रशासनिक व्यवस्था

प्रो.(डॉ.) नरेश दाधीच	**प्रो. अनाम जेटली**	**डॉ. पी. के. शर्मा**
कुलपति	निदेशक	निदेशक
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय,कोटा (राज.)	संकाय विभाग	पाठ्य सामग्री उत्पादन एवं वितरण विभाग

पाठ्यक्रम उत्पादन

योगेन्द्र गोयल
सहायक उत्पादन अधिकारी
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा(राज.)

उत्पादन नवम्बर 2008

इस सामग्री के किसी भी अंश को व.म.खु.वि. कोटा की लिखित अनुमति के बिना किसी भी रूप में अथवा मिमियोग्राफी(चक्रमुद्रण) द्वारा या अन्यत्र पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।
व.म.खु.वि. कोटा के लिये कुलसचिव व.म.खु.वि. कोटा (राज.) द्वारा मुद्रित एवं प्रकाशित

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

प्रायोगिक जैव प्रौद्योगिकी

इकाई संख्या एवं नाम	पृष्ठ संख्या
इकाई 1 सूक्ष्मजैविक जैवप्रौद्योगिकी : एक परिचय	7–25
इकाई 2 सूक्ष्मजीवों का संवर्धन	26–56
इकाई 3 पुनर्संयुक्त डी.एन.ए. तकनीक	57–68
इकाई 4 बहुलकीकृत श्रृंखला अभिक्रिया	69–76
इकाई 5 खाद्य सूक्ष्मजैविकी-I	77–91
इकाई 6 खाद्य सूक्ष्मजैविकी-II	92–106
इकाई 7 अपशिष्ट जैव अपघटन	107–124
इकाई 8 चिकित्सकीय कारकों का सूक्ष्मजैविक उत्पादन	125–153
इकाई 9 टीकाकरण	154–174
इकाई 10 महत्वपूर्ण उपापचयी पदार्थों का उत्पादन	175–227
इकाई 11 औद्योगिक उत्पाद-I	228–257
इकाई 12 औद्योगिक उत्पाद-II	258–267
इकाई 13 औद्योगिक उत्पाद-III	268–279
इकाई 14 जैविक नाइट्रोजन स्थिरीकरण	280–308
इकाई 15 पुनर्संयुक्त सूक्ष्मजैविक जैवभार के अनुप्रयोग	309–316

प्रस्तावना

यह पुस्तक वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा के बी. एससी. द्वितीय वर्ष, जैवप्रौद्यौगिकी द्वितीय प्रश्न पत्र के पाठ्यक्रमानुसार लिखी गई है।

वर्तमान समय में जैव प्रौद्यौगिकी के बढ़ते उपयोग के साथ-साथ सूक्ष्मजैविक जैवप्रौद्यौगिकी के अन्तर्गत हुये अनुसंधानो ने मानव जीवन को बेहतर बनाने में महती भूमिका अदा की है । प्रस्तुत पुस्तक सूक्ष्मजैव जैवप्रोद्यौगिकी के विभिन्न आयामों को विद्यार्थियों के समक्ष समेकित रूप में रखने का प्रयास है।

पुस्तक की भाषा यथासंभव सरल और सारगर्भित रखी गई है। तकनीकी हिंदी शब्द, भारत सरकार द्वारा प्रकाशित पारिभाषिक वैज्ञानिक शब्दावली से लिए गए हैं। यथास्थान कोष्ठक में अंग्रेजी शब्द भी दिए गए है जो विद्यार्थी के लिए उपयोगी सिद्ध होंगे ।

पुस्तक को यथासंभव त्रुटिरहित रखने का प्रयास किया गया है। फिर मानव स्वभाव जनित त्रुटियां रहना संभव है। विद्धजनों से इस हेतु सुझाव आमंत्रित है।

इकाई 1

सूक्ष्मजैविक जैवप्रौद्योगिकी : एक परिचय

(Microbial Biotechnology : An Introduction)

इकाई की रूपरेखा

1.0 उद्देश्य

1.1 प्रस्तावना

1.2 परिचय

1.3 सूक्ष्मजैविक जैवप्रौद्योगिकी का इतिहास तथा संभावनाएं

1.4 किण्वन में प्रयुक्त होने वाले सूक्ष्मजीवों के प्रमुख प्रकार

- 1.4.1 किण्वन प्रक्रिया में प्रयुक्त सूक्ष्मजीवों के गुण
- 1.4.2 किण्वन प्रक्रिया के प्रमुख क्षेत्र

1.5 प्राथमिक तथा द्वितीयक विविक्तिकरण

- 1.5.1 प्राथमिक विविक्तिकरण
- 1.5.2 द्वितीयक विविक्तिकरण
- 1.5.3 द्वितीयक विविक्तिकरण के महत्वपूर्ण चरण

1.6 औद्योगिक प्रभेद उन्नयन - कार्य योजना, चयन तथा पुनर्संयुक्त जीवों का उन्नयन

- 1.6.1 प्रेरित उत्प्रेरक के चयन द्वारा प्राइमरी मेटाबोलाइट्स की उन्नत स्तर का संश्लेषण
- 1.6.2 पुनर्संयुक्त द्वारा औद्योगिक प्रभेद उन्नयन

1.7 सारांश

1.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

1.9 अभ्यासार्थ प्रश्न

1.10 शब्दावली

1.11 संदर्भ ग्रन्थ

1.0 उद्देश्य (Objectives):

इस इकाई के अध्ययन से आपका परिचय सूक्ष्मजैविक विज्ञान तथा जैवप्रौद्योगिकी के निम्न बिन्दुओं से होगा -

1. सूक्ष्मजैविक जैवप्रौद्योगिकी का परिचय, इतिहास तथा भविष्य ।
2. किण्वन में कौन-कौनसे सूक्ष्मजीवी प्रयुक्त किये जाते हैं ?
3. प्राथमिक तथा द्वितीयक विविक्तिकरण क्या है ?
4. औद्योगिक प्रभेद उन्नयन के लिए कार्य योजना क्या होगी, उसका चयन कैसे करेंगे ?

5. पुनर्संयुक्त जीवों का उन्नयन किस प्रकार किया जाता है ?

1.1 प्रस्तावना (Introduction):

अत्यधिक सूक्ष्म आकार होने के बावजूद, सूक्ष्मजीव मानव के लिए कल्याणकारी है । विभिन्न प्रकार के खाद्य सामग्री एवं औषधियों के ये स्त्रोत हैं तथा अपशिष्ट व अनुपयोगी पदार्थों के निष्कासन हेतु महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं । मानव ने जीवाणुओं की जैव रासायनिक क्रियाओं को भली भांति समझकर इसका भरपूर उपयोग किया है । सूक्ष्मजीव (microorganisms) हमारे जीवन के अभिन्न अंग है । इन्हीं के द्वारा वातावरण को वर्तमान रूप मिला है तथा भविष्य का वातावरण भी इन्हीं पर निर्भर होगा ।

सूक्ष्मजैविक जैवप्रौद्योगिकी जैविक विज्ञान की महत्वपूर्ण शाखा है, क्योंकि इस विज्ञान के अन्तर्गत हुए कार्यो के फलस्वरूप मानव कल्याण से सम्बन्धित अनेक व्यवहारिक विधियों, उपकरणों, तकनीकों एवं औषधियों का विकास हुआ है । अत: इस अध्ययन के अन्तर्गत जितना ज्ञान हासिल होगा उतना ही मानव जीवन की कोटि में सुधार होगा ।

1.2 सूक्ष्मजैविक जैवप्रौद्योगिकी का परिचय (Introduction of Microbial Biotechnology) :

सूक्ष्मजीवी ऐसे सूक्ष्म जीव हैं, जिन्हें नग्न आँखों से देखा नहीं जा सकता । इस श्रेणी में जीवाणु, विषाणु, कवक, शैवाल (microalgae) तथा प्रोटोजोअन्स शामिल है । सूक्ष्मजीव जल, वायु, भोजन, पहाड़, रेगिस्तान, बर्फीले प्रदेश, झरने, गहरे समुद्र यहाँ तक कि हमारे शरीर के अंदर एवं बाहर, हमारे कपड़ों इत्यादि सभी जगह पर व्यापक रूप में पाये जाते हैं सामान्यत: अधिकांश सूक्ष्मजीव प्राणियों के लिए हानिकारक नहीं होतें । इनकी बहुत सी जातियाँ मानव जीवन के लिए अत्यधिक उपयोगी होती है, परन्तु अनेक सूक्ष्मजीव मानवों व अन्य प्राणियों में भयंकर एवं पीड़ादायक रोगी की उत्पत्ति हेतु भी उत्तरदायी है । अत्यधिक सूक्ष्म आकार होने के बावजूद, सूक्ष्मजीव मानव के लिए कल्याणकारी है । विभिन्न प्रकार की खाद्य सामग्री एवं औषधियों के ये स्त्रोत है तथा अपशिष्ट व अनुपयोगी पदार्थो के निष्कासन हेतु महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं । मानव ने जीवाणुओं की जैव रासायनिक क्रियाओं को भली-भांति समझकर इसका भरपुर उपयोग किया ।

यदि इतिहास देखें तो मानव जाति ने सूक्ष्मजैविक विविधता को किण्वित भोज्य पदार्थ जैसे ब्रेड, योगर्ट तथा चीज़ के उत्पादन के लिए भरपूर दोहन किया है । कुछ मृदा सूक्ष्मजीव ऐसे हैं जो नाइट्रोजन मुक्त करते हैं, ये नाइट्रोजन पादपों की वृद्धि के लिए आवश्यक है तथा पृथ्वी के वायुमण्डल का महत्त्वपूर्ण भाग बनाती है ।

किसी प्राणी में पाया जाने वाला जीनोम, उसके शरीर में उपस्थित DNA का पूर्ण आनुवंशिक पदार्थ होता है । प्रत्येक जीव का जीनोम आकार तथा जीन-क्रम भिन्न होता है । यदि किसी सूक्ष्मजीव के जीनोम में जीन क्रम का अध्ययन किया जाये, तो उस जीव की पूरी जैविकी, आनुवांशिकी, तथा उस जीव की महत्त्वपूर्ण आनुवंशिक सूचनाएं ज्ञात की जा सकती है । इस

अध्ययन के आधार पर, उस जाति की आवश्यकता के अनुरूप इन जीन क्रम को रूपान्तरित (modified)भी किया जा सकता है । यदि सजीव के जीनोम का ज्ञान नहीं होता, तो सूक्ष्मजीवी जैवप्रौद्योगिकी के अन्तर्गत इतने महत्त्वपूर्ण आविष्कार संभव नहीं हो पाते । सूक्ष्मजीवी जैवप्रौद्योगिकी द्वारा विज्ञान के विकास में उपयोगी निम्न महत्त्वपूर्ण लाभकारी कार्य किए गए हैं-

1. टीके (vaccines) तथा चिकित्सा क्षेत्र को विकसित करने के लिए सक्षम उपकरण तैयार किए गए है ।
2. सूक्ष्मजीवियों की विकसित जाति, जो पादपों तथा जन्तुओं के जैविक नियन्त्रण में मददगार हो ।
3. पादप तथा जन्तु रोगजनकों में उनकी उग्रता (virulence) को घटाने के लिए रूपान्तरण ।
4. नये औद्योगिक उत्प्रेरक तथा किण्वन में आवश्यक सूक्ष्मजीवियों की प्रजाति की विकसित किस्म तैयार करना ।
5. मृदा के जैव उपचार (bioremediation) तथा कृषि अपशिष्ट के लिए आवश्यक सूक्ष्मजैविक घटक की विकसित प्रजाति तैयार करना ।

सूक्ष्मजैविक जीनोम तथा सूक्ष्मजैविक जैवप्रौद्योगिकी के अन्तर्गत किए अनुसंधानों का खाद्य सुरक्षा (food safety), खाद्य संरक्षण (food security), जैव प्रौद्योगिकी, मूल्य संवर्धक उत्पाद (value added products), मानव-पोषण, क्रियात्मक खाद्य (functional food) तथा कृषि विज्ञान के आधारभूत प्रयोगों के लिए काफी महत्त्वपूर्ण योगदान है।

1.3 सूक्ष्मजैविक जैवप्रौद्योगिकी का इतिहास तथा संभावनाएं (History and Scope of Microbial Biotechnology):

हजारों वर्षों से सूक्ष्मजीवों को ब्रेड, बीयर तथा वाइन के उत्पादन के लिए प्रयुक्त किया जा रहा है । पारम्परिक सूक्ष्मजीवी जैवप्रौद्योगिकी की दूसरी प्रावस्था प्रथम विश्वयुद्ध से प्रारम्भ हुई, परिणामस्वरूप एसीटोन-ब्यूटेनॉल तथा ग्लीसरॉल किण्वन प्रारम्भ हुआ तथा उत्पाद के रूप में सिट्रिक एसिड, विटामिन एवं एन्टीबायोटिक्स प्राप्त हुए । 1970 से पूर्व, औद्योगिक सूक्ष्म विज्ञान को आण्विक जीव विज्ञान के साथ समाकलित कर लिया गया था, जिससे 40 से अधिक जैव-भैषजिक (biopharmaceutical) उत्पाद प्राप्त किए गए जैसे - इरिथ्रोप्रोटीन, मानव वृद्धिकारी हार्मोन तथा इन्टरफेरॉन्स । वर्तमान में, सूक्ष्मजैविक जैवप्रौद्योगिकी ग्लोबल इण्डस्ट्री का एक महत्त्वपूर्ण भाग है, विशेष रूप से भैषजिक (pharmaceutical), खाद्य (food) तथा रसायन उद्योग (chemical industry) ।

सूक्ष्मजीवों की रसायन उद्योग में महत्ता को नकारा नहीं जा सकता है, क्योंकि इन जीवाणुओं द्वारा वर्तमान में विभिन्न औषधियाँ, किण्वक, टीके तथा अनेक प्रकार के विभिन्न महत्त्वपूर्ण रासायनिक यौगिकों का थोक में उत्पादन किया जाता है जिनका सम्बन्ध मानव कल्याण से है । जीवों का उद्योग में उपयोग / जैवप्रौद्योगिकी, विज्ञान विषय को दिन-प्रतिदिन विकास की नयी श्रृंखलाओं से जोड़ रही है ।

1.3.1 इतिहास (History)

मानव पुरातन काल से ही सूक्ष्मजीवों की जैव रासायनिक क्रियाओं का उपयोग अपने दैनिक जीवन में करता आ रहा है । यद्यपि मानव को इन जैवरासायनिक क्रियाओं को वास्तविक कारणों का ज्ञान नहीं था । ईसा से 6000 वर्ष पूर्व बेबिलोनियन व सुमेरियन सभ्यता के लोग शराब बनाने में दक्ष थे । मिश्रवासी, डबल रोटी को बनाने में इस सूक्ष्मजीवों का उपयोग करते थे । फ्रांसिस बेकन तथा फ्रेकस्टोरियस ने सन् 1546 में अदृश्य जीवों द्वारा रोगों
के होने की जानकारी प्रदान की । एहरनवर्ग (Ahrenberg, 1829) ने अनेक जीवाणुओं का अध्ययन किया तथा इसके वंश को बैक्टीरियम (bacterium) नाम दिया । एहरनवर्ग ने विब्रियो, स्पाइरिलियम व स्पाइरोकीट का वर्णन किया ।

लाटोर एवं श्वान (Lature and Schwann) ने 1837 में बीयर एवं मदिरा निर्माण में यीस्ट की भूमिका का पता लगाया । पाश्चर (Pasteur 1856) ने भी शर्करा युक्त पदार्थों से ऐल्कॉहल निर्माण में यीस्ट के महत्त्व का वर्णन किया तथा पाश्चरीकरण (Pasteurization) की खोज की ।

किटासाटो (Kitassato, 1880) ने टिटनेस के लिए उत्तरदायी *क्लास्ट्रीडियम* टेटेनी (Clostridium tetani) एवं प्लेग रोग के कारक *पास्टेरेला पेस्टिस*(Pasteurella pestis) की खोज की । वॉन बेहरिंग (Von Behring, 1890) ने टिटनेस एवं डिपथीरिया रोग हेतु प्रतिरक्षीकरण विधियों का उपयोग किया । इ.सी. हेन्सन (E.C. Hansen 1842- 1909) ने सिरके के निर्माण में यीस्ट व जीवाणु की भूमिका पर कार्य किया तथा इनकी संवर्धन विधियों का विकास किया । कॉन व वेगमेन ने संवर्धन विधियों का उपयोग पनीर एवं मक्खन उत्पादन में किया । सूक्ष्मजैविकी द्वारा जैवरासायनिकी (Biochemistry) के रूप में नई शाखा का सूत्रपात हुआ । बचनर (Butchner-1897) ने कोशिका से पृथक स्वतंत्र माध्यम (in vitro) में एल्कोहली किण्वन की खोज फी ।

डेलब्रक तथा लूरिया (Delbruck and Luria 1943) ने सूक्ष्मजीवों पर आनुवांशिक अभियांत्रिकी के अनेक प्रयोग किए । एवेरी, मेक लियोड तथा मेक कार्टी ने जीवाणुओं में ट्रांसफोर्मेशन से सम्बन्धित प्रयोग किए तथा यह पाया कि इनमें आनुवांशिक पदार्थ DNA होता है । सूक्ष्मजैविकी की जड़ें जैवरसायन (Biochemistry), आनुवांशिकी एवं आण्विक जैविकी (Molecular biology) में समाई हुई है ।

1.3.2 सूक्ष्मजैविक जैवप्रौद्योगिकी का भविष्य (Scope of Microbial Biotechnology)

सूक्ष्मजीवों का संसार बड़ा अद्भुत है ये सर्वत्र विद्यमान हैं तथा मानव समुदाय को अनगिनत तरीकों से प्रभावित करते हैं । औषधि, कृषि, खाद्य विज्ञान, पारिस्थितिकी, आनुवांशिकी, जैवरसायन, जैवप्रौद्योगिकी में इसका बहुत बड़ा योगदान है ।

सूक्ष्मजैविकी की अनेक मूलभूत तथा विशिष्ट शाखाएँ है । प्रत्येक क्षेत्र जो अपने कार्य के लिए विशिष्ट है, से सम्बन्धित वैज्ञानिक, अपने शोध कार्य सूक्ष्मजीवी कोशिका विज्ञान (microbial cytology), सूक्ष्मजीवी आनुवांशिकी (microbial gentics), सूक्ष्मजीवी जैव रसायन (microbial biochemistry),सूक्ष्मजीवी जैवप्रौद्योगिकी (microbial biotechnology), खाद्य सूक्ष्मजैविकी (food microbiology) के क्षेत्रों में कर रहे हैं ।

खाद्य एवं डेयरी उद्योग में ये वैज्ञानिक सूक्ष्मजीवो के उपयोग द्वारा चीज़ (cheese), योगर्ट (yogurt), अचार (pickles), सिरका (vinegar) एवं मदिरा का निर्माण करते हैं । आने वाले वर्षों में सूक्ष्मजीवों का उपयोग भोजन हेतु भी किया जायेगा।

सूक्ष्मजीवीय आनुवांशिकी एवं आण्विक जैविकी के क्षेत्र में कार्य करने वाले वैज्ञानिक आनुवांशिक सूचनाओं की प्रकृति, कोशिका की कार्य प्रणाली एवं परिवर्धन का नियंत्रण करते हैं । जीन की कार्यप्रणाली को समझने के लिए सूक्ष्मजीवों का उपयोग किया जाता है । विभिन्न युक्तियों द्वारा सूक्ष्मजीवों के नये प्रभेदों का निर्माण किया जा सकता है जो लाभदायक उत्पादों के संश्लेषण में दक्ष होते हैं ।

वर्तमान में आनुवांशिक अभियांत्रिकी ने सूक्ष्मजैविकी के क्षेत्र में नये द्वार खोल दिए है । सूक्ष्मजीवों के आनुवांशिक पदार्थों में परिवर्तन करके इनका उपयोग हॉर्मोन, वैक्सीन एवं अन्य पदार्थों के संश्लेषण हेतु किया जाता है । आनुवांशिक रूप में रूपान्तरित सूक्ष्मजीवों का औद्योगिक प्रक्रमों में उपयोग जैवप्रौद्योगिकी (biotechnology) कहलाता है । औषधीय महत्त्व के अधिकांश प्रोटीन का उत्पादन सूक्ष्मजीवों की सहायता से होता है । वायरल संक्रमण के प्रेरण द्वारा प्राणी कोशिकाओं में इंटरफेरोनय का उत्पादन हो सकता है । पॉलीपेप्टाइड एंटीजन युक्त वायरल वैक्सीन का निर्माण आनुवांशिक अभियांत्रिकी द्वारा किया जता है । विटामिन B_{12} एवं विटामिन B_2 (Riboflavin) का संश्लेषण सूक्ष्मजीवों की सहायता से होता है । विभिन्न प्रकार की प्रतिजैविक औषधियाँ जैसे - β लेक्टेम, पेनिसिलिन, सिफेलोस्पोरिन, टेट्रासाइक्लिन, क्लोरोटेट्रासाइक्लिन, ऑक्सीटेट्रासाइक्लिन का निर्माण विभिन्न प्रकार के सूक्ष्मजीवों द्वारा होता है । भविष्य में प्रोटोजोअन्स के द्वारा होने वाले रोगों से बचाव के लिए वैक्सीन का निर्माण कार्य प्रगति पर है।

1.4 किण्वन में प्रयुक्त होने वाले सूक्ष्मजीवों के प्रमुख प्रकार (Major types of Microorganism used in Fermentation) :

विभिन्न प्रकार के एन्जाइम, अमीनो अम्ल, विटामिन, एण्टीबायोटिक्स कार्बनिक अम्ल तथा एल्कोहल का व्यापारिक स्तर पर उत्पादन सूक्ष्मजीवों की सहायता से होता है । इनमें एन्जाइम, अमीनो अम्ल तथा विटामिन का उपयोग सूक्ष्मजीवों के द्वारा कर लिया जाता है अत: इन्हें प्राथमिक मेटाबोलाइट (primary metabolites) कहते हैं जबकि एन्टीबायोटिक्स, एल्कोहल एवं कार्बनिक अम्लों का उपयोग सूक्ष्मजीवों द्वारा नहीं होता है, अत: इन्हें द्वितीयक मेटाबोलाइट कहते हैं ।

पेनिसिलिन एमाइलेज का उपयोग अर्द्ध संश्लेषी पेनिसिलिन में किया जाता है । एमाइलेज का उपयोग स्टार्च हाइड्रोलाइसेट के निर्माण में किया जाता है जिसका पुन: उपयोग बीयर एवं सिरके के उत्पादन हेतु किया जाता है । सूक्ष्मजीवों द्वारा उत्पन्न एस्पार्जिनेस एन्जाइम का उपयोग ल्यूकेमिया तथा लिम्फोमा के उपचार में किया जाता है । सूक्ष्मजीवों द्वारा ग्लूटेमिक अम्ल, लाइसिन एवं मिथियोनिन अमीनो-अम्लों का उत्पादन होता है । सूक्ष्मजीव सामान्यत: अमीनों अम्लों का उत्पादन करते हैं । *ऐस्पर्जिलस नाइगर* (*Aspergillus niger*) के द्वारा सिट्रिक अम्ल का उत्पादन होता है अत: इसका उपयोग खाद्य पदार्थों के परिरक्षण (preservation) में किया जाता है एवं कुछ प्राणियों में भोजन के रूप में भी इसका उपयोग किया जाता है ।

किण्वन उद्योग में जो सूक्ष्मजीव महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं, उन्हें निम्न समूहों में वर्गीकृत किया जा सकता है -

(अ) मोल्ड (Mold)

डेयरी सूक्ष्मजैविकी (dairy microbiology) में केवल उन्हीं सूक्ष्मजीवों का अध्ययन नहीं किया जाता जो प्रोटीन प्रचुरता के कारण हमें भोजन प्रदान करते हैं, बल्कि उन सूक्ष्मजीवों का भी अध्ययन किया जाता है जो हमारे खाद्य पदार्थों को विकृत कर देते हैं, तथा इनमें उपस्थित पोषकों को सूक्ष्मजीव स्वयं अपने लिए उपयोग में ले लेते हैं । विभिन्न प्रकार के सूक्ष्मजीव जैसे *म्यूकर, राइजोपस, बोट्राइटिस, ऐस्परजिलस पेनिसिलियम* इत्यादि हमारे खाद्य पदार्थ को विकृत कर देते हैं । कुछ मोल्ड का उपयोग विशिष्ट खाद्य पदार्थों के निर्माण में, एन्जाइम निर्माण में सॉफ्ट ड्रिंक निर्माण में किया जाता है । कुछ मोल्ड *ऐस्पर्जिलस फ्लेवस तथा ऐस्पर्जिलस पैरासिटिकस* विषाक्त माइकोटॉक्सिन का निर्माण करते हैं।

(ब) यीस्ट (yeasts)

यीस्ट विशिष्ट कवक हैं, जो तंतुमय नहीं होतें । यीस्ट किण्वन का उपयोग ब्रेड, बीयर, मदिरा, सिरका एवं विभिन्न एन्जाइम निर्माण में किया जाता है ।

(स) जीवाणु (Bacteria)

जीवाणुओं का खाद्य उद्योग में बहुत महत्त्व है । कुछ वर्णक जीवाणु भोजन की सतह पर विशिष्ट रंग उत्पन्न करते हैं । ऐसिटोबेक्टर जीवाणु एथिल ऐल्कॉहल को एसीटिक अम्ल में परिवर्तित कर देते हैं ।

सारणी - 1 : किण्वन में प्रयुक्त होने वाले सूक्ष्मजीव

सूक्ष्मजीव (Microbes)		**प्रभाव (Effect)**
(i)	**बैक्टीरिया :**	
	सूडोमोनास (Pseudomonas)	अपक्षय
	हेलोबैक्टीरियम (Halobacterium)	लवणित-भोजन का अपक्षय
	ऐसिटोबैक्टर (Acetobacter)	सेब के रस का सिरके (vinegar) में किण्वन
	एल्कलीजीन्स (Alcaligenes)	दुग्ध-उत्पादों का अपक्षय
	स्टेफाइलोकोकस (Staphylococcus)	उच्च कार्बोहाइड्राटे की मात्रा में खाद्य-सामग्री का अपक्षय एवं अंतः-जैविक (enterotoxin) का

		उत्पादन
	क्लॉस्ट्रीडियम (Clostridium)	भोजन-विषाक्तता (food-poisoning)
	लेक्टोबैसिलस (Lactobacillus)	दुग्ध का दही एवं मट्ठे में किण्वन
	बैसिलस (Bacillus)	पनीर निर्माण में किण्वन
	स्ट्रेप्टोकोकस (Streptococcus)	पनीर एवं मट्ठा निर्माण में किण्वन
(ii)	**मोल्ड (Moulds) :**	
	ऐस्परजिलस (Aspergillus)	चावल की वाइन निर्माण में किण्वन
	पेनिसिलियम (Penicillium)	एंटीबायोटिक निर्माण
	राइजोपस (Rhizopus)	रोटी एवं शाक-सब्जी का अपक्षय
(iii)	**यीस्ट (Yeasts) :**	
	सेक्रोमाइसिस (Saccharomyces)	मादक-पेय का किण्वन, डबल-रोटी में खमीर, प्रोटीन का स्रोत
	केण्डीडा (Candida)	रोगजनक यीस्ट, मक्खन का अपक्षय
	टोर्लोप्सिस (Torlopsis)	दुग्ध; फलों के रस तथा अम्लीय खाद्य पदार्थों का अपक्षय

विभिन्न प्रकार के मादक पेयों का उपयोग मानव जाति द्वारा सभ्यता के आरम्भ से ही हो रहा है तथा नाना प्रकार के पेय विश्व के हर भाग में निर्मित होते हैं जिनका अपना विशिष्ट स्वाद एवं गठन होता है । इन पेयों में उपस्थित ऐल्कॉहल की मात्रा तथा आरम्भिक पदार्थ एवं निर्माण विधि के अनुसार श्रेणित किया जाता है । इन विभिन्न मादक पेयों का निर्माण *सेक्रोमाइसीज* (Saccharomyces) नामक यीस्ट के विभिन्न प्रभेदों (strains) की सहायता से किया जाता है । मादक पेय के निर्माण में किसी भी प्रकार के आरम्भिक पदार्थ (जो यीस्ट द्वारा किण्वित हो सके) का प्रयोग किया जा सकता है । जिन मादक पेय में ऐल्कॉहल की मात्रा 15% से अधिक हो उसके निर्माण में प्राथमिक प्राकृतिक किण्वन के बाद आसवन (distillation) किया जाता है ।

सारणी 2 - सेकेरौमाइसीस (Saccharomyces) द्वारा निर्मित विभिन्न मादकपैय

मादकपेय		**आरम्भिक पदार्थ**	**विधि**
1.	वाइन (Wine)	फलों का रस (प्राय: अंगूर)	प्राकृतिक किण्वन
2.	बीयर (Beer)	अंकुरित जौ [मॉल्ट (malt)]	प्राकृतिक किण्वन (ऐल्कोहॉली मात्रा = 15% से कम)
3.	ब्रैण्डी (Brandy)	फलों का रस (प्राय: अंगूर)	प्राकृतिक किण्वन के
4.	विस्की (Whiske	अंकुरित अनाज	पश्चात् ऐल्कोहॉल की मात्रा

	y)		
5.	रम (Rum)	गुड़ का शीरा	में वृद्धि हेतु आसवन
6.	वॉडका (Vodka)	आलू	(distillation) (ऐल्कोहॉली मात्रा लगभग 40% से 50%)

1.4.1 किण्वन में प्रयुक्त सूक्ष्मजीवों के गुण

1. सूक्ष्मजीव को किस प्रक्रम के लिए प्रयुक्त करना है, इस लक्षण के आधार पर चुना जाता है ।
2. कार्य-प्रणाली उस परिस्थिति पर निर्भर करती है, कि सूक्ष्मजीव प्रभेद ऐरॉबिक (aerobic) है अथवा एनएरॉबिक (anaerobic) यदि ऐरॉबिक होगा तो माध्यम में पर्याप्त मात्रा में ऑक्सीजन की मात्रा का होना आवश्यक है ।
3. कोशिकाओं का आकर और आकृति भी किण्वन प्रकार (type of fermenter) के चयन को प्रभावित करता है।
4. तंतुमय सूक्ष्मजीव की अपेक्षा गोलाकार कोशिकाएं छोटी तथा कम संवेदी होती है । गोलाकार कोशिकाओं को उच्च कोटि का वायु-प्रवाह आवश्यक होता है ।
5. छोटी कोशिकाओं को सतह पर अधिक आधारीय पदार्थों को ग्रहण करने का अवसर प्राप्त होता है, इसीलिए तीव्र वृद्धि होती है ।

1.4.2 किण्वन प्रक्रिया के प्रमुख क्षेत्र (The range of fermentation process)

व्यापारिक रूप सें महत्त्वपूर्ण किण्वन को निम्न पाँच समूहों में वर्गीकृत किया गया है -

(i) जिसमें सूक्ष्मजीवी कोशिकाओं को उत्पाद के रूप में प्राप्त किया जाता है ।

(ii) जिसके द्वारा सूक्ष्मजैविक एन्जाइम का उत्पादन किया जाता है ।

(iii) जिसके द्वारा सूक्ष्मजैविक मैटाबोलाइट का उत्पादन किया जाता है ।

(iv) जिसके द्वारा पुनर्संयुक्त उत्पाद (recombinant product) प्राप्त किये जाते हैं ।

(v) वो प्रक्रिया जिसमें एक यौगिक को परिवर्तित कर किण्वन प्रक्रिया में प्रयुक्त किया जाता है - इसे रूपान्तरण (transformation) कहते हैं ।

सारणी-3

किण्वन प्रक्रिया पर आधारित व्यापारिक उत्पाद

	उत्पाद	**सूक्ष्मजीव**
(अ)	**औद्योगिक रसायन**	
	एथेनॉल (ग्लूकोज से)	सैकेरोमाइसीस सेरेविसी
	एथेनॉल (लैक्टोज से)	क्लूवेरोमाइसीस फ्रेजीलिस
	सिट्रिक अम्ल	ऐस्पर्जिलस नाइगर
	ग्लुकोनिक अम्ल	ऐस्पर्जिलस नाइगर
	एसीटिक अम्ल	ऐसीटोबैक्टर जाति
	लैक्टिक अम्ल	लेक्टोबेसिलस डलब्रुकाई

(ब) अमीनो अम्ल

L-लाइसीन	कोराइनेबैक्टीरियम ग्लूटेमिकम
MSG	कोराइनेबेक्टीरियम ग्लूटेमिकम
ग्लुटामिक अम्ल	कोराइनेबेक्टीरियम ग्लूटेमिकम

(स) विटामिन्स

राइबोफ्लेविन	अश्ब्या गॉसिपी
विटामिन B12	स्यूडोमोनास डिनाइट्रीफिकेन्स
एस्कॉर्बिक अम्ल	ग्लूकोनोबेक्टर आक्सीड्न्स

(द) एन्जाइम्स

एमइलेज	ऐस्पर्जिलस आराइजी
सैल्यूलेज	ट्राइकोडर्मा रीसियाइ
इन्वर्टेज	सैकेरोमाइसीज सेरेविसी
लाइपेज	सैकेरोमाइसीज लाइपोलाइटिका
प्रोटीएज	बेसिलस

(य) पॉलीसैकेराइड्स

डैक्सट्रन	ल्यूकोनॉस्टॉक मीसेन्ट्राइड्स
जैन्थन	जैन्थोमोन्स कम्पैस्ट्रिस

(र) फर्मास्यूटिकल्स

पेनिसिलिन	पेनीसिलियम क्राइसोजीनम
केनामाइसिन	स्ट्रेप्टोमसीज केनामाश्सीटिकस
जेन्टामाइसिन	बेसीलस ब्रेविस
नियोमाइसिन	स्ट्रेप्टोमाइसीज फ्रेडी
क्लोरेम्फेनिकॉल	स्ट्रेप्टोमाइसीज वेनेजुली
इरिथ्रोमाइसिन	स्ट्रेप्टोमाइसीज इरिथ्रियस
स्ट्रेप्टोमाइसिन	स्ट्रेप्टोमाइसीज ग्रिसियस

1.5 प्राथमिक तथा द्वितीयक विविक्तिकरण (Primary and Secondary Screening) :

किसी विशिष्ट तकनीक के लिए आवश्यक सूक्ष्मजीवों की विशिष्ट भेद को संवर्धित करवाया जाता है तथा आवश्यकतानुसार इनका चयन किया जाता है । स्क्रीनिंग / विविक्तिकरण को दो प्रकारों में विभक्त किया गया है ।

1.5.1 प्राथमिक विविक्तिकरण (Primary Screening)

एक वृहद् सूक्ष्मजीवी समुदाय से केवल वांछित गुणों वाले सूक्ष्मजीवों का चयन तथा पृथक्करण करने के लिए जिन तकनीकों का प्रयोग किया जाता है, उसे विविक्तिकरण (screening) कहते हैं । विविक्तिकरण को प्रभावशाली बनाने के लिए यह प्रक्रिया एक या दो चरणों में ही पूर्ण होनी

चाहिए, जिसमें बहुत से अनावश्यक सूक्ष्मजीव को पहचान कर नष्ट कर दिया जाता है तथा उसी समय वांछित सूक्ष्मजीवों को पहचान कर पृथक् कर लिया जाता है ।

वे सूक्ष्मजीव जो कार्बनिक आधारीय पदार्थों से कार्बनिक अम्ल अथवा एमीन उत्पन्न करते हैं, इन्हें pH सूचक रंजक (pH indicating dye) जैसे ब्रोमथिमोल ब्लू (bromthymol blue) द्वारा बफर युक्त पोषक माध्यम में पहचाना जा सकता है । कार्बनिक अम्ल उत्पादन को पहचानने के लिए माध्यम में कैल्सियम कार्बोनेट मिलाया जाता है । इसकी उपस्थिति में सूक्ष्मजीवी कॉलोनी के चारों ओर स्पष्ट क्षेत्र (cleared zone) दिखाई देता है ।

विविक्तिकरण (screening) की सहायता से उन सूक्ष्मजीवों को पहचाना जा सकता है जो उपयोगी एण्टीबायोटिक्स के उत्पादन में सहायक होते हैं । एण्टीबायोटिक्स उत्पन्न करने वाले सूक्ष्मजीव को स्क्रीन करने की सबसे उपयुक्त विधि "सघन प्लेट" (crowded plate) विधि है । यह तकनीक केवल उन सूक्ष्मजीवों के लिए उपयोगी है, जो एन्टीबायोटिक्स का उत्पादन करते हैं । चाहे वो उस एण्टीबायोटिक के लिए संवेदी हो या नहीं । सूक्ष्मजीव स्त्रोत, मृदा अथवा अन्य को कोशिका सान्द्रता कम करने के लिए तनु (dilute) किया जाता है । इसके पश्चात् इसे अगार-प्लेट की सतह पर फैलाकर 300-400 कॉलोनी प्रत्येक प्लेट में तैयार की जाती है । वो कॉलोनी जो एण्टीबायोटिक एक्टिविटी प्रदर्शित करती है, उसके चारों ओर किसी भी प्रकार की कवक वृद्धि नहीं पाई जाती है अर्थात् वृद्धि संदमक क्षेत्र होता है । इस कॉलोनी को, पोषक माध्यम में पुन: संवर्धित (subculture) कर लिया जाता है एवं इस कॉलोनी से स्ट्रीकिंग (streaking) विधि द्वारा शुद्ध कर स्टॉक-कल्चर (stock culture) तैयार कर लिया जाता है ।

यही तकनीक उन सूक्ष्मजीवों के लिए भी प्रयुक्त की जाती है, जो अतिरिक्त कोशिकीय विटामिन, अमीनों अम्ल तथा दूसरे मेटोबोलाइट्स का संश्लेषण करने में सक्षम होते हैं । इसके लिए माध्यम में मे टोबोलाइट्स का अनुपस्थित होना आवश्यक है । इसके पश्चात् सूक्ष्मजीव स्त्रोत (microbial source) को तनु कर प्लेट पर कॉलोनी प्राप्त करने के लिए फैला (spread) दिया जाता है । सेवन (incubation) से पूर्व टैस्ट-ऑर्गेनिज्म भी मिला दिया जाता है । टैस्ट ऑर्गेनिज्म (test organism) को सूचक के रूप में प्रयुक्त किया जाता है, जो विशिष्ट एण्टीबायोटिक एक्टिविटी को प्रदर्शित करते हैं । प्रत्येक एण्टीवायोटिक के लिए विशिष्ट टैस्ट ऑर्गेनिज्म का चयन करना काफी जटिल कार्य है । प्रत्येक मेटाबोलाइट के लिए एक निश्चित वृद्धि आवश्यकता (growth requirement) होती है, जी उस मेटाबोलाइट के लिए विशिष्ट होती है । इस प्रकार वृद्धि-क्षेत्र (growth zone) के द्वारा उस यौगिक के उत्पादन की मात्रा का ज्ञान होता है अर्थात् टैस्ट ऑर्गेनिज्म की बढ़ी हुई उस कॉलोनी की वृद्धि के समानुपाती होगी जो मेटाबोलाइट्स का उत्पादन करती है ।

1.5.2 द्वितीयक विविक्तिकरण (Secondary Screening)

प्राथमिक विविक्तिकरण के फलस्वरूप औद्योगिक महत्त्व के सूक्ष्मजीवों को पहचान कर पृथक किया जाता है । इस विविक्तिकरण के पश्चात् चयनित सूक्ष्मजीवों की अधिक सूचनाओं की जानकारी प्राप्त करने के लिए द्वितीयक विविक्तिकरण (secondary screening) किया जाता

है । प्राथमिक विविक्तिकरण के फलस्वरूप जिन सूक्ष्मजीवों का चयन किया जाता है उनमें से कुछ ही वास्तविक रूप से व्यापारिक महत्त्व के होते हैं । प्राथमिक विविक्तिकरण से सूक्ष्मजीव की उन क्षमताओं का ज्ञान होता है, जिससे पता लगें कि वह सूक्ष्मजीव कौनसे यौगिकों का उत्पादन कर सकता है लेकिन प्राथमिक विविक्तिकरण से उसकी उत्पादन सामर्थ्य (yield potential) का ज्ञान नहीं हो पाता । द्वितीयक विविक्तिकरण से सूक्ष्मजीव के व्यापारिक महत्त्व की वास्तविक क्षमता ज्ञात होती है, जिन सूक्ष्मजीवों में ये क्षमता का अभाव होता है उन्हें निकाल (discard) दिया जाता है । द्वितीयक विविक्तिकरण के लिए सूक्ष्मजीव को अगार-प्लेट पर या फ्लास्क में या छोटे फर्मेण्टर में तरल संवर्धन माध्यम में रखा जाता है । अगार-प्लेट पर द्वितीयक विविक्तिकरण तरल संवर्धन माध्यम की अपेक्षा कम संवेदी होता है, किन्तु प्रारम्भिक द्वितीयक विविक्तिकरण के लिए यह महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करता है । क्योंकि अगार प्लेट तकनीक द्वारा इन्क्यूबेटर में कम स्थान में अधिक संवर्धन किया जा सकता है । किन्तु फिर भी हम तरल संवर्धन माध्यम को प्रयुक्त करते हैं, क्योंकि इसके द्वारा सूक्ष्मजीवों की किण्वन प्रक्रिया में आवश्यक पोषक तत्वों, भौतिकी तथा उत्पादक तत्वों की बेहतर जानकारी प्राप्त कर सकते हैं । द्वितीयक विविक्तिकरण मात्रात्मक (quantitative) तथा विश्लेषणात्मक (qualitative) दोनों प्रकार का होता है । विश्लेषणात्मक विविक्तिकरण के द्वारा किसी एण्टीबायोटिक के प्रति सूक्ष्मजीवों का संवेदन ज्ञात किया जाता है । मात्रात्मक विविक्तिकरण के द्वारा सूक्ष्मजीव को अलग-अलग माध्यम में वृद्धि करवाये जाने पर उससे एन्टीबायोटिक उत्पादन क्षमता का मापन किया जाता है ।

द्वितीयक विविक्तिकरण के फलस्वरूप किसी सूक्ष्मजीव के औद्योगिक महत्त्व की जानकारी प्राप्त होती है । द्वितीयक विविक्तिकरण द्वारा किसी सूक्ष्मजीव के द्वारा विशिष्ट रासायनिक यौगिक के उत्पादन की जानकारी मिलती है तथा यह भी ज्ञात होता है कि विशिष्ट यौगिक पूर्व में ज्ञात है या नहीं अथवा उसकी किण्वन प्रक्रिया पूर्वविदित है या नहीं। द्वितीयक विविक्तिकरण के द्वारा कम लागत में अधिक उत्पादन करने वाले औद्योगिक महत्त्व के सूक्ष्मजीव ज्ञात किए जाते हैं ।

द्वितीयक विविक्तिकरण के द्वारा सूक्ष्मजीवों के कुल आनुवांशिक उत्परिवर्तन (mutation) को ज्ञात किया जाता है, यदि सूक्ष्मजीव की उत्परिवर्तन क्षमता अधिक है तो उसका औद्योगिक महत्व कम होगा । द्वितीयक विविक्तिकरण के द्वारा हम संवर्धन माध्यम में किसी विशिष्ट घटक की अनुपस्थिति को ज्ञात कर सकते हैं तथा विषाक्त पदार्थ की उपस्थिति द्वारा माध्यम में सूक्ष्मजीवों की वृद्धि के संदमन की जानकारी प्राप्त कर सकते हैं ।

द्वितीयक विविक्तिकरण के लिए अर्लनमेयर फ्लास्क में अत्यधिक पोषक तत्वों युक्त संवर्धन माध्यम को लिया जाता है । संवर्धन माध्यम निर्जमीकृत होना चाहिए, जिसमें परीक्षण के तौर पर किसी स्ट्रेप्टोमाइसीट्स को डाला जाता है । इन फ्लास्क को स्थिर अवस्था में अथवा हिलाते हुए शेकर (shaker) पर रखा जाता है, क्योंकि एन्टीबायोटिक्स के उत्पादन के लिए अधिक वातित (aerated) परिस्थिति होनी चाहिए । फ्लास्क को स्थिर तापक्रम पर रखा जाना चाहिए तथा समय-समय पर सूक्ष्मजीव की वृद्धि अवस्था के दौरान तरल माध्यम को निकालकर उसका

विश्लेषण किया जाना चाहिए । कुछ प्रक्रियाओं में, जिन एण्टीबायोटिक्स में पॉलीन (polyene) समूह उपस्थित हो उनके लिए तरल संवर्धन माध्यम में स्ट्रेप्टोमाइसीट्स डालते समय उसके कवक जाल (myceluim) में एण्टीबायोटिक का भी प्रवेश करा देते हैं और इस कवक जाल से पुन: एण्टीबायोटिक को प्राप्त करने के लिए extraction विधि अपनाई जाती है ।

1.5.3 द्वितीयक विविक्तिकरण के महत्त्वपूर्ण चरण

1. वास्तविक रूप से व्यापारिक महत्त्व के सूक्ष्मजीवों का चयन किया जाता है । अवांछित प्रभेदों को जितना जल्दी हो सके नष्ट कर देना चाहिए जिससे समय, मेहनत तथा खर्चा बचाया जा सके ।
2. इसके द्वारा ज्ञात होगा कि सूक्ष्मजीव द्वारा उत्पादित उत्पाद नया है या नहीं । इसे पेपर अथवा थिन लेयर क्रोमेटोग्राफी द्वारा पहले वाले उत्पादों से तुलना कर ज्ञात किया जाता है ।
3. इसके द्वारा किसी किण्वन प्रक्रिया का आर्थिक स्तर ज्ञात किया जा सकता है ।
4. किण्वन के लिए बेहतर विभव (potential) वाले सूक्ष्मजीव का चयन किया जा सकता है ।
5. किसी विशिष्ट संवर्धन की वृद्धि के लिए अनुकूल परिस्थितियाँ ज्ञात की जा सकती हैं ।
6. इसके द्वारा सर्वाधिक उपयुक्त संवर्धन माध्यम के घटक ज्ञात किये जा सकते हैं ।
7. किसी सूक्ष्मजीव संवर्धक की आनुवांशिक अस्थिरता / असामान्यता का ज्ञान होता है ।
8. द्वितीयक विविक्तिकरण के दौरान किसी उत्पाद की भौतिक, रासायनिक तथा जैविक स्थिति का ज्ञान होता है।
9. द्वितीयक विविक्तिकरण से किसी संवर्धक (culture) के बारे में जानकारी प्राप्त होगी कि वह समकिण्वित (homofermentative) है या विषमकिण्वित (heterofermentative)
10. किसी उत्पाद की संरचना का निर्धारण द्वितीयक विविक्तिकरण से ही होता है ।
11. इस प्रक्रिया के द्वारा किसी किण्वित उत्पाद की रासायनिक स्थिरता का ज्ञान होता है ।

बोध प्रश्न

सत्य अथवा असत्य

1. सूक्ष्मजीवियों को नग्न आँखों से देखा जा सकता है - सत्य / असत्य
2. सूक्ष्मजीव विश्वव्यापी है । सत्य / असत्य
3. सूक्ष्मजीवियों द्वारा महत्त्वपूर्ण एण्टीबायोटिक्स की खोज की गई - सत्य / असत्य
4. लाटोर एवं श्वान ने पाश्चरीकरण की खोज की । सत्य / असत्य

अतिलघुउत्तरात्मक प्रश्न

5. सूक्ष्मजैविक जैवप्रौद्योगिकी से क्या तात्पर्य है ?

   .....

6. मोल्ड के उदाहरण लिखिए ।

   .....

7. मादक पेयों के निर्माण में मुख्य भूमिका निभाने वाले सूक्ष्मजीव किस समूह के हैं ?

   .....

8. पेनिसिलिन किससे प्राप्त होती है ?

.....

9. स्ट्रेप्टोमाइसिन का मुख्य स्त्रोत क्या है ?

.....

10. विविक्तिकरण की आवश्यकता क्यों होती है?

.....

11. प्राथमिक विविक्तिकरण की कौनसी विधि प्रभावी है?

.....

12. द्वितीयक विविक्तिकरण का क्या महत्त्व है?

1.6 औद्योगिक प्रभेद उन्नयन - कार्य योजना, चयन तथा पुनर्संयुक्त जीवों का उन्नयन (Industrial Strain Improvement - Strategies, Selection, and Improvement of Recombinant Organism):

वो चयनित सूक्ष्मजीव जो व्यापारिक रूप से महत्त्वपूर्ण उत्पाद उत्पन्न करने की क्षमता रखते हैं, उनके उत्पादन को बढ़ाने के लिए हर संभव प्रयास किए जाते हैं । उत्पादन को बढ़ाने के लिए संवर्धन माध्यम तथा वृद्धिकारक परिस्थितियों को और अधिक उपयुक्त बनाया जाता है । लेकिन सभी परिस्थितियों को अनुकूल करने के पश्चात् भी उत्पादन एक सीमा तक ही बढ़ाया जा सकता है, जितनी अधिकतम उस जीव की क्षमता होगी । किसी जीव की उत्पादन क्षमता उसके जीनोम द्वारा नियंत्रित की जाती है, इसलिए उत्पादन बढ़ाने के लिए उसके जीनोम को रूपान्तरित करना होगा । जीनोम में रूपान्तरण के पश्चात् पुन: उसके संवर्धन माध्यम को अनुकूल स्थिति में रखने पर उस जीव का अधिकतम उत्पादन विभव प्राप्त किया जा सकता है । इसके पश्चात् इस जीनोम में यदि कोई परिवर्तन किया जाता है तो वह इस उन्नयित प्रभेद के लिए लाभदायक परिवर्तन होगा । प्रभेद उन्नयन (strain improvement) के अन्तर्गत संवर्धक (culture) के जीनोम मे लगातार आनुवांशिक परिवर्तन किए जाते हैं, तथा उसी के अनुरूप उसकी बढ़ती हुए संवर्धन आवश्यकताओं (culture requirements) को पूर्ण किया जाता है ।

आनुवांशिक परिवर्तन निम्न में से किसी भी तरीके से किया जा सकता है -

(i) प्राकृतिक variants के चयन द्वारा,

(ii) प्रेरित उत्परिवर्तक (induced mutant) द्वारा,

(iii) पुनर्संयुक्त के चयन द्वारा (recombinant)

ऐसी संभावना भी होती है, कि ऐसा परिवर्तन प्रत्येक कोशिका विभाजन के दौरान होता है तथा किसी सूक्ष्मजैविक संवर्धन में बहुत अधिक विभाजन होने से ऐसी परिस्थिति भी उत्पन्न हो सकती है, कि संवर्धन बहुत अधिक विषमांगी (heterogenous) हो जाए । संवर्धन में विषमांगी

अवस्था, उत्पाद को नष्ट करने लगती है, क्योंकि ऐसे परिवर्ती विषमांगी प्रभेद (variants) निम्न स्तर के उत्पादक होते हैं । इस अवस्था को इस उदाहरण से समझाया जा सकता है - किसी प्राकृतिक सूक्ष्मजीव से बनने वाले आइसोलेट्स विषमकेन्द्रकी (heterokaryon) होते हैं, जिसके कवकजाल में दो से अधिक प्रकार के केन्द्रक होते हैं, लेकिन जब इसकी संतति (progeny) का चयन किया जाता है, वो एककेन्द्रकी बीजाणु (uninucleate spores) होते हैं ये बीजाणु केवल समकेन्द्रकी (homokaryons) संतति उत्पन्न करते हैं, जो विषमकेन्द्रकीयों की अपेक्षा उच्च स्तर (superior) के उत्पादक होते हैं । इस अध्ययन के पश्चात् यह भी ज्ञात किया जा सकता है, कि उच्च उत्पादकता (high productivity) के साथ कौनसे आकारिकी (morphological) गुण सम्बन्धित होते हैं ।

प्राकृतिक प्रभेद (Natural variants) का चयन उत्पादन तो बढ़ा सकता है, लेकिन प्रभेद उन्नति (strain improvement) का यह तरीका प्रभावशाली नहीं होता । हमें ऐसी तकनीक चाहिए, जिससे हम संवर्धन (culture) को उन्नत कर सकें । इस तरीके के लिए हमें प्रेरित उत्प्रेरकों (induced mutants) को खोजकर, पुनर्संयुक्त (recombination) प्रक्रिया अपनाई जानी चाहिए । इस कार्य के लिए सर्वाधिक उपयुक्त विधि पुनर्संयुक्त DNA तकनीक (recombinant DNA technology) हैं, जिसके जरिए ऐसे उत्पाद प्राप्त किए गए है, जो पहले संभव नहीं थे । यह तकनीक किण्वन उत्पादों को बेहतर तरीके से प्राप्त करने में बहुत लाभकारी सिद्ध हुई है ।

प्रभेद उन्नयन के लिए उत्परिवर्तक (mutants) काफी महत्त्वपूर्ण होते हैं । प्रेरित उत्परिवर्तन के द्वारा वांछित उत्पाद की उत्पादन मात्रा को बढ़ाया जा सकता है तथा यह संतति, जनक की अपेक्षा बेहतर उत्पादक होती है । ऐसे आइसोलेट्स (isolates) प्राप्त करने के लिए "निर्देशित उत्परिवर्तन" (direct mutation) तकनीक का उपयोग किया जाता है । इस तकनीक के द्वारा उच्च दर पर उत्परिवर्तित प्रभेद प्राप्त किए जाते हैं । प्रभेद उन्नयन तकनीक के लिए उपयुक्त उत्परिवर्तक (mutagen) का चयन किया जाना आवश्यक है । उदाहरण के लिए, हॉस्टेलक (Hostalek 1964) ने स्ट्रेप्टोमाइसीज ऑरियोफसियन्स से टेट्रासाइक्लिन के उत्पादन को बढ़ाने के लिए सबसे अधिक उपयुक्त म्यूटाजन "पराबैंगनी विकिरणों" (ultraviolet radiation) को रिकार्ड किया । De Witt et al. (1980) ने कई अन्य म्यूटाजन को भी प्रभावी बताया, उनके अनुसार किसी प्रभेद में सुधार के लिए यह ज्ञात होना आवश्यक है, कि उत्परिवर्तन का कौनसा प्रकार आण्विक स्तर पर प्रभावी होगा । प्रभेद उन्नयन की दूसरी तकनीक के रूप में "चयन तकनीक" (selection technique) विकसित की गई है । 'निर्देशित उत्परितर्वन' (direct mutation) के लिए DNA अणु को प्रयोगशाला परिस्थितियों (in vitro) में एन्जाइम द्वारा विदलित (cleavage) कर विशिष्ट स्थान पर उत्परिवर्तन प्रेरित किया जाता है । जब इस रूपान्तरित DNA को पुन: कोशिका में प्रविष्ट करवाया जाता है, तो यह कोशिका उत्परिवर्तित गुण प्राप्त कर चुकी होती है । इस cloned DNA में जब किसी मार्कर (marker) को जोड़ा जाता है, तो इन कोशिकाओं से रूपान्तरित जीन (modified gene) प्राप्त होते हैं ।

अन्य जीवित समुदाय से वांछित उत्प्रेरक (desirable mutants) को खोजना, प्राकृतिक तौर पर वांछित जीव के पृथक्करण के समान है । अन्तर केवल इतना है, कि चयनित म्यूटेण्ट में उन्नत लक्षण मौजूद होने चाहिए ।

1.6.1 प्रेरित उत्प्रेरक के चयन द्वारा प्राइमरी मेटाबोलाइट्स की उन्नत स्तर का संश्लेषण (The selection of induced mutants synthesizing improved levels of primary metabolities)

सूक्ष्मजीवों में प्राइमरी मेटाबोलाइट्स स्तर "फीड बैक नियंत्रण" (feed back control) द्वारा नियन्त्रित किया जाता है । इसके दो मुख्य प्रकार हैं - फीड बैक संदमन (inhibition) तथा फीड बैक अवमंदन (repression) फीड बैक संदमन (inhibition) वो स्थिति है जब किसी जैव रसायन प्रक्रिया का अंतिम उत्पाद (end product) ऐसे एन्जाइम्स की सक्रियता को संदमित करता है जो इस प्रक्रिया को उत्प्रेरक करने का कार्य करता है । अंतिम उत्पाद के एन्जाइम के साथ एलोस्टेरिक (allosteric) स्थल पर जुड़ जाने से संदमन होता है, क्योंकि एन्जाइम, आधार (substrate) के साथ जुड़ने में असक्षम हो जाता है ।

फीडबैक अवमंदन (repression) वह स्थिति है जहाँ किसी जैव रासायनिक प्रक्रिया में बनने वाला अंतिम उत्पाद उस एन्जाइम के संश्लेषण को रोकता है जो उस प्रक्रिया की किसी अभिक्रिया को उत्प्रेरक करता है । अवमंदन (repression) प्रक्रिया जीन (gene) स्तर पर सम्पन्न होती है, इसमें अंतिम उत्पाद का व्युत्पन्न (derrivative), जीनोम के साथ इस प्रकार जुड़ता है कि यह उस जीन का ट्रांसक्रिप्शन mRNA में होने से रोकता है, फलस्वरूप एन्जाइम संश्लेषण रूक जाता है ।

फीडबैक अवमंदन तथा संदमन द्वारा किसी जैव संश्लेषण प्रक्रिया को नियंत्रित किया जाता है । जहाँ संदमन द्वारा किसी जैव संश्लेषण प्रक्रिया में अंतिम उत्पाद का बनना स्विच ऑफ हो जाता है तथा अवमंदन (repression) द्वारा

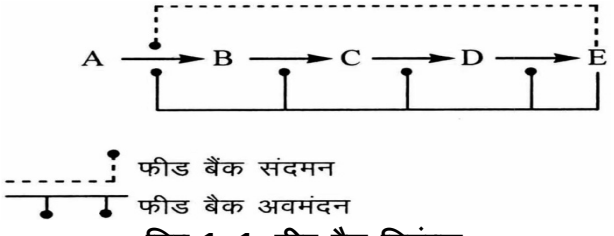

चित्र 1 .1. फीड बैक नियंत्रण

जिन जैवरासायनिक प्रक्रमों में कई अंतिम उत्पाद (branched pathway के जरिये) प्राप्त होते हैं, वे अपेक्षाकृत अधिक जटिल होते हैं उन प्रक्रमों से जो simple pathway के जरिये प्राप्त होते हैं ।

1.6.2 पुनर्संयुक्तन द्वारा औद्योगिक प्रभेद उन्नयन (The use of recombination systems for the improvement of industrial strain)

सर्वप्रथम हॉमबुड ने 1979 में पुर्नसयुक्तन को विस्तृत रुप से परिभाषित किया - "वह प्रक्रिया जिसके द्वारा जीन के ऐसे नये संयोग बनाते जायें, तो मूलरूप से दूसरी प्रजाति में उपस्थित होते हैं ।" पुनर्संयुक्त DNA तकनीक को उत्परिवर्तन तथा चयन तकनीक से जोड़ कर अधिक प्रभावशाली परिणाम प्राप्त किए जा सकते हैं । औद्योगिक महत्त्व के कुछ सूक्ष्मजीवों में ही लैंगिक जनन (sexual reproduction) पाया जाता है, इसलिए यह आवश्यक नहीं है कि पुनर्संयुक्तन केवल उन्हीं जीवों में होगा जिनमें लैंगिक जनन होता है । बहुत से किण्वित उत्पादों का उत्पादन बढ़ाने के लिए पुनर्संयुक्तन तकनीक प्रयुक्त की जाती है ।

पुनर्संयुक्तन DNA प्रौद्योगिकी (recombinant DNA technology) की तकनीकों का उपयोग कर किण्वित उत्पादों के विभव को बढ़ाया गया है । उच्च जीवों के जीन्स को सूक्ष्मजीवों की कोशिकाओं में इस प्रकार प्रतिस्थापित किया जाता है, कि ग्राही कोशिकाएं बाहरी प्रोटीन के संश्लेषण में सक्षम हो पायें । इन विधियों के लिए ई. कोलाई, सैकेरोमाइसीज सेरेविसि तथा अन्य तन्तुमय कवकों को प्रयोग में लिया जाता है । इस तरह आनुवांशिक अभियांत्रिकी द्वारा इन्सुलिन, इन्टरफेरॉन, मानव सीरम एल्ब्यूमिन, एपीडर्मल ग्रोथ फैक्टर तथा बोवीन सोमाटोस्टेटिन का उत्पादन किया जा रहा है ।

परालिंगी चक्र (Parasexual Cycle)

बहुत से सूक्ष्मजीव जो किण्वन में प्रयुक्त किए जाते हैं, उनमें लैंगिंक अवस्था नहीं पाई जाती है, इसलिए इन जीवों में पुनर्संयुक्तन भी प्राय: नहीं हो पाता । पोन्टेकोर्वो एवं उसके सहयोगियों ने 1953 में प्रदर्शित किया, कि लैंगिक अंगों के अनुपस्थित होने पर भी केन्द्रकीय संलयन तथा जीन पृथक्करण की प्रक्रिया संभव है । इस प्रक्रिया को पैरासैक्सुअल साइकल कहा गया ।

यह प्रक्रिया इम्पर्फेक्ट फंजाई जैसे एस्पर्जिलस नाइगर पेनिसिलियम क्राइसोजीनम में देखी गई । इम्पर्फेक्ट फंगस के कायिक कवक तन्तु में असमान केन्द्रकों के बीच केन्द्रक संलयन देखा गया है । पुनर्संयुक्तन केवल उन जीवों में देखा जा सकता है, जिनमें कम से कम दो भिन्न प्रकार के केन्द्रक उपस्थित हों अर्थात् विषमकेन्द्रकी जीवों में ।

1.7 सारांश (Summary):

सूक्ष्मजैविक जैवप्रौद्योगिकी, सूक्ष्मजीव विज्ञान की एक महत्त्वपूर्ण शाखा है, जिसमें सूक्ष्मजीवों को प्रयुक्त कर बहुत महत्त्वपूर्ण जैविक उत्पाद प्राप्त किये जाते हैं । ये उत्पाद आर्थिक दृष्टि से भी अधिक महत्त्वपूर्ण हैं, क्योंकि अधिकतर किण्वित उत्पादों की कीमत संश्लेषित उत्पादों (synthetic products) से प्राय: कम आंकी गई है ।

मानव पुरातन काल से ही सूक्ष्मजीवों की जैव रासायनिक क्रियाओं का उपयोग अपने दैनिक जीवन में करता आ रहा है । यद्यपि मानव को इन जैवरासायनिक क्रियाओं के वास्तविक कारणों का ज्ञान नहीं था । ईसा से 6000 वर्ष पूर्व बेबिलोनियन व सुमेरियन सभ्यता के लोग शराब बनाने में दक्ष थे । मिश्रवासी डबलरोटी को बनाने में सूक्ष्मजीवों का उपयोग करते थे । जैसे-जैसे सूक्ष्मजीवों

का ज्ञान होता रहा, वैसे-वैसे हर क्षेत्र में इनका उपयोग कर जैविक उत्पाद प्राप्त किए जाने लगें । लाटोर एवं श्वान ने 1837 में बीयर व मदिरा निर्माण में यीस्ट की भूमिका का पता लगाया । पॉश्चर ने भी 1856 में शर्करा युक्त पदार्थों से एल्कोहल निर्माण में यीस्ट के महत्त्व का वर्णन किया ।

सूक्ष्मजीवों की रसायन उद्योग में महत्ता को नकारा नहीं जा सकता, क्योंकि सूक्ष्मजीवों द्वारा वर्तमान में विभिन्न औषधियाँ, किण्वक, टीके तथा अन्य रासायनिक यौगिकों का थोक में उत्पादन किया जा रहा है, जिनका सम्बन्ध मानव कल्याण से है । वर्तमान में आनुवांशिक अभियांत्रिकी ने सूक्ष्मजैविकी के क्षेत्र में नये द्वार खोल दिए है । सूक्ष्मजीवों के आनुवांशिक पदार्थों में परिवर्तन कर इनका उपयोग हॉर्मोन, वैक्सीन एवं अन्य पदार्थों के संश्लेषण हेतु किया जाता है । आनुवांशिक रूप से रूपान्तरित सूक्ष्मजीवों का औद्योगिक प्रक्रमों में उपयोग जैवप्रौद्योगिकी कहलाता है ।

विभिन्न प्रकार के एन्जाइम, अमीनों अम्ल, विटामिन, एण्टीबायोटिक्स, कार्बनिक अम्ल तथा एल्कोहॉल का व्यापारिक स्तर पर उत्पादन सूक्ष्मजीवों की सहायता से होता है । किण्वन उद्योग में जो सूक्ष्मजीवी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं उन्हें तीन समूहों - मोल्ड, यीस्ट तथा जीवाणु में विभक्त किया गया है ।

किसी विशिष्ट तकनीक के लिए आवश्यक सूक्ष्मजीवों की विशिष्ट प्रभेद को संवर्धित करवाया जाता है, तथा आवश्यकतानुसार इनका चयन दो प्रकार से किया जाता है - प्राथमिक विविक्तिकरण तथा द्वितीयक विविक्तिकरण द्वारा । एक वृहद् सूक्ष्मजीवी समुदाय से केवल वांछित गुणों वाले सूक्ष्मजीवों का चयन तथा पृथक्करण के लिए जिन तकनीकों का उपयोग किया जाता है, उसे विविक्तिकरण (screening) कहते है । प्राथमिक विविक्तिकरण के फलस्वरूप औद्योगिक महत्त्व के सूक्ष्मजीवों को पहचान कर पृथक् किया जाता है । द्वितीयक विविक्तिकरण से सूक्ष्मजीव के व्यापारिक महत्त्व की वास्तविक क्षमता / उत्पादन सामर्थ्य का ज्ञान होता है ।

वो चयनित सूक्ष्मजीव जो व्यापारिक रूप से महत्त्वपूर्ण उत्पाद उत्पन्न करने की क्षमता रखते हैं, उनके उत्पादन को बढ़ाने के लिए हर संभव प्रयास किए जाते हैं । किसी जीव की उत्पादन क्षमता उसके जीनोम द्वारा नियंत्रित की जाती है, इसलिए उत्पादन बढ़ाने के लिए उसके जीनोम को रूपान्तरित करना आवश्यक होता है । प्रभेद उन्नयन (strain improvement) के अन्तर्गत संवर्धक के जीनोम में लगातार आनुवांशिक परिवर्तन किए जाते हैं, तथा उसी के अनुरूप उसकी बदली हुई संवर्धन आवश्यकताओं को पूर्ण किया जाता है । प्रभेद उन्नयन के लिए उत्परिवर्तक काफी महत्त्वपूर्ण होते हैं । प्रेरित उत्परिवर्तन (induced mutation) के द्वारा वांछित उत्पाद की उत्पादन मात्रा को बढ़ाया जा सकता है तथा यह संतति, जनक की अपेक्षा बेहतर उत्पादक होती है । पुनर्संयुक्त DNA तकनीक (recombinant DNA technology) को उत्परिवर्तन तथा चयन तकनीक से जोड़कर अधिक प्रभावशाली परिणाम प्राप्त किए जा सकते हैं ।

1.8 बोध प्रश्नों के उत्तर :

1. असत्य
2. सत्य
3. सत्य
4. असत्य
5. जब सूक्ष्मजीवों को व्यापारिक महत्त्व हेतु आनुवांशिक रूप से रूपान्तरित कर औद्योगिक प्रक्रमों में प्रयुक्त किया जाये, तो यह प्रणाली सूक्ष्मजैविक जैवप्रौद्योगिकी कहलाती है ।
6. म्यूकर, राइजोपस, एस्परजिलस, पेनिसिलियम इत्यादि ।
7. सैकेरोमाइसीज
8. पेनिसिलियम क्राइसोजीनम
9. स्ट्रेप्टोमाइसीज ग्रिसियस
10. एक मिश्रित वृहद सूक्ष्मजीवी समुदाय से वांछित गुणों वाले सूक्ष्मजीवों का चयन एवं पृथक्करण के लिए विविक्तिकरण आवश्यक है ।
11. सघन प्लेट विधि (Crowded Plate Method)
12. द्वितीयक विविक्तिकरण से सूक्ष्मजीव के व्यापारिक महत्त्व की वास्तविक क्षमता तथा उसके बेहतर विभव (potential) की जानकारी प्राप्त होती है ।

1.9 अभ्यासार्थ प्रश्न (Exercise Questions):

1. सूक्ष्मजैविक जैवप्रौद्योगिकी का विस्तृत परिचय दीजिए ।
2. विकासशील देशों में सूक्ष्मजैविक जैवप्रौद्योगिकी की भविष्य में क्या संभावनाएँ है ?
3. किण्वन की विभिन्न प्रक्रियाओं में प्रयुक्त सूक्ष्मजीवियों का वर्णन कीजिए ।
4. औद्योगिक महत्त्व के सूक्ष्मजीवों के लिए प्राथमिक तथा द्वितीयक विविक्तिकरण का क्या महत्त्व है ?
5. व्यापारिक क्षेत्र के विकास में औद्योगिक प्रभेद उन्नयन का क्या योगदान है ?
6. टिप्पणी लिखिए -
   (i) सूक्ष्मजैविक जैवप्रौद्योगिकी का इतिहास
   (ii) किण्वन में प्रयुक्त सूक्ष्मजीव
   (iii) विविक्तिकरण
   (iv) पुनर्संयुक्तन द्वारा औद्योगिक प्रभेद उन्नयन

1.10 शब्दावली (Glossary):

1.	किण्वन	-	Fermentation
2.	विवक्तिकरण	-	Screening
3.	पुनर्संयुक्तन	-	Recombination

1.11 संदर्भ ग्रन्थ (Reference Books):

1. केसिडा इण्डस्ट्रियल माइक्रोबायोलोजी, न्यू एज इन्टरनेशनल (प्रा.) लि. पब्लिशर्स, नई दिल्ली ।
2. पटेल, इण्डस्ट्रियल माइक्रोबायोलोजी, मेकमिलन इंडिया लिमिटेड, नई दिल्ली ।
3. स्टेनबरी, विटेकर एवं हॉल, प्रिंसिपल्स ऑफ फर्मेण्टेशन टेक्मोलॉजी, एल्सवेयर, नई दिल्ली ।
4. दुबे एवं माहेश्वरी, टैक्सट बुक ऑफ माइक्रोबायोलॉजी, एस चौड एन. के., नई दिल्ली ।

इकाई 2

सूक्ष्मजीवों का संवर्धन

(Culture of Microorganisms)

इकाई की रूपरेखा

2.0 उद्देश्य

2.1 प्रस्तावना

2.2 संवर्धन माध्यम का निर्माण

2.2.1संवर्धन माध्यम के प्रकार

2.2.2पोषकीय आवश्यकताएँ

2.3 ठोस, अर्धठोस तथा तरल संवर्धन माध्यम

2.4 निर्जमीकरण

2.5 फेड बैच किण्वन प्रक्रिया

2.6 सतत् किण्वन

2.7 बैच किण्वन

2.8 वातन

2.9 प्रक्षोभन

2.10 सूक्ष्मजीवी वृद्धि गतिकी

2.10.1 वृद्धि वक्र

2.11 वृद्धि के मापक

2.12 पर्यावरणीय कारक तथा सूक्ष्मजैविक वृद्धि

2.13 औद्योगिक महत्त्व के सूक्ष्मजीवों के संवर्धन हेतु उपकरण तथा अन्य सामग्री

2.14 सारांश

2.15 बोध प्रश्नों के उत्तर

2.16 अभ्यासार्थ प्रश्न

2.17 शब्दावली

2.18 संदर्भ ग्रन्थ

2.0 उद्देश्य (Objectives):

1. इस इकाई के अध्ययन से आपको यह ज्ञात होगा, कि संवर्धन माध्यम क्या होता है, कितने प्रकार का होता है एवं इसको बनाने की विधि क्या है ?

2. संवर्धन माध्यम के निर्माण में कौन-कौनसी निर्जमीकरण पद्धतियों को प्रयुक्त किया जाता है ?
3. इस इकाई में आप किण्वन प्रक्रिया की विभिन्न तकनीक तथा सम्बन्धित उपकरणों के बारे में पढ़ेंगे ।
4. इस इकाई के अध्ययन से आपको ज्ञात होगा, कि औद्योगिक महत्त्व के सूक्ष्मजीवी कौन-कौनसे होते हैं, उनकी वृद्धि गतिकी क्या होती है ?
5. सूक्ष्मजीवियों की वृद्धि को किस प्रकार मापा जा सकता है, तथा पर्यावरणीय कारक किस प्रकार इनकी वृद्धि को प्रभावित करते हैं ।

2.1 प्रस्तावना (Introduction) :

सजीवों में ऊर्जा की प्राप्ति एवं नये कोशिकीय घटकों के निर्माण के लिये पोषकों (nutrients) की आवश्यकता होती है । पोषक वे पदार्थ हैं, जिनका उपयोग ऊर्जा उत्पादन एवं जैव संश्लेषण हेतु किया जाता है । अत: जीवाण्वीय वृद्धि हेतु पोषकों की आवश्यकता होती है । जीवाणु अतिसूक्ष्म संरचनाऐं होती हैं लेकिन विभिन्न प्रकार के आवास एवं वासस्थलों में पाये जाने के कारण इनमें पोषण की अनेक विधियाँ पाई जाती है ।

सूक्ष्मजीवी कोशिकाएँ स्वतन्त्र होती है जिनमें ऊर्जा (energy) एवं पदार्थ (matter) को नियंत्रित करने की क्षमता होती है । ये दोनों, ऊर्जा तथा पदार्थ को परस्पर सम्बन्धित कर किण्वक-नियंत्रित क्रमवार जैव रासायनिक प्रतिक्रियाओं द्वारा प्रवाहित करती है । ये जैव रासायनिक पथ प्रत्येक जाति के लिए विशिष्ट होते हैं । कुछ उपापचयी पथों द्वारा कोशिका के लिए आवश्यक संरचनात्मक पदार्थों का निर्माण होता है जो वृद्धि एवं जनन के दौरान प्रयुक्त होते हैं । इस प्रकार के संरचनात्मक उपापचय को उपचय (anabolism) कहा जाता है । अन्य जैवरासायनिक पथों द्वारा जटिल अणुओं का विखण्डन होता है जिसके अन्तर्गत ऊर्जा उत्पन्न होती है एवं अणुओं के सरल घटक अणुओं की प्राप्ति होती है । इस प्रकार की प्रक्रिया अपचय (catabolism) कहलाती है । यदि उपचय प्रक्रिया की गति अपचय प्रक्रिया से अधिक होती है, तो कोशिका की वृद्धि होती है एवं उसमें जनन सम्पन्न होता है । इसके विपरीत यदि अपचयी प्रक्रिया की गति तेज हो, तो कोशिका स्वत: नष्ट हो जाती है ।

किसी माध्यम (medium) में सूक्ष्मजीवों की वृद्धि संवर्धन (culture) कहलाती है । किसी जीव की वृद्धि में सहायक पोषक पदार्थ, संवर्धन माध्यम (culture medium) कहलाते हैं । संवर्धन माध्यम के जरिये जीव अपनी पोषक आवश्यकताओं को पूर्ण करते है ।

जब जीवाणुओं की वृद्धि तथा प्रजनन प्रयोगशाला में संवर्धन माध्यम में की जाती है, तो उसे जीवाण्वीय संवर्धन कहते हैं । जीवाण्वीय संवर्धन का उपयोग रोगजनक जीवाणुओं एवं लाभदायक जीवाणुओं की पहचान हेतु किया जाता है । इनका संवर्धन प्राकृतिक या कृत्रिम माध्यमों में किया जाता है ।

2.2 संवर्धन माध्यम का निर्माण (Culture Media Preparation) :

प्रयोगशाला में सूक्ष्मजीवों की वृद्धि के लिए तैयार किया गया पोषक पदार्थों का सम्मिश्रण, संवर्धन माध्यम (culture medium) कहलाता है । प्रयोगशाला में सूक्ष्मजीवों की वृद्धि एवं देखभाल मुख्य रूप से उपर्युक्त संवर्धन माध्यम पर

निर्भर करती है । इसके अलावा सूक्ष्मजीवों की पहचान एवं पृथक्करण के लिए विशिष्ट माध्यम (specialized media) की आवश्यकता होती है । यद्यपि प्रत्येक सूक्ष्मजीव को ऊर्जा के स्त्रोत, कार्बन (C), नाइट्रोजन (N), फॉस्फोरस (P), सल्फर (S) एवं विभिन्न खनिजों की आवश्यकता होती है । इसके अतिरिक्त, किसी संवर्धन माध्यम का प्रकार, सूक्ष्मजीव की प्रकृति पर निर्भर करता है, क्योंकि प्रत्येक सूक्ष्मजीव की पोषकीय आवश्यकताएँ अलग-अलग प्रकार की होती है ।

2.2.1 संवर्धन माध्यम के प्रकार (Types of Culture Medium)

संवर्धन माध्यम मुख्य रूप से तीन प्रकार के होते हैं -

(अ) प्राकृतिक माध्यम (Natural Medium)

प्राकृतिक माध्यम के मुख्य घटक, प्राकृतिक उत्पाद (natural products) होते हैं जैसे - रक्त (blood), मूत्र (urine), दूध (milk), वनस्पति-रस (vegetable juice), जन्तु कोशिकाएँ/ऊतक/अंग (animal cells/tissue/organs) इत्यादि । इस प्रकार के माध्यम में निश्चित रासायनिक घटक प्राप्त नहीं किए जा सकते ।

(ब) अर्ध-संश्लेषित माध्यम (Semi-synthetic Medium)

अर्ध-संश्लेषित माध्यम में उपस्थित घटक आंशिक (partial) रूप से ज्ञात होते हैं । उदाहरण - पोटेटो-डेक्सट्रोज-अगार (Potato-Dextrose-Agar), जैपेक-डॉक्स-अगार (Czapek-Dox-Agar), न्यूट्रीएन्ट अगार (Nutrient Agar), बीफ एक्सट्रेक्ट अगार (Beef Extract Agar)

(स) संश्लेषित माध्यम (Synthetic Medium)

इन माध्यमों का निर्माण पूर्णतया रासायनिक पदार्थों से ही किया जाता है । अत: इनकी सान्द्रता पूर्णतया ज्ञात होती है । निम्न प्रकार के संश्लेषित माध्यम संभव है -

(i) सामान्यतया प्रयुक्त होने वाला माध्यम (General Purpose Medium)

जो सामान्यतया (routine) सूक्ष्मजीवी प्रयोगों में प्रयुक्त किया जाता है ।

(ii) विभेदक माध्यम (Differential Medium)

ये सूक्ष्मजीवियों के समूहों को विभेदात्मक रूप से पृथक कर सकते हैं । इन माध्यमों में अलग-अलग वर्णक (dyes) तथा रंग सूचकों (colour indicators) का प्रयोग किया जाता है । उदाहरण - मैक्कोन्की (McConkey) तथा इओसिन मिथाइलीन ब्लू अगार (Eosine methylene blue agar) इत्यादि ।

(iii) चयनात्मक माध्यम (Selective Medium)

इस माध्यम में ऐसे घटक होते हैं, जो कुछ सूक्ष्मजीवियों की वृद्धि को तो संदमिंत करते हैं और आवश्यक वांछित सूक्ष्मजीवियों की वृद्धि को प्रेरित करते हैं ।

(iv) एकल लक्ष्य माध्यम (One-Purpose Medium)

ऐसा माध्यम जो विशिष्ट सूक्ष्मजीव की वृद्धि के लिए विशिष्ट प्रकार का होता है । उदाहरण - साल्मोनेला (Salmonella) के लिए बिलिएण्ट अगार माध्यम (brilliant agar medium) ।

(v) समृद्धित माध्यम (Enriched medium)

इस माध्यम में रक्त, सीरम, अण्डे की जर्दी को आधार के रूप में प्रयुक्त किया जाता हे । इस माध्यम से जीवाणुओं को आवश्यक पोषक तत्व उपलब्ध करवाये जाते हैं ।

2.2.2 पोषकीय आवश्यकताएँ (Nutritional Requirements)

सूक्ष्मजीवों को शरीर की उपापचयी क्रियाओं को सम्पन्न करने, प्रजनन आवश्यकता, ऊर्जा उत्पादन एवं जैव संश्लेषण हेतु निम्न स्त्रोतों की आवश्यकता होती है ।

1. C, H, O हेतु आवश्यकता (Requirements for C, H, O)
2. N, P, S हेतु आवश्यकता (Requirements for N, P, S)
3. कार्बनिक वृद्धि कारकों की आवश्यकता (Requirements of organic growth factors)

1. C, H, O हेतु आवश्यकता

तीनों की आवश्यकता सामान्यतया एक साथ ही होती है । कार्बन की आवश्यकता कोशिकीय कंकाल हेतु होती है, वे पदार्थ जो C को उपलब्ध करवाते हैं, उनसे ऑक्सीजन एवं हाइड्रोजन की आपूर्ति भी होती है । सभी सूक्ष्मजीवियों में CO_2 को स्थिरीकृत किया जाता हैं एवं इससे कार्बनिक पदार्थों का संश्लेषण होता है । अनेक सूक्ष्मजीवी स्वपोषी होते हैं, जो प्रकाश संश्लेषण अथवा कुछ अकार्बनिक पदार्थों के ऑक्सीकरण से ऊर्जा की प्राप्ति करते हैं । अन्य जीव जो पूर्वनिर्मित कार्बनिक पदार्थों को कार्बन स्त्रोत के रूप में उपयोग करते हैं, विषमपोषी कहलाते हैं ।

2. N, P एवं S हेतु आवश्यकता

नाइट्रोजन का उपयोग अमीनों अम्ल, प्यूरीन, पिरिमिडीन, कार्बोहाइड्रेट, लिपिड, एन्जाइम तथा अन्य पदार्थों के संश्लेषण हेतु किया जाता है । सहजीवी जीवाणु जैसे राइजोबियम (Rhizobium), नाइट्रोजिनेज एन्जाइम की उपस्थिति में नाइट्रोजन को अमोनिया NH_3 में परिवर्तित कर देते हैं ।

अमोनिया का उपयोग अमीनो-अम्लों के संश्लेषण में किया जाता है । अमीनों अम्लों से प्रोटीन का संश्लेषण होता है । इस प्रकार स्वतन्त्र N से लाभदायक पदार्थों का संश्लेषण होता है । कुछ जीवाणु जैसे क्लोस्ट्रिडियम (Clostridium), एन्टेरोबेक्टर(Enterobacter), रोडोस्पाइरिलम (Rhodospirillum) एवं क्लोरोबियम (Chlorobium) द्वारा आण्विक नाइट्रोजन का अपचयन करके NH_3 का निर्माण किया जाता है ।

फॉस्फोरस मुख्य रूप से न्यूक्लिक अम्ल, फॉस्फोलिपिड, न्यूक्लियोटाइड, ATP कोफैक्टर, प्रोटीन तथा कोशिकीय घटकों में उपस्थित होता है । सभी सूक्ष्मजीव अकार्बनिक फॉस्फेट को P के स्त्रोत

के रूप में उपयोग में लेते हैं । जलीय वातावरण में फॉस्फेट का स्तर कम होने पर सूक्ष्मजीवियों की वृद्धि सीमित हो जाती है ।

सल्फर का उपयोग सिस्टीन, मिथियोनीन कार्बोहाइड्रेट, बायोटिन तथा थायमिन के संश्लेषण हेतु होता है । सूक्ष्मजीव, सल्फेट को सल्फर के रूप में उपयोग करते हैं । सल्फर अनेक संश्लेषी क्रियाओं में अपचयित रूप में भाग लेती है । यह निर्जलीकरण द्वारा R-S-S-R समूह में परिवर्तित हो जाती है ।

3. कार्बनिक वृद्धि कारकों की आवश्यकता (Requirements of Organic Growth Factors)

सूक्ष्मजीवियों में वृद्धि एवं प्रजनन क्रिया उस समय होती है, जब इनको खनिज C, H, O, N, P एवं S के स्त्रोत प्रचुर मात्रा में उपलब्ध हों । इन सूक्ष्मजीवों में वे सभी एन्जाइम उपलब्ध होते हैं जिनसे कोशिका के लिए आवश्यक सभी घटकों का संश्लेषण किया जाता है । कुछ सूक्ष्मजीवों में एक या अधिक आवश्यक एन्जाइम अनुपस्थित होते हैं, अत: इनमें आवश्यक पदार्थों का संश्लेषण नहीं हो पाता है । इस प्रकार के कार्बनिक यौगिक जो सूक्ष्मजीवों द्वारा संश्लेषित नहीं हो पाते । अत: इनको बाह्य वातावरण से प्राप्त किया जाता है, ये कारक वृद्धि कारक कहलाते हैं। वृद्धि कारकों (growth factors) को निम्न तीन प्रकारों में विभक्त किया गया है -

(अ) अमीनों अम्ल (Amino acid)

(ब) प्यूरीन तथा पिरिमिडीन (Purine and Pyrimidine)

(स) विटामिन (Vitamin)

(अ) अमीनो अम्ल (Amino acid)

अमीनों अम्लों का उपयोग प्रोटीन संश्लेषण में किया जाता है ।

(ब) प्यूरीन तथा पिरिमिडीन (Purine and Pyrimidine)

इनका उपयोग DNA तथा RNA के संश्लेषण में किया जाता है ।

(स) विटामिन (vitamin)

ये कार्बनिक अणु होते हैं, जो एन्जाइमों के सहकारक (co-factors) की तरह कार्य करते हैं । सूक्ष्मजीवियों की वृद्धि हेतु इनकी कम मात्रा भी प्रभावी होती है । यदि जीवाणु के लिए प्रयुक्त किये संवर्धन माध्यम में वृद्धि कारक प्रचुर मात्रा में उपस्थित हों, तो सूक्ष्मजीव तेजी से वृद्धि करते हैं । सूक्ष्मजीवों में होने वाली वृद्धि, वृद्धि कारकों की मात्रा के समानुपाती होती है ।

सारणी-1 : जैविक महत्व के तत्व; उनके प्रमुख स्त्रोत एवं उनका सूक्ष्मजीवों द्वारा उपयोग

तत्व	प्रमुख स्त्रोत	उपयोग
(Elements) (Main Reservoir)	(Use)	(Elements) (Main Reservoir)
C (कार्बन)	CO_2	सभी कार्बनिक अणुओं का मूल तत्व, ऑटोट्रोफ(स्वपोषी) CO_2

	(वायु)	को अपचयित C में परिवर्तित करते हैं (उदाहरणार्थ CH_4, $C_6H_{12}O_6$); हिट्रोट्रोफ (परपोषी) उसे CO_2 में ऑक्सीकृत करते हैं ।
H (हाइड्रोजन)	H2O (जल)	कार्बनिक अणुओं में उपस्थित जैसे कार्बोहाइड्रेट; अपचयन हेतु उपयोगी जैसे N -> NH3, SHS, C -> CH4 तथा NAD+ -> NADH2
O (ऑक्सीजन)	O2 (वायु)	अधिकांश कार्बनिक अणुओं में उपस्थित; वायुवीय श्वसन में इलेक्ट्रॉन-ग्राही के रूप में उपयोगी; कुछ प्रकाश संश्लेषीय-पथ का अन्तिम -उत्पाद ।
P (फॉस्फोरस)	PO4-3 (चट्टानें तथा खनिज)	न्यूक्लिक अम्लों; प्रोटीन, हाइड्रोजन-वाहक सहकिण्वकों तथा ऊर्जा संवहनीय अणुओं (जैसे ATP) में उपस्थित।
N (नाइट्रोजन)	N2 (वायु)	अकार्बनिक प्रकार में NH3, NO2-, NO3- के रूप में एवं कार्बनिक प्रकार में अमीनों अम्लों तथा न्यूक्लियोटाइड के रूप में उपस्थित; किन्हीं जीवाणुओं में यह नाइट्रोजन- स्थायीकरण (nitrogen ixation) द्वारा वातावरण से पहुँचती है। न्यूक्लिक अम्लों एवं प्रोटीन संश्लेषण के लिये आवश्यक; अनेक इलेक्ट्रॉन वाहकों जैसे FAD+) में उपस्थित ।
S (सल्फर)	SO4-2 (मृदा)	किन्हीं अमीनों अम्लों (जैसे सिस्टाइन, मिथियोनीन) में उपस्थित, अपचयनित दशा (H2S) में ऊर्जा-स्रोत अथवा ऑक्सीकृत प्रावस्था में इलेक्ट्रॉन-ग्राही का कार्य करता है । किन्हीं बैक्टीरिया में लौह-सल्फर (iron-sulpher) प्रोटीन के रूप में इलेक्ट्रॉन-वाहक का कार्य करती है ।
Mg (मैग्नीशियम)	Mg^{+2} (मृदा)	ATP के उपापचय के लिये आवश्यक; क्लोरोफिल में उपस्थित बैक्टीरियल कोशिका--भित्तियों के बल के पहचान-स्थान (Recognition sites) में उपयोग ।
Fe (लोह= आयरन)	Fe^{+2} or Fe^{+3}	साइटोक्रोम में उपस्थित तथा किन्हीं बैक्टीरिया में इलेक्ट्रॉन - ग्राही का कार्य
Ca (केल्शियम)	Ca+2 (मृदा)	एण्डोस्पोर में DPA के साथ उपस्थित; कोशिका-भित्ति के पहचान-स्थल, एण्डोसाइटोसिस (endocytosis), अमीबी'-गति, कोशिका-विभाजन तथा माइक्रोट्युब्यूल निर्माण में भूमिका।

2.3 ठोस, अर्धठोस तथा तरल संवर्धन माध्यम (Solid, Semisolid and Liquid Culture Medium) :

भौतिक लक्षणों के आधार पर संवर्धन माध्यम निम्न तीन प्रकार के होते हैं -

(क) ठोस माध्यम (Solid Medium)

माध्यम में 5-7% अगार-अगार (Agar-Agar) या 10-20% जिलेटिन के मिलाने पर तरल (ब्रोथ) ठोस हो जाता है । ठोस संवर्धन माध्यम का उपयोग अगार स्लाण्ट (Agar-slant) बनाने के काम में लिया जाता है ।

(ख) अर्द्ध ठोस माध्यम (Semi Solid Medium)

इस प्रकार के माध्यम में ठोस माध्यम की अपेक्षा 50% अगार का उपयोग किया जाता है । इस प्रकार का माध्यम चयनात्मक होता है । ऐसा माध्यम एक सूक्ष्मजीव की वृद्धि को प्रेरित करता है एवं उसी समय दूसरे सूक्ष्मजीव की वृद्धि को संदमित (inhibit) करता है ।

(ग) तरल माध्यम (Liquid Medium)

इस प्रकार के माध्यम में अगार का उपयोग नहीं किया जाता है । संरोपण (inoculation) एवं सेवन (incubation) के पश्चात् माध्यम की सतह पर कोशिकाओं की वृद्धि आरंभ हो जाती है ।

सारणी-2 : Composition of some Common Complex Mediums

	घटक	सान्द्रता
(1)	**न्युट्रिएन्ट ब्रोथ (Nutrient Broth)**	
	पेप्टोन	5.0
	बीफ एक्सट्रेक्ट	3.0
	सोडियम क्लोराइड	5.0
(2)	**न्यूट्रीएण्ट अगार माध्यम (Nutrient Agar Medium)**	
	पेप्टोन	5.0
	बीफ एक्सट्रेक्ट	3.0
	सोडियम क्लोराइड	5.0
	अगार	5.0
(3)	**पोटेटो-डैक्सट्रोज अगार (Potato Dextrose Agar)**	
	आलू (लुग्दी)	200.0
	अगार	5.0
	डेक्सट्रोज़	20.0
(4)	**माल्ट अगार (Malt Agar)**	
	माल्ट एक्सट्रेक्ट	30.0
	अगार	15.0
(5)	**फीनॉल-लाल-अगार (Phenol-Red-Agar)**	
	पेप्टोन	10.0

सोडियम क्लोराइड	5.0
अगार	15.0
फीनॉल-रैड	0.018

माध्यम की विशेषताएँ (Characteristics of Medium)

1. माध्यम को बनाने की प्रक्रिया एवं उसके उपयोग की क्रिया आसान होनी चाहिए ।
2. माध्यम ना तो अधिक अम्लीय और ना ही अधिक क्षारीय होना चाहिए ।
3. संवर्धन माध्यम में वृद्धि कारक उपस्थित होने चाहिए ।
4. इसमें सभी प्रकार के पोषक पदार्थ उचित मात्रा में होने चाहिए ।
5. माध्यम को उपयोग में लाने से पहले निर्जमीकृत किया जाना चाहिए ।
6. माध्यम में उचित pH, नमी एवं उपयुक्त ऑक्सीजन की मात्रा होनी चाहिए ।
7. प्रत्येक माध्यम में ऊर्जा स्रोत, कार्बन एवं नाइट्रोजन उपस्थित होना चाहिए ।
8. संवर्धन माध्यम को उचित तापक्रम पर सेवन (incubate) करना चाहिए ।

संवर्धन हेतु सावधानियाँ (Precautions for Culture)

संवर्धन माध्यम के निर्माण के समय निम्न सावधानियाँ रखना आवश्यक है -

1. काँच के सभी उपकरण निर्जमीकृत (sterilized) होने चाहिए ।
2. माध्यम निर्माण के लिये हमेशा आसुत जल (distilled water) का प्रयोग करना चाहिए ।
3. माध्यम निर्माण के समय किसी भी प्रकार की अवक्षेपण क्रिया नहीं होनी चाहिए ।
4. माध्यम की pH का मान नियत होना चाहिए ।
5. माध्यम को नियत समय के लिए निर्धारित दाब पर ऑटोक्लेव करना चाहिए ।
6. जीवाणुओं की वृद्धि हेतु, पृष्ठ सतह बढ़ाने के लिए स्लाण्ट बनाये जाने चाहिए ।
7. समुचित निर्जमीकृत या पूतिरोधी वातावरण में विभिन्न संवर्धित क्रियाओं को सम्पादित करने के लिए प्रयोगशाला में एक संवर्धन प्रकोष्ठ (culture chamber) एवं लेमीनार फ्लो (laminar flow) होना चाहिए ।

बोध प्रश्न

1. जीवाण्वीय वृद्धि में पोषकों का क्या महत्व है ?

   .....

2. संवर्धन माध्यम क्या है ? परिभाषित कीजिए ।

   .....

3. ठोस एवं तरल माध्यम के बीच अन्तर स्पष्ट कीजिए ।

   .....

4. स्लाण्ट बनाने की क्या आवश्यकता है ?

   .....

2.4 निर्जमीकरण (Sterilisation):

संवर्धन माध्यम के निर्माण के समय यह ध्यान रखना आवश्यक है, कि आस-पास का वातावरण तथा संवर्धन माध्यम को निर्जमीकरण (sterilisation) प्रक्रिया द्वारा सूक्ष्मजीवियों से मुक्त कर लिया जाये । उद्देश्य के अनुरूप, माध्यम बनाने से पहले फ्लास्क, बॉटल्स, परखनली, पैट्री-डिश को निर्जमीकृत करना आवश्यक होता है । इन पात्रों को अनवशोषी रूई (nonabsorbant cotton) की सहायता से बंद करना चाहिए । माध्यम को जिन पात्रों (containers)में रखते हैं, उन्हें 15-20 मिनिट के लिए 15-20 lb दाब पर ऑटोक्लेव (autoclave)किया जाता है । जिन उपकरण/पदार्थ (material) का ऑटोक्लेव करना हो उनकी प्रकृति के अनुसार दाब (pressure) तथा समय (time) निर्धारित किया जाता है । प्रयोगशाला में काम आने वाला संवर्धन माध्यम सामान्यतया ठोस, अर्धठोस तथा तरल प्रकार के होते हैं । सर्जिकल सुईयाँ, कैंची तथा चिमटी को उबलते हुए पानी में निर्जमीकृत किया जाता है ।

निर्जमीकरण (sterilisation) वह प्रक्रिया है, जिसमें जीवित सूक्ष्मजीवियों की वृद्धि को भौतिक एवं रासायनिक विधियों द्वारा नियंत्रित किया जा सकता है ।

निर्जमीकरण के लिए प्रयुक्त की जाने वाली विधियाँ निम्नलिखित है -

(अ) ऊष्मा उपचार (Heat Treatment)

इस विधि का उपयोग उन जीवाणुओं हेतु किया जाता है, जो बीजाणु (spores) का निर्माण करते हैं । एण्डोस्पोर का निर्माण करने वाले जीवाणुओं का चयन करने के लिए मिश्रित संवर्धन को 80°C पर 10 मिनिट तक गर्म करते हैं । इस विधि में केवल एण्डोस्पोर का निर्माण करने वाले जीवाणु ही जीवित रह पाते हैं, अन्य जीवाणुओं की मृत्यु हो जाती है ।

(i) शुष्क ऊष्मा द्वारा निर्जमीकरण (Sterilisation by Dry Heat)

काँच के उपकरण तथा धातु पात्रों के निर्जमीकरण के लिए इस विधि का उपयोग किया जाता है । इस प्रक्रिया में आधे से एक घण्टे के लिए 150°C तापक्रम पर शुष्क ऊष्मा द्वारा निर्जमीकरण किया जाता है ।

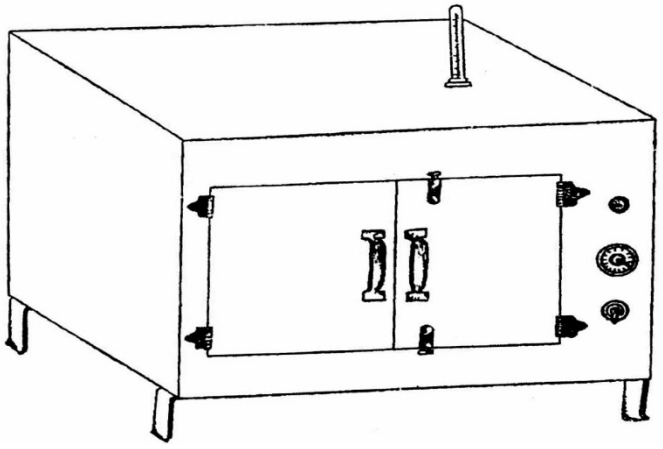

चित्र 2.1 : हाट एयर ओवन

(ii) उबलते हुए पानी द्वारा निर्जर्मीकरण (Sterilisation by Boiling Water)

शल्य क्रिया हेतु प्रयुक्त सुईयाँ, कैंची, चिमटी इत्यादि का निर्जमीकरण उबलते हुए पानी (100°C) द्वारा किया जाता है ।

(iii) भाप / नम ऊष्मा द्वारा निर्जर्मीकरण (Sterilisation by Steam / Moist Heat)

निर्जमीकरण का यह तरीका सर्वाधिक उपर्युक्त है, क्योंकि सूक्ष्मजीवियों का कोशिकाद्रव्य 90% जल युक्त होता है और इस विधि द्वारा कोशिकाद्रव्य को भेदा (नष्ट) जा सकता है । सूक्ष्मजीवियों की कायिक कोशिकाओं को नष्ट होने में आधे से एक घण्टे का समय लगता है । इस विधि के लिए अर्नोल्ड का स्टीम स्टेरीलाइजर (Arnold's Steam Steriliser) सर्वाधिक उपयुक्त है, इसके लिए निर्जमीकरण किया जाने वाला पदार्थ अथवा उपकरण को भाप में रखा जाता है ।

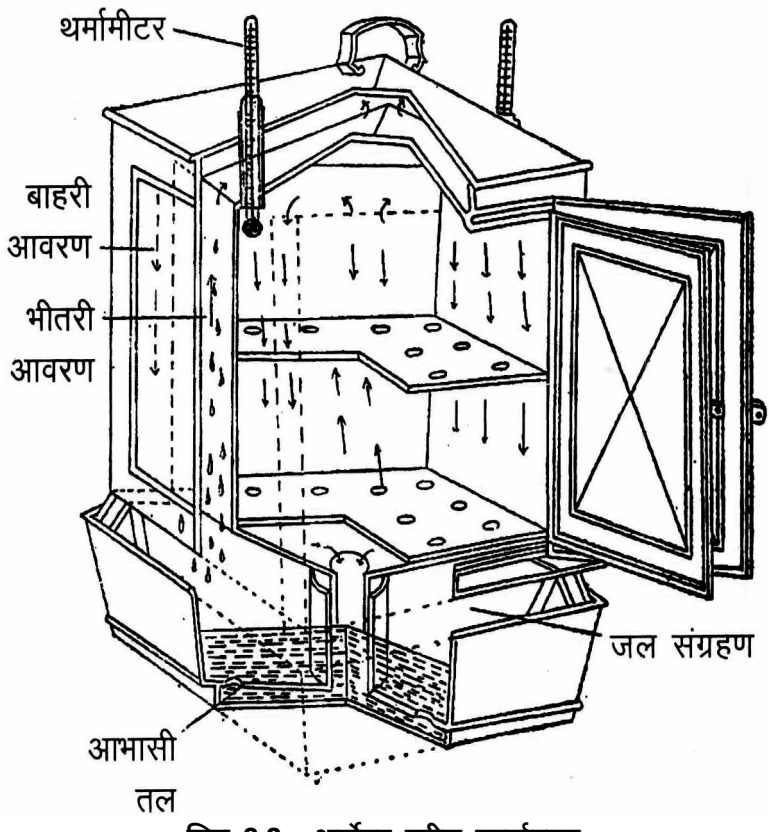

चित्र 2.2 : अर्नोल्ड स्टीम स्टर्लाइजर

(iv) दाब युक्त वाष्प द्वारा निर्जमीकरण (Sterilisation by Steam Under Pressure)

निर्जमीकरण का यह तरीका संवर्धन तथा उपकरण दोनों के लिए ही काफी प्रभावी होता है । इस विधि में तापक्रम को बढ़ाए बिना निर्जमीकरण को अधिक प्रभावी बनाने के लिए दाब (pressure) की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है । इस विधि के उपयोग करने से संवर्धन माध्यम के संगठन (composition) पर भी कोई विपरीत प्रभाव नहीं पड़ता । इस विधि में ऑटोक्लेव (autoclave) का उपयोग किया जाता है । जब ऑटोक्लेव के भीतर वाष्प बनना शुरू होती है, तो स्टीम-वॉल्व बंद हो जाता है और जो वाष्प दाब बढ़ता है, उसे दाब-गॉज (pressure-gauge) के

द्वारा पढ़ा जा सकता है । सामान्यतया, संवर्धन माध्यम के निर्जमीकरण के लिए माध्यम को 15 lb दाब पर 15-20 मिनिट के लिए रखा जाता है । तापक्रम के मानदण्डों के अनुसार 1 lb दाब लगभग $1^{1/50}$C के बराबर होता है अर्थात 15 lb दाब का तापमान लगभग 180°C होता है । निर्धारित समय तक पदार्थ/उपकरण को दाब युक्त वाष्प में रखने के बाद ऊष्मा-पूर्ति (heat supply) रोक दी जाती है । ऑटोक्लेव का ढक्कन खोलने से पहले वाष्प-दाब शून्य पर आ जाना चाहिए ।

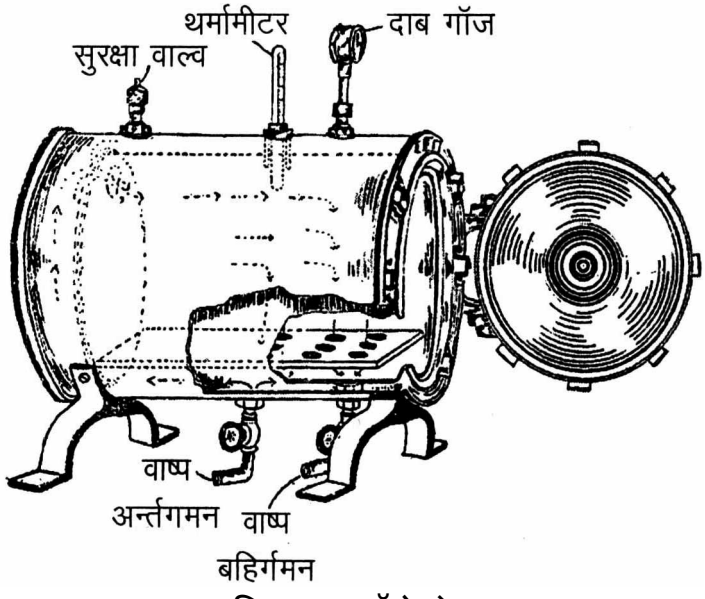

चित्र 2.3 : ऑटोक्लेव

(ब) रसायन-विधि द्वारा निर्जमीकरण (Chemical Method of sterilisation)

जब निर्जमीकरण के लिए रसायनों का उपयोग किया जाता है, तो यह प्रक्रिया अपूयन (disinfection) कहलाती है । इस प्रक्रिया की पूर्वावस्था में सूक्ष्मजीव अधिक नष्ट होते हैं, अंतिम अवस्था तक यह दर कम हो जाती है । इस प्रक्रिया के लिए काम आने वाले रसायन अपूयक (disinfectant) कहलाते हैं । सूक्ष्मजीवियों की वृद्धि को संदमित करने वाले रसायन को पूतिरोधी (antiseptic) कहते हैं ।

भारी धातु जैसे मर्करी, कॉपर, सिल्वर, लैड इत्यादि अपूयक (disinfectant), सूक्ष्मजीवियों की कोशिकाओं को एन्जाइमी क्रिया द्वारा संदमित करते हैं ।

स्टेरीलेन्ट (Sterilant)

वह रसायन जो किसी प्रादर्श (speciman) अथवा किसी वस्तु (object) पर उपस्थित सूक्ष्मजीवियों को नष्ट करते हैं।

डिस्इन्फेक्टेन्ट (Disinfectant)

वह रसायन जो सूक्ष्मजीवियों के केवल कायिक अवस्थाओं को नष्ट करते हैं, बीजाणुओं (spores) को नहीं ।

जर्मीसाइड (Germicide)

वह रसायन जो सूक्ष्मजीवियों की केवल कायिक संरचनाओं को नष्ट करते हैं । विशिष्ट सूक्ष्मजीवियों के लिए इन रसायन के नाम भी विशिष्ट रखे गए हैं, जैसे फन्जीसाइड (fungicide) एवं बैक्टीरिसाइड (bactericides) ।

एण्टीसेप्टीक (Antiseptic)

वह रसायन जो शरीर की सतह पर सूक्ष्मजीवियों की वृद्धि को संदमित करते हैं । ये रसायन सूक्ष्मजीवियों की गुणन (multiplying) क्षमता को अवमंदित करते हैं । एण्टीसेप्टिक, संक्रमण (infection) होने पर या कर जाने पर लगाया जाता है । यह क्रीम, स्प्रे तथा साबुन के रूप में भी उपलब्ध होते हैं ।

सेनिटाइजर (Sanitizer)

वह रसायन जो किसी संक्रमित स्थान से 99% सूक्ष्मजीवियो को नष्ट करता है । यह रसायन रेस्टोरेन्ट, डेयरी तथा फूड-प्रोसेसिंग इकाई के काँच के बर्तन तथा उपकरण साफ करने के लिए काम में लिया जाता है ।

(स) निम्न तापक्रम द्वारा / शीतलन (Low Temperature / Freezing)

कुछ साइक्रोफिलिक (Psychrophilic) जीवाणु 0°C तापक्रम पर भी वृद्धि कर सकते हैं, लेकिन इससे कम तापक्रम पर इन सूक्ष्मजीवियों का उपापचय (metabolism) संदमित होता है । शीतलन (freezing) प्रक्रिया द्वारा भोजन, औषधि तथा प्रयोगशाला प्रादर्श (speciman) को सूक्ष्मजीवियों से संरक्षित (preserve) किया जाता है । शून्य से कम तापक्रम होने पर यह आवश्यक नहीं होता कि सूक्ष्मजीव नष्ट हो जायें, बल्कि ये जीव भी पदार्थों के साथ अनिश्चित समय के लिए संरक्षित हो जाते हैं । साधारणतया घरों में काम आने वाले रेफ्रिजरेटर (refrigerator) का तापक्रम लगभग -20°C होता है, जबकि स्टॉक कल्वर (stock culture) के लिए -70°C तक तापमान निश्चित रहता है ।

बोध प्रश्न

5. निर्जमीकरण क्या है ?

   .....

6. ऑटोक्लेव से निर्जमीकरण किस प्रकार होता है ?

   .....

7. क्या अपूयन, निर्जमीकरण का एक प्रकार है ?

   .....

8. क्या शीतलन द्वारा निर्जमीकरण संभव है ।

   .....

9. सत्य अथवा असत्य

   (अ) किसी माध्यम में सूक्ष्मजीवियों की वृद्धि संवर्धन कहलाती है । सत्य/असत्य

   (ब) माध्यम निर्माण में आसुत जल का प्रयोग करना आवश्यक नहीं है ।

   सत्य/असत्य

(स) प्रयोगशाला में काम आने वाले उपकरण निर्जमीकृत होने चाहिए । सत्य/असत्य

(द) ऑटोक्लेव में शुष्क ऊष्मा द्वारा निर्जमीकृत होता है । सत्य/असत्य

2.5 फीड बैच किण्वन प्रक्रिया (Feed Batch Fermentation process) :

बैच-प्रक्रिया के पारम्परिक तरीके में सारे आधारीय पदार्थों (substrate) को किण्वन के प्रारम्भ में ही डाल दिया जाता है । क्लोज्ड बैच प्रक्रिया की दीर्घीकृत रूप फीड बैच किण्वन कहलाता है । इस प्रक्रिया को पेनिसिलिन जैसे उत्पाद प्राप्त करने के लिए प्रयुक्त किया जाता है । फीड बैच किण्वन में, किण्वन प्रक्रिया के बढ़ने से आधारीय पदार्थों को डाला जाता है । ग्लूकोज दूसरे कार्बोहाइड्रेट या नाइट्रोजन यौगिक की उच्च सान्द्रता के अपचायिक अवमंदन (catabolic repression) के कारण अधिकतर द्वितीयक उपापचयजों (secondary metabolites) का निर्माण होता है, इसी कारण से फीड बैच विधि में किण्वन के प्रारम्भ में पोषक विलयन के क्रांतिक तत्वों (critical elements) को बहुत ही कम सान्द्रता में मिलाया जाता है तथा उत्पादन के चरणों में इन तत्वों को लगातार थोड़ी-थोड़ी मात्रा में डाला जाता है ।

किण्वन के दौरान ये संभव नहीं है कि आधार (substrate) पदार्थों की सान्द्रता को मापा जा सके । चूंकि किण्वन के दौरान प्रत्यक्ष तथा अनवरत रूप से आधार पदार्थों की सान्द्रता का मापन सामान्यतया संभव नहीं हो पाता । इसलिए किण्वन प्रक्रिया को नियन्त्रित रखने के लिए ऐसे क्रान्तिक आधार पदार्थों के मापन के लिए जो उपापचय से सम्बन्धित हैं, अप्रत्यक्ष मानदण्ड स्थापित करने होंगे । उदाहरण के लिए कार्बनिक अम्लों के उत्पादन में ग्लूकोज की मात्रा निर्धारित करने के लिए pH मान को काम में लिया जा सकता है । क्रांतिक परासरणीय मानों के साथ किण्वन में बहिगर्मित वायु में pO_2 मान या pCO_2 मान के निर्धारण से आधारीय पदार्थों का अन्तर्गमन निर्धारित किया जाता है ।

2.6 सतत् किण्वन (Continuous Fermentation) :

सतत् किण्वन (continuous fermentation), खुले तंत्र (open system) में होने वाली प्रक्रिया है । निर्जमीकृत पोषक माध्यम को जैव-रिएक्टर (bioreactor) में सतत रूप से डाला जाता है तथा उसी समय तंत्र में से समान मात्रा में परिवर्तित (converted) पोषक माध्यम जिसमें सूक्ष्मजीवी सम्मिलित हो, को बाहर निकाला जाता है । सतत् विलयन के विविध प्रकारों में से, निम्न दो मुख्य प्रकार है -

(अ)समांगी मिश्रित जैवरिएक्टर (Homogenously Mixed Bioreactor)

यह प्रक्रिया कीमोस्टेट (chemostat) अथवा टर्बीडोस्टेट (turbidostat) में सम्पन्न होती है । कीमोस्टेट की सतत् अवस्था (steady state)में कोशिका वृद्धि को, आधार माध्यम (substrate) की सान्द्रता परिवर्तित कर नियंत्रित किया जाता है । कार्बोहाइड्रेट, नाइट्रोजन यौगिक, लवण एवं ऑक्सीजन जैसे वांछित आधार को सीमाकारी कारकों (limiting factors) के रूप में प्रयोग किया

जाता है । टर्बीडोस्टेट में, कोशिका वृद्धि को नियमित रखने के लिए जैव भार (boimass) सान्द्रता को टर्बिडिटी के आधार पर मापा जाता है तथा पोषक माध्यम के पोषण की दर को आवश्यकतानुसार संतुलित किया जाता है ।

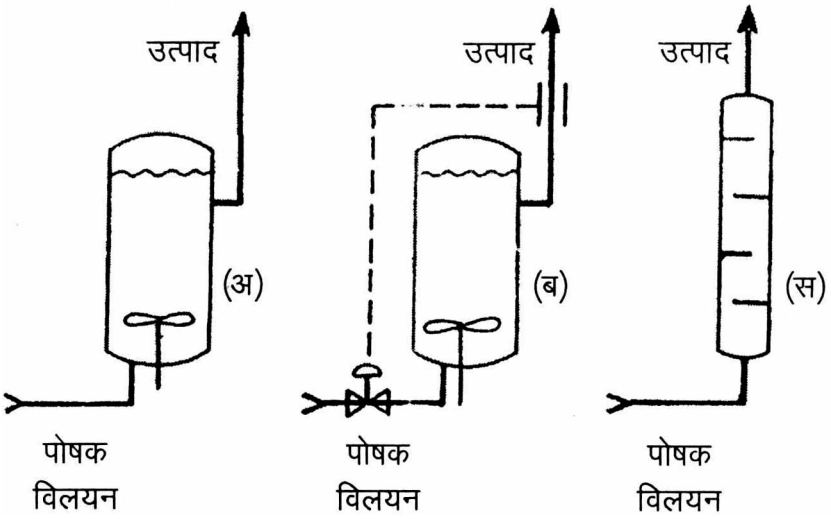

चित्र 2.4 : सतत् किण्वन - (अ) कीमोस्टेट (ब) टर्बीडोस्टेट (स) प्लग - फ्लो रिएक्टर

(ब) प्लग फ्लो रिएक्टर (Plug Flow Reactor)

सतत विलयन के इस प्रकार में संवर्धन विलयन को एक नलिकाकार रिएक्टर से प्रवाहित किया जाता है । इस प्रक्रिया में सम्मिलित तंत्र के अलग-अलग स्थानों पर पोषक माध्यम के घटक, कोशिकाओं की संख्या, ऑक्सीजन-प्रवाह तथा उत्पादकता भी अलग-अलग होती है । रिएक्टर के प्रवेश स्थल से ही कोशिकाओं को पोषक विलयन के साथ सतत रूप से डाला जाता है ।

2.7 बैच किण्वन (Batch Fermentation) :

बैच किण्वन प्रक्रिया को "बन्द-तंत्र" की मान्यता प्राप्त है । प्रारम्भिक समय T = 0 पर निर्जमीकृत पोषक विलयन को सूक्ष्मजीवियों के साथ फर्मेस्टर (fermenter) में इनोक्यूलेट (inoculate) करते हैं । इसके पश्चात् उचित (optimal) कार्यिकी परिस्थितियों में इसका सेवन (incubation) किया जाता है । पूर्ण किण्वन प्रक्रिया में, ऑक्सीजन (वायु के रूप में) तथा एन्टीफोम एजेन्ट (antifoam agent) के अतिरिक्त कुछ नहीं मिलाया जाता । pH को नियन्त्रित रखने के लिए अम्ल या क्षार को प्रयुक्त किया जाता है । सामान्यतया कोशिकाओं के तीव्र उपापचय के परिणामस्वरूप संवर्धन माध्यम के घटक, जैव भार सान्द्रता तथा मेटोबोलाइट सान्द्रता सतत् रूप से परिवर्तित होती रहती है । सूक्ष्मजीवी सहित पोषक विलयन का इनॉक्यूलेशन करने के पश्चात् उचित कार्यिकी परिस्थितियों में, वृद्धि की चार प्रावस्थाएँ देखी जाती हैं - लैग प्रावस्था, लॉग प्रावस्था, स्थौतिक प्रावस्था तथा मृत्यु प्रावस्था ।

(i) लैग प्रावस्था (Lag Phase)

जब कोशिकाओं को एक माध्यम से दूसरे माध्यम में स्थानान्तरित करते हैं, तो प्रारम्भ में कोशिकाओं की संख्या में कोई बढ़ोत्तरी नहीं होती लेकिन कोशिकीय भार परिवर्तित हो सकता है ।

इस प्रावस्था में सूक्ष्मजीव अपने नये पर्यावरण के साथ अनुकूलन प्राप्त करते हैं । क्योंकि माध्यम के परिवर्तित होने से बहुत से पैरामीटर बदल जाते हैं, जैसे - माध्यम की pH, पोषक तत्वों की अधिकता, वृद्धि संदमकों की कमी । इस प्रावस्था में कार्यिकी परिस्थितियाँ भी बदल जाती है ।

(ii) लॉग प्रावस्था (Log Phase)

लैग प्रावस्था के समाप्त होने तक कोशिकाएँ बदले हुए पूर्ण माध्यम में वृद्धि के लिए अनुकूलन प्राप्त कर लेती है । कोशिकीय समूह (cell mass) की वृद्धि मात्रात्मक रूप से दुगुनी हो जाती है । कोशिकीय संख्या अथवा जैव भार (biomass) एवं समय के बीच ग्राफ खींचने पर एक सीधी रेखा प्राप्त होती है, जिसे लॉग प्रावस्था कहते हैं ।

(iii) स्थिर प्रावस्था (Stationary Phase)

जैसे ही आधारी पदार्थ मेटाबोलाइज्ड होते हैं एवं विष तत्त्वों (toxic substances) का निर्माण होता है, धीरे'-धीरे वृद्धि धीमी होती जाती है और फिर रूक जाती है । स्थिर प्रावस्था में जैवभार स्थिर (constant) रहता है, लेकिन कोशिकीय घटक परिवर्तित हो सकते हैं । इस प्रावस्था में बनने वाले विविध प्रकार के मेटाबोलाइट जैवप्रौद्योगिकी महत्त्व के होते हैं ।

(iv) मृत्यु प्रावस्था (Death Phase)

इस प्रावस्था में कोशिकाओं की कोशिकीय ऊर्जा नष्ट हो जाती है । जीवित सूक्ष्मजीवियों एवं समय के बीच ग्राफ खींचने पर एक सीधी रेखा प्राप्त होती है जिससे यह सिद्ध होता है, कि कोशिकाओं की वृद्धि पोषक तत्वों की मात्रा पर निर्भर करती है ।

स्थिर प्रावस्था तथा मृत्यु प्रावस्था के बीच लगने वाला समय सूक्ष्मजीव के प्रकार तथा प्रक्रिया पर निर्भर करता है ।

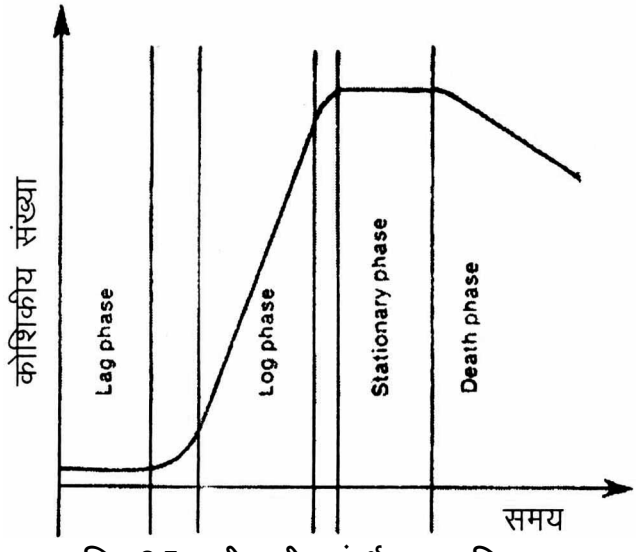

चित्र 2.5 : जीवाण्वीय संवर्धन का वृद्धि वक्र

2.8 वातन (Aeration) :

अधिकतर औद्योगिक किण्वन प्रक्रिया प्रबल वायु के साथ सम्पन्न होती है तथा फर्मेण्टर में प्रवाहित वायु निर्जर्मीकृत होनी चाहिए । वायु में उपस्थित अणुओं की संख्या तथा सूक्ष्मजीवियों की उपस्थिति फर्मेण्टर की स्थिति, वायु वेग तथा वायु के प्रारम्भिक उपचार पर निर्भर करती है । औसतन साधारण वायु में 10-100,000 अणु/मीटर^3 तथा 5-2000 सूक्ष्मजीवी/मीटर^3 उपस्थित होते हैं । जिनमें से 50% कवक बीजाणु तथा 40% ग्राम नेगेटिव बैक्टीरिया उपस्थित होते हैं ।

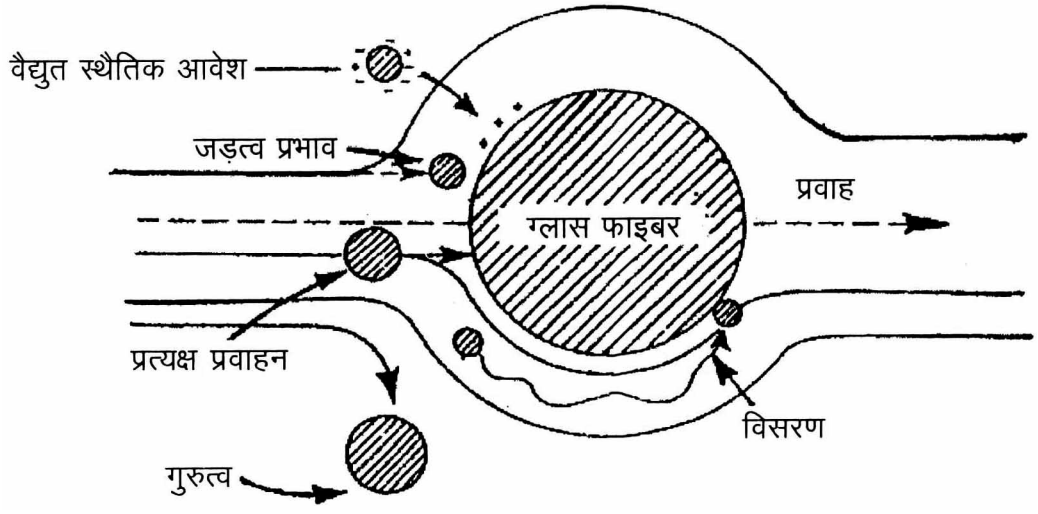

चित्र 2.6 : वातन क्रियाविधि

सामान्यतया फर्मेण्टर में वातन वेग 0.5-1.0 vvm, (air volume/liquid-minute) रहता है । एक फर्मेण्टर जिसका क्रियाशील आयतन 50 m^3 हो तथा जिसकी वातन दर 1 vvm हो, के लिए 3000 m^3 निर्जर्मीकृत वायु प्रति घण्टा चाहिए ।

निर्जमीकृत गैस प्राप्त करने लिए कई विधियों को प्रयुक्त किया जाता है जैसे - फिल्टरेशन, ओजोनीकरण, गैस स्क्रबिंग तथा UV विकिरण एवं ऊष्मा । इन सभी विधियों में से फिल्टरेशन तथा ऊष्मा प्रक्रिया ही औद्योगिक महत्त्व की है । पुराने समय से वायु को निर्जमीकृत करने के लिए गर्म विद्युत एलीमेण्ट (Electrically heated element) से प्रवाहित किया जाता है, लेकिन अधिक विद्युत उपयोग के कारण यह काफी खर्चीली विधि है । अब यह प्रक्रिया फिल्टरेशन द्वारा सम्पन्न होती है ।

2.9 प्रक्षोभन (Agitation) :

किसी पोषक माध्यम में सूक्ष्मजीवी कोशिकाओं का एक समांगी विलयन प्राप्त करने के लिए प्रक्षोभन प्रक्रिया को प्रयुक्त किया जाता है । किसी विशिष्ट फर्मेण्टर के प्रकार तथा कार्य प्रणाली के आधार पर ही उस फर्मेण्टर में वातन तथा प्रक्षोभन का प्रकार तय किया जाता है । कवक तथा एक्टिनोमाइसिटीज किण्वन में यांत्रिक प्रक्षोभन प्रक्रिया को अपनाया जाता है ।

बहुत से मिक्सिंग ऑब्जेक्टिव्स को प्राप्त करने के लिए प्रक्षोभक (agitator) की आवश्यकता होती है जैसे - बल्क फ्लूड (bulk fluid), गैस फेज़ मिक्सिंग (gas phase mixing), एयर

डिस्पर्सन (air dispersion), ऑक्सीजन स्थानान्तरण, ऊष्मा स्थानान्तरण तथा प्रक्षोभक के द्वारा ही पूरे वैसल का वातावरण एक समान रखा जाता है । प्रक्षोभक कई प्रकार के हो सकते हैं जैसे - डिस्क टर्बाइन, वेन्ड डिस्क, ओपन टर्बाइन तथा प्रोपेलर्स ।

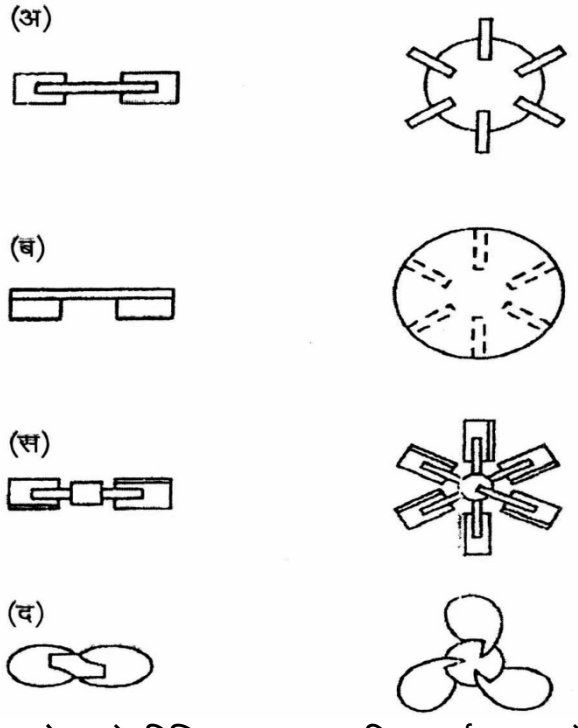

चित्र 2.7 : प्रक्षोभक के विभिन्न प्रकार (अ) डिस्क टर्बाइन (ब) वेण्ड डिस्क (स) ओपन टर्बाइन (द) मरीन प्रोपेलन

2.10 वृद्धि गतिकी (Microbial Growth Kinetics):

अनुकूल परिस्थिति में अल्प समय में जीवाणु का गुणन (multiplication) तीव्रता से होता है । कुछ जीवाणुओं की वृद्धि एवं प्रजनन हेतु उचित वृद्धि कारकों (growth factors) की आवश्यकता होती है । कोशिकीय घटकों की मात्रा में बढ़ोत्तरी को वृद्धि (growth) कहते हैं । जीवाण्वीय वृद्धि समस्त जीठाण्वीय कोशिकाओं की संख्या में वृद्धि से संबंधित होती है, ना कि एकल कोशिका के आकार में वृद्धि से । जीवाणुओं में प्रजनन सामान्यतया द्विविभाजन (binary fission) द्वारा होता है । प्रारम्भ में कोशिकाएँ लम्बी हो जाती हैं एवं इनके गुणसूत्रीय DNA के मध्य में कोशिका भित्ति एवं कोशिका झिल्ली अन्तर्वलित होना प्रारम्भ हो जाती है । अंत में अंतर्वलित कोशिका भित्तियाँ एक दूसरे से मिल जाती है, तथा दो एकल कोशिकाओं का निर्माण होता है । दोनों कोशिकाएँ समस्त लक्षणों में अपने पैतृक के समान होती है ।

जीवाणु कोशिकाओं में दो कोशिका विभाजन के मध्य का समयान्तराल जननिक काल या द्विगुणन काल (generation time or doubling time) कहलाता है । सामान्यतया जननिक काल 20 मिनिट का होता है । एक अकेले जीवाणु से 24 घण्टे में 10^{24} संतति का निर्माण होता है जिसका वजन लगभग 400 टन होता है । जीवाणु जिस माध्यम में वृद्धि करता है, वहाँ

उपस्थित पोषक पदार्थों, वृद्धि कारकों एवं स्थान का उपभोग होने के पश्चात् जीवाणुओं की वृद्धि अवरूद्ध हो जाती हैं । तीव्र विभाजनों को गणितीय पैमाने का उपयोग करके इनको ग्राफ पर अंकित करना अत्यन्त दुष्कर कार्य है । अत: जीवाण्वीय वृद्धि को प्रदर्शित करने के लिए लौगेरिधमिक पैमाने (logarithmic scale) का उपयोग किया जाता है ।

2.10.1 वृद्धि वक्र (Growth Curve)

जीवाण्वीय समष्टि के लॉग वक्र (log curve) एवं गणितीय वक्र (mathematical curve) के अंतर को प्रदर्शित करने के लिए जीवाणु के 20 विभाजनों को वक्र के रूप में प्रदर्शित करते हैं । पाँच विभाजनों (2^5) के पश्चात् 64 कोशिकाओं का, दस विभाजनों (2^{10}) के पश्चात् 1024 कोशिकाओं का निर्माण होता है ।

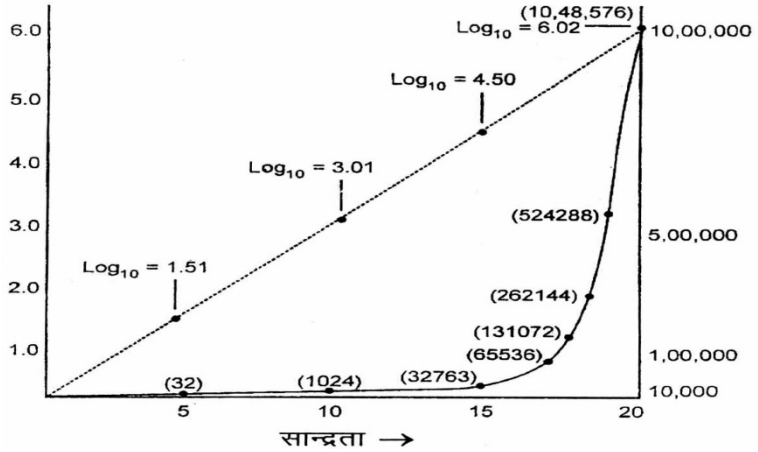

चित्र 2.8 : जीवाण्वीय समष्टि के लिए लॉग वक्र तथा गणितीय वक्र

चित्रानुसार गणितीय प्लॉट रेखा में वृद्धि वक्र के प्रारम्भ में होने वाली वृद्धि स्पष्ट नहीं होती क्योंकि प्रारम्भिक 10 विभाजनों तक वृद्धि वक्र की रेखा आधार रेखा से पृथक नहीं हो रही है । दस विभाजनों के बाद गणितीय वक्र की रेखा एकदम सीधी हो जाती है । इसमें 5,10,15 एवं 20 संततियों के समष्टि वक्र को log10 के आधार पर वक्रित किया गया है । इसमें एक सीधी रेखा प्राप्त होती है । इसमें बहुत ही कम जगह में log10 तक के मान को प्रदर्शित कर सकते हैं ।

जीवसमष्टि (population) वृद्धि का अध्ययन सूक्ष्मजीविय संवर्धन के वृद्धि वक्र का विश्लेषण कर किया जाता है । जब सूक्ष्मजीवों की वृद्धि किसी तरल संवर्धन माध्यम में कराई जाती है तो कोशिकाओं में निरंतर वृद्धि होती रहती है । धीरे-धीरे पोषक (nutrients) पदार्थों की कमी होती जाती है । विषाक्त पदार्थों का निर्माण प्रारंभ हो जाता है, पात्र का आयतन कम होता जाता है जिससे सूक्ष्मजीवों की वृद्धि रूक जाती है । यदि जीवाण्वीय कोशिकाओं की संख्या की Log संख्या एवं समय अंतराल के मध्यवक्र बनाया जाये तो वृद्धि वक्र प्राप्त होता है । इस वृद्धि वक्र में चार मुख्य प्रावस्थाएँ होती है ।

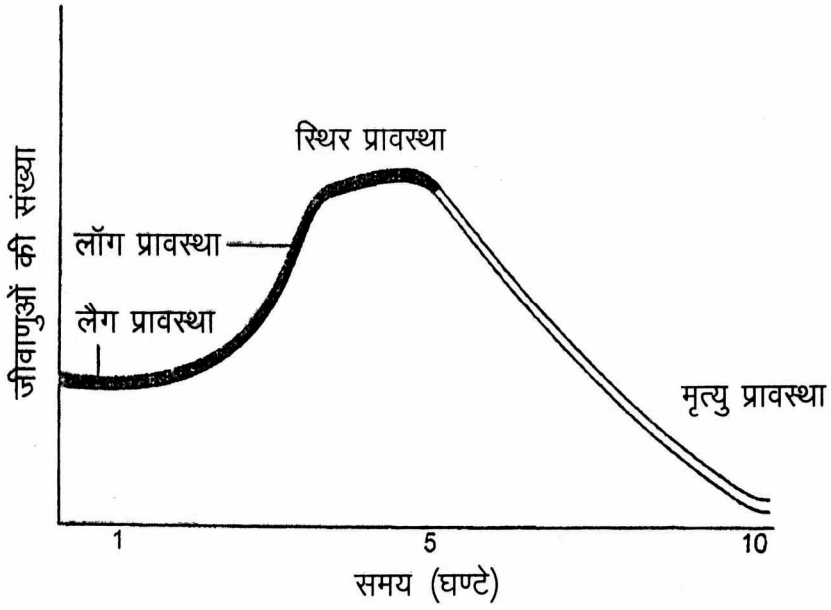

चित्र 2.9 : जीवाण्वीय वृद्धि चक्र जिसमें चारां वृद्धि प्रावस्थाएँ स्पष्ट इंगित है ।

(अ) विलम्ब/लैग प्रावस्था (Lag Phase)

जब सूक्ष्मजीवों को किसी संवर्धन माध्यम में प्रविष्ट कराया जाता है तो प्रारंभ में कोशिकाओं की संख्या एवं भार में तात्क्षणिक वृद्धि नहीं होती है । इस समय किसी प्रकार का कोशिका विभाजन नहीं होता लेकिन कोशिकाएं क्रियात्मक दृष्टि से अत्यधिक सक्रिय रहती है एवं जीवद्रव्य का संश्लेषण करती है । इस प्रावस्था में DNA, RNA, प्रोटीन, एन्जाइम, कोएन्जाइम एवं उपापचयी पदार्थों का संश्लेषण होता है । इस प्रावस्था में कोशिकाएँ परिवर्तित वातावरण के अनुरूप अपने आप को ढाल लेती है ।

(ब) घातांक/लॉग प्रावस्था (Log Phase)

इस प्रावस्था में सूक्ष्मजीवों में वृद्धि प्रारम्भ हो जाती है । इस प्रावस्था में कोशिकीय प्रजनन अत्यधिक सक्रिय होता है एवं इनका जननिक काल न्यूनतम होता है । अर्थात् इनमें जननिक काल अत्यधिक कम होता है जबकि द्विगुणन की दर अधिक होती है । इस प्रावस्था में वृद्धि की दर नियत होती है अत: वक्र में एक सीधी रेखा प्राप्त होती है । रासायनिक एवं कार्यिकी गुणों की दृष्टि में सूक्ष्मजीविय समष्टि में एकरूपता पाई जाती है । इस प्रावस्था में सूक्ष्मजीव, प्रतिकूल परिस्थितियों के प्रति अत्यधिक संवेदी होते हैं । विकिरणों एवं प्रतिजैविक औषधियों के कारण वृद्धि की कुछ प्रक्रियाएँ अवरूद्ध हो जाती हैं तथा इसका वृद्धि पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है ।

(स) स्थिर प्रावस्था (Stationary Phase)

लॉग प्रावस्था में अप्रत्याशित रूप से जीवाणुओं की संख्या में वृद्धि होती रहती है, लेकिन पोषक पदार्थों की कमी, स्थानाभाव एवं विषाक्त पदार्थों के निर्माण के कारण जीवाणुओं में मृत्यु प्रारम्भ हो जाती है । यद्यपि इस प्रावस्था में जन्म दर तथा मृत्यु दर एक समान होती है अत: जीवाण्वीय समष्टि लगभग नियत बनी रहती है । स्थिर प्रावस्था के लिए निम्न कारण उत्तरदायी होते है -

(i) ऑक्सीजन (O_2) की उपलब्धता कम हो जाती है जिससे वायवीय जीवाणुओं की वृद्धि रूक जाती है ।

(ii) पोषक पदार्थों की मात्रा में धीरे-धीरे कमी होती जाती है ।

(iii) माध्यम की pH परिवर्तित हो जाती है ।

(iv) माध्यम का तापमान बढ़ जाता है ।

(v) माध्यम में विषाक्त पदार्थ एकत्रित होना प्रारम्भ हो जाते हैं ।

यदि स्ट्रेप्टोकोकस (Straptococcus) जीवाणुओं का संवर्धन शर्करा युक्त माध्यम में करवाया जाये तो कुछ घण्टों बाद माध्यम में लैक्टिक अम्ल एवं कार्बनिक अम्लों के एकत्रित होने से स्ट्रेप्टोकोकस की वृद्धि अवरूद्ध हो जाती है । इस प्रकार वृद्धि वक्र की स्थिर प्रावस्था अनेक कारणों से प्राप्त होता है ।

(द) मृत्यु प्रावस्था (Death Phase)

संवर्धन माध्यम में पोषकों की कमी, विषाक्त पदार्थों के निर्माण में वृद्धि, pH परिवर्तन के कारण जीवाण्वीय कोशिकाओं में मृत्यु प्रारम्भ हो जाती है । इस प्रावस्था में जीवाणुओं की संख्या प्रति इकाई आयतन में निश्चित रहती है, क्योंकि मृत कोशिकाएँ लयित (lyse) नहीं होती ।

अत: मृत कोशिकाओं का पता इनको पुन: शुद्ध संवर्धन माध्यम (pure culture) में वृद्धि कराने पर लगता है । मृत्यु पद धीरे-धीरे कम होती जाती है एवं उत्तरजीवी कोशिकाओं के रहने की संभावना बहुत कम होती है ।

2.11 वृद्धि के मापक (Measurements of Growth) :

जीवाण्वीय वृद्धि के मापन के लिये अनेक विधियों का उपयोग किया जाता है । इस हेतु वृद्धि दर व जननिक काल का निर्धारण किया जाता है, वृद्धि के आंकलन हेतु कोशिकाओं की संख्या एवं कोशिकीय द्रव्यमान का आंकलन किया जाता है ।

I. कोशिकीय संख्याओं का मापन (Measurement of Cell Numbers)

कोशिकीय संख्या की गणना के लिए निम्न विधियों का उपयोग किया जाता है -

(अ) गणन कक्ष द्वारा (By Counting Chambers)

जीवाणुओं की प्रत्यक्ष गणना के लिये पेट्रोफ हॉजर गणक (Petroff Hauser Counter) का उपयोग किया जाता है । इस गणक में एक निश्चित गहराई का एक छोटा कक्ष होता है, जो कवर स्लिप के द्वारा ढका रहता है । सूक्ष्मदर्शी द्वारा प्रत्येक कक्ष में जीवाणु की संख्या को ज्ञात किया जाता है । इस हेतु निम्न सूत्र का उपयोग किया जाता है -

जीवाणु/mm^3 = (जीवाणु/वर्ग) = (25 वर्ग)(50)

प्रति cm^3 में जीवाणुओं की संख्या 10^3 गुणा अधिक होती है । जैसे प्रति वर्ग में जीवाणु की औसत संख्या 28 है तो -

$$\text{जीवाणु}/cm^3 = (28 \text{ जीवाणु})(25 \text{ वर्ग})(50)(10^3)$$

$$= 3.5 \times 10^7$$

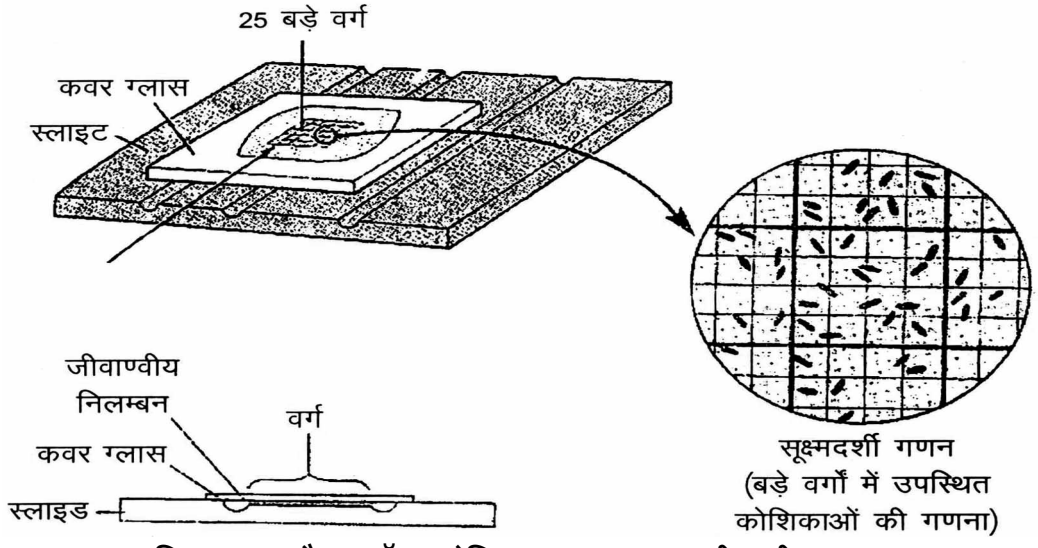

चित्र 2.10 : पैट्राफ हॉसर कोशिका काउण्टर द्वारा जीवाण्वीय गणन

(ब) इलैक्ट्रोनिक गणक द्वारा (By Electronic Counter)

इस विधि का प्रयोग बड़े आकार के सूक्ष्मजीवों जैसे प्रोटोजोआ, शैवाल एवं यीस्ट की गणना में किया जाता है । इस हेतु सामान्यतया कॉल्टर गणक (coulter counter) का उपयोग किया जाता है । सूक्ष्मजीविय प्रतिदर्श को एक छोटे छिद्र से प्रवाहित करते हैं, जिसमें से विद्युत धारा (electric current) प्रवाहित होती है । जब कोई बड़ी कोशिका इस छिद्र से गुजरती है तो विद्युतीय प्रतिरोध में वृद्धि होती है एवं कोशिका की गणना हो जाती है । इस विधि द्वारा छोटे आकार के जीवाणुओं की गणना संभव नहीं है ।

(स) जीवनक्षम्य गणक (Viable Counter)

इस विधि द्वारा केवल जीवित कोशिकाओं की गणना संभव है । इस विधि में जीवाणुओं के तनु प्रतिदर्श को किसी ठोस आधार पर फेलाया जाता है । प्रत्येक सूक्ष्मजीव वृद्धि करके एक निवह (colony) का निर्माण करता है । प्रतिदर्श में जीवित सूक्ष्मजीवों की संख्या को सतह पर निर्मित कॉलोनी की गणना कर ज्ञात किया जाता है । सामान्यतया निवह की गणना क्यूबेक कॉलोनी गणक (Quebec Colony Counter) के द्वारा की जाती है ।

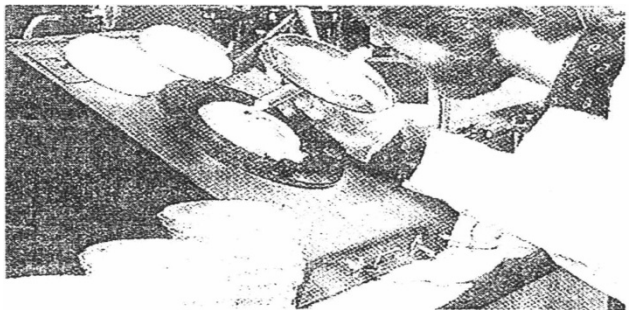

चित्र 2.11 : क्यूबेक कॉलोनी काउण्टर

(द) फैलाव एवं सेवन प्लेट विधि (Spread and Pour Plate Method)

जीवाण्वीय प्रतिदर्श का तनुकरण (dilution) कर इसकी 1ml मात्रा पैट्री-डिश में डालते हैं । इसमें उपस्थित पोषक माध्यम, अगार को 50°C ताप पर जलीय विलयन में रखकर तनु बनाये रखा जाता है । इस अगार माध्यम में जीवाण्वीय प्रतिदर्श को डाला जाता है तथा पेट्री-डिश को हिलाया जाता है । जब अगार ठोस हो जाता है तो प्लेट को इंक्यूबेट (incubate) किया जाता है । इस तरह जीवाणु-निवह अगार के भीतर वृद्धि करती है एवं कुछ निवह अगार प्लेट की सतह पर भी वृद्धि करती है । इस विधि में कई बार ऊष्मीय संवेदी जीवाणु नष्ट हो जाते हैं । इस समस्या से उबरने के लिए फैलाव प्लेट विधि को उपयोग में लिया जाता है । इस विधि में अगार माध्यम को सतह पर जीवाण्वीय प्रतिदर्श को विशिष्ट निर्जमीकृत छड़ के द्वारा फैलाया जाता हैं । इस विधि का प्रयोग कॉलीफॉर्म जीवाणुओं के संवर्धन हेतु किया जाता है।

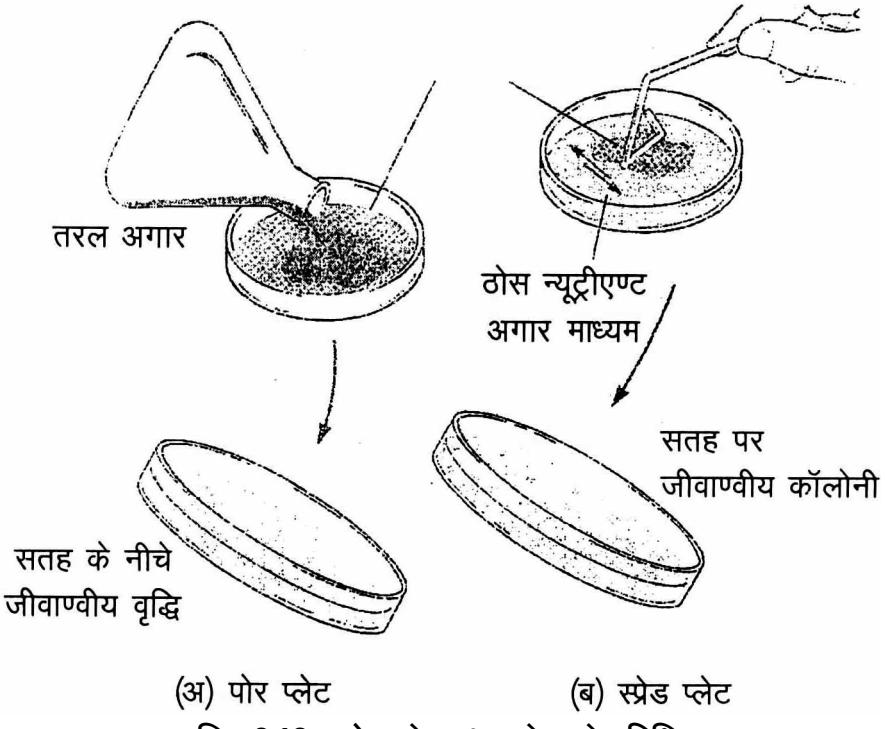

चित्र 2.12 : पोर प्लेट तथा स्प्रेट प्लेट विधि

(य)मेम्ब्रेन फिल्टर विधि (Membrane Filter Method)

इस विधि में जीवाण्वीय प्रतिदर्श को एक विशिष्ट मेम्ब्रेन फिल्टर से प्रवाहित किया जाता है । इस फिल्टर को अगार-माध्यम के ऊपर रखते हैं । इसको तब तक इंक्यूबेट (incubate) करते हैं जब तक प्रत्येक कोशिका से पृथक निवह का निर्माण नहीं हो जाता । निवह की गणना द्वारा सूक्ष्मजीवों की संख्या को ज्ञात किया जा सकता है । विशिष्ट सूक्ष्मजीवों के चयन हेतु विशिष्ट माध्यमों का उपयोग किया जाता है । कई बार फिल्टर को फ्लोरीसेन्ट रंजकों (dye) द्वारा अभिरंजित कर भी जीवाणुओं की गणना की जाती है ।

II. कोशिकीय द्रव्यमान का मापन (Measurement of Cell Mass)

जीवाण्वीय वृद्धि, कोशिकाओं की संख्या के साथ-साथ कोशिकाओं के द्रव्यमान वृद्धि से भी सम्बन्धित होती है । कोशिकीय द्रव्यमान का मापन निम्न विधियों के द्वारा किया जा सकता है -

(अ) शुष्क भार द्वारा (By Dry Weight)

इस विधि का प्रयोग मुख्य रूप से तन्तुमय सूक्ष्मजीवों की वृद्धि के मापन हेतु किया जाता है । तरल माध्यम में वृद्धि कर रही कोशिकाओं को संग्रहित करके इनका अपकेन्द्रण करके, धोकर, शुल्क कर लिया जाता है एवं इसका वजन ज्ञात कर लिया जाता है ।

(ब) टर्बिडिटी (Turbidity)

जब किसी तरल माध्यम में जीवाणुओं की वृद्धि होती है तो तरल माध्यम मटमैला हो जाता है । तरल माध्यम में उपस्थित टर्बिडिटी को ज्ञात करने के लिए स्पैक्ट्रोफोटोमीटर का प्रयोग किया जाता है । जब जीवाण्वीय कोशिकाओं की संख्या में वृद्धि हो जाती है, तो जीवाण्वीय प्रतिदर्श से कम प्रकाश फोटोइलैक्ट्रिक सेल पर पहुँचता है । इस घटना का O.D. (Optical Density) के रूप में आकलन किया जाता है ।

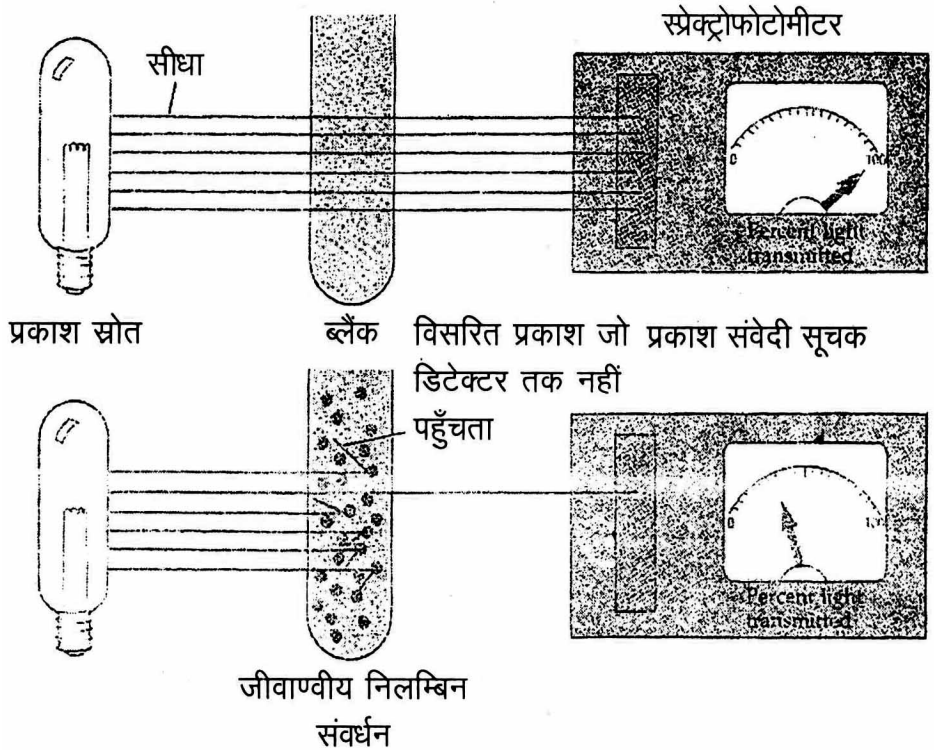

चित्र 2.13 : जीवाण्वीय संख्या ज्ञात करने के लिए टर्बिडिटी एस्टीमेशन

2.12 पर्यावरणीय कारक तथा सूक्ष्मजैविक वृद्धि (Environmental Factors and Microbial Growth):

सूक्ष्मजीवों की वृद्धि हेतु आदर्श ताप, नमी, लवण, सांद्रता, ऑक्सीजन एवं उचित pH की आवश्यकता होती है । अनेक सूक्ष्मजीवों को इन वातावरणीय कारकों की सीमाकारी परिस्थितियों

में ही संवर्धित किया जाता सकता है । सूक्ष्मजीवियों के सूक्ष्म वातावरण (micro-environment) इस प्रकार से परिवर्तित हो सकते हैं कि वे या तो वृद्धि को प्रोत्साहित करें अथवा उसका संदमन करें । उदाहरण के लिए, मुरब्बे में चीनी की अधिक सान्द्रता (लगभग 70%) अचार में नमक की उच्च सान्द्रता (80%) तथा दही की निम्न pH (4.3) बैक्टीरिया की वृद्धि को अवरोधित करती है । इसके विपरीत माँस के शोरबे में उचित नमी की मात्रा, लगभग तटस्थ pH तथा लवण की सन्तुलित सान्द्रता बैक्टीरिया की वृद्धि को अधिकाधिक प्रोत्साहित करती है ।

बैक्टीरिया को वातावरण के सन्दर्भ में उनकी वृद्धि के आधार पर भी वर्गीकृत किया गया है -

साइक्रोफिल (Psychrophiles)

वे सूक्ष्मजीव जो अधिकाधिक वृद्धि ठंडे तापमान में करते हैं ।

मिसोफिल (Mesophiles)

वे सूक्ष्मजीव जो मध्यम ताप में वृद्धि करते हैं ।

थर्मोफिल (Thermophiles)

वे सूक्ष्मजीव जो उच्च तापमान पर प्रचुर वृद्धि करते हैं । ये बैक्टीरिया सक्रिय रूप से उच्च तापमान पर वृद्धि करते हैं किन्तु थर्मोड्यूरिक (Thermoduric) बैक्टीरिया सामान्य तापमान पर भी वृद्धि कर सकते हैं । बैसिलस तथा क्लास्ट्रीडियम नामक स्पोरनिर्माणी जीवाणु थर्मोड्यूरिक प्रकार के होते हैं, क्योंकि ये उच्च तापमान पर एण्डोस्पोर (endospore) का निर्माण करते हैं और ये एण्डोस्पोर केवल सामान्य तापमान पर ही विकसित एवं वृद्धि करने की क्षमता रखते हैं ।

एसिडोफिल (Acidophiles)

वे सूक्ष्मजीव जो अम्लीय वातावरण में वृद्धि करते हैं, चाहे वह मृदा में हों अथवा जल में ।

एल्कलोफिल (Alkalophiles)

ऐसे सूक्ष्मजीव जो क्षारीय परिस्थितियों में वृद्धि करते हैं ।

न्यूट्रोफिल (Neutrophiles)

वे सूक्ष्मजीव जो तटस्थ (neutral) वातावरण में प्रचुर वृद्धि करते हैं, न्यूट्रोफिल कहलाते हैं ।

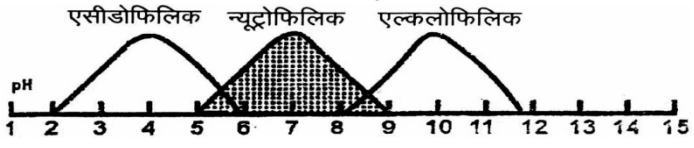

चित्र 2.14 : हाइड्रोजन-आयन सान्द्रता (pH) आधारित बैक्टीरिया की प्रमुख कोटियाँ; अधिकांश न्यूट्रोफिलिक प्रकार के होते हैं ।

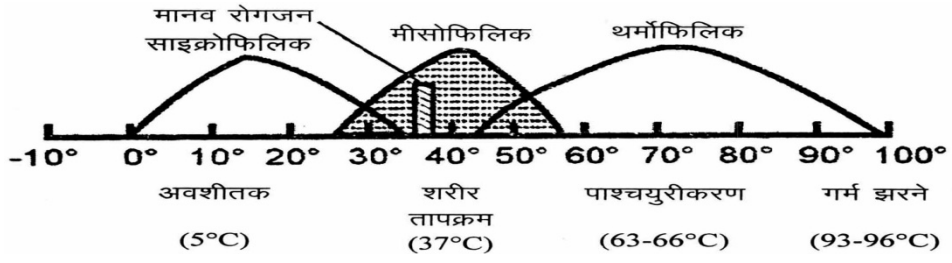

चित्र 2.15 : तापमान के आधार पर जीवाणुओं की प्रमुख कोटियाँ; अधिकांश मीसोफिलिक होते हैं ।

2.13 औद्योगिक महत्त्व के सूक्ष्मजीवों के संवर्धन हेतु उपकरण तथा अन्य सामग्री (Equipment and Accessories for the Culture of Industrially Important Microbes) :

सोलोमोन (Solomon) ने 1969 में फार्मेण्टर में प्रयुक्त विविध उपकरण तथा पदार्थों का वर्णन किया । कुछ चयनित मान जिन्हें फर्मेण्टर द्वारा ज्ञात किया जा सकता है, निम्न हैं -

(elapsed fermentation time), वाहिका का तापक्रम, तापमान, दाब, ठंडे पानी की प्रवाह दर, प्रक्षोभन की दर, पॉवर इन पुट, वायु प्रवाह की दर, बहिर्गमित गैस घटक, घुलित ऑक्सीजन की मात्रा, pH, तरल सतह का मान, भार अथवा वाहिका का आयतन, टर्बिडिटी, फ्लोरोऐन्स विविध आयनों की उपरिथति उत्पाद सान्द्रता, एवं सहउत्पाद सान्द्रता । कुछ चुनिंदा मापक जो बिना कम्प्यूटर की सहायता से मापे जा सकते हैं, वे हैं - शर्करा की सान्द्रता, प्रोटीन सान्द्रता, नाइट्रोजन लेवल, एन्जाइम सक्रियता, उत्पाद सान्द्रता, जैव भार, अछनित ब्रोथ का भार एवं ब्रोथ की श्यानता ।

पिछले कुछ वर्षों में किण्वन प्रक्रिया में कम्प्यूटर तकनीक का प्रयोग इसे प्रभावी बना रहा है । किण्वन प्रक्रिया में कम्प्यूटर का समाकलन होने से इस तंत्र प्रक्रिया पर नजर रखी जा सकती है, डेटा संग्रहित कर सकते हैं एवं त्रुटि ज्ञात की जा सकती है । कुछ प्रारूपित , कम्प्यूटर के माध्यम से आकड़ों के विश्लेषण के लिए प्रयुक्त युक्तियों में शामिल हैं - मापदण्डों का मानकीकरण, प्राप्त आकड़ों की पुष्टि करना, आकड़ों को छांटना, इकाई परिवर्तन, अप्रत्यक्ष मानकों की गणना, विभेदन, समाकलन, अनुमानित मानकों की गणना, आकड़ों में कमी, परिणामों का सारणीयन, परिणाम का ग्राफीय प्रस्तुतीकरण एवं संग्रहण ।

सामान्यतया प्रयुक्त होने वाले फर्मेण्टर निम्न हैं -

(1) स्टिरड टैंक फर्मेण्टर (Stirred Tank Fermenter)

इसे एन्टीबायोटिक बनाने के लिए काम में लेते हैं ।

(2) ट्यूब्यूलर टॉवर फर्मेण्टर (Tubular Tower Fermenter)

इसे बीयर, वाइन, सिरका बनाने के लिए प्रयुक्त करते हैं ।

(3) इण्टर्नल रीसाईकल एयर लिफ्ट फर्मेण्टर (Internal Recycle Airlift Fermenter)

इसके द्वारा तेल से यीस्ट तैयार किया जाता है ।

(4) एक्सटर्नल री-साईकल एयर लिफ्ट फर्मेण्टर (External Recycle Airlift Fermenter)

मीथेनॉल से बेक्टीरिया बायोमास का उत्पादन ।

(5) नाथन फर्मेण्टर (Nathan Fermenter)

पेय उद्योग में अधिक प्रयुक्त होता है ।

महेया एवं केर्यान (Mehaia and Cheryan) ने सतत् इथेनॉल उत्पादन के लिए मेम्बेन बायोरिएक्टर का उपयोग किया । इस प्रक्रिया में कृषि अवशेष तथा खाद्य अवशेष को एथेनॉल

उत्पादन के लिए कच्चे माल (raw material) की तरह प्रयुक्त किया जाता है । इस प्रक्रिया के लिए सैकेरोमाइसीज सेरेविसी तथा क्लूवेरोमाइसीज फ्रेजिलिस सूक्ष्मजीवी काम में लिए जाते हैं । मेम्ब्रेन बायोरिएक्टर को इथेनॉल किण्वन के लिए प्रयुक्त करते हैं । चित्र के ऊपरी भाग में मेम्बेन रिसाईकल फर्मेण्टर MRF (Membrane Recycle Fermenter) तथा निचला भाग होलो फाइबर बायोरिएक्टर (Hollow fiber bioreactor) का बना होता है । फर्मेण्टर में डाले जाने वाले घटक को मेम्ब्रेन मॉड्यूल द्वारा पम्प किया जाता है । बनने वाले उत्पाद एथेनॉल को लगातार तंत्र से निकाला जाता है तथा फ्रेश आधार पदार्थ (substrate) को फर्मेण्टर में इस प्रकार डाला जाता है, कि पूर्ण आयतन स्थिर रहें ।

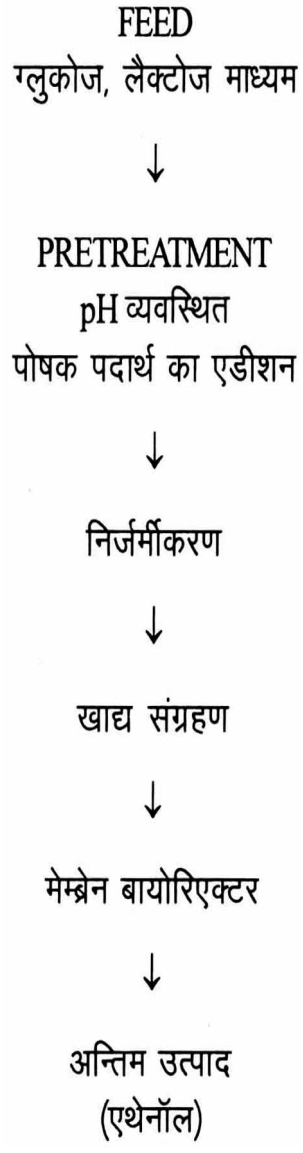

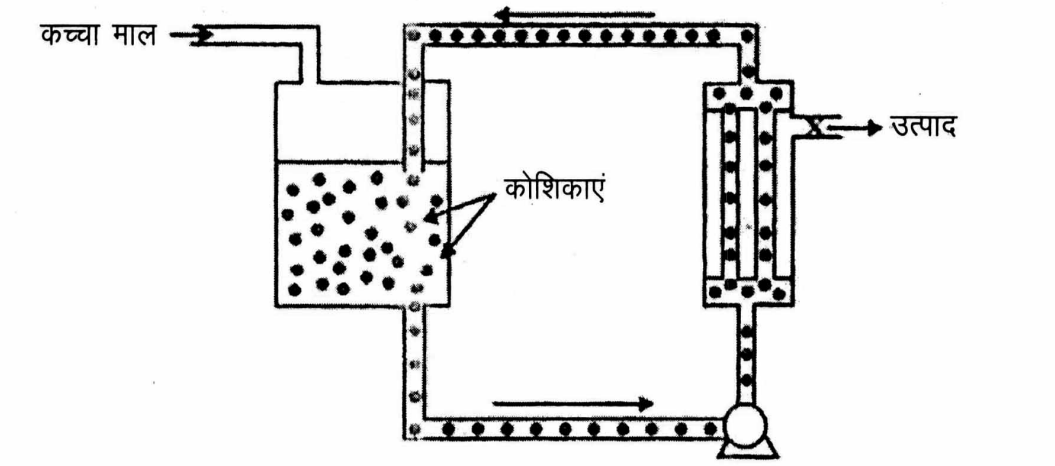

मेम्ब्रेन रिसाईकिल बायोरिएक्टर

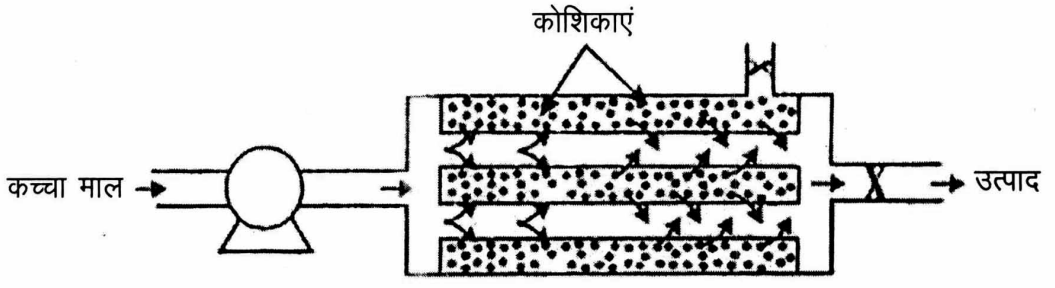

होलो फाइबर बायोरिएक्टर

चित्र 2.16 : मेम्ब्रेन बायोरिएक्टर का रेखाचित्रीय निरुपण

उद्योगों के उपयोग में आने वाले, मुख्य रूप से फार्मास्यूटिकल उद्योग में काम आने वाला बायोरिएक्टर साधारण स्टिरड एयेरेटेड फर्मेण्टर (Stirred, aerated fermenter) होते हैं । प्रयोगशाला में काम आने वाला फर्मेण्टर जिसकी आयतन 20 लीटर तक का हो, स्टेनलेस स्टील के बने होते हैं ।

एक फर्मेण्टर का मुख्य कार्य, सूक्ष्मजीवियों की वृद्धि को नियंत्रित करने के लिए एक नियंत्रित वातावरण प्रदान करना होता है । जिससे एक वांछित उत्पाद प्राप्त हो सकें । एक फर्मेण्टर के निर्माण तथा डिजाइन में निम्न बिन्दुओं को ध्यान में रखना आवश्यक होता है -

1. जो वैसल (vessel) हम प्रयोग में लेते हैं, वो निर्जमीकृत होना आवश्यक होती है, तथा लम्बे समय तक काम करने वाली होनी चाहिए ।
2. सुक्ष्मजीवियों की उपापचयी क्रियाओं की पूर्ति हेतु फर्मेण्टर में आवश्यक वातन तथा प्रक्षोभन की पूर्ति की जानी चाहिए।
3. जितनी संभव हो बिजली की खपत कम हो ।
4. नियंत्रित तापमान की उपलब्धता हो ।
5. pH नियंत्रित रहना चाहिए ।

6. सेम्पलिंग सुविधा उपलब्ध होनी चाहिए ।
7. फर्मेण्टर से बहुत अधिक वाष्पन (evaporation) नहीं होना चाहिए ।
8. वैसल का डिजाइन ऐसा होना चाहिए कि उसके ऑपरेशन, सफाई तथा रखरखाव में कम से कम मजदूरी लगें ।
9. किसी बडे पायलट प्लाण्ट के बड़े और छोटे दोनों वैसल की ज्यामिती (geometry) समान होनी चाहिए ।

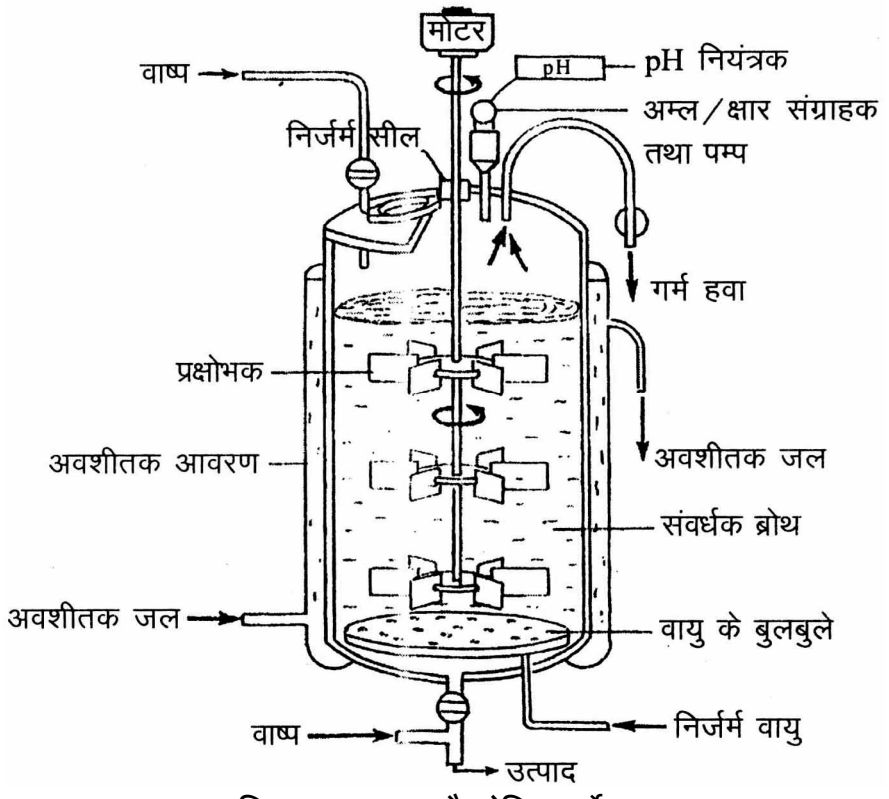

चित्र 2.17 : एक औद्योगिक फर्मेण्टर

बोध प्रश्न

10. सतत् किण्वन के दो प्रकार कौन-कौनसे हैं ?

    .....

11. सूक्ष्मजीवियों की चार वृद्धि प्रावस्थाएँ कौन-कौनसी हैं ?

    .....

12. वातन तथा प्रक्षोभन में अंतर बताइये ।

    .....

13. वृद्धि गतिकी से क्या तात्पर्य है ?

    .....

14. साइक्रोफिल एवं थर्मोफिल बैक्टीरिया क्या होते हैं ?

    .....

2.14 सारांश (Summary):

वे समस्त क्रियाएं जिनके द्वारा सजीवों को आवश्यक पदार्थों की आपूर्ति की जाती है, पोषण कहलाती है । पोषक वे पदार्थ हैं जिनका उपयोग ऊर्जा उत्पादन एवं जैव संश्लेषण हेतु किया जाता है । किसी माध्यम में सूक्ष्मजीवियों की वृद्धि संवर्धन कहलाती है । किसी जीव की वृद्धि में सहायक पोषक पदार्थ, संवर्धन माध्यम कहलाते हैं । जब जीवाणुओं की वृद्धि तथा प्रजनन को प्रयोगशाला में संवर्धन माध्यम में करवाया जाता है, तो इसे जीवाण्वीय संवर्धन कहते हैं । भौतिक लक्षणों के आधार पर संवर्धन माध्यम निम्न तीन प्रकार के होते हैं - ठोस, अर्धठोस तथा तरल माध्यम । संवर्धन माध्यम के निर्माण के समय निर्जमीकरण एक महत्वपूर्ण प्रक्रिया है । जिसके द्वारा प्रयोगशाला के पूरे वातावरण, उपकरण तथा माध्यम को सूक्ष्मजीव रहित किया जाता है । निर्जमीकरण वह प्रक्रिया है, जिसमें जीवित सूक्ष्मजीवियों की वृद्धि को भौतिक एवं रासायनिक विविधयों द्वारा नियंत्रित किया जाता है । निम्न तीन विधियों द्वारा निर्जमीकरण किया जाता है - उष्मा उपचार द्वारा, रसायन विधि द्वारा तथा निम्न तापमान (शीतलन) द्वारा ।

तीन किण्वन प्रक्रियाओं का वर्णन किया गया है - सतत् किण्वन, बैच किण्वन एवं फेड बैच किण्वन । अधिकतर औद्योगिक किण्वन प्रक्रिया प्रबल वायु के साथ सम्पन्न होती है तथा फर्मेण्टर में प्रवाहित वायु निर्जमीकृत होनी चाहिए । किसी पोषक माध्यम में सूक्ष्मजीवी कोशिकाओं का एक समांगी विलयन प्राप्त करने के लिए प्रक्षोभन प्रक्रिया को प्रयुक्त किया जाता है । किसी विशिष्ट फर्मेण्टर के प्रकार तथा कार्य प्रणाली के आधार पर ही उस फर्मेण्टर में वातन तथा प्रक्षोभन का प्रकार तय किया जाता है ।

कोशिकीय घटकों की मात्रा में बढ़ोत्तरी को वृद्धि कहते हैं । जीवाण्वीय वृद्धि समस्त जीवाण्वीय कोशिकाओं की संख्या में वृद्धि से सम्बन्धित होती है, ना कि एकल कोशिका के आकार में वृद्धि से । जीवाण्वीय समष्टि के लॉग वक्र एवं गणितीय वक्र के अंतर को प्रदर्शित करने के लिए जीवाणु के 20 विभाजनों को वक्र के रूप में प्रदर्शित करते हैं । यदि जीवाण्वीय कोशिकाओं की संख्या का लॉग संख्या तथा समय अन्तराल के मध्य वक्र बनाये जाये तो वृद्धि वक्र प्राप्त होता है । इस वृद्धि-वक्र में चार मुख्य प्रावस्थाएँ होती है - (i) विलम्ब प्रावस्था (Lag Phase), (ii) घातांक प्रावस्था (Log Phase), (iii) स्थिर प्रावस्था (Stationary Phase) एवं, (iv) मृत्यु प्रावस्था (Death Phase) ।

जीवाण्वीय वृद्धि के मापन के लिये अनेक विधियों का उपयोग किया जाता है । जीवाण्वीय वृद्धि को दो रूप में माप सकते हैं - कोशिकीय संख्याओं का मापन द्वारा एवं कोशिकीय द्रव्यमान का मापन करके । वृद्धि हेतु सभी सूक्ष्मजीवियों को उचित वातावरण की आवश्यकता होती है अर्थात् वृद्धि हेतु वातावरण में उचित ताप, नमी, लवण सान्द्रता, ऑक्सीजन, pH स्तर आदि की उपस्थिति आवश्यक होती है । सूक्ष्मजीवियों के सूक्ष्म वातावरण इस प्रकार से परिवर्तित हो सकते हैं कि वे या तो वृद्धि को प्रोत्साहित करें अथवा उसका संदमन करें ।

औद्योगिक महत्त्व के सूक्ष्मजीवियों के संवर्धन हेतु फर्मेण्टर / बायोरिएक्टर जैसे उपकरण प्रयुक्त किये जाते हैं । जिस उत्पाद का संश्लेषण करना हो, उसी के अनुसार अलग-अलग प्रकार के

फर्मेण्टर का उपयोग किया जाता है । किसी फर्मेण्टर का मुख्य कार्य सूक्ष्मजीवियों की वृद्धि को नियंत्रित करने के लिए एक नियंत्रित वातावरण प्रदान करना होता है ।

2.15 बोध प्रश्नों के उत्तर :

1. पोषक वे पदार्थ हैं, जिनका उपयोग जीवाण्वीय वृद्धि में ऊर्जा उत्पादन एवं जैव संश्लेषण हेतु किया जाता है।
2. प्रयोगशाला में सूक्ष्मजीवों की वृद्धि हेतु तैयार किया गया पोषक पदार्थों का सम्मिश्रण संवर्धन माध्यम कहलाता है ।
3. तरल माध्यम में अगार का प्रयोग नहीं किया जाता ।
4. जीवाणुओं की वृद्धि हेतु पृष्ठ सतह बढ़ाने के लिए स्लाण्ट बनाये जाते हैं ।
5. निर्जर्मीकरण एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें जीवित सूक्ष्मजीवियों की वृद्धि को भौतिक एवं रासायनिक विधियों द्वारा नियंत्रित किया जा सकता है ।
6. दाब युक्त वाष्प द्वारा निर्जर्मीकरण ।
7. हाँ, जब निर्जमीकरण के लिए मर्करी, कीपर, सिल्वर, लैड आदि रसायनों का प्रयोग किया जाता है, तो यह प्रक्रिया अपूयन कहलाती है ।
8. हाँ, अत्यधिक निम्न तापमान पर सूक्ष्मजीवियों का उपापचय संदमित हो जाता है ।
9. (अ) सत्य
   (ब) असत्य
   (स) सत्य
   (द) असत्य
10. समांगी मिश्रित जैव रिएक्टर एवं प्लग फ्लो रिएक्टर ।
11. लैग प्रावस्था, लॉग प्रावस्था, स्थिर प्रावस्था एवं मृत्यु प्रावस्था ।
12. औद्योगिक किण्वन प्रक्रिया में प्रवाहित प्रबल वायु द्वारा निर्जर्मीकरण होता है एवं पोषक माध्यम में सूक्ष्मजीवी कोशिकाओं का समांगी विलयन तैयार करने के लिए प्रक्षोभन किया जाता है ।
13. अनुकूल परिस्थितियों में सूक्ष्मजीवियों की वृद्धि का अध्ययन ।
14. साइक्रोफिल बैक्टीरिया की वृद्धि अत्यधिक निम्न तापमान पर जबकि थर्मोफिल बैक्टीरिया की वृद्धि उच्च तापमान पर होती है ।

2.16 अभ्यासार्थ प्रश्न (Exercise Questions) :

1. संवर्धन माध्यम क्या है ? कितने प्रकार के होते हैं एवं इनका निर्माण किस प्रकार किया जाता है ?
2. निर्जर्मीकरण की आवश्यकता एवं प्रकार पर विस्तृत लेख लिखिए ।
3. वृद्धि वक्र की सहायता से सूक्ष्मजीवियों की वृद्धि गुण को समझाइये ।
4. सूक्ष्मजीवियों की वृद्धि में पर्यावरणीय कारकों का क्या महत्त्व है ?

5. वृद्धि मापन की विधियों का वर्णन कीजिए । वृद्धि मापन हेतु कौनसी विधि अधिक उपयुक्त है।
6. टिप्पणी लिखिए -

   (अ)संवर्धन माध्यम

   (ब)वृद्धि वक्र

   (स)जीवाण्वीय वृद्धि का मापन

   (द)वृद्धि गतिकी

2.17 शब्दावली (Glossary) :

1. निर्जर्मीकरण -Sterlization
2. वातन-Aeration
3. प्रक्षोभन-Agitation

2.18 संदर्भ ग्रन्थ (Reference Books):

1. स्टेनबरी, विटेकर एवं हॉल, प्रिंसिपल्स ऑफ फर्मेण्टेशन टेक्मोलॉजी ।
2. वेट्स, मोर्गन, रॉकी एवं हिगटन, इण्डस्ट्रियल माइक्रोबायोलोजी, ब्लेकवैल साइंस लि., मेल्डन, यू.एस.ए. ।
3. सिंह एवं घोष, इण्डस्ट्रियल बायोटेक्मोलोजी, ग्लोबल विजन पब्लि. हाउस, नई दिल्ली ।

इकाई 3

पुनर्संयुक्त डी.एन.ए. तकनीक
(Recombinant DNA Technology)

इकाई की रूपरेखा

3.0 उद्देश्य

3.1 प्रस्तावना

3.2 पुनर्संयुक्त डी.एन.ए. प्रविधि

- 3.2.1 रेस्ट्रिक्शन एण्डोन्यूक्लिएज विकर
- 3.2.2 वाहक
- 3.2.3 परपोषी कोशिकाऐं
- 3.2.4 पुनर्संयुक्त डी.एन.ए. युक्त परपोषी कोशिकाओं का चयन एवं गुणन
- 3.2.5 चयनित क्लोनों से वांछित जीन की ग्राही कोशिका मैं अभिव्यक्ति

3.3 जीन लाइब्रेरी

- 3.3.1 जीनोम लाइब्रेरी
- 3.3.2 cDNA लाइब्रेरी

3.4 क्लोनिंग कार्य योजना

3.5 सारांश

3.6 बोध प्रश्नों के उत्तर

3.7 अभ्यासार्थ प्रश्न

3.8 शब्दावली

3.9 संदर्भ ग्रन्थ

3.0 उद्देश्य (Objective) :

पिछली सदी में जैवप्रौद्योगिकी के क्षेत्र में अत्यधिक कार्य हुआ है । आज हमें DNA की संरचना, प्रतिकृति निर्माण एवं जीन अभिव्यक्ति की महत्त्वपूर्ण जानकारियां ज्ञात है । पिछले तीन दशकों में तो जैव प्रौद्योगिकी का यह ज्ञान जीन स्थानान्तरण तक जा पहुँचा है ।

इस इकाई में जीन अभियांत्रिकी और जीन स्थानान्तरण की आधारभूत तकनीक पुनर्संयुक्त डी.एन.ए. तकनीक के बारे में अध्ययन करेंगे ।

3.1 प्रस्तावना (Introduction) :

पिछले तीन दशक जीव विज्ञान के क्षेत्र में क्रांतिकारी रहे हैं । हालांकि प्रारम्भिक अध्ययन आण्विक स्तर पर ही रहा फिर भी आधारभूत एवं अनुप्रयुक्त विज्ञान के क्षेत्रों में भी अभूतपूर्व क्रांति हुई है । जीव विज्ञान के क्षेत्र में हुई अधिकतर प्रगति पुनर्संयुक्त डीएन.ए. तकनीक (recombinant DNA technology) की वजह से संभव हुई है ।

जनन द्रव्य का नई कोशिका में प्रवेश इस प्रकार से होना कि उस कोशिका के विभाजन के फलस्वरूप बनने वाली संतति कोशिकाओं के साथ-साथ यह जनन द्रव्य (डी.एन.ए.) प्रतिलिपिकृत (replicate) हो सके, यही पुनर्संयुक्त डी.एन.ए. तकनीक (recombinant DNA technology) है । दूसरे शब्दों में किसी कोशिका के जनन द्रव्य में अन्य कोशिका के डी.एन.ए. को प्रविष्ट कराकर परिवर्तित कर दें ।

इस तकनीक का सबसे प्रमुख लाभ यह हुआ कि एक वाणिज्यिक रुप से उपयोगी उत्पाद के लिए उत्तरदायी जीन को ऐसी प्रजाति में स्थानान्तरित कर दिया जाए, जहाँ से इस उत्पाद को आसानी से तथा कम कीमत पर उत्पादित किया जा सकें ।

3.2 पुनर्संयुक्त डी.एन.ए. प्रविधि (Technique for Recombinant DNA) :

यह मुख्यत: निम्न चरणों में होता है -

(i) संकर प्लाज्मिड (hybrid plasmid) का निर्माण

(ii) प्लाज्मिड का जीवाणु में प्रवेश (रूपान्तरण) ।

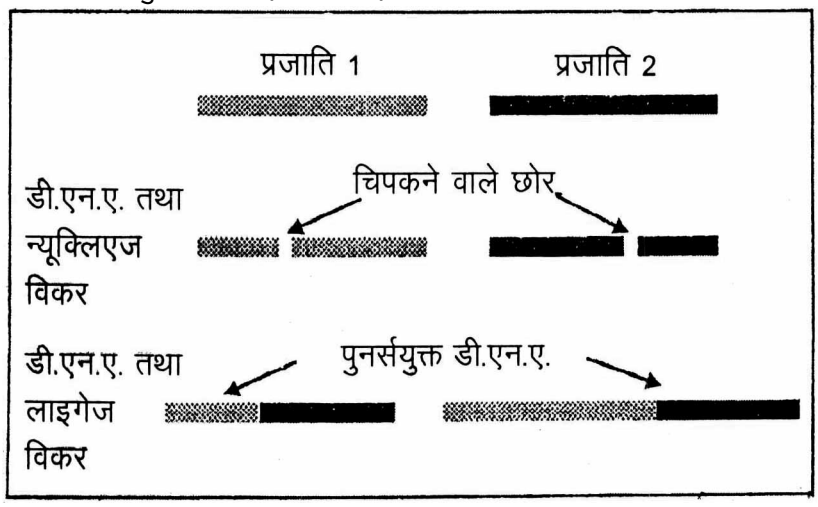

चित्र 3.1 : पुनर्संयुक्त डी.एन.ए. प्रविधि

(i) संकर प्लाज्मिड का निर्माण (Formation of Hybrid Plasmid)

(1) सर्वप्रथम जीवाणु कोशिकाओं से प्लास्मिडों को पृथक् कर लिया जाता है और रेस्ट्रिमान एन्जाइम (restriction enzyme) Eco R-1 द्वारा वृत्तीय DNA (circular DNA) को काटकर रैखिक DNA (linear DNA) अणु में परिवर्तित किया जाता है (चित्र 3.1)।

(2) एक दाता (donor) के DNA को भी इसी प्रकार छोटे टुकड़ों में तोड़ लिया जाता है ।

(3) अब प्लाज़्मिड (plasmid) को दाता DNA (donor DNA) के टुकड़े को जीवाणु कोशिका में ले जाने के लिए वेक्टर (vector) के रूप में प्रयुक्त किया जाता है ।

(4) एन्जाइमों की विशिष्टता के कारण, दोनों स्रोतों से प्राप्त डी.एन.ए. के टुकड़ों के छोरों पर एक ही क्षारक क्रम (base sequence) पाया जाता है । इन्हें चिपकने वाले छोर (sticky ends) कहते है (चित्र 3.2) ।

(5) अब इन्हें डी.एन.ए. लाइगेज (DNA ligase) की उपस्थिति में ऊष्मायन (incubate) किया जाता है तो पुन: एक वृत्तीय DNA (circular DNA) का निर्माण होता है । इस प्रकार एक संकर प्लास्मिड (hybrid plasmid) का निर्माण होता है ।

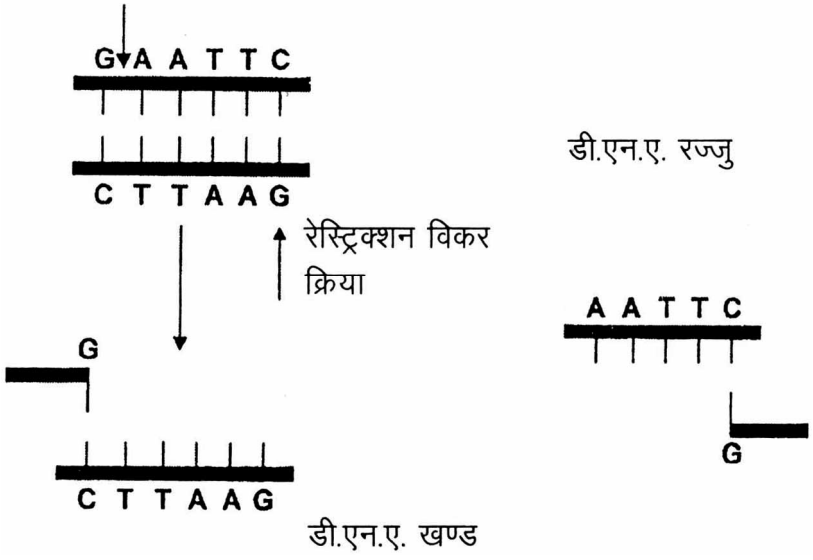

चित्र 3.2 : डी.एन.ए. का खण्डीकरण

(ii) रूपान्तरण (Transformation)

दूसरे चरण में इस प्लाज्मिड को बैक्टीरिया कोशिका में प्रविष्ट (introduce) कराया जाता है जहाँ प्रतिकृति प्रक्रिया (replicate) हो सके । यह प्रक्रिया रूपान्तरण (transformation) कहलाती है । इस प्रकार संकर कोशिकाओं (hybrid cells) का निर्माण होता है ।

संश्लेषित डी.एन.ए. (synthesized DNA) का टुकड़ा जितना बड़ा होगा उसमें अपद्रव्यों के शामिल हो जाने की सम्भावना भी उतनी ही अधिक हो जायेगी, साथ ही उसमें क्षारकों का व्यवस्था क्रम भी उतना ही जटिल होगा । व्यवस्थित उत्पादों को विलगाना (isolate) और शुद्ध करना एक कठिन कार्य है ।

जीवाणु से हुई यह शुरूआत जीन विनिमय के लिए आज भी जीवाणु पर निर्भर है । पौधों में नए जीन डालने के लिए एग्रोबैक्टीरियम ट्यूमीफेशिएन्स (Agrobacterium tumifacience) नामक

जीवाणु को जीन वाहक बनाया जाता है । यह कार्य जन्तुओं में मुश्किल है । इसके लिए विकासशील भ्रूण की शल्यक्रिया करनी पड़ती है । इसी वजह से वैज्ञानिकों ने जीन के विनिमय के ज्यादातर प्रयोग पेड़-पौधों पर ही किए है ।

इस विधि को निम्न चरणों में बांटा जा सकता है -

1. वांछित जीन (Desired or Target Gene) की पहचान तथा पृथक्करण ।
2. वांछित जीन को वाहक DNA (vector DNA) से जोड़कर पुनर्संयुक्त DNA (Recombinant DNA) बनाना।
3. पुर्नयोजित DNA का परपोषी कोशिका में स्थानान्तरण ।
4. पुर्नयोजित DNA युक्त परपोषी कोशिकाओं का चयन एवं गुणन (selection & multiplication)।
5. चयनित क्लोनों से वांछित जीन की कोशिका में अभिव्यक्ति ।

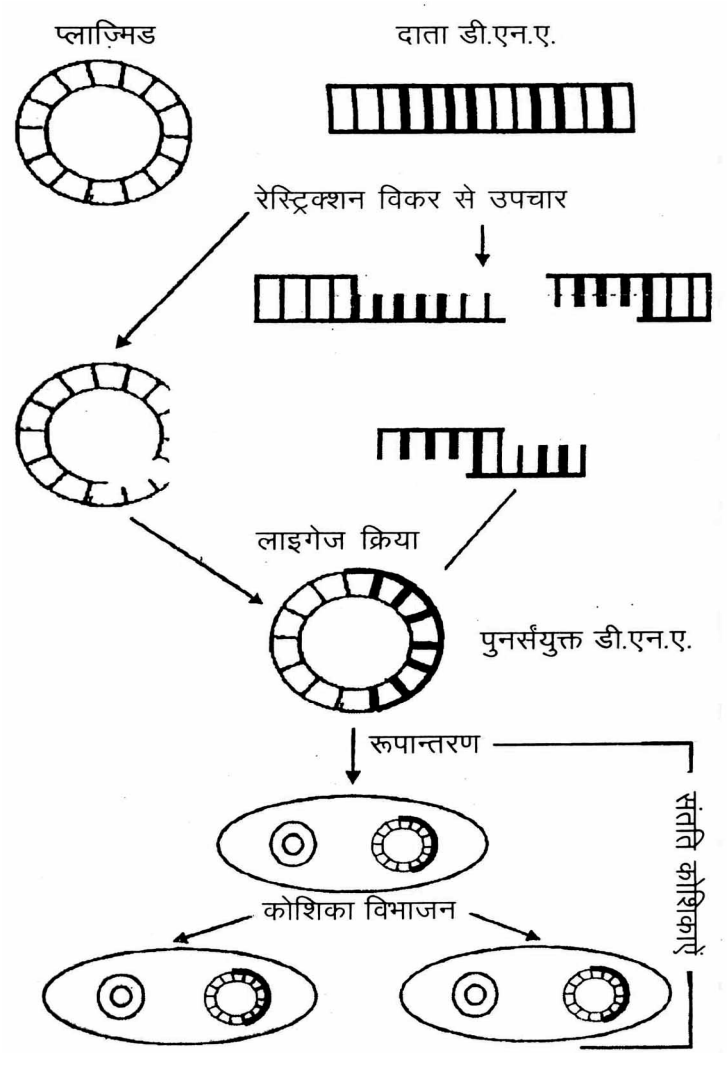

चित्र 3.3 : पुनर्संयुक्त डी.एन.ए निर्माण के विभिन्न चरण

जीन अभियांत्रिकी के द्वारा पुनर्संयुक्त DNA प्राप्त करने के लिए निम्न अवयव आवश्यक होते हैं -

3.2.1 रेस्ट्रिक्शन एण्डोन्यूक्लिएज विकर (Restriction Endonuclease Enzyme)

रेस्ट्रिक्शन एण्डोन्यूक्लिएज विकरों की उपस्थिति की परिकल्पना डब्लू. आर्बर (W. Arber) ने 1960 में की थी लेकिन पहली बार विलगन 1971 में संभव हुआ ।

ये विकर वाहक व वांछित DNA विशिष्ट स्थानों पर काटते हैं । प्राकृतिक रूप से ये विकर है कोलाई, बेसीलस, स्ट्रेप्टोकॉकस इत्यादि जीवाणुओं में पाए जाते हैं । ये जीवाणुओं पर आक्रमण करने वाले वायरस से जीवाणु की सुरक्षा करते हैं । ये जीवाणु DNA का अपघटन नहीं करते हैं । प्रत्येक रेस्ट्रिक्शन एण्डोन्यूक्लिएज विकर, DNA तंतु के विशिष्ट 4-6 न्यूक्लिओटाइड क्षारक अनुक्रम को पहचान कर काटता है ।

इन विकरों (enzymes) के अतिरिक्त पॉलीमरेज (polymerase), लायसोजाइम्स (Lysozymes), लाइगेजेज (Lygases) तथा क्षारीय फास्फेटेजेज (Alkaline phosphate) विकरों की भी विभिन्न क्रियाओं हेतु आवश्यकता होती है ।

अन्य एन्जाइम (Other Enzymes)

(i) RNA पर निर्भर पॉलीमरेज एन्जाइम - इनका कार्य RNA टेम्पलेट पर RNA सूत्र के न्यूक्लिओटाइडों का बहुलीकरण करना है । इनका अध्ययन आप अपनी पिछली कक्षा में आणविक जैविकी वाले अध्याय में कर चुके है ।

(ii) DNA पर निर्भर पॉलीमरेज - DNA टैम्पलेट पर यह अनुपूरक DNA सूत्र के न्यूक्लिओटाइडों का बहुलकीकरण करता है ।

(iii) लायसोजाइम्स (Lysozymes) - ये एन्जाइम जीवाणु की कोशिक भित्ति को गला देते है जिससे जीवाणु के DNA को विलगित (isolate) किया जा सकता है ।

(iv) लाइगेजेज (Ligases) - इन एन्जाइमों का कार्य टेम्पलेट पर DNA खण्डों के सिरों को जोड़ना है । खण्डों के जुड़ने पर DNA सूत्र बन जाता है ।

(v) क्षारीय फॉस्फेटेजेज (Alkaline Phosphatases) - वृत्ताकार (circular) DNA (उदा. जीवाणुओं में पाये जाने वाले प्लास्मिड) की वृत्ताकार बने रहने की दृढ़ प्रवृत्ति होती है । विजातीय DNA के निवेशन (insertion) के लिये इस DNA को काटने के बाद रेखाकार रखना आवश्यक होता है । क्षारीय फास्फेटेज 'एन्जाइम DNA सूत्र के 5' सिरे के फास्फेट वर्ग को काट देते हैं और प्लास्मिड DNA की वृत्ताकार होने की प्रवृत्ति को अवरूद्ध कर देते हैं ।

3.2.2 वाहक (Vectors)

ऐसे DNA अणु जो उपयुक्त परपोषी कोशिका में स्वतंत्र प्रतिकृति (replication) करते है, और जिनमें वांछित DNA खण्ड (Desired DNA Segment) को समाकलित (integrate) किया जा सकता है, वाहक की तरह कार्य करते हैं । उदाहरणार्थ - प्लाज्मिड एवं विषाणु ।

उत्तम वाहक लक्षण

(i) जिसका विलगन एवं शोधन सरल व सुविधाजनक हो ।

(ii) इसको परपोषी कोशिका में सरलता से प्रविष्ट करा सकें ।

इसमें उपयुक्त रिपोर्टर जीन (reporter gene) हों जिससे रूपान्तरित परपोषी कोशिकाऐं आसानी से पहचानी जा सकें ।

(iii) वाहक स्वयं या अपने निविष्ट जीन को परपोषी जीनोम में समाकलित कर पाने में सक्षम हो ।

(iv) वांछित DNA की अभिव्यक्ति हेतु वाहक में प्रमोटर, ऑपरेटर जैसे नियामक अवयव उपस्थित हों । सामान्य तौर पर DNA क्लोनन के लिए E. coli (strain K-12) को परपोषी के रूप में काम लिया जाता है ।

सामान्य तौर पर जीन स्थानान्तरण में काम आने वाहक निम्नांकित हैं -

(i) प्लाज्मिड (Plasmid)

प्लाज्मिड जीवाणुओं में पाया जाने वाला अतिरिक्त गुणसूत्री DNA (Extra Chromosomal DNA) है जिसमें प्रतिलिपिकरण (replication) की क्षमता होती है ।

DNA के किसी खण्ड की क्लोनिंग के लिए उसको प्लाज्मिड से जोड़ा जाता है और इस मिश्रित DNA अणु को किसी जीवाणु में स्थानान्तरित कर दिया जाता है । जीवाणु के गुणन के साथ-साथ यह भी गुणित होता रहता है - उदाहरण पी.बी.आर 322 (pBR-322) ।

उच्च वर्ग के पौधों के लिए एग्रोबैक्टीरियम ट्यूमीफेसिएन्स (Agrobacterium fumifacience) नामक जीवाणु का प्लाज्मिड (Ti plasmid) सामान्यत: प्रयुक्त होता है ।

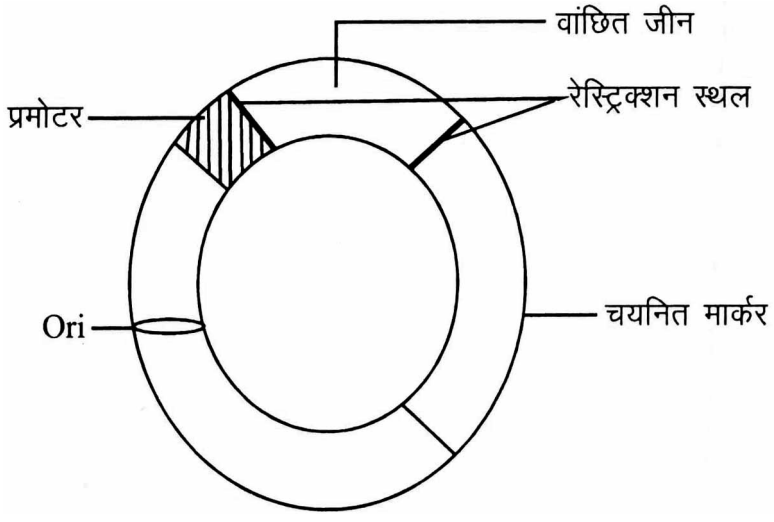

चित्र 3.4 : प्लाज्मिड वाहक

(ii) जीवाणुमोजी वाहक (Bacteriophage Vector)

ऐसे वायरस जो जीवाणु को संक्रमित करते हैं, जीवाणुभोजी कहलाते हैं, इन जीवाणुओं में एक रेखीय डी.एन.ए. अणु पाया जाता है, इस डी.एन.ए. अणु के साथ वांछित DNA के निवेशन से पुनर्योजित जीवाणुभोजी DNA बन जाता है । जीवाणुभोजी, जीवाणुओं को संक्रमित कर लयन चक्र (Lytic cycle) पूरा कर पुनर्योजित DNA की कई प्रतियाँ निर्मित कर लेता है । इस

जीवाणुभोजी DNA में से अनावश्यक भाग को हटाकर इसका पुनःनिर्माण किया जाता है । उदाहरण λ phage एवं M_{13} वायरस ।

(iii) कॉस्मिक वाहक (Cosmic Vector)

ऐसे प्लाज्मिड जिनमें, λ फेज वायरस के कॉस स्थलों (cos sites) पर पाए जाने वाले अनुक्रमों को निवेशित कर दिया जाए, कॉस्मिड कहलाते हैं । ये कॉस स्थल ही प्लाज्मिड DNA को λ कणों के रूप में आबद्ध करने में सुविधा प्रदान करते हैं । कॉस्मिड भी प्लाज्मिड की भाँति ही व्यवहार करते हैं परन्तु इनमें लयन क्रिया के लिए जीनों का अभाव होता है । इन कॉस्मिडों को यूकैरियोटिक जीनोम से प्राप्त DNA के अपेक्षाकृत बड़े खण्डों की क्लोनिंग के लिए प्रयोग किया जाता है ।

(iv) फेज्मिड वाहक (Phasmid Vector)

ये कृत्रिम रूप से तैयार किए गए वेक्टर है जिनमें जीवाणुभोजी तथा प्लाज्मिड दोनों के गुण उपस्थित होते हैं ।

(v) कृत्रिम गुणसूत्र (Artificial Chromosome)

अधिक लम्बे DNA खण्डों (100 kb - 1000 kb) की क्लोनिंग के लिए कृत्रिम जीवाण्वीय गुणसूत्र (bacterial artificial chromosome, BAC), कृत्रिम यीस्ट गुणसूत्र (yeast artificial chromosome - YAC) एवं कृत्रिम मैमेलियन गुणसूत्र (Mammalian Artificial Chromosome - MAC) की रचना की गई ।

इन वाहकों के अतिरिक्त ट्रांसपोजोन (Transposon) एवं विभिन्न पादप तथा जन्तु वायरस भी वाहकों की भाँति कार्य कर सकते हैं ।

3.2.3 परपोषी कोशिकाऐं (Host Cells)

DNA क्लोनिंग के लिए परपोषी के रूप में ई. कोलई जीवाणु सर्वाधिक प्रयोग में लाया जाता है । इसका सामान्यत: K-12 प्रभेद प्रयोग में लाया जाता है । यह प्रभेद न केवल आसानी से रूपान्तरित हो जाता है बल्कि यह पुनर्योजक DNA की पुनरावृत्ति में सहायता भी करता है । इसके अतिरिक्त यीस्ट व कई पादप एवं जन्तु कोशिकाऐं भी परपोषी के रूप में कार्य कर सकती हैं ।

3.2.4 पुनर्योगज DNA युक्त परपोषी कोशिकाओं का चयन एवं गुणन

निवेशित जीन की सफलता जानने के लिए सामान्यत: प्रतिजैविकों (antibiotics)के लिए प्रतिरोधकता प्रदान करने वाली जीनों को चिन्हक जीनों के रूप में उपयोग किया जाता है । ये ऐम्पिसिलिन (ampicilin), टेट्रासाइक्लिन (tetracycline), केनामाइसिन (kanamycin) आदि प्रतिजैविकों (antibiotics) के लिए प्रतिरोधी जीन हो सकती है । जिन कोशिकाओं में क्लोनित जीन की उपरिथति का परीक्षण करना हो, उनका संवर्धन उपरोक्त प्रतिजैविकों (antibiotics) युक्त माध्यम में किया जाता है । उदाहरण के लिए, यदि ऐम्पिसिलिन के लिए प्रतिरोधी जीन चिन्हक के रूप में प्रयोग की गई है और पुनर्योगज DNA युक्त कोशिकाएँ ऐम्पिसिलिन माध्यम

में वृद्धि करती हैं तो इसका तात्पर्य है कि क्लोनित जीन ठीक स्थान पर निवेशित हुई है । इसके विपरीत यदि इस माध्यम में कोशिकाओं की वृद्धि नहीं होती है तो निश्चित ही पुनर्योगज DNA में क्लोनित जीन ठीक स्थान पर निवेशित नहीं हुई है।

चयनित जीवाणु कोशिकाओं को ठोस माध्यम पर संवर्धित किया जाता है । जहाँ प्लाज्मिड युक्त जीवाणुओं की कॉलोनियाँ बन जाती हैं । जीवाणु कोशिका में वृद्धि के साथ-साथ वांछित जीन की संख्या में भी वृद्धि हो जाती है । इस क्रिया को क्लोनिंग कहते हैं ।

3.2.5 चयनित क्लोनों से वांछित जीन की ग्राही कोशिका में अभिव्यक्ति

चयनित पुनर्योगज कोशिकाओं व निवहों को विलगित कर वांछित उद्देश्य के अनुसार उपयोग किया जाता है । इन्हें वांछित प्रोटीन के संश्लेषण के लिए संवर्धित करते हैं अथवा जीन लाइब्रेरी के लिए संवर्धित किया जाता है । आवश्यकतानुसार इन जीनों को विभिन्न माध्यमों द्वारा जीवाणु, यीस्ट, पादप व जन्तुओं में स्थानान्तरित किया जाता है । इस तरह वांछित जीनों को अन्य जीवों में स्थानान्तरित कर इन जीवों को वांछित कार्य करने के लिए तैयार कर लिया जाता है । उदाहरण के लिये यदि किसी पादप में रोगाणु प्रतिरोधी जीन का निवेशन करवाया जाता है तो वह पादप रोग के प्रति प्रतिरोधी हो जाते हैं ।

3.3 जीन लाइब्रेरी (Gene Library):

क्लोनित DNA अणुओं का संकलन जिसमें सम्पूर्ण जीनोम समाविष्ट हो जीन लाइब्रेरी कहलाती है । c-DNA प्रतियों का संकलन c-DNA लाइब्रेरी कहलाती है । जीन लाइब्रेरी को जीन बैंक (Gene Bank) या DNA लाइब्रेरी (DNA Library) भी कहते हैं ।

जीनोम लाइब्रेरी वास्तव में प्लाज्मिड या फाज लयनजों का संग्रह होता है जिसमें निवेशित DNA के रूप में उपस्थित विभिन्न DNA खण्डों का सम्पूर्ण योग सम्बन्धित जीव के पूरे जीनोम का प्रतिनिधित्व करता है । जीनोम लाइब्रेरी में कुछ खण्ड, प्राकृतिक अवस्था की तुलना में कम आवृत्ति में या अनुपस्थित भी हो सकते हैं ।

ऐसे ऊतक, जिनमें प्रोटीन का सक्रिय संश्लेषण होता रहता है, उनमें mRNA को पृथक करके cDNA (Complementry DNA) लाइब्रेरी भी बनाई जा सकती है । इसका एक लाभ यह है कि ये जीवाणुओं में भी प्रगट हो सकते हैं (mRNA बना सकते हैं) जबकि जीवाणुओं में विभक्त जीनों (split genes) से प्राप्त HnRNA को mRNA में बदलने की क्षमता नहीं होती है ।

जीन बैंक (Gene bank) को DNA लाइब्रेरी (DNA library) या DNA संग्रह भी कहते हैं । क्लोनित DNA अणुओं का संचयन, जिसमें समग्र जीनोम का समावेश हो जीनोम लाइब्रेरी एवं c-DNA प्रतियों का संकलन ही c-DNA लाइब्रेरी कहलाता है ।

3.3.1 जीनोम लाइब्रेरी (Genome Library)

जीनोम लाइब्रेरी वास्तव में प्लाज्मिड क्लोनों या फाज लयनजों (lysates) का एक संग्रह होता है । जिसमें DNA निवेश्यों (DNA inserts) के रूप में उपस्थित विभिन्न DNA खंडों का सम्पूर्ण योग सम्बन्धित जीव के पूरे जीनोम का प्रतिनिधित्व करता है । बहुधा जीनोम लाइब्रेरियों मे कुछ

खंड प्राकृतिक दशा मकी तुलना में काफी कम आवृत्ति (frequency) में उपस्थित हो सकते हैं, अथवा अनुपस्थित भी हो सकते हैं ।

जीनोम लाइब्रेरी के निर्माण में जीनोमिक DNA को एक विशिष्ट सीमाकारी एन्जाइम द्वारा उपयुक्त परिमाण के खण्डों में तोड़ा जाता है और फिर इन टुकड़ों का निवेशन एक क्लोनिंग वाहक में कराया जाता है । इससे भारी संख्या में काइमेरिक वाहक प्राप्त हो जाते हैं । इनके प्राप्त होने की विधि को शॉटगन विधि (shotgun method) कहते हैं । इस संग्रह में जीन विशेष प्रोब (Probe) द्वारा अलग करके प्रयोग में लाए जाते हैं ।

3.3.2 C-DNA लाइब्रेरी

जिन ऊतकों (tissues) में प्रोटीन का सक्रिय रूप से संश्लेषण होता रहता है (जैसे पौधों में जड़ और पत्तियाँ, स्तनधारी जन्तुओं में अण्डाशय या रेटीक्यूलोसाइट इत्यादि) उनमें mRNA को पृथक् करके cDNA (complementary DNA) लाइब्रेरियाँ भी बनाई जा सकती है । रिवर्स ट्रान्सक्रिप्टेज (reverse transcriptase) एन्जाइम का प्रयोग करके mRNA से cDNA बनाया जाता है । जिसको फिर द्विसूत्री (double stranded) बनाकर क्लोन किया जा सकता है (चित्र 3.5) । ये cDNA क्लोन, जीनोमिक क्लोनों से भिन्न होंगे, क्योंकि इनमें विभक्त जीनों के इन्ट्रॉनों का अभाव होगा । इनका एक लाभ यह है कि ये जीवाणुओं में प्रगट हो सकते हैं (mRNA बना सकते हैं) जबकि जीवाणुओं में विभक्त जीनों (split genes) से प्राप्त HnRNA को mRNA में बदलने की क्षमता नहीं होती है ।

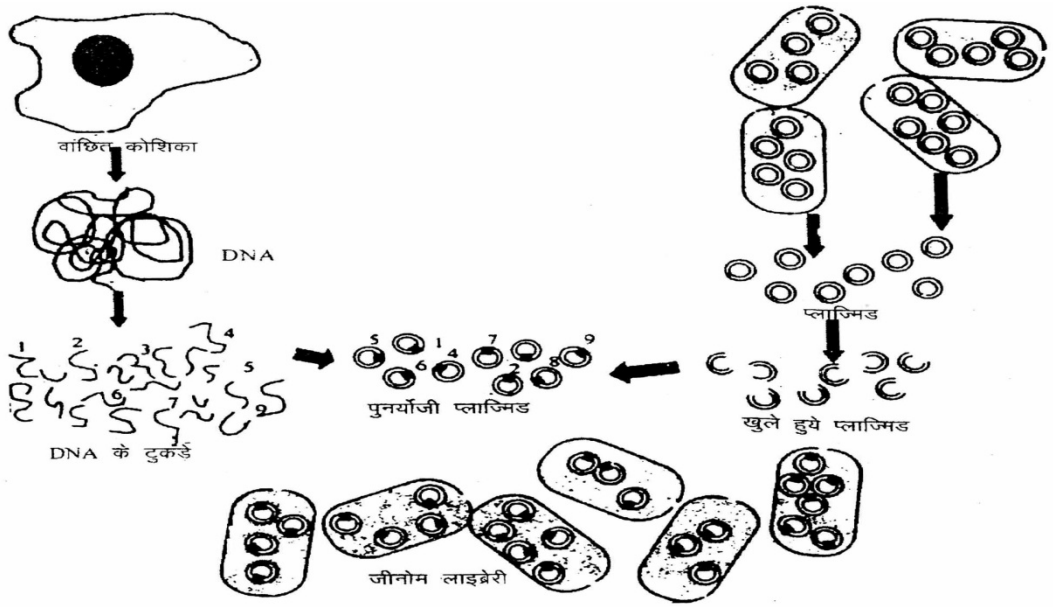

चित्र 3.5 - जीनोम लाइब्रेरी का निर्माण

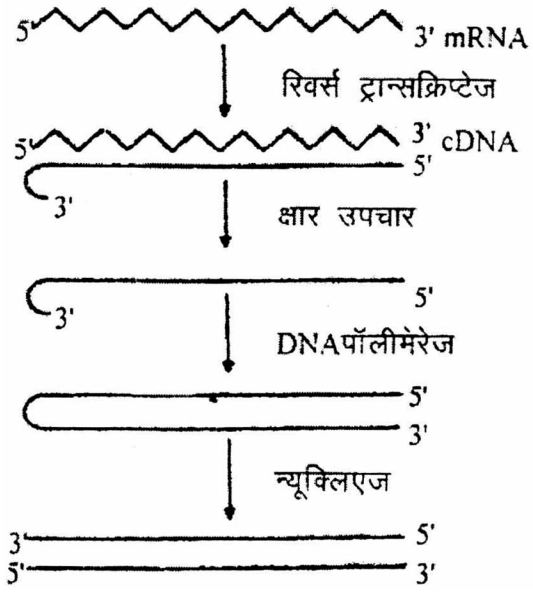

चित्र 3.8 - mRNA से cDNA का बनना ।

3.4 क्लोनिंग कार्य योजना (Cloning Strategies):

किसी भी ऊतक में एक प्रोटीन के उत्तरदायी जीन की तुलना में उस प्रोटीन के लिए उत्तरदायी संदेशवाहक आर. एन.ए. (mRNA) की मात्रा वहीं अधिक होती है अत: गुणसूत्र या जीनोम के अनुक्रमण के स्थान पर m-RNA का अनुक्रमण उपयुक्त होगा ।

सामान्यत: वांछित अनुक्रमण के mRNA की अल्पमात्रा क्लोनिंग प्रारम्भ के लिए उपयुक्त होती है । जब इसे सीधे cDNA संश्लेषण के लिए काम में लिया जाए तथा उत्पाद क्लोनिंग की जाए तो cDNA लाइब्रेरी प्राप्त होती है । परन्तु मुख्य समस्या यह होती है कि वांछित क्लोन का चयन किस प्रकार किया जाए ।

इस समस्या के समाधान के लिए कितनी ही विधियां सुझाई गयी और यह इस पर निर्भर करता है कि अन्वेषण के प्रारम्भ में क्या उपलब्ध है । यदि वांछित प्रोटीन या उसके किसी भाग का अनुक्रमण उपलब्ध है तो बेहतर होता है रासायनिक रूप से संश्लेषित ऑलिगोन्यूक्लियोटाइड प्रोब को काम में लिया जाए ।

यदि प्रोटीन के अपेक्षाकृत लम्बे भाग का अनुक्रमण उपलब्ध हो तो प्रत्येक अमीनों अम्ल के लिए उत्तरदायी कोडोन के माध्यम से पॉलीन्यूक्लियोटाइड संश्लेषित किया जा सकता है जो कि पूरी तरह विश्वसनीय तथा सही होगा ।

एक बार प्रोब संश्लेषित कर लेने के उपरांत कॉलोनी संकरण के माध्यम cDNA लाइब्रेरी से अनुक्रमण चयन कर लिया जाता है तथा क्लोन को अलग कर लिया जाता है ।

अभिव्यक्ति वाहक के उपयोग से एक अलग विधि भी काम में ली जाती है । इस स्थिति में ऐसे cDNA अणु को जिसमें जीन अभिव्यक्ति प्रदर्शित करते हैं को किसी वाहक में निवेशित कर दिया जाता है । cDNA लाइब्रेरी के लिया गया खाद एवं EcoRI स्थल पर LacG जीन जो जीवाणुभोजी पर स्थित होती है, को क्लोन किया जाता है ।

बोध प्रश्न

1. रेस्ट्रिक्शन विकर डी.एन.ए. पर चिपकने वाले छोर उत्पन्न करता है - सत्य/असत्य
2. एग्रोबैक्टीरियम ट्यूमिफेसिएन्स का प्लाज्मिड वाहक के रूप में कार्य नहीं कर सकता - सत्य/असत्य
3. फेस्मिड में जीवाणुभोजी और प्लाज्मिड, दोनों वाहकों के गुण होते हैं ।

3.5 सारांश (Summary) :

पुनर्संयुक्त डी.एन.ए. तकनीक एक ऐसी तकनीक है जिसने जैव प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में क्रांतिकारी प्रगति की है । इस तकनीक के माध्यम से वांछित डी.एन.ए. खण्डों की क्लोनिंग तथा स्थानान्तरण संभव हुआ है । कितने ही जैव उत्पादों का सस्ता तथा सरल उत्पादन संभव हुआ है । रेस्ट्रिक्शन विकरों के माध्यम से वांछित डी.एन.ए. खण्डों का वाहक के साथ जोड़ दिया जाता है, तदुपरांत परपोषी कोशिकाओं में जीन स्थानान्तरित कर इन्हें क्लोन कर बहुगुणित कर लिया जाता है ।

3.6 बोध प्रश्नों के उत्तर:

1. सत्य
2. असत्य
3. सत्य

3.7 अभ्यासार्थ प्रश्न (Exercise Questions):

1. पुनर्संयुक्त डी.एन.ए. से आप क्या समझते है? इसकी प्रविधि का विस्तारपूर्वक वर्णन करें ।
2. वाहक क्या है? वाहकों के विभिन्न प्रकारों पर टिप्पणी लिखिये ।
3. cDNA क्या है? जीनोम लाइब्रेरी का विस्तृत वर्णन करें ।
4. संक्षिप्त टिप्पणी लिखें -

क. क्लोनिंग कार्य योजना

ख. जीन लाइब्रेरी

3.8 शब्दावली (Glossary) :

वाहक	-	Vector
क्लोनिंग	-	Cloning
परपोषी कोशिकाएं	-	Host Cells
रेस्ट्रिक्शन एण्डोन्यूक्लिएज	-	Restriction Endonuclease

3.9 संदर्भ ग्रंथ (Reference Books):

1. वॉकर एण्ड गिंगोल्ड, मॉलीक्यूलर बायोलॉजी एवं बायोटेक्नोलॉजी, पनिमा पब्लिशिंग कार्पो., नई दिल्ली ।
2. प्रिमरोज एण्ड टायमन, प्रिंसीपल ऑफ जीन मेनुपुलेशन एण्ड जीनोमिक्स, ब्लेक वेल पब्लिशिंग, ऑक्सफोर्ड, यू के.
3. चैन्नारयप्पा, मोलीक्यूलर बायोटेक्नोलॉजी, प्रिंसीपल्स एण्ड प्रेक्टिस, यूनिवर्सिटी प्रेस, हैदराबाद ।

इकाई 4

बहु लीकृत श्रृंखला अभिक्रिया
(Polymerase Chain Reaction - PCR)

इकाई की रूपरेखा

4.0 उद्देश्य
4.1 प्रस्तावना
4.2 सिद्धान्त तथा तकनीक
4.3 सीमाऐं तथा दक्षता
4.4 अनुप्रयोग
  4.4.1 डी.एन.ए. अनुक्रमण
  4.4.2 जीन अभिव्यक्ति का अध्ययन
  4.4.3 उद्विकास तथा मानचित्रण
  4.4.4 निदान
4.5 सारांश
4.6 बोध प्रश्नों के उत्तर
4.7 अभ्यासार्थ प्रश्न
4.8 शब्दावली
4.9 संदर्भ ग्रन्थ

4.0 उद्देश्य (Objective) :

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप निम्न तथ्यों से भली भाँति परिचित हो जाऐगें -

1. पी.सी.आर. तकनीक क्या है?
2. इस तकनीक की विभिन्न क्षेत्रों में उपादेयता तथा
3. पी.सी.आर. तकनीक के माध्यम से डी.एन.ए. अनुक्रमण ।

4.1 प्रस्तावना (Introduction) :

जीनीय संरचना और कार्यों के अध्ययन के लिए वांछित DNA का विश्लेषण हेतु पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध होना आवश्यक है । पहले किसी जीन की प्रतिलिपियाँ प्राप्त करने के लिए सूक्ष्मजीवों को उपयोग में लिया जाता था, जो कि एक लम्बी प्रक्रिया थी । अब एक कोशिका विहीन तकनीक उपलब्ध है, जो बहु लकीकृत श्रृंखला अभिक्रिया (polymerase chain reaction - PCR) कहलाती है । यह एक वांछित DNA अनुक्रम का पुनरावर्तिक चक्रों (repeated cycle) में होने वाला पात्रे, प्राइमर निर्देशित संश्लेषण (in vitro, primer directed synthesis) है । तकनीक

मूलत: वही है, जो कोशिका डी.एन.ए. प्रतिलिपिकरण के दौरान काम में लेती है । विलयन में उपस्थित डिऑक्सीराइबोन्यूक्लियोटाइड ट्राइफॉरफेट (dNTPs) को उपयोग में लेते हुए पॉलीमरेज एन्जाइम, पैतृक DNA से, पूरक प्रतिलिपि (complementary) का निर्माण. करता है ।

पी.सी.आर. तकनीक एक चमत्कारी तकनीक साबित हुई जिसने अशोधित DNA के ढेर में से भी एक अकेली जीन का प्रतिलिपिकरण संभव बनाया है । पात्रे डी.एन.ए. प्रतिलिपिकरण हेतु प्रथम उपकरण केरी पुलिस (Kary Pulis) ने बनाया । यह एक बहुत ही संवेदनशील तथा तीव्र प्रक्रिया है जिसने अपेक्षाकृत मंद एवं मुश्किल तरीकों को प्रतिस्थापित कर दिया । वर्तमान समय में पी.सी.आर. आण्विक जैव वैज्ञानिकों (molecular biolgists) के लिए आधारभूत मुक्ति (basic tool) है ।

4.2 सिद्धान्त तथा तकनीक (Principle & Technique) :

चित्र 4.1 में पी.सी.आर. तकनीक की रूपरेखा प्रदर्शित की गई है । विशिष्ट ऑलिगोन्यूक्लियोटाइड (oligonucleotide) रासायनिक रूप से संश्लेषित किए जाते हैं, जो वांछित DNA के संपूरक (complementary) होते हैं, ये प्राइमर कहलाते हैं ।

एक प्राइमर, डी.एन.ए. के सेन्स स्ट्रैण्ड (sense strand) तथा एक प्राइमर एन्टीसेंस स्ट्रैण्ट (antisense strand) के लिए अभिकल्पित (Design) किया जाता है, जो इन स्ट्रैण्डों (strands) पर इस प्रकार एनील (Anneal) होते हैं कि उसके 3' सिरे एक दूसरे की ओर इंगित हों । प्राइमर, बफर विलयन में वांछित डी.एन.ए., डी.एन.टी.पी. (dNTPs), Mg^{++} (Magnesium ion) तथा एक तापस्थायी पॉलीमरेज विकर के साथ मिश्रित किए जाते हैं । इस मिश्रण पर खनिज तेल की परत बना दी जाती है ताकि वाष्पन को रोका जा सकें या फिर नलिकाओं (vessels) को गर्म प्लेट से ढक दिया जाता है तथा एक कम्प्यूटराइज्ड तापन यंत्र में रखा जाता है । द्वि-रज्जुक डी.एन.ए. (Double strended DNA) को अब इसके गलनांक के ऊपर तक गरम किया जाता है ताकि ये विकृत होकर एक-रज्जुक डी.एन.ए. (single stranded DNA) की स्थिति में आ जाए । अब तापमान को पर्याप्त कम कर दिया जाता है ताकि एक रज्जुक डी.एन.ए. और प्राइमर में संकरण (hybridization) हो सकें, फिर भी तापमान इतना रखा जाता है कि प्राइमर का दूसरे स्थानों पर समान अनुक्रम से संकरण को रोका जा सकें । प्राइमर की उच्च सांद्रता, टेम्पलेट स्ट्रैण्ड के साथ पुन: एनीलींग को सुनिश्चित करती है । तापमान को अब पॉलीमरेज के लिए इष्टतम (optimum) मान तक बढ़ाया जाता है ताकि पॉलीमरेज प्राइमर-टेम्पलेट डुप्लेक्स के सिरे पर जुड़ सकें । अब प्रत्येक प्राइमर के 3' सिरे से डी.एन.ए. संश्लेषण प्रारम्भ होता है जो तब तक जारी रहता है जब तक कि दोबारा गलनांक तक तापित कर रोका नहीं जाए । यह पी.सी.आर. का एक चक्र पूर्ण हुआ । गलनांक तापन के साथ दूसरा चक्र प्रारम्भ होता है जिसका अगला चरण प्राइमर का एनीलिंग है ।

अब इस बार प्राइमर न सिर्फ मूल डी.एन.ए. के साथ जुड़ता है बल्कि प्रथम चक्र के नवनिर्मित डी.एन.ए. के साथ भी प्राइमर बी एनीलिंग होती है । द्वितीय चक्र में मूल डी.एन.ए. के साथ प्रथम चरण की अभिक्रिया दोहराई जाती है परन्तु नवनिर्मित डी.एन.ए. अणुओं के साथ संश्लेषण

वहीं तक होता है जितनी कि इस डी.एन. अणु की लम्बाई है, जो कि विपरीत प्राइमर के 5 ' सिरे के संगत होता है । तीसरे चक्र की पूर्णता के बाद, यह स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होने लगता है कि दो चक्रो के बाद संश्लेषित हुआ डी.एन.ए. अणु दोनों सिरों से प्राइमर द्वारा बंधित है । यह एक सुनिश्चित लम्बाई का डी.एन.ए. अणु नलिका में इकट्ठा होता जाता है । यही सुनिश्चित लम्बाई का डी.एन.ए. उत्पाद वांछित डी.एन.ए. है । (चित्र 4.1)

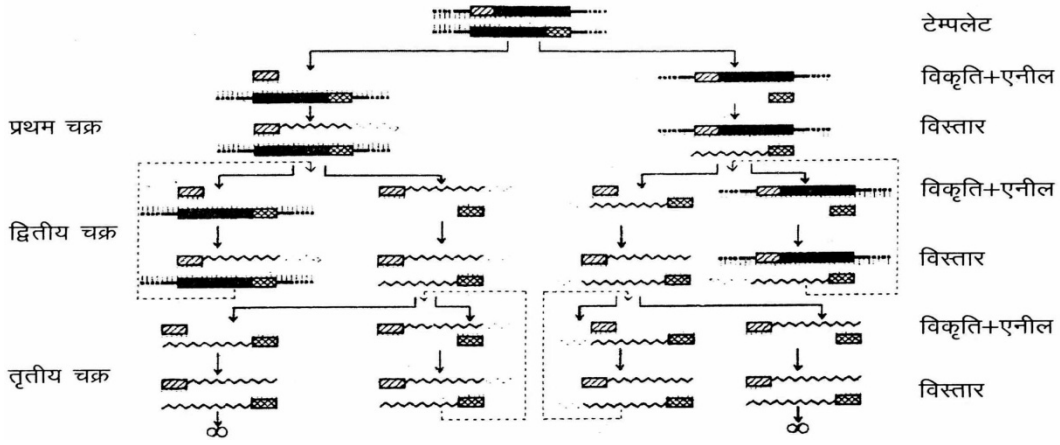

चित्र 4.1 : पी.सी.आर. के प्रथम तीन चरणों का चित्रीय निरूपण - विकृति एवं एनील : यह रज्जुओं के पृथक्करण तथा तदुपरांत ऑलीगोन्यूक्लियोटाइड प्राइमर के प्रत्येक रज्जु पर जुड़ने को दर्शाती हैं । विस्तारण - यह 3' सिरे से संपूरक रज्जु के विकरीय संश्लेषण (Enzymatic synthesis) को निरुपित करता है ।

बोध प्रश्न

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें -

1. डी.एन.ए प्राइमर वांछित DNA के.....होते हैं ।
2. पी.सी.आर. नलिका में खनिज तेल की परल.....को रोकती है ।
3. टेग पॉलीमरेज का विलगन.....जीवाणु से किया गया ।

4.3 सीमाऐं तथा दक्षता (Limitations and Eficiency) :

पी.सी.आर. की दक्षता को विभिन्न घटक प्रभावित करते हैं । प्राइमरों के बीच वांछित डी.एन.ए. की लम्बाई स्वयं एक सीमाकारी कारक है, सामान्यत: अनुक्रम (sequence) की लम्बाई के साथ पी.सी.आर. की दक्षता कम होती जाती है, यद्यपि 10 kb से ज्यादा अनुक्रम तक के डी.एन.ए. अनुक्रम प्रवर्धन (amplification) पी.सी.आर. से संभव है ।

प्राइमरों के मध्य संपूरकता (complementarity) भी, प्राइमर डाइमर (primer dimer) बनने की वजह से बाधा पहुँचाती है ।

वांछित डी.एन.ए. (Target DNA) का अनुक्रम स्वयं भी पी.सी.आर. की दक्षता को प्रभावित करता है । एक रज्जुक (single stranded) डी.एन.ए. में, GC प्रचुर क्षेत्रों में सामान्यत: बनने वाली द्वितीयक संरचनाऐं भी पॉलीमरेज विकर द्वारा पैतृक डी.एन.ए. पर अनुक्रम पहचानने से रोकता है ।

लगभग 20 चक्र पूर्ण होने के बाद उत्पादन की द्रुत गति भी रूक जाती है, जिसका कारण उत्पाद की उच्च सांद्रता तथा विकर की मंद क्रियाशीलता होती है ।

प्रारम्भिक दिनों में एक मात्र उपलब्ध एवं प्राय: प्रयुक्त पॉलीमरेज, डी.एन.ए. पॉलीमरेज I का लेनो खण्ड (Klenow fragment of DNA polymerase I) ही था जो डी.एन.ए. के गलनांक ताप पर स्वयं भी विकृत हो जाता था । इस कारण प्रत्येक चक्र में फिर से इस विकर को इंजेक्ट कराना पड़ता था, जिसकी वजह से मिश्रण में प्रोटीन की सांद्रता बढ़ती जाती थी, जो अंतत: सदमन का कारण बनती थी ।

गर्म पानी के झरनों का निवासी, एक तापस्नेही (thermophilic) जीवाणु (thermophilus) में एक उत्तम विकर टेक पॉलीमरेज (Taq polymerase) पाया जाता है । यह विकर गलनांक तापक्रम के पुनरावर्तक चक्रों के साथ सक्रिय बना रहता है । इस विकर के उपयोग से पी.सी.आर. की दक्षता को बढ़ाया जा सका है ।

इन सबके अतिरिक्त पी.सी.आर. हेतु नमूने (sample) में उपस्थित संदूषण (contamination) भी इस संवदेनशील तकनीक के परिणामों को प्रभावित कर सकता है ।

बोध प्रश्न

4. डी.एन.ए प्राइमर वांछित DNA के.....होते हैं ।
5. पी.सी.आर. नलिका में खनिज तेल की परल.....को रोकती है ।
6. टेग पॉलीमरेज का विलगन.....जीवाणु से किया गया ।

4.4 अनुप्रयोग (Applications) :

यूँ तो पी.सी.आर. तकनीक के उपयोगों की इतनी लम्बी सूची है कि इन सबका वर्णन यहाँ संभव नहीं है । फिर भी प्रमुख उपयोगों के बारे में बताने का प्रयास किया जा रहा है ताकि विद्यार्थी इस तकनीक की महत्ता के विस्तृत कलेवर को जान सकें ।

4.4.1 डी.एन.ए. अनुक्रमण (DNA Squencing)

डी.एन.ए. अनुक्रमण के लिए उसकी पर्याप्त प्रतिलिपियाँ तैयार करना पी.सी.आर. तकनीक का सर्वप्रमुख उपयोग है । यह क्लोनिंग से सरल और द्रुत तकनीक है, यहाँ तक कि यदि वांछित हो तो प्रवर्धन (amplification) तथा अनुक्रमण (sequencing) साथ-साथ किए जा सकते हैं । पी.सी.आर. का रेखीय उत्पाद विकृति (denaturation) के बाद तीव्रता से पुन: एनीलित हो जाता है, जो अनुक्रमण हेतु प्रयुक्त होने वाले प्राइमर के बंधन को रोकता है ।

इसी कारण से, पी.सी.आर. उत्पाद को अनुक्रमण हेतु प्रयुक्त विधियों में, दोनों टेम्पलेट रज्जुओं (strands) को पृथक-पृथक रखा जाता है ।

A. असममित पी.सी.आर. (Asymmetric PCR)

इस विधि में, प्राइमर की सांद्रता के नियंत्रण से एक ही टेम्पलेट रज्जु (strand) को प्रवर्धन (amplification) होने दिया जाता है । पी.सी.आर. के दौरान अनुक्रमण हेतु प्रयुक्त होने वाले रज्जु (strand) के लिए प्राइमर की सांद्रता कम रखी जाती है, जबकि विपरीत रज्जु (strand)

हेतु प्राइमर प्रचुर मात्रा में उपलब्ध होता है । प्रारम्भ में प्रवर्धन (amplification) सामान्य रूप से होता है परन्तु शीघ्र ही कम सान्द्रता के प्राइमर की क्रियाशीलता रुक जाती है । परिणामस्वरूप द्वि-रज्जुक डी.एन.ए. (double stranded DNA) की कम सांद्रता तथा एक-रज्जुक डी.एन.ए. (single stranded DNA) की प्रचुरता प्राप्ति होती है । सीमित प्राइमर अब सैंगर विधि से अनुक्रमण के लिए प्रयुक्त होता है ।

B. रज्जु विलोपन या रासायनिक विधि (Strand Removal or Chemical Method)

एक-रज्जुक डी.एन.ए. (single stranded DNA) प्राप्त करने का दूसरा तरीका है, एक स्ट्रैण्ड का विलोपन । पी.सी.आर. में एक 5'-फॉस्फोराइलेटेड प्राइमर के उपयोग से यह संभव है । 5'-फास्फोराइलेटेड स्ट्रैण्ड के साथ λ-एक्सोन्यूक्लिएज का उपयोग करने से, यह स्ट्रेण्ड नष्ट हो जाता है तथा अनुक्रमण हेतु एक रज्जुक (single stranded) टेम्पलेट उपलब्ध होता है । इसी प्रकार एक प्राइमर को लौह आयन (ferrous) के साथ बंधित कर दिया जाता है । इस उत्पाद को यदि क्षारीय माध्यम (alkali) में विकृत किया जाए तो लौह बंधित स्ट्रैण्ड को चुम्बक की सहायता से पृथक किया जा सकता है, फिर भी परिणामों की विश्वसनीयता के लिए दोनों रज्जुओं (strands) के अनुक्रमण की सलाह दी जाती है ।

C. चक्र अनुक्रमण या डाइडिऑक्सी विधि (Cycle Sequencing or Dideoxy Method)

तापीय चक्र (thermal cycle) या डाइडिऑक्सी विधि (dideoxy method) के उपयोग से पी.सी.आर. के रूपान्तरित स्वरूप को काम में लेते हुए डी.एन.ए. अनुक्रमण इन दिनों ज्यादा प्रचलित हो रहा है । उपरोक्त वर्णित सभी विधियों में डी.एन.ए. के एक रज्जु को पृथक्कृत करना पड़ता है, जो कि एक समय लेने वाली प्रक्रिया है जो हमेशा विश्वसनीय भी नहीं होती । चक्रीय अनुक्रमण (cyclic sequencing) सीधे-साधे द्वि-रज्जु डी.एन.ए. (double stranded DNA) का किया जा सकता है, इस प्रक्रिया में डाइडीऑक्सी समापक (dideoxy terminator) को सामान्य पी.सी.आर. प्रक्रिया में मिश्रित किया जाता है ताकि श्रृंखला विस्तार एवं समापन साथ-साथ हो सकें । अनुक्रमक प्राइमर के 5' पर रेडियोऐक्टिव फॉस्फोरस (^{32}P) को अंकित किया जाता है । अब अनुक्रमण पी.सी.आर. की भाँति चक्रीय स्वरूप में किया जाता है । अब प्रत्येक डाइडिऑक्सी टर्मीनेटर को प्रदीप्त अभिरंजक (fluorescent dyes) से अभिरंजित करते हैं । यह अभिरंजक प्रत्येक समापक क्षारक के साथ अलग रंग देता है । इसी कारण से चारों अभिक्रियाओं को एक ही नलिका में पूरा करवाया जा सकता है तथा एक ही जेल पर रन किया जा सकता है, बशर्ते विश्लेषण हेतु स्वचालित लेसर उपकरण उपलब्ध है (चित्र 4.2) ।

4.4.2 जीन अभिव्यक्ति का अध्ययन (Gene expression studies)

यद्यपि पी.सी.आर., डी.एन.ए. प्रवर्धन (DNA amplification) की एक तकनीक है तथापि mRNA के माध्यम से जीन अभिव्यक्ति के अध्ययन में भी यह महत्त्वपूर्ण है । सर्वप्रथम mRNA को विपरीत अनुलेखित (reverse transcript) कर cDNA प्राप्त किया जाता है, फिर इसका प्रवर्धन सामान्य रूप से करवाया जाता है । इस प्रक्रम को RT-PCR (Reverse Transcript - PCR) भी कहते हैं । विपरीत अनुलेखन हेतु तापस्थायी पॉलीमरेज भी जीवाणु

Thermus thermophilus से विलगित किया गया है जो कि Mn^{+2} की उपस्थिति में कार्य करता है, इस प्रकार दोनों चरणों को जोड़कर अभिक्रिया एक साथ करवायी जा सकती है ।

4.4.3 उद्‌विकास तथा मानचित्रण (Evolution and Mapping)

उद्‌विकास के क्षेत्र में पी.सी.आर. ने समूचा ज्ञान भण्डार उड़ेल दिया है । बहुत थोड़ी मात्रा में उपलब्ध डी.एन.ए. के साथ काम कर सकने की क्षमता की वजह से वैज्ञानिकों को विलुप्त प्रजातियों के सुरक्षित ऊतकों के अध्ययन में मदद मिली है । संरक्षित जीनों (conserved genes) में अनुक्रमण में समानता (sequence similarities) के अध्ययन से फायलोजेनेटिक वृक्ष (phylogenetic trees) का निर्माण संभव हुआ है ।

जीनोम मानचित्रण में भी पी.सी.आर. तकनीक ने महती भूमिका निभाई है । पुनरावर्तित अनुक्रमों (repetitive sequences) को क्रमबद्ध करने में समजात प्राइमरों (homologous primers) की मदद मिली है । यहाँ तक कि मानव जीनोम मानचित्रण भी इतने कम समय में पी.सी.आर. तकनीक की उपलब्धता की वजह से संभव हो पाया है ।

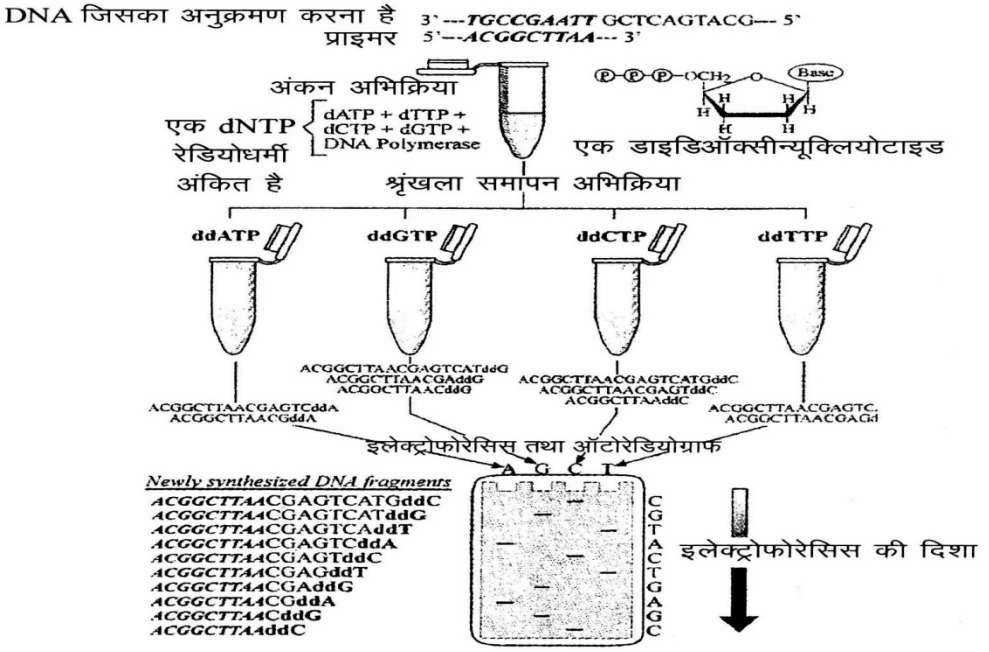

चित्र 4.2 : डाइडीऑक्सी न्यूक्लिओटाइड ट्राइफॉस्फेट के माध्यम से DNA अनुक्रमण

4.4.4 निदान (Diagnostics)

पी.सी.आर. की वजह से जन्म से पूर्व ही जन्मजात विकृतियों के निदान में भी मदद मिलती है । गर्भस्थ शिशु से ली हुई एक कोशिका भी एक दिन में विश्लेषण कर विश्वसनीय परिणाम दे सकती है । सिकल सेल एनीमिया के उत्परिवर्तन का पता भी पी.सी.आर. के माध्यम से लगाया जा सकता है । cDNA के पी.सी.आर. से ट्यूमर कोशिका और वायरस की उपस्थिति का भी पता लगाया जा सकता है । यहाँ तक कि HIV संक्रमण का भी सबसे जल्दी पता पी.सी.आर. के माध्यम से ही लगाया जा सकता है ।

बोध प्रश्न

7. असममित पी.सी.आर. में एक टेम्पलेट रज्जु का प्रवर्धन कैसे रोका जाता है ?
8. रज्जु विलोपन विधि में 5 '-फास्फोराइलटेड स्ट्रैण्ड के साथ λ-एक्सोम्यूक्लिएज का उपयोग क्यों किया जाता है ?

4.5 सारांश (Summary):

इस इकाई में आपने पी.सी.आर. तकनीक के मूलभूत तथ्यों के बारे में जाना । पात्र में DNA प्रतिलिपिकरण हेतु टेम्पलेट डी.एन.ए. (DNA), पॉलीमरेज तथा प्राइमर की आवश्यकता होती है । पुनरावर्तिक तापानुशीतन, डी.एन.ए. को विकृत करता है तथा अभिक्रिया प्रारम्भ करता है । विशिष्ट उद्देश्यों के लिए इस तकनीक में फेर बदल कर सकते हैं । डी.एन.ए. अनुक्रमण जैसे महत्त्वपूर्ण उपयोग के अतिरिक्त जीनोम मानचित्रण तथा चिकित्सकीय अनुदान जैसे क्षेत्रों में भी यह तकनीक चमत्कारी सिद्ध हुई है ।

4.6 बोध प्रश्नों के उत्तर:

1. संपूरक
2. वाष्पन
3. Thermus thermophilus
4. प्राइमरों के मध्य संपूरकता
5. टेक पॉलीमरेज
6. GC प्रचुर क्षेत्रों में
7. प्राइमर की सान्द्रता नियंत्रण में
8. इससे वह रज्जु नष्ट हो जाता है ।

4.7 अभ्यासार्थ प्रश्न (Exercise Questions):

1. पी.सी.आर. तकनीक की मूल तकनीक की जानकारी दें ।
2. पी.सी.आर. तकनीक की सीमाओं पर लेख लिखें ।
3. संक्षिप्त टिप्पणी लिखें -
   (a) असममित पी.सी.आर.
   (b) रज्जु विलोपन विधि से DNA अनुक्रमण

4.8 शब्दावली (Glossary):

1. पी.सी.आर. - Polymerase Chain Reaction.
2. डी.एन.ए. अनुक्रमण - DNA Sequencing.

4.9 संदर्भ ग्रंथ (Reference Books):

1. वॉकर एण्ड गिंगोल्ड, मॉलीक्यूलर बायोलॉजी एवं बायोटेक्नोलॉजी पनिमा पब्लिशिंग कार्पो., नई दिल्ली ।
2. प्रिमरोज एण्ड टायमन, प्रिंसीपल ऑफ जीन मेनुपुलेशन एण्ड जीनोमिक्स, ब्लेक वेल पब्लिशिंग, ऑक्सफोर्ड, यू.के.
3. चैन्नारयप्पा, मोलीक्यूलर बायोटेक्नोलॉजी, प्रिंसिपल्स एण्ड प्रेक्टिस, यूनिवर्सिटी प्रेस, हैदराबाद ।

इकाई 5

खाद्य सूक्ष्मजैविकी-I

(Food Microbiology)

इकाई की रूपरेखा

5.0 उद्देश्य

5.1 प्रस्तावना

5.2 खाद्य सामग्री में संदूषण एवं विकृति

- 5.2.1 अनाज
- 5.2.2 शर्करा उत्पाद
- 5.2.3 सब्जियाँ
- 5.2.4 फल
- 5.2.5 माँस तथा माँस उत्पाद
- 5.5.6 दुग्ध एवं दुग्ध उत्पाद
- 5.2.7 मछली एवं समुद्री खाद्य पदार्थों में विकृति
- 5.2.8 कुक्कुट पालन उत्पाद
- 5.2.9 डिब्बाबंद खाद्य सामग्री

5.3 खाद्य विकृति पहचान व लक्षण

5.4 खाद्यजनित संक्रमण तथा अविषाक्वन

5.4.1 जीवाण्वीय

- (i) ब्रूसेला
- (ii) बैसीलस
- (iii) क्लोस्ट्रीडियम
- (iv) ऐश्चेरिचिया
- (v) साल्मोनेला
- (vi) स्टेफाइलोकोकस
- (vii) विब्रियो
- (viii) र्यसिनिया

5.4.2 अजीवाण्वीय

- (i) निमेटोड
- (ii) प्रोटोजोआ
- (iii) शैवाल
- (iv) कवक

(v) विषाणु

5.5 सारांश

5.6 बोध प्रश्नों के उत्तर

5.7 अभ्यासार्थ प्रश्न

5.8 शब्दावली

5.9 संदर्भ ग्रन्थ

5.0 उद्देश्य (Objectives) :

विभिन्न प्रकार के खाद्य पदार्थ जो मनुष्य के दैनिक जीवन में उपयोगी होते हैं वे समुचित रख-रखाव के अभाव में खराब (spoil) हो जाते हैं एवं खाने योग्य नहीं रहते हैं । यदि खाद्य पदार्थ के संदुषण व विकृति पैदा करने वाले कारकों जिनमें सूक्ष्मजीवाणु, फफूंद, मोल्ड प्रोटोज़ोआ आदि प्रमुख है, के लक्षणों तथा इनके द्वारा होने वाली खाद्य पदार्थों की विकृति की हमें जानकारी होती तो हम खाद्यान्नों को नष्ट होने एवं साथ ही संदूषित भोजन खाने से बच सकते हैं । जिनसे न केवल हमें फायदा मिलेगा वरन् खाद्यान्नों को भी व्यर्थ होने से बचाया जा सकेगा ।

5.1 प्रस्तावना (Introduction):

मानव सभ्यता के विकास तथा बदलती जीवन शैली ने मनुष्य को परम्परागत कच्चे भोजन के स्थान पर पके हुए भोजन पर निर्भर बनाया । अन्न तथा शर्करा उत्पाद, सब्जी उत्पाद, माँस उत्पाद, दुग्ध उत्पाद आदि पदार्थो को विभिन्न रूपों में खाद्यान्न की तरह उपयोग में लेना प्रारंभ किया । इन भोज्य पदार्थों के साथ ही विभिन्न सूक्ष्मजीवाणुओं, फफूंद व मोल्डस को भी नए खाद्यान्नों में नवीनतम अवसर मिलें । जब खाद्य पदार्थो पर सूक्ष्मजीवाणु पनपने लगे तो खाद्य पदार्थों का संदूषण (contamination) होने लगा एवं उनमें विकृति पैदा होने लगी । संदूषित खाद्य पदार्थों के खाने के पश्चात् विभिन्न प्रकार के रोग सामने आए । इनमें से आधुनिक मानव के सामने जो प्रमुख समस्या आई वह है कि खाद्य पदार्थ की विकृति को कैसे पहचाना जाए । ब्रूसेला, क्लोस्ट्रीडियम, स्टेफाइलोकोकस, विब्रियो, शैवाल, कवक तथा विषाणु द्वारा खाद्य पदार्थों में विकृति की पहचान तथा कारकों के सामान्य लक्षणों की जानकारी इस इकाई में दी गई है ।

5.2 खाद्य सामग्री का सूक्ष्मजैविक संदूषण एवं विकृति (Microbial Contamination and Spoilage of Food):

विकृति (spoilage) शब्द का अर्थ खाद्य पदार्थ का स्वादहीन होना या पोषक तत्व की अच्छी मात्रा की कमी से है । भोजन के जीवाण्विक विकृति के समय सतह पर स्लाइम के रूप में जीवाण्विक वृद्धि होती है और भोजन के विभिन्न घटकों का विखण्डन होने लगता है तथा जीवाण्विक उपापचय से गैस बनती है । भोज्य पदार्थ कई प्रकार के होते हैं जो कि सूक्ष्मजीवों से विकृत हो जाते हैं ।

5.2.1 अनाज (Cereals)

पौधों की वृद्धि की सभी अवस्थाओं में सूक्ष्मजीवों के द्वारा विकृति उत्पन्न हो सकती है । उत्पादन क्षेत्र में पादप वृद्धि के समय कई प्रकार के हानिकारक सूक्ष्मजीव जैसे कवक, जीवाणु आदि उपस्थित होते हैं । कई सूक्ष्मजीव फसल काटने के बाद होने वाली विकृति का कारण बनते हैं । मनुष्य के भोजन में अनाज जो सभी ग्रेमिनी कुल के होते हैं, वे कार्बोहाइड्रेट के मुख्य स्त्रोत होते हैं । अनाज में शर्करा और सहायक वृद्धिकारक पदार्थ जैसे अमाइलेज और प्रोटिएजेज पाये जाते हैं यदि अनाजों को थोड़ी नमी और हवा में रखा जायें तो मोल्डस जैसे पेनीसीलियम, म्यूकर, राइज़ोपस, फ़्यूजेरियम आदि अनाज की सतह पर वृद्धि करते हैं और जाल जैसी रचना बना लेते हैं । जाल में अम्लीय किण्वन (फरमेन्टेशन) कोलीफोर्म बैक्टीरिया द्वारा होता है । इसके पश्चात् यीस्ट के सहयोग से किण्वन (fermentation) द्वारा एल्कोहोलिक पेय बनता है ।

5.2.2 शर्करा उत्पाद

(A) सुक्रोस (Sucrose)

गन्ने से निकले रस में अधिक जीवाणु पाये जाते हैं । ये सूक्ष्मजीव चारों तरफ की हवा, मिट्टी या खेत काटने की विधि द्वारा आते हैं । ये जीवाणु है ल्यूकोनोस्टोक, बेसीलस, माइक्रोकोकस, फ्लेवोबैक्टीरियम, जेन्थोमोनास, स्यूडोमोनास, एन्टेरोबेक्टर एक प्रकार की यीस्ट जैसे सेकेरोमाइसीज केन्डिडा और मोल्डस जैसे एस्परजिलस, पेनीसीलियम और क्लेडोस्पोरियम आदि पादप की सतह पर जीवाणुओं का प्रवेश गंदगी या उसके आसपास की दरारों में पाये जाने वाले सूक्ष्म पदार्थों द्वारा होता है । सूक्ष्मजीव गन्ने के रस में उपस्थित सुक्रोस का विघटन कर देते हैं । यह रस अधिक सांद्र होकर काले भूरे रंग का हो जाता है ।

(B) मेपल सिरप (Maple Syrup)

कुछ पौधें जैसे खजुर का रस जो वेस्कुलर बंडल में पाया जाता है उसे मेपल सिरप कहते हैं । पेड़ से जब मेपल सिरप निकालते हैं तो चीरा लगाने के स्थान पर या सिरप को गाढ़ा करते समय सिरप में सूक्ष्मजीवी प्रवेश कर जाते हैं । वे सूक्ष्मजीव अधिकतर साइकोट्रोफिक, ग्राम ऋणात्मक जीवाणु होते हैं जैसे स्यूडोमोनास, अल्केलीजन्स व फ्लेवोबेक्टीरियम। ये छड़ की आकृति के होते हैं । इन सूक्ष्मजीवों द्वारा होने वाली खाद्य विकृतियाँ निम्न प्रकार की है -

(1) एन्टेरोबेक्टर एयरोजीनस द्वारा सिरप गाढ़ा व रेशेदार हो जाता है ।

(2) स्यूडोमोनास फ्लोरेसेन्स की वृद्धि से सिरप धुँधला या हरे रंग का हो जाता है ।

(3) माइक्रोकोकस सोराइसिस के कारण सिरप लाल रंग का हो जाता है ।

(4) एस्परजिलस और पेनीसीलियम के द्वारा भी सिरप गंदला व विकृत हो जाता है ।

(C) शहद

शहद में पच्चीस प्रतिशत से अधिक नमी होती है । इसमें सुक्रोज, लाइसोजाइम, ग्लूकोज पाया जाता है । शहद में सूक्ष्मजीवों का मुख्य स्त्रोत फूलों का नेक्टर और मधुमक्खियाँ है । यीस्ट, नेक्टर और मधुमक्खी की आन्त्र के पदार्थों में मिलती है । शहद से निकाले गये सूक्ष्मजीव स्टेफाइलोकोकाई, ग्लूकोनोक्टर और लेक्टोबेसीलस आदि जीवाणुओं के मुख्य समूह है जो कि शहद

के परिपक्वन होने तक उपस्थित रहते हैं । शहद की विकृति का मुख्य कारण ओसिमोफिलिक यीस्ट जैसे मेलिस तथा जाइगोसेकेरोमाईसीज रिचटेरी (richteri) है । शहद में विकृति से आने वाले बदलाव निम्न है -

(1) शहद जल सोखने की प्रकृति के कारण सतह पर तनु हो जाता है ।

(2) विलयन में शहद से ग्लूकोज हाइड्रेट का क्रिस्टलीकरण होने से शर्करा की सांद्रता कम हो जाती है ।

(3) सुक्रोस का विखण्डन (डिग्रेडेशन) और एल्कोहल में हो जाता है । यह विखण्डन की प्रक्रिया कई महीनों तक चलती रहती है । किण्वन के समय शहद का रंग काला व खेदा हो जाता है ।

5.2.3 सब्जियाँ (Vegetables)

सब्जियों में विकृति कई भौतिक कारकों व उसमें उपस्थित एन्जाइम के कारण होती है । विकृति युक्त सब्जियों के संपर्क में आने से ताजा सब्जियों में भी विकृति कारक जीवाणु प्रवेश कर जाते हैं तथा उनमें सड़न पैदा कर देते हैं ।

सब्जियों में सड़न के निम्न प्रमुख कारण है -

(1) पादप रोगाणु जो कि पत्तियों, तनों, फूलों व जड़ों को नुकसान पहुंचाते हैं ।

(2) सडनकारी, जीवाणु जो कि द्वितीयक आक्रमणकारी (invader) की तरह कार्य करते हैं ।

वे सूक्ष्मजीवाणु जो कि सब्जियों को खराब करते हैं उनमें प्रमुख है - क्लोस्ट्रीडियम, बेसीलस प्रजातियां तथा स्यूडोमोनास । मोल्ड (mold) जो सब्जियों को खराब करते है उनमें प्रमुख है - राइजोपस स्टोलोनीफर । फफूंद जो सब्जियों को विकृत करती है वे इस प्रकार है अल्टरनेरिया, फ़्यूजेरियम । सामान्यतया सब्जियों के पानी से भीगे क्षेत्रों पर फफूंद जल्दी लग जाती है । सूक्ष्म जीवाणुओं द्वारा खराब हुई परतों पर भूरे रंग के धब्बे बन जाते हैं जो कि गले हुए दिखाई देते हैं । वे सब्जियां जिनमें अम्लों की अधिक मात्रा पाया जाता है वे रसदार होती है, ऐसी सब्जियों पर सूक्ष्मजीवाणु तेजी से संक्रमण करते हैं ।

5.2.4 फल (fruits)

फलों में खाद्य विकृति अधिकतर फसल काटते समय अथवा उनके स्थानान्तरण के समय होती है । पौधों के प्राकृतिक सतही फ्लोरा में जीनस स्यूडोमोनास, लेक्टिक अम्ल, बेक्टीरिया जैसे लेक्टोबेसीलस ब्रेविस, ल्यूकोनोस्टोक, स्ट्रेप्टोकोकस आदि आते हैं । ज्यादातर फलों में पानी की अधिक मात्रा एवं कम pH की वजह से यीस्ट और मोल्ड आसानी से विकृति उत्पन्न कर देते हैं जैसे - पेनीसीलियम इटेलिकम ।

पेनीसीलियम डिजीटेलियम सिट्रस फलों में सोफ्ट रोट नामक विकृति उत्पन्न करती है । सेब में एस्कोमाइसीटीज वेन्ट्यूरा ब्राउन रोट नामक विकृति उत्पन्न करता है ।

5.2.5 माँस तथा माँस उत्पाद (Meat and Meat Products)

खाने योग्य जन्तुओं के माँस में पेशीय उत्तक, हृदय, यकृत होते हैं । खाने योग्य मांस (flesh) कार्बोहाइड्रेट और नान प्रोटीन भाग जैसे नाइट्रोजन का बना होता है । प्राणियों के मांस के पेशीय तन्तु ग्लाइकोजन के बने होते हैं । ग्लाइकोजन, ग्लूकोज का पॉलीमर होता है, जो यकृत में पाया जाता है । मांसपेशियां शरीर में ऊर्जा संग्रह का कार्य करती है ।

जीव की मृत्यु के पश्चात् ऑक्सीजन की सप्लाई बंद हो जाती है, रेडोक्स पोटेन्शियल गिर जाता है लेकिन ग्लाइकोजन का ग्लाइकोलाइटिक विखण्डन चलता रहता है, जिससे लेक्टिक अम्ल जमा होता रहता है और पेशीय pH कम हो जाता है । स्वस्थ जन्तु के ऊतकों का संक्रमण से बचाव, सामूहिक रूप से शारीरिक अवरोधक (त्वचा) और प्रतिरोधक तन्त्र की क्रिया से होता है । अत: ताजा काटे हुए जन्तु के आंतरिक अंग और पेशी तन्तु सूक्ष्मजीवों से रहित होते हैं । पशुवध के विभिन्न चरण सूक्ष्मजीवों को माँस में प्रवेश करने में सहायक होते हैं सूक्ष्मजीव जो मांस को विकृत करते है वे है - माइक्रोकोकाई, स्टेफाइलोकोकाई, स्यूडोमोनास, एक्टीनोबेक्टर सभी ग्राम ऋणात्मक जीवाणु है ।

ताजा मांस की विकृति का पहला संकेत सड़ी बदबू आना है । सड़ी बदबू, ग्लूकोज के विघटन द्वारा कीटोन्स, एल्कोहल एवं अमोनिया बनने के कारण आती है । मांस खराब होने का दूसरा संकेत, मांस की सतह का मक्खन या पनीर जैसी दिखाई देना है ।

5.2.6 दुग्ध एवं दुग्ध उत्पाद (Milk and Milk Products)

दुग्ध के मुख्य घटक प्रोटीन, वसा, लेक्टोस और पानी है । केसीन की उपस्थिति, पानी की अधिकता, pH (6.4-6.6) और पोषक तत्त्वों की बहुतायत जीवाण्वीय वृद्धि के लिए दूध को एक श्रेष्ठ माध्यम बनाता है । दूध से निकाले गये अधिकांश जीवाणु जैसे माइक्रोकोकाई, स्ट्रेप्टोकोकाई, कोर्नीबेक्टीरियम बोविस, सालमोनेला आदि जीवाणु मनुष्यों में रोग के कारक होते हैं ।

दुग्ध उत्पादों की विकृति (Spoilage of milk products)

कच्चा दूध कई खाद्य उत्पादों जैसे पनीर, योगर्ट के लिए कच्चा पदार्थ है ।

योगर्ट

योगर्ट दूध का किण्वित रूप है । इसका उत्पादन अधिकतर गाय के दूध से किया जाता है । इसमें साधारणतया फलों का रस होता है । इसमें कच्चे दूध से ज्यादा प्रोटीन होता है । योगर्ट में अवक्षेपण के द्वारा बनने वाला केसीन समूहित होकर एक जैल जैसी संरचना बनाता है । म्यूकर राइजोपस आदि योगर्ट को विकृत करते हैं ।

पनीर

पनीर एक संगठित दही है जिसमें दुग्ध वसा को केसीन के स्कंदन द्वारा सम्मिलित किया जाता है यह संगठित दही का शुष्क रूप है । प्रोटीन के अवक्षेपण के पश्चात् अम्लीय तत्त्व नमी को बाहर निकालने में मदद करते हैं जिनसे दही का संकुचन हो जाता है । यही संकुचन के समय जो छिद्र उत्पन्न होते हैं । वे पनीर को उसका अंतिम रूप प्रदान करते हैं ।

दुग्ध उत्पादों में विकृति के विभिन्न लक्षण

1. दुग्ध उत्पादों के pH में बदलाव

साधारणतया दूध का pH 6.4 से 6.6 होता है । सूक्ष्मजीवों द्वारा विकृति के बाद pH 4.4 अवक्षेपण हो जाता है । दूध एक सफेद रंग का द्रव होता है । जीवाणु के द्वारा विकृति के पश्चात् केसीन का अवक्षेपण हो जाता है और केसीनेज एन्जाइम की उपस्थिति के कारण स्कंदन की क्रिया होती है और दूध सफेद जैली जैसा हो जाता है ।

5.2.7 मछली तथा समुद्री खाद्य पदार्थो में विकृति (Fish and Seed Food Spoilage)

मछली में उच्च मात्रा में वसा पाई जाती है जो कि पेशी तन्तुओं के बीच फैली रहती है । मछलियों में पेशी तन्तु छोटे खण्डों में होते हैं जो कि एक-दूसरे से योजी उत्तकों के द्वारा अलग होते हैं । मछली के माँस में उच्च मात्रा में प्रोटीन पाया जाता है । स्वस्थ मछली के पेशी तन्तु और आंतरिक अंग जीवाणु रहित होते हैं परन्तु त्वचा, गिल्स और आहारनाल में काफी मात्रा में जीवाणु पाये जाते हैं । ये जीवाणु इस प्रकार है : स्यूडोमोनास, फ्लेवोबेक्टीरीयम और साइटोफेगा ये जीवाणु ग्राम धनात्मक है । मछली के मांस में प्राकृतिक रूप से कार्बोहाइड्रेट का बहुत कम स्तर होता है । इससे पेशी ऊतकों का अम्लीकरण हो जाता हे और pH 6.2 से 6.5 हो जाती है । कार्बोहाइड्रेट की अनुपस्थिति में मछली में पाये जाने वाले जीवाणु जैसे सालमोनेला, प्यूटरीफिकन्स मछली के मांस में भोज्य प्रोटीन संग्रह से पौष्टिक तत्व लेकर वृद्धि करता है । यह जीवाणु प्रोटीन का यूरिया, अमीनों अम्ल व अमोनिया में विघटन करता है । अमोनिया के विघटन से माँस में सड़ने की बदबू आती है । मछली का रंग चमकदार पीला एवं भूरा हो जाता है ।

5.2.8 कुक्कुट उत्पाद (Poultary Products)

मुर्गी पालन उद्योग सामान्यतया मुर्गी, बतख आदि के अंडे या माँस उत्पादन से जुड़ा हुआ होता है । अंडो या मांस में संदूषण एवं विकृति सामान्यतया उनके रख रखाव तथा माँस निकालने के दौरान होती है । मुर्गीखाने की मुर्गियों, बतखों आदि के पैरों में पिच्छों की उपस्थिति के कारण उनमें अनेक सूक्ष्मजीवाणु रहते हैं जिसमें प्रमुख हैं एक्टिनोबेक्टर, स्यूडोमोनास, माइक्रोकोकस, फ्लेवोबेक्टीरियम आदि इसी प्रकार प्रमुख मोल्ड है पेनीसीलियम व अल्टरनेरिया।

इन पोल्ट्री पदार्थों में विकृति के कारण व लक्षण निम्न है -

(A) मुर्गी के मांस में विकृति

मुर्गियों की त्वचा में जहाँ पर घाव हो जाता है उन स्थानों पर सूक्ष्मजीवाणु प्रवेश कर जाते हैं तथा उस स्थान के मांस में उपस्थित प्रोटीन व कार्बोहाइड्रेट का विघटन कर अमोनिया और एल्कोहल बनाते हैं । मुर्गी का ताजा माँस गुलाबी रंग का होता है परन्तु सूक्ष्मजीवाणु मोल्ड आदि के संक्रमण से माँस में से बदबू आती है एवं वो भूरे रंग का हो जाता है ।

अण्डों की विकृति

सामान्यत: मुर्गी के द्वारा ताजा दिये गये अण्डे स्वच्छ व जीवाणुरहित होते हैं परन्तु शीघ्र ही मुर्गियों की बीट तथा पिंजरों में स्थित सड़े हुए दानों व संक्रमित पानी के संपर्क में आने से अण्डे में विभिन्न प्रकार के जीवाणु, मोल्ड, फफूंद आदि लग जाते हैं । सूक्ष्मजीवाणु अण्डे की कवच व झिल्ली को भेदकर एल्बुमिन को संक्रमित करते हैं । विभिन्न प्रकार के सूक्ष्मजीवाणु जो अण्डों को

सड़ने में मदद करते हैं वे है स्यूडोमोनास, एक्टीनोबेक्टर फ्लेवोबेक्टीरियम आदि । इनके संक्रमण से अंडे की एल्ब्युमिन का रंग हरा हो जाता है ।

5.2.9 डिब्बाबंद खाद्य पदार्थ (Canned Food)

डिब्बाबंद खाद्य पदार्थो में विकृति से उत्पन्न हाइड्रोजन की वजह से डिब्बा फूल जाता है । डिब्बाबंद खाद्य पदार्थो में हाइड्रोजन गैस की मात्रा निम्न कारणों से बढ़ती है ।

1. भोजन में अम्लता बढ़ने के कारण
2. गंधक व फास्फोरस यौगिकों के कारण

उपरोक्त कारणों के पश्चात् डिब्बे में बंद भोजन पर निम्न प्रभाव पड़ता है -

1. भोजन रंगहीन हो जाता है ।
2. भोजन व आसपास का द्रव गंदला हो जाता है ।

सूक्ष्मजीवाणु जो ड्डिबाबंद भोज्य पदार्थ में विकृति उत्पन्न करते हैं वे इस प्रकार है -

(A) थर्मोफिलिक बैक्टीरिया (Thermophilic Bacteria)

अधिकांश वाणिज्यिक डिब्बाबंद भोज्य पदार्थों में विकृति थर्मोफिलिक सूक्ष्म जीवाणुओं द्वारा होती है जो कि 100°C पर जीवित रहते हैं तथा ये लेक्टिक अम्ल का निर्माण बिना हाइड्रोजन सल्फाइड गैस के करते हैं जिससे कि भोज्य पदार्थ अत्याधिक खट्टा हो जाता है ।

(B) मीजोफिलिक स्पोर निर्माणकारी बैक्टीरिया (Mesophilic Spores Forming Bacteria)

यह भी उन बेक्टीरिया का समूह है जो डिब्बाबंद भोज्य पदार्थ को विकृत करता हे । इसमें क्लोस्ट्रीडियम जीनस के जीवाणु शामिल है । क्लोस्ट्रीडियम एक मीजोफिलिक् स्पोर निर्माणकारी बैक्टीरिया है जो कि 60 से 80°C ताप पर जीवित रहता है । यह ब्यूटाइरिक अम्ल प्रकार का किण्वन करता है जिससे कार्बनडाईऑक्साइड और हाइड्रोजन सल्फाइड का निर्माण होता है ।

5.3 खाद्य विकृति पहचान व लक्षण (Detection of Spoilage and Characterization) :

किसी भी खाद्य पदार्थ की जीवाण्वीय मात्रा व भोज्य पदार्थ की प्रकृति की पहचान इसलिए जरूरी है कि वह खाद्य पदार्थ मनुष्य के उपयोग में लाने योग्य है अथवा नहीं । इसके लिए खाद्य पदार्थ में उपस्थित सूक्ष्मजीवाणु को निम्न विधियों के द्वारा पहचाना जा सकता है -

संकेतात्मक सुक्ष्मजीव (Indicator Microorganisms)

किसी भी खाद्य या पेय पदार्थ में कुछ सूक्ष्मजीवों के संक्रमण की प्रवृत्ति बनी रहती है, ये आस-पास के वातावरण में उपस्थित होते हैं परन्तु खाद्य पदार्थ में इनकी मात्रा एक सीमा से अधिक होने पर उसे अनुपयोगी बना देते हैं । जैसे - उष्णकटिबंधीय वातावरण में ऐशचेरिचिया कोलाई का पेयजल में पाया जाना हैं । परन्तु पेयजल में इसकी अधिक मात्रा में उपस्थिति होने पर ऐसा जल पीने वाले व्यक्ति को पेचिश हो जाती है ।

इसी प्रकार संक्रमित डबलरोटी में फफूंद जैसे म्यूकर उसे अनुपयोगी बना देती है ।

परीक्षण विधि (Method of Test)

खाद्य पदार्थों में सूक्ष्मजीवों के परीक्षण की तीन विधियाँ है -

1. परोक्ष विधि (Direct Method)
2. गणन विधि (Enumeration Method)

1. परोक्ष विधि (Direct Method)

संदुषित भोजन की अत्यन्त सूक्ष्म मात्रा को ग्लास स्लाइड पर रखकर तथा उसे कवर स्लिप से ढक कर, सूक्ष्मदर्शी द्वारा उसका परीक्षण किया जाता है । कवक तो सामान्यतया कम आवर्धन पर पहचाना जा सकता है परन्तु जीवाणु के स्पोर को उच्च आवर्धन पर देखने की आवश्यकता होती है ।

परोक्ष एपीफ्लूरोसेन्ट विधि द्वारा भोजन के नमूने की विशेषकर पेय पदार्थों में उपस्थित संदूषण को जानने के लिए पोलीकार्बोनेट झिल्ली युक्त छननी द्वारा छानकर झिल्ली पर उपस्थित सूक्ष्मजीवाणु व कवकों को एक्रिडीन ऑरेंज से अभिरंजित कर सीधे ही फ्लूरोसेन्ट सूक्ष्मदर्शी द्वारा आंकलन किया जाता है ।

2. गणन विधि (Enumeration Method)

पेट्री प्लेट पर गणना

इस विधि द्वारा अगार प्लेट पर संदूषित पेय पदार्थ की 0.1 मिलीलीटर मात्रा को पेट्री प्लेट में उपस्थित संवर्धित माध्यम पर फैला लिया जाता है तत्पश्चात् पेट्री प्लेट को इनक्यूबेट करके बनने वाली जीवाणु व कवक द्वारा कॉलोनी को गिना जा सकता है । इस विधि द्वारा भी भोजन में संदूषण की पहचान हो जाती है ।

अभिरंजन अपचयन विधि (Dye Reduction Test)

वे सूक्ष्मजीवाणु जिनमें अपचयन करने की क्षमता होती है उनकी पहचान उन अभिरंजकों से की जाती है जो कि आक्सीय अवस्था में रंगयुक्त होते हैं तथा अपचयित अवस्था में रंगहीन होते है उदाहरण: दूध के संदूषण की एम.बी.आर.टी. जाँच । जब दुध के संदूषण में अपचयीकारी जीवाणु की वृद्धि हो जाती है तो ऐसे संदूषित दूध मे मिथाइलीन ब्लू अभिरंजन को डालने पर अभिरंजक का रंग, नीले से रंगहीन हो जाता है जो दूध के संदूषण को इंगित करता है ।

5.4 खाद्यजनित संक्रमण तथा अविषाक्वन (Food Borne Infection and Intoxicants):

विभिन्न खाद्य पदार्थों में जीवाण्वीय व अजीवाण्वीय संक्रमण होता है तथा खाद्य पदार्थ संदूषित हो जाते हैं । ऐसे संदूषित खाद्य पदार्थों में विभिन्न प्रकार के विषैले तत्व (intoxicants) बन जाते हैं जिनके सेवन से मनुष्य में विभिन्न प्रकार के रोग हो जाते हैं ।

खाद्य पदार्थों के संक्रमण के दो प्रमुख कारक होते है (1) जीवाण्वीय (2) अजीवाण्वीय ।

(1) जीवाण्वीय संदूषण (contamination) जिन प्रमुख बैक्टीरिया से होते है वे है ब्रूसेला बैसीलस, कलौस्ट्रीडियम, ऐश्चेरिचिया, साल्मोनेला, स्टेफाइलोकोकस व विब्रियो।

इस अध्याय में हमे जीवाण्वीय व अजीवाण्वीय संदूषक व उनके द्वारा पैदा होने वाले विषैले पदार्थ जो संदूषित माध्यम से मनुष्य में पहुँचकर रोग पैदा करता है उनका संक्षिप्त में अध्ययन करेंगे ।

5.4.1 जीवाण्वीय

(i) ब्रूसेला (Bruccella)

जीनस ब्रूसेला की खोज सर डेविड ब्रूस ने सन् 1887 में की । ये जीवाणु बेसीलोसिस माल्टा बुखार तथा मेडीटरेनियन बुखार पैदा करते हैं । ये रोग सामान्यत: कसाईखाने में काम करने वाले व्यक्ति जो संक्रमित भेड़, बकरी, सूअर आदि के सम्पर्क में आते है उनको हो जाता है । ये जीवाणु माँस में संक्रमण करके भी संदूषित मांस के माध्यम से मनुष्य में ऊपर वर्णित बुखारों का कारण बनते हैं ।

ब्रूसेला एक ग्राम धनात्मक, छोटा, अंडाकार, रॉड्स की आकृति का जीवाणु है । यह 37°C तापमान के आसपास वृद्धि करता है और यदि इसे 7-10 मिनट के लिए 63°C पर गर्म किया जाए तो इसकी मृत्यु हो जाती है । यह जीवाणु दूध देने वाले चौपायों के दूध को संक्रमित करता है ।

पेथोजेनिक और क्लीनिकल गुण

ब्रूसेलोसिस एक प्रकार का बुखार है । उसमें पसीना, सिरदर्द, हाथ-पाँव और पीठ में दर्द और वजन कम हो जाता है ।

ब्रूसेला का पृथक्करण एवं पहचान

ब्रूसेला के संवर्धन के लिए बछड़े का सीरम युक्त माध्यम चाहिए । जीवाणु की वृद्धि धीरे-धीरे होती है, जीवाणु संवर्धन तीन सप्ताह में 37°C तापमान पर होता है ।

ब्रूसेलोसिस रोग निश्चित करने के लिए चौपायों के खून में ब्रूसेला के प्रतिरक्षी, रिंग परीक्षण के माध्यम से पता लगाए जाते हैं ।

अगर ब्रूसेला के प्रतिरक्षी, चौपयों में मिलते हैं तो दूध का थक्का जम जाता है और एक गहरी बैंगनी नीली वलय दूध के ऊपरी भाग में दिखाई देती है ।

(ii) बैसिलस (Bacillus)

इस जीनस के सदस्य ग्राम धनात्मक, अवायवीय श्रृंखला जीवाणु होता है ।

बैसीलस सीरस एक अवायवीय जीवाणु है । यह 28-55°C तापमान व 5.0-6.0 pH में वृद्धि करता है । यह जीवाणु मनुष्यों में भोजन विषाक्ता का कारक है । यह जीवाणु अपनी वृद्धि के समय एक प्रकार का अंत: विष जिसका नाम हिमोलाइटिक अंतःविष है का निर्माण करता है जो कि तीन प्रोटीन सबयूनिट का बना होता है । यह अंत: विष 1-2 प्रोटीन भार का होता है ।

जीवाणु अपनी वृद्धि के स्थिर प्रावस्था (stationery phase) में इस अंतःविष का निर्माण करता है । यह जीवाणु दूध एवं दूध से बने व्यजनों जैसे - पनीर, छाछ आदि में वृद्धि करता है । जब हम कच्चे दूध, जो कि इस जीवाणु से संक्रमित होता है, का सेवन करते हैं तो यह जीवाणु हमारी छोटी आंत में जाकर ऐपिथिलियल कोशिकाओं से जाकर जुड़ता है ।

8-16 घन्टे में यह जीवाणु आँत की एपीथीलियल कोशिका से जुड़कर अंतःविष का उत्पादन करता है जिससे की पेट दर्द, पतले दस्त, पेट में एंठन जैसे लक्षण उत्पन्न होते हैं ।

(iii) क्लौस्ट्रीडियम बॉटयूलिनम (Clortridium botilinum)

यह जीवाणु एक ग्राम ऋणात्मक अवायवीय छड़ाकार है । यह जीवाणु 3°C से 5°C तापमान में वृद्धि करता है एवं इसकी वृद्धि के लिए मांस जिसमें नमी हो एवं रक्त जरूरी होता है । प्रयोगशाला में इसकी वृद्धि के लिए रक्त आगार अथवा अण्ड पीतक आगार प्रयोग में लिया जाता है ।

यह जीवाणु सबसे बहुतायत में डिब्बाबंद खाद्य पदार्थों में मिलता है जिनमें नमी की मात्रा ज्यादा हो एवं जिनकी प्रकृति अम्लीय हो । यह जीवाणु pH 4.7-5.0 पर विष पैदा करता है जो कि एक अंतःविष है । यह अंतःविष एक प्रकार का उच्च आण्विक भार प्रोटीन है । जब हम कोई डिब्बाबंद खाद्य पदार्थ जिसमें यह जीवाणु मौजूद है ग्रहण करते हैं तब यह जीवाणु बड़ी आंत में मौजूद कोशिकाओं से चिपक जाता है । अंतःविष रक्त वाहिनियों के द्वारा स्नायु तंत्र में फैलता है । जिससे कि पाचन तंत्र का स्नायु तंत्र प्रभावित होता है एवं पाचन तंत्र में पक्षाघात जैसी स्थिति उत्पन्न हो जाती है । यह जीवाणु एक प्रकार की भोजन विषाक्तता का कारक है जिसको बोट्युलिजम कहते हैं । इस भोजन विषाक्तता के प्रमुख लक्षण है - उल्टी आना, पेशाब रूकना, दुगुना दिखाई देना, निगलने में दिक्कत होना, जबान का लड़खड़ाना एवं सूखना ।

भोजन के साथ संबंध

यह भोजन विषाक्तता ज्यादातर डिब्बाबंद खाद्य पदार्थों जिनमें अम्लीय तत्त्व अथवा नमी हों उनका सेवन करने से होता है ।

(iv) ऐश्चेरिचिया कोलाई (Escherichia coli)

ई. कोलाई कुल ऐन्टेरोबेक्टिरिया में आता है । यह जीवाणु एक मध्यतापी होता है जो 10°C-40°C के तापमान में वृद्धि करता है । यह एक केटेलेज धनात्मक, ऑक्सीडेज़ ऋणात्मक जीवाणु है । इसे वृद्धि के लिए pH 7.5 की आवश्यकता होती है । ई. कोलाई के विभिन्न प्रकार होते हैं -

(A) ऐन्टेरोजैनिक ई. कोलाई (Enterogenic E. coli)

इसका मुख्य स्त्रोत है गंदा पानी । इस गंदे पानी को ग्रहण करने के 12-36 घण्टे बाद यह जीवाणु छोटी आत में पहुंचकर वहां उपस्थित एपीथिलियल कोशिका से चिपक जाती है एवं अपनी वृद्धि करता है । वृद्धि के दौरान यह जीवाणु एक तापस्थायी अंतःविष का स्राव करता है जो कि पेट दर्द, पतले दस्त, म्यूकस के साथ आदि लक्षण उत्पन्न करता है ।

(B) ऐन्टरोमैसिव ई. कोलाई (Enteromassive E. coli)

यह जीवाणु बड़ी आंत्र की एपिथिलियल कोशिका से चिपक कर अपनी वृद्धि के स्थिर प्रावस्था (stationary phase) में एक अंतःविष का निर्माण करता है ।

यह जीवाणु मैकोन्नकी संवर्धन माध्यम पर 37°C तापमान पर वृद्धि करता है ।

(v) सालमोनेला (Salmonella)

यह जीवाणु ग्राम ऋणात्मक, बीजाणु निर्माणकारी, अवायवीय, केटेलेज धनात्मक व आक्सिडेज ऋणात्मक है । इस जीवाणु की वृद्धि 37°C-47°C तापक्रम व pH4.0-7.0 पर होती है । यह जीवाणु भोजन विषाक्तता एवं मनुष्यों में बड़ी आंत से संबंधित रोगों का कारक है । यह जीवाणु, मनुष्यों में पीलिया नामक रोग का कारक है । यह रोग एक प्रकार का बड़ी आँत का संक्रमण है । जब मनुष्य अधपके माँस, दूध, अण्डे जो कि सालमोनेला से संक्रमित है को ग्रहण करता है तो

जीवाणु मुख से होता हुआ आमाशय में पहुँच कर ऐपीथिलियम कोशिका से चिपक कर वृद्धि करता है एवं अंतःविष का निर्माण करता है । जब यह अंतःविष आमाशय से यकृत में पहुँचता है तब पीलिया नामक रोग होता है इस रोग के प्रमुख लक्षण हैं नाखुन व आँखों का पीलापन, उल्टी आना व बुखार आदि ।

(vi) स्टेफाइलोकोकस (Staphylococcus)

यह जीवाणु ग्राम धनात्मक, केटेलेज धनात्मक, ओक्सीडेज ऋणात्मक, कोकस है । यह जीवाणु pH 6.0 एवं तापक्रम 35-40°C पर वृद्धि करता है । यह जीवाणु उन खाद्य पदार्थो में वृद्धि करता है जिसमें 5-7 प्रतिशत NaCl की मात्रा होती है । यह जीवाणु उष्ण रक्त वाले प्राणियों की त्वचा की ऊपरी सतह एवं नासिका ग्रंथी में बहुतायत में पाया जाता है परन्तु जब हमारी त्वचा में कोई घाव होता है या हमारी रोग प्रतिरोधक क्षमता कम हो जाती है तो यह जीवाणु शरीर के नासिका ग्रंथी से होकर टान्सिल में पहुंचकर वृद्धि करता है । वृद्धि के दौरान यह एक बाह्म विष उत्पन्न करता है जो कि एक एकल श्रृंखला पोलीपेप्टाइड है ।

(vii) विब्रियो (Vibrio)

यह जीवाणु ग्राम धनात्मक, केटेलेज धनात्मक, किण्वनकारी जीवाणु शैवाल रूपी जीवाणु है । इस जीवाणु की वृद्धि के लिए 3 प्रतिशत NaCl की आवश्यकता होती है । यह 40°C तापक्रम एवं pH 7.5-8.5 पर वृद्धि करता है । यह जीवाणु गंदे पानी के द्वारा हमारे पेट में जाता है । आमाशय में उपस्थित एन्जाइम से बचने के बाद यह जीवाणु पेट की म्यूकस कला से चिपककर वृद्धि करता है एवं एक उच्च आण्विक भार का अंतःविष का स्राव करता है । यह अंतःविष म्यूकस कला में Na^+ और K^+ का अत्यधिक स्राव करता है जिससे म्यूकस के साथ पतले दस्त व निर्जलीकरण हो जाता है ।

(viii) यैंसिनिया (Yersinia)

यैंसिनिया एन्टेरोकोलिटिका जीनस यैंसिनिया का सदस्य है । यह जीवाणु एक ग्राम ऋणात्मक जीवाणु है । यह जीवाणु 29°C से 40°C ताप पर वृद्धि करता है । यह जीवाणु pH 7-8 में वृद्धि करता है । यैंसिनिया मनुष्यों के कई भोज्य पदार्थ जैसे मुर्गी का माँस, सूअर का माँस, मछली आदि में उपस्थित होता है । यैंसिनिया जीवाणु संक्रमित भोजन द्वारा मुख से होता हुआ आमाशय में पहुँचता है जो यैंसिनिया जीवाणु, आमाशय के अम्ल से बच जाते हैं वे पेयर पैच की म्यूकस कोशिकाओं से चिपक कर अपनी वृद्धि करता है और एक तापरोधी अंतःविष का निर्माण करता है जिसका आण्विक भार 9700 kd है । यह जीवाणु एपीथिलियल कोशिकाओं की अवशोषण करने वाली सतह को नष्ट करता है, जिससे ऐपीथियल कोशिकाओ द्वारा पोषक पदार्थों का अवशोषण नहीं हो पाता है । सूअर यैंसिनिया के बहुत अच्छे वाहक है । यह जीवाणु स्वस्थ व्यक्ति की जीभ, टान्सिल और उसकी आहारनाल में मिलते हैं ।

5.4.2 अजीवाण्वीय

(i) निमेटोड

ऐसकेरिस ल्यूमब्रिकोइडिस (Ascaris lumbrecoides) मनुष्यों में Ascariasis नामक रोग का कारक है । अगर मनुष्य पानी अथवा कोई भी खाद्य पदार्थ जैसे कच्ची सब्जी, कच्चे फल जो कि एसकेरिस ल्यूमब्रिकोइडिस (Ascaris lumbrecoides) के अण्डों से संक्रमित हैं का सेवन करता है तो ये छोटी आंत में पहुँच जाते हैं व यहाँ पहुंचने के बाद अण्डों की लार्वा में बदलने की प्रक्रिया प्रारम्भ होती है । शिशु लार्वा, बडी आंत की दीवार को भेदकर यकृत में पहुँच जाते हैं । यकृत (liver) में पहुंचने के बाद लार्वा वयस्क (adult) में बदल जाता है और वापस बड़ी आंत में आ जाता है । जब वयस्क (adult) बड़ी आंत में होता है तो वह प्रमुख लक्षण उत्पन्न करता है जैसे सिर दर्द, उल्टी आना, पेट में दर्द आदि । इस रोग से ग्रसित बच्चे अपने दाँतों को रात में रगड़ते हैं ।

(B) एन्साइक्लोस्टोमिएसिस (Ancylostomiasis)

यह रोग दो निमेटोड एनसाइक्लोस्टोमा ड्योडीनल (ancylostomes dwodenal) एवं नेक्टर अमेरिकेनस (Necator americanus) नामक निमेटोड परजीवी के कारण होता है । मादा हुककृमि (hookworm) मिट्टी में करीब 5000 से 10,000 अण्डे देती है । मिट्टी में अण्डों से शिशु लार्वा (juvenile larva) बनता है । ये शिशु लार्वा (juvenile larva) मनुष्यों के हाथ एवं पैरों की नाजुक त्वचा में से हमारी रक्त तंत्र की रक्त नलिकाओं से होता हुआ छोटी आंत्र में पहुँच कर वयस्क एनसाइक्लोस्टोमा (Adult ancylostoma) में परिवर्तित हो जाता है । इस रोग के लक्षण निम्न है - एनीमिया, उल्टी, सिरदर्द आदि । इस रोग से ग्रसित मनुष्य कमजोर एवं पीलापन लिए होता है ।

(ii) प्रोटोजोआ (Protozoa)

अमीबीय पेचिश (Amoebio dysentry) या अमीवियोसिस (Amoebiosis), एण्टअमीबा हिस्टोलाइटिका (Entamoeba histolytica) नामक प्रोटोजोआ से होती है । यह प्रोटोजोआ हमारी छोटी आंत में पाया जाता है । यह प्रोटोजोआ मिट्टी व दूषित जल से मनुष्य की छोटी आंत में पहुँचता है । छोटी आंत में पहुँचकर ये छोटी आंत्र की म्यूकस परत (mucous layer) को भोजन के रूप में उपयोग लेते है एवं अपनी वृद्धि करते हैं । ये प्रोटोजोआ द्विविखण्डन (binary fission) के द्वारा अपनी वृद्धि करते हैं एवं पलास्कनुमा अल्सर बनाते हैं ।

(iii) शैवाल (Algae)

शैवाल सामान्यतया जलीय पारिस्थितिक तंत्र में पाये जाते हैं अधिकांश मछलियाँ शैवालों को भोजन के रूप में ग्रहण करती है । शैवालों द्वारा पैदा किए गए विषैले पदार्थ भोजन श्रृंखला द्वारा मनुष्य में प्रवेश करते हैं । कुछ प्रमुख रोग जो शैवाल युक्त विषैले पदार्थों से होते हैं उनमें प्रमुख हैं पैरेलाइटिक शैल फिश पोइजनिंग (PSP), न्यूरोटॉक्सिक शैल फिश पोइजनिंग, डायरहोइल शैल फिश पोइजनिंग आदि । ये विषाक्त पदार्थ संदूषित मछलियों को धोने व पकाने से भी नष्ट नहीं होते । शैवाल युक्त विषैले पदार्थ जब मछली खाती है तो धीरे-धीरे ये पदार्थ मछलियों के माँस व वसा में इकट्ठे होते जाते हैं । इन संदूषित मछलियों को खाने के पश्चात् लकवा, पेचिश, मस्तिष्क संबंधी रोग हो जाते हैं ।

(iv) कवक (Fungi)

कवक (fungi) एस्परर्जिलस (aspergillus), एफ्लोटाक्सिन (aflotoxin) नामक एक माइकोटॉक्सिन बनाता है । माइकोटॉक्सिन वे द्वितीयक उपापचयज हैं जो कि कवक के लैंगिक जनन के पश्चात बनते हैं ।

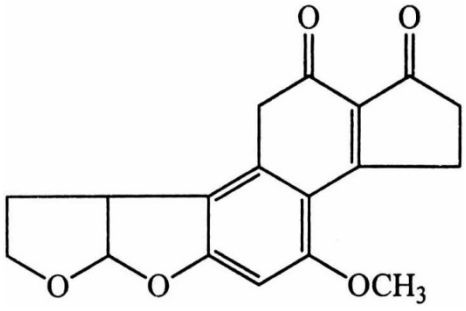

एफ्लोटाक्सिन

कवक फ्यूजेरियम का माइकोटॉक्सिन

कवक फ्यूजेरियम की कुछ प्रजातियाँ फसलों पर विभिन्न प्रकार के माइकोटॉक्सिन पैदा करती है जिनमें एक है ट्राइकोथिकन्स (T_2 टाक्सिन) । इससे संदूषित भोजन को खाने से मनुष्य में कई प्रकार के आंत्र रोग होते हैं । यह विष पदार्थ आंत्र की म्यूकस झिल्ली को नष्ट कर वहाँ से रक्त स्राव करती है जिनसे रक्त युक्त पेचिश हो जाती है ।

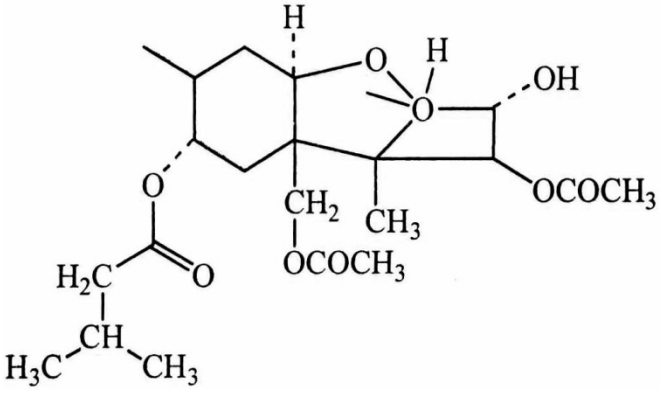

पेनीसीलियम का माइकोटाक्सिन

पेनीसीलियम नामक कवक नारंगी, नींबू, संतरे आदि साइट्रस फलों का संदूषण कर विकृति पैदा करती है । पेनीसीलियम पेट्यूलिन (patulin) नामक माइकोटॉक्सिन स्रावित करता है जो कि साइट्रस फलों में रोट (Rot) नामक विकृति पैदा करती है ।

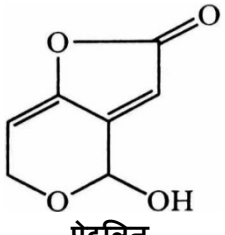

पेटुलिन

(v) विषाणु (Virus)

विषाणु में एक प्रकार का न्यूक्लिक अम्ल होता है जो कि प्रोटीन आवरण या केस्पिड में लिपटा होता है । वायरस में कोई भी कोशिकीय अधःस्तर नहीं होता है । ये बहुत छोटे 25-300 nm व्यास के होते हैं । वायरस अन्तःकोशिकीय परजीवी होते हैं । यह वायरस भोज्य पदार्थ के माध्यम से शरीर में घुसकर किसी कोशिका के पोषक तत्त्वों से पोषण ग्रहण कर अपनी वृद्धि करते हैं ।

पोलियो विषाणु

पोलियो विषाणु कुल ऐन्टेरोवायरस का सदस्य है । ऐन्टेरोवायरस, वायरसों का एक समूह है जो छोटे 28 nm - व्यास के, जिसमें m-RNA आनुवांशिक पदार्थ के रूप में होता है । पोलियो वायरस संक्रमित दूध या संक्रमित दुग्ध पदार्थों के द्वारा फैलता है । यह एक स्थान बंद बीमारी है । पोलियो वायरस का इनक्युबेशन समय 3 से 5 दिन का होता है, इसमें बुखार, सिरदर्द और उल्टियाँ होती है । दूसरी अवस्था में वायरस मैनिन्जिज़ में पहुँच कर पीठ में दर्द उत्पन्न करता है । अंत में यह मेरुदण्ड के न्युरोन्स में फैलकर कोशिकाओं को नष्ट कर शरीर के विभिन्न भागों को लकवाग्रस्त कर देता है ।

बोध प्रश्न

प्र.1 रिक्त स्थान की पूर्ति करो ।

A. अन्न की विकृति.....से होती है ।

B. माँस एवं माँस की विकृति.....से होती है ।

C. सालमोनेल.....में संदूषण करता है ।

प्र.2 निम्नलिखित प्रश्नों का संक्षिप्त में उत्तर दो -

A. माइकोटॉक्सिन किसे कहते हैं ?

.....

B. खाद्य संदूषण से आपका क्या तात्पर्य है ?

.....

C. अविषाक्वन को परिभाषित कीजिए ।

.....

प्र.3 सही या गलत

A. अमीबियोसिस (Amoebiosis) का कारक एक निमेटोड है ।

B. ऐफ्लेटॉक्सिन, एस्पर्जिलस कवक द्वारा स्त्रावित किया जाता है ।

C. क्लोस्ट्रीडियम बोटयूलिनम खाद्य विषाक्तता का कारक है ।

5.5 सारांश (Summary):

इस इकाई के माध्यम से हमें विभिन्न खाद्य पदार्थों एवं उनके उत्पाद जैसे दुग्ध उत्पाद, अन्त, सब्जी, फल, माँस, डिब्बाबंद खाद्य सामग्री में संदूषण तथा विकृति के बारे में पता चला । विभिन्न जीवाणु जैसे ब्रूसेला, बैसीलस, क्लोस्ट्रीडियम, एश्चेरिचिया, साल्मोनेला, स्टेफाइलोकोकस,

विब्रियो । विभिन्न प्रकार के निमेटोड, प्रोटोजोआ, शैवाल, कवक, सूक्ष्मजीव खाद्य पदार्थों में विषाक्तता करते हैं । हमने विभिन्न के बारे में जाना जिनसे खाद्य विकृति की पहचान की जा सकती है ।

5.6 बोध प्रश्नों के उत्तर:

उ.1 (A) एस्परजिलस (B) स्यूडोमोनास (C) डिब्बाबंद खाद्य पदार्थ

उ.2

(A) कवक लैंगिक जनन के पश्चात् एक प्रकार का विष उत्पन्न करते हैं जिसको माइकोटॉक्सिन कहते हैं । माइकोटॉक्सिन एक प्रकार का द्वितीयक उपापचयज है ।

(B) भोजन की जीवाण्विक विकृति के समय सतह पर जीवाण्विक वृद्धि होती है । भोजन के विभिन्न घटकों का विखण्डन होने लगता है तथा जीवाण्विक उपापचय से गैस बनती है ।

(C) विभिन्न खाद्य पदार्थों में जीवाण्वीय व अजीवाण्वीय संक्रमण के समय कुछ विषैले तत्वों का निर्माण होता है । ऐसे विषैले तत्वों को अविषाक्तन कहते हैं ।

उ.3 (A) गलत (B) सही (C) सही

5.7 अभ्यासार्थ प्रश्न (Exercise Questions):

1. दुग्ध उत्पादों में संदूषण एवं विकृति पैदा करने वाले कारकों का विस्तृत वर्णन कीजिए ।
2. जीवाणु सालमोनेला द्वारा खाद्यजनित संक्रमण तथा अविषाक्वन का विस्तृत वर्णन कीजिए ।
3. डिब्बाबंद खाद्य सामग्री में विकृतियों के कारकों का उल्लेख करिए ।

5.8 शब्दावली (Glossary) :

1.	साइकोट्रोफिक जीवाणु	-	Psychrotrophic Bacteria
2.	थर्मोफिलिक जीवाणु	-	Thermophilic Microorganisms
3.	मीजोफिलिक जीवाणु	-	Mesophilic Microorganisms
4.	बाह्यविष	-	Exotoxen
5.	अंतःविष	-	Endotoxin

5.9 संदर्भ ग्रन्थ (Reference Books) :

1. ऐडम, मौस, फूड माइक्रोबायोलाजी, पनिमा पब्लिशिंग कार्पो., नई दिल्ली ।
2. फ्रेजियर एवं वेशहॉफ, फूड माइक्रोबायोलोजी, टाटा मेक्ग्राहिल पब्लि. कं. लि., नई दिल्ली ।

इकाई 6

खाद्य सूक्ष्म जैविकी-II (Food Microbiology-II)

इकाई की रूपरेखा

6.0 उद्देश्य

6.1 प्रस्तावना

6.2 खाद्य सूक्ष्म जैविकी में महत्त्वपूर्ण सूक्ष्मजीव

- 6.2.1 मोल्डस
- 6.2.2 यीस्ट
- 6.2.3 जीवाणु

6.3 एककोशिकीय प्रोटीन (SCP) तथा किण्वित खाद्य

6.4 खाद्य संरक्षण के सिद्धान्त

- 6.4.1 अपूयन
- 6.4.2 उच्च ताप
- 6.4.3 शुष्कन
- 6.4.4 अनॉक्सी अवस्था

6.5 भोजन में सूक्ष्मजीवों की वृद्धि को प्रभावित करने वाले कारक

- 6.5.1 आंतरिक कारक
- 6.5.2 बाह्य कारक

6.6 रासायनिक परिरक्षण तथा खाद्य योगज

6.7 रासायनिक संरक्षक

6.8 डिब्बाबंदी रासायनिक संरक्षक

6.9 सारांश

6.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

6.11 अभ्यासार्थ प्रश्न

6.11 शब्दावली

6.12 संदर्भ गन्ध

6.0 उद्देश्य (Objectives):

इस इकाई का प्रमुख उद्देश्य मानव सभ्यता के विकास तथा रहन सहन से आए परिवर्तनों के अनुसार कच्चे व पक्के खाद्य पदार्थों को लम्बे समय तक परिरक्षित करने की विधियों की जानकारी प्राप्त करना है । इसके अतिरिक्त इस इकाई का उद्देश्य उन सूक्ष्मजीवाणु, कवक व मोल्ड को भी समझना है जो हमारे खाद्य पदार्थों को संक्रमित कर सकते हैं तथा उन कारकों की

जानकारी प्राप्त करना जो इनकी वृद्धि को प्रभावित करते हैं । खाद्य पदार्थों की परिरक्षण प्रणाली का अध्ययन करना इस इकाई का उद्देश्य है ।

6.1 प्रस्तावना (Introduction):

हमारे खाद्य पदार्थ मूल रूप से पादप व जन्तु स्त्रोत से बनते हैं । ये खाद्य पदार्थ कच्चे व पकने के पश्चात् कुछ समय तक ताजा अवस्था में रहते हैं । मानव सभ्यता के विकास के साथ तथा मनुष्य के दैनिक रहन-सहन में आए परिवर्तन ने कच्चे व पक्के हुए खाद्य पदार्थों के भण्डारण की आवश्यकता को जन्म दिया । अनाज, दूध, फल, सब्जियां, माँस, अण्डे, मछली आदि को कच्ची (raw) व पकी (cooked) अवस्था में भण्डारण के समय जो प्रमुख समस्या सामने आई वह थी इनके भण्डारन के समय इन्हें सूक्ष्मजीवाणुओं से बचाए रखना तथा किण्वन के पश्चात् बने प्रोसेस्ड Food (भोजन) जैसे ज्यूस आदि को लम्बे समय तक परिरक्षित मोल्ड रखने के उपाय ढूँढ़ना । इस इकाई में हम खाद्य पदार्थों से संबंधित सूक्ष्मजीवाणुयों जैसे गोल्ड, यीस्ट व जीवाणु के सामान्य गुण एवं महत्वता का अध्ययन करेंगे इसके साथ ही खाद्य पदार्थों के परिरक्षण के सिद्धान्त व परिरक्षण हेतु कार्य में आने वाली विधियों का अध्ययन करेंगे जिसमें पके हुए खाद्य पदार्थों की ड्रिब्बा बंद कार्यप्रणाली सम्मिलित है ।

6.2 खाद्य सूक्ष्मजैविकी में महत्वपूर्ण सूक्ष्मजीव (Microorganisms Important in Food Microbiology):

6.2.1 मोल्ड (Mold)

मोल्ड बहुकोशिकीय तन्तुयुक्त कवक होते हैं । मोल्ड सामान्यतया बहुकोशिकीय तन्तुयुक्त कवकों के लिये प्रयोग में लाया जाता है जिनकी वृद्धि किसी भी भोज्य पदार्थ पर रूई जैसे बारीक तन्तुओं के रूप में देखी जा सकती है ।

(A) मोल्ड के सामान्य गुण (General Characterstics of Mold)

मोल्ड का थैलस एक दूसरे से गुथे हुये तन्तुओं जिनको हाइफा कहते हैं का बना होता है । हाइफी का पूरा समूह माइसीलियम कहलाता है । हाइफी भोज्य पदार्थ में धंसकर उसके अंदर वृद्धि करते हैं । मोल्डस में जनन मुख्यत: अलैंगिक जीवाणुओं द्वारा होता है । मोल्डस को जनन एवं वृद्धि के लिये 14-15% आद्रता एवं 25-37°C तापक्रम की आवश्यकता होती है । ये मध्यतापी अवायवीय एवं अम्लीय pH पर वृद्धि करते हैं । मोल्ड में कई प्रकार के हाइड्रोलाइटिक एन्जाइम होते हैं जैसे अमाइलेज, पेक्टीनेज एवं प्रोटीनेज ।

(B) मोल्ड के प्रजनन भाग (Reproductive Structures of Mold)

मोल्ड में प्रजनन लैंगिक और अलैंगिक बीजाणुओं द्वारा होता है । मोल्डस में अलैंगिक बीजाणु तीन प्रकार के होते हैं कोनिडियोफोर्स, आर्थोस्पोर्स और स्पोरेन्जियोफोर्स । ये स्पोर्स हल्के, छोटे एवं शुष्क प्रतिरोधी होते हैं और हवा के द्वारा फैलते हैं ।

लैंगिक बीजाणु (Sexual spores) - लैंगिक बीजाणु तीन प्रकार के होते हैं - उस्पोर्स, जाइगोस्पोर्स और एस्कोस्पोर्स ।

(C) औद्योगिक महत्त्व के मोल्ड (Molds of Industrial Importance)

(i) म्यूकर (Mucor)

म्यूकर स्टार्च को अमाइलेज एन्जाइम के द्वारा विघटित करता है । म्यूकर रेसीमोज तथा म्यूकर राउप्सी एमाइलेज एन्जाइम के द्वारा राकफर्ट पनीर के परिपक्वन में मदद करता है । कुछ म्यूकर डबलरोटी मे विकृति पैदा करते हैं ।

(ii) राइजोपस (Rhizopus)

राइजोपस स्टोलीनीफर एक प्रकार का मोल्ड है जो कि बेरी फल एवं वे सब्जियां जिनमें नमी की मात्रा अधिक होती है उसकी विकृति करता है ।

(iii) एस्परजिलस (Aspergillus)

जीनस एस्परजिलस के सदस्य भोजन की विकृति करते हैं तथा कुछ सदस्य भोज्य पदार्थों की पोष्टिकता एवं स्वाद को बढ़ाता है । मोल्ड एस्परजिलस नमक एवं शर्करा की अधिक सांद्रता में वृद्धि करता है । एस्परजिलस नाइगर सिट्रिक अम्ल के व्यवसायिक उत्पादन में मुख्य भूमिका निभाता है । एस्परजिलस राइपन डेयरी एवं वे फल जिनमें आद्रता अधिक होती है उनकी विकृति करता है ।

(iv) पेनीसिलियम (Penicillium)

पेनीसिलियम लेम्बर्टी, लेम्बरटी पनीर के परिपक्वन में मदद करता है । पेनीसिलियम रोक्फर्टी, रोक्फर्टी पनीर के परिपक्वन में मदद करता है । पेनीसिलियम इटेलिकम, नींबू परिवार के फलों में विकृति का कारक है ।

6.2.2 यीस्ट (Yeast)

इसमें वो फफूंद आती है जो कि एक कोशिकीय अंडाकर होती है जिसमें प्रजनन मुकुलन और विखण्डन (fussion) के द्वारा होता है ।

(A) यीस्ट के गुण (General Characteristics of Yeast)

यीस्ट अंडाकार या गोलाकार आकृति का होता है । यीस्ट में अलैंगिक जनन मुकुलन द्वारा होता है । इस विधि में कुछ प्रोटोप्लाज्म कलिका के रूप में कोशिका भित्ति से उभरकर बाहर आ जाते है तथा यह उभार आकार में वृद्धि करके नई यीस्ट कोशिका को जन्म देता है । कुछ यीस्ट में कलिका एक नली रूपी प्रवर्ध के रूप में मातृ कोशिका से निकलती है तथा नई यीस्ट कोशिका में परिवर्तित हो जाती है । यीस्ट 88 से 94% प्रतिशत आद्रता और 35°C से 47°C के मध्य तापक्रम पर pH 4.0-4.5 पर वृद्धि करता है ।

(B) औद्योगिक महत्त्व के यीस्ट (Yeast of Industrial Importance)

(i) जीनस सेक्रोमाइसीस (Genus Saccharomyces) - **सेक्रोमाईसीस सर्विसेज** इस जीनस का वह सदस्य है जो कि डबलरोटी व मदिरा बनाने में प्रयोग लिया जाता है । इस जीनस की उपजाति एलेप्सोइड्स, सिरका (विनेगर) बनाने में काम आता है ।

(ii) जीनस केनडिडा (Genus Candida) - **केनडिडा क्रुसी** दूध को दही जमाने की प्रारंभिक प्रक्रिया में स्टारटर कल्चर (starter culture) में काम आता हैं ।

(iii) जीनस ब्रीटनोमाइसीज - इस जीनस की लैमथिकस प्रजाति बेलजियम लैम्बिक बीयर के परिपक्वन में काम आती है ।

6.2.3 औद्योगिक महत्त्व के जीवाणु (Bacteria of Industrial Importance)

जीनस प्रोपिनोई बैक्टीरिया

ये बैक्टीरिया छोटे, अचल, ग्राम धनात्मक, केटेलेज धनात्मक, अवायवीय कोकाई श्रृंखला होते हैं । ये लेक्टिक अम्ल, कार्बोहाइड्रेट और एल्कोहल का किण्वन करके प्रोपिनोइक अम्ल, एसिटिक अम्ल और कार्बन डाई ऑक्साइड उत्पन्न करता है । प्रोपिनोइक बैक्टीरियम राइची स्विस पनीर में उपस्थित लेक्टोस का किण्वन करके एसिटिक अम्ल और कार्बन डाई ऑक्साइड में बदल देता है । कार्बन डाई ऑक्साइड पनीर में छिद्र बनाने में मदद करती है और पनीर को अच्छी खुशबू प्रदान करती है ।

(i) जीनस लेक्टोबेसीलस

ये बैक्टीरिया छड़नुमा लम्बे तथा श्रृंखला बनाते हैं । ये केटेलेज ऋणात्मक, ग्राम धनात्मक तथा लेक्टोस का किण्वन करने वाले होते हैं । ये लेक्टोस जो कि एक शर्करा है उसका किण्वन पद्धति द्वारा विघटन करके एसिटिक अम्ल, लेक्टिक अम्ल, एसिटेल्डिहाइड और कार्बन डाई ऑक्साइड बनाते हैं । यह एक होमोफर्मेन्टेटिव (Homoformentative), बैक्टीरिया लेक्टोबेसिलस हिलगार्डी वाइन के परिपक्वन में मदद करता है । लेक्टोबेसीलस ब्रेविस दूध से दुग्ध उत्पाद बनाने के चरणों में स्टार्ट कलचर के काम में आता है ।

(ii) जीनस ल्यूकोनोस्टोक

यह जीवाणु ग्राम ऋणात्मक, स्ट्रेप्टोकोकाई केटेलज धनात्मक होता है । ये एक हिटरोफर्मेन्टेटिव बैक्टीरिया है । **ल्यूकोनोस्टोक क्रेमिरिक** दूध में उपस्थित लेक्टोस का किण्वन पद्धति द्वारा विघटन करके डाइएसिटाइल ओर 2,3-ब्यूटेनडाइओल में बदल देता है जो मक्खन और पनीर को अच्छी खुशबू और स्वाद देता है ।

(iii) जीनस ऐसीटोबेक्टर

ये ग्राम ऋणात्मक, केटेलज धनात्मक, छड़नुमा होते हैं । ये बैक्टीरिया लेक्टोज को लेक्टिक अम्ल, इथाइल अल्कोहल, कार्बनडाईऑक्साइड, एसिटिक अम्ल में किण्वित कर देते हैं । सिरका उत्पादन के समय **एक्टीनोबेक्टर** आक्साइड **इथेनोल** को एसिटिक अम्ल में बदल देता है ।

6.3 किण्वित भोज्य पदार्थ एवं एककोशिकीय प्रोटीन किण्वित भोजन (Fermented Food and Single Cell Protein) :

किण्वन की क्रिया द्वारा अनेक भोज्य पदार्थ तैयार किये जाते है । यह क्रिया भोज्य पदार्थों की विशिष्ट गंध व आकृति को सुरक्षित रखती है । किण्वन एक उपापचयी क्रिया है जिसमें अपूर्ण ऑक्सीकरण की क्रिया होती है ।

(A) किण्वित सब्जियां (Fermented Vegetables)

(i) सॉरक्राट (Saukraut)

पत्तागोभी की बाहरी पत्तियों को हटा दिया जाता है । अंदर की पत्तागोभी की पत्तियों को नमक के पानी में अच्छी तरह से धोया जाता है । उसे छोटे-छोटे बारीक टुकड़ों में काटकर कीटाणुरहित कांच के मर्तबान में नीचे एक परत के रूप में बिछा दिया जाता है । उस परत पर 4% (एक पत्तागोभी 4 नमक) के अनुपात में पत्तागोभी व नमक परत दर परत बिछाकर अंत में नमक की परत बिछा देते हैं । उसके ऊपर ढक्कन लगाकर इक्कीस दिन तक किण्वन के लिये छोड़ देते हैं । नमक पत्तागोभी में पानी सोख लेता है एवं नमक व पत्तागोभी का एक अर्धठोस पेस्ट बनता है जिसे ब्राउन कहते हैं । ब्राउन में गले हुए पत्तागोभी के पत्ते व नमक जो कि नमी सोख कर पानी की तरह हो जाता है । इस ब्राउन में किण्वन की क्रिया होती है । किण्वन की क्रिया ल्यूकोनोस्टोक मीसेन्टोरोइड नामक विषाणु द्वारा होती है जो कि लेक्टिक अम्ल एवं एसिटिक अम्ल उत्पन्न करता है जो कि इस भोज्य पदार्थ को खट्टापन देता है ।

(ii) जैतून (Olives)

हरे जैतून को पेड़ पर से तोड़ा जाता है । तोड़ने के बाद हरे जैतून को 6.9-2% ताई विलयन में 15-21°C पर रखा जाता है । उसके बाद जैतून को पानी से धोया जाता है और हरे जैतून को इक्टठा करके उसके ऊपर नमक जिसकी सांद्रता 10-15% होती है को डाला जाता है और इसको एक साफ कीटाणुरहित काँच की बोतल में डालकर 6-10 महिने के लिए किण्वन के लिए रखा जाता है । इसका किण्वन दो भागों में होता है -

पहला भाग 7-14 दिन जिसमें एनटरोबेक्टर (Enterobacter) और यीस्ट की वृद्धि होती है । दूसरा भाग 2 तीन हफ्ते जिसमें लूकोनोस्टोक (Leuconostoc), लेक्टोबैसीलस प्लेनटेरम (Lactobacillus plantarum) और लेक्टोबैसीलस ब्रेविस (Lactobacillus brevis) की वृद्धि होती है एवं लेक्टिक अम्ल का उत्पादन होता है ।

(B) एल्काहलिक पेय (Alcoholic Beverages)

विहस्की, रम, जिन, ब्राण्डी सभी एल्कोहलिक किण्वन के उत्पाद है । ये पेय, अनाज, मोलासेस (Molasses), आलू के किण्वन से प्राप्त होते हैं । ये पदार्थ लम्बे समय तक लकडी या मिट्टी के संग्रहको में रखकर छोड़ दिये जाते हैं । अधिक पुराने पेय अधिक महंगे तथा प्रभावी होते हैं । इन पेय पदार्थों में गन्ध, स्वाद आदि लक्षण भौतिक, रासायनिक एवं जैविक क्रिया द्वारा उत्पन्न होते हैं ।

मदिरा (Wine)

वह पेय पदार्थ जो कि अंगूर के रस के किण्वन एवं उसके परिपक्वन द्वारा प्राप्त होता है उसको वाइन कहते हैं । पके हुए अंगूर को लकड़ी के मर्तबान में लेकर उसमें 15-20 प्रतिशत सेकरोमाइसीस सरविसेस डाली जाती है । इन अंगूरों को पीसा जाता है और पोटाशियम मेटाबाइसल्फाइड नामक यौगिक अवांछनीय सूक्ष्मजीवों की वृद्धि को रोकने के लिए डाला जाता है । इन पीसे हुए अंगूरों को मस्ट (must) कहते हैं । इस मस्ट को किण्वन के लिए एक लकड़ी के डिब्बे में 27°C पर 7-14 दिन के लिए किण्वन के लिए रखा जाता है । एक निश्चित अंतराल के बाद इस मस्ट को हिलाया जाता है । किण्वन के दौरान शर्करा का विघटन एसीटेल्डिहाइड

(acetaldehyde) और एसटेल्डिहाइड (acetaldehyde) का विघटन इथाइल एल्कोहल (ethyl alcohol) में होता है ।

(C) किण्वित मछली (Fermented Fish)

जापान में किण्वित मछली खाने का प्रचलन है । किण्वित मछली को सूशी (I-Shushi) कहते हैं । इस प्रक्रिया में मछली के माँस के छोटे टुकड़े किये जाते हैं । उन टुकड़ों पर नमक डाला जाता है । इन टुकड़ों को अच्छी तरह से हिलाया जाता है और कीटाणु रहित कांच के बर्तन में भर दिया जाता है और किण्वन के लिए 18 महीने के लिए रख दिया जाता है । इसमें एक भाग नमक तो तीन मछली के माँस का मिलाया जाता है । किण्वन प्रक्रिया के दौरान अवायवीय हेलोबैक्टीरियम की वृद्धि होती है ।

एक कोशीय प्रोटीन (Single Cell Protein)

मृदा में उपस्थित लाभदायक जीवाणु व अन्य सूक्ष्मजीव मृदा की ऊपरी परत में पाये जाते हैं । इन सूक्ष्मजीवों में मोल्ड, यीस्ट व हरी शैवाल में प्रोटीन एवं विटामिन भरपूर मात्रा में पाया जाता है । इनके इन्हीं गुणों (quality) की वजह से इन सूक्ष्मजीवों को खाद्य पदार्थ के काम में लिया जाता है । हरी शैवाल जैसे उडोगोनियम (oedogonium) स्पायरोगायरा (spirogyra) व स्पाइरूलीना अपनी उच्च प्रोटीन मात्रा के लिए जाने जाते हैं इनसे विशिष्ट प्रकार के भोज्य पदार्थ बनाए जाते हैं । यीस्ट में थायमिन, राइबोफ्लैविन, पेरा-अमीनो बैन्जॉइक अम्ल, बायोटीन जैसे खनिज पदार्थ मिलते हैं । सामान्य ब्रेड में 1.5 आउन्स (ounce) यीस्ट मिलाने पर यह 2 आउन्स पनीर के बराबर कैलोरीज प्रदान करती है ।

मशरूम एक तरह का मोल्ड है । इसमें 51%प्रोटीन, विटामिन B, C और K में पाया जाता है । मशरूम की लगभग 2000 प्रजातियाँ भोजन के काम में ली जाती है । इसमें एगेरिकस कैम्पेस्ट्रिस अत्यधिक मात्रा में उपयोग की जाने वाली खाने योग्य मशरूम है ।

6.4 खाद्य संरक्षण के सिद्धान्त (Principles of Food Preservation) :

6.4.1 अपूयन : सूक्ष्मजीवों को हटाना (Asepsis - Removal of Microorganisms)

कच्चे भोजन को धोना उसके परिरक्षण में मददगार होता है । गोभी और ककड़ी का अचार बनाने से पूर्व इनको अच्छी तरह स्वच्छ पानी से धो लेना चाहिए जिससे इनकी सतह पर उपस्थित मिट्टी के सूक्ष्म जीवाणु साफ हो जाएं । डिब्बा बंद खाद्य पदार्थों में खाद्य पदार्थों के परिरक्षण से पूर्व भी सब्जियों व फलों को स्वच्छ जल से अच्छी तरह धो लेना चाहिए । सब्जी व फलों के रस को जीवाणु रहित बनाने का सबसे सरल उपाय छानने की विधि - फलों के रस, बीयर व अन्न पेय पदार्थों को एक निर्जमीकृत झिल्ली से छान लेते हैं जिससे की द्रव्य पेय पदार्थ में से मिट्टी के कण व कवकों के स्पोर निकल जाते हैं ।

6.4.2 उच्च ताप परिरक्षण (High Temperature)

उच्च ताप द्वारा भोज्य पदार्थों में स्थित सूक्ष्म जीवाणुओं को नष्ट किया जा सकता है । इस कार्य हेतु कितनी ऊष्मा की आवश्यकता कितने समय के लिए है यह इस पर निर्भर करता है कि भोजन किस प्रकार का है ? ऊष्मा द्वारा विभिन्न प्रकार के भोज्य पदार्थों का परिरक्षण तीन विधियों द्वारा होता है ।

(i) पाश्चरीकरण

(ii) लगभग 100° तापक्रम द्वारा

(iii) 100°C तापक्रम से अधिक ऊष्मा द्वारा

(i) पाश्चयरीकरण (Pasteurization)

इस प्रक्रिया द्वारा सूक्ष्म जीवाणु को 100°C ताप पर उत्पन्न शुष्क ऊष्मा द्वारा नष्ट किया जा सकता है । ऊष्मा विभिन्न स्त्रोतों द्वारा प्रदान की जाती है जैसे भाप, गर्म पानी, शुष्क ऊष्मा आदि । ऊष्मा द्वारा खाद्य पदार्थ को जीवाणु रहित करने के पश्चात् शीघ्र ठंडा कर दिया जाता है एवं भोज्य पदार्थ को जीवाणुरहित डिब्बे में सीलबंद करके शीतलीकृत कर दिया जाता है ।

पाश्च्यूकरीकरण में लगने वाले समय तथा तापक्रम के आधार पर यह प्रक्रिया दो प्रकार की होती है ।

(A) उच्च तापक्रम कम समय के लिए

इसमें पदार्थ को 77.1°C पर 15 सेकिण्ड गर्म करके शीघ्र शीतलीकरण के लिए रख दिया जाता है ।

(B) निम्न तापक्रम लम्बे समय के लिए

इसमें पदार्थ को 62.8°C पर 30 मिनिट के लिए गर्म किया जाता है तत्पश्चात् शीतलीकृत कर दिया जाता है परन्तु हाल ही अल्ट्रा पाश्चरीकृत पद्धति प्रस्तावित की गई है जिसमें भोज्य पदार्थ जैसे दूध को 137.8°C पर दो सेकिण्ड के लिए रखा जाता है तथा उसके पश्चात् शीतलीकृत कर दिया जाता है ।

(ii) 100° तापक्रम की ऊष्मा द्वारा

100° तापक्रम की ऊष्मा द्वारा डबलरोटी व केक आदि को भट्टी में बेक करते समय खाद्य पदार्थ का आंतरिक तापमान 100°C हो जाता है । यह तापक्रम अधिकांश खाद्य पदार्थों को बैक्टीरिया निर्जर्मीकृत करने के लिए उपयुक्त होता है । इस प्रक्रिया में भोज्य पदार्थों की गुणवत्ता पर भी कोई प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ता है ।

(iii) 100°C तापक्रम से अधिक ऊष्मा द्वारा

इस विधि में भाप द्वारा भोज्य पदार्थों को 100°C से अधिक तापक्रम की ऊष्मा प्रदान की जाती है । इस प्रकार भाप के दबाव से उच्च ऊष्मारोधी सूक्ष्मजीवाणु भी मर जाते हैं । इसके पश्चात् खाद्य पदार्थ को शीतलीकृत कर परिरक्षित कर दिया जाता है ।

6.4.3 शुष्कीकरण द्वारा परीरक्षण (Drying)

कुछ सूक्ष्मजीवाणु व कवक आदि की वृद्धि के लिए आद्रता की आवश्यकता होती है यदि भोज्य पदार्थों को आद्रता रहित कर दिया जाए तो वे लम्बे समय तक परिरक्षित किये जा सकते हैं । भोज्य पदार्थों से नमी विभिन्न विधियों द्वारा दूर की जा सकती है ।

(A) सूर्य के प्रकाश में सुखाना

यह उन परिस्थितियों में संभव है जहां वातावरण में नमी कम हो और सूर्य का तेज प्रकाश उपलब्ध हो । कुछ खाद्य पदार्थ जैसे दालें, किशमिश, मुनक्का, सूखे मेवे तथा (मछली आदि को शुकीकरण द्वारा परिरक्षित किया जा सकता है ऐसे पदार्थों को बड़ी बड़ी ट्रे में सूर्य के प्रकाश में सुखाकर तत्पश्चात् आद्रतारोधी डिब्बों में बंद करके परिरक्षित किया जा सकता है ।

(B) शीतलीकृत शुकीकरण (Freese Drying)

कुछ उच्च दबाव की गैसें जैसे कार्बनडाईऑक्साइड को तेज दबाव में छोड़ा जाता है तो आसपास की नमी को सोखकर भोजन को नमीरहित कर देता है । इसके पश्चात् कीटाणुरहित आद्रतारोधी डिब्बों में बंद करके परिरक्षित किया जा सकता है ।

6.4.4 अनॉक्सी अवस्था (Anaerobic Conditions)

सूक्ष्मजीव जिन्हें वृद्धि एवं प्रजनन हेतु ऑक्सीजन की आवश्यकता होती है इनमें से कुछ सूक्ष्मजीव भोजन में विकृति एवं संदूषण का कारक होते हैं । भोज्य पदार्थों को इनके संक्रमण से बचाने के लिए भोज्य पदार्थ को मर्तबान की ऊपरी सतह तक भरा जाता है, डिब्बाबंद भोजन को विकृति से बचाने के लिए डिब्बाबंद खाद्य पदार्थ की ऊपरी सतह पर ऑक्सीजन के स्थान पर कार्बनडाईऑकसाइड के प्रयोग से अनॉक्सी अवस्था उत्पन्न होती है । वे सूक्ष्मजीवाणु जो उच्च ताप एवं ऊष्मा तो सहन कर लेते हैं यदि किसी कारणवंश भोज्य पदार्थ के साथ आ जाते हैं तो अनाक्सीय परिरिथतियों में वृद्धि नहीं कर पातें तथा भोजन विकृत होने से बच जाता है ।

6.5 भोजन में सूक्ष्मजीवों की वृद्धि को प्रभावित करने वाले कारक (Factors Influencing Microbial Growth in Food):

6.5.1 आंतरिक कारक (Intrinsic Factors)

(i) पोषक पदार्थ (Nutritional Substances)

सूक्ष्मजीव भोजन से पोषक पदार्थ और ऊर्जा स्वयं की वृद्धि के लिये प्राप्त करते हैं । सूक्ष्मजीवों को वृद्धि के लिये अमीनों अम्ल, कार्बोहाइड्रेट, विटामिन व लवणों की आवश्यकता होती है । संवर्धन माध्यम जैसे बीफ अर्क पेप्टोन व ट्रिप्टोफेन का स्त्रोत है । शर्करा से जीवाणुओं को वृद्धि के लिये आवश्यक पोषक पदार्थ मिलता है । किसी वातावरण की अम्लता व क्षारीयता का असर बड़े अणुओं जैसे एन्जाइमों की क्रिया पर होता है । जीवाणुओं की वृद्धि और उपापचय पर एन्जाइमों और pH का बहुत प्रभाव पड़ता है । बैक्टीरिया pH 7.0 पर तेजी से वृद्धि करते हैं । किसी उत्पाद की अम्लता और उत्पाद को विकृत करने वाले सूक्ष्म जीव पारिस्थितिक तंत्र में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं । खाद्य उत्पाद जिनका pH कम होता है उनकी सूक्ष्मजीवियों द्वारा

विकृति नहीं होती है । कमजोर अम्लों जैसे एसीटिक अम्ल का आंशिक विघटन (partial dissociation) में सूक्ष्मजैविक वृद्धि रोकने में मुख्य भूमिका निभाते हैं ।

किसी भी जीवाणु द्वारा पोषक पदार्थों को काम में ना लेना उस जीवाणु की मृत्यु का बहुत बड़ा कारण होता है ।

(ii) एन्टी सूक्ष्मजैविक अवरोध (Antimicrobial Barriers)

सभी भोज्य पदार्थों में उनको संक्रमण से बचाने के लिये कुछ अवरोध होते हैं । ये अवरोध बड़े अणुओं के बने होते हैं जो विघटन प्रतिरोधी होते हैं और सूक्ष्मजीवों को प्रतिकूल वातावरण देते हैं जैसे जल की अम्लता में कमी, पोषक पदार्थों की कमी आदि । एन्टीमाइक्रोबियल यौगिक द्वितीयक मेटाबोलाइट होते हैं । खाद्यान्न, फल, सब्जियों, मांस आदि में प्रथम प्राकृतिक अवरोध त्वचा की बाहरी परत होती है । दूसरा प्राकृतिक अवरोध भोज्य पदार्थों में स्थित एन्टीमाइक्रोबियल यौगिक होते हैं । वे सूक्ष्मजीवाणु जो त्वचा की बाहरी परत को नष्ट करके सब्जियों व मांस की भीतरी परत जो कि ऊतकों से बनी होती है, उसमें प्रवेश कर जाते हैं तो एन्टीमाइक्रोबियल यौगिक पदार्थों की उपस्थिति में नष्ट हो जाते हैं ।

(iii) जल क्रिया (Water Activity)

किसी भी पदार्थ की जल क्रिया वायुमंडल में उपस्थित गैसों के आंशिक दबाव तथा पदार्थों के अणुओं के साथ संलग्न जलीय कणों के आंशिक दबाव का अनुपात होता है । कोशिका द्रव्य एक जलीय विलयन होता है अत: इसमें जलीय क्रिया शुद्ध जल की तुलना में कम पाई जाती है । लवण सूक्ष्मजीवाणुओं के जीवद्रव्य में जलीय क्रिया संचालन में मुख्य भूमिका निभाते हैं । खाद्य पदार्थों में विकृति उत्पन्न करने वाले सूक्ष्म जीवाणुओं के जीवद्रव्य में जलीय क्रिया को कम करने से सूक्ष्मजीवाणुओं की मृत्यु हो जाती है ।

6.5.2 बाह्य कारक (Extrinsic Factors)

(i) तुलनात्मक आद्रता (Relative Humidity)

जिन खाद्य पदार्थों में जलीय क्रिया कम होती है तथा उन्हें उच्च आद्रता क्षेत्र में भण्डारण किया जाता है तो नमी भोजन को प्रभावित करती है जैसे डबलरोटी को रेफ्रीजरेटर में रखना । शीतलीकरण के समय बाह्य आद्रता भोज्य पदार्थ की सतह पर संगठित हो जाती है तथा उन जगहों पर भोज्य पदार्थ में जलीय क्रिया बढ़ जाती है ऐसी अवस्था में वातावरण में मोल्ड के जो स्पोर जो सुषुप्त अवस्था में थे वे अनुकूल परिस्थिति पाकर भोजन को संदूषित कर भोजन की विकृति कर देते हैं ।

(ii) तापक्रम (Temperature)

प्रत्येक सूक्ष्मजीव का निश्चित तापक्रम होता है जिसमें वे वृद्धि एवं प्रजनन करते हैं । निश्चित तापक्रम से उच्च तापक्रम एवं निम्न तापक्रम में सूक्ष्मजीव के जीवद्रव्य में उपस्थित एन्जाइम प्रोटीन का संश्लेषण नहीं कर पाते हैं एवं एन्जाइम जो कि कोशिका श्वसन में मदद करते हैं वे निष्क्रिय स्थिति में आ जाते हैं । इस प्रकार एक निश्चित तापक्रम सूक्ष्मजैविकी वृद्धि एवं प्रजनन को नियन्त्रित करने वाला महत्त्वपूर्ण कारक है ।

(iii) वायुमण्डलीय गैसें (Atmospheric Gases)

वायुमंडल में ऑक्सीजन 21% तक होती है । यह एक महत्त्वपूर्ण गैस है जो भोजन के संपर्क में आती है तथा ऑक्सीकारी और अनाक्सीकारी जीवाणु के प्रजनन एवं वृद्धि हेतु एक महत्त्वपूर्ण कारक है । इसी प्रकार कार्बनडाईऑक्साइड गैस सूक्ष्मजीवों की वृद्धि एवं प्रजनन को नियन्त्रित करती है । पानी में घुलकर कार्बनडाईऑक्साइड गैस कार्बोनिक अम्ल बनाती जो कि कार्बोनेट व OH^- आयन बनाती है । कार्बोनिक अम्ल से निकले OH^- आयन सूक्ष्मजीवाणुओं के जीवद्रव्य के pH को कम कर देता है व अम्लीय वातावरण बनाता है ।

6.6 रासायनिक परिरक्षण एवं खाद्य योगज (Chemicals Preservations and Food Additives) :

खाद्य योगज (food additives) प्राकृतिक उत्पाद है जैसे नमक, चीनी, सिरका (vinegar), मसालें आदि । जब इन्हें खाद्य पदार्थों में डाला जाता हैं, तो वे सूक्ष्म जीवों द्वारा खाद्य पदार्थो की विकृति को रोकते हैं । ऐसे प्राकृतिक उत्पादों को खाद्य योगज कहते हैं ।

खाद्य योगज निम्न प्रकार के होते हैं ।

(A) शर्करा (Sugar)

यह यौगिक पदार्थ परासरणीय दबाव के द्वारा जल जो कि जीवाणु की वृद्धि में कारक है उसकी मात्रा को कम करता है एवं यह खाद्य पदार्थ में ऑक्सीजन की मात्रा को कम करता है ।

(B) नमक (Salt)

यह यौगिक अधिक परासरणीय दाब उत्पन्न करता है जिसकी वजह से सूक्ष्मजीवों की कोशिका की जीवद्रव्य कुंचन (plasmolysis) होती है । यह सूक्ष्मजीवों की कोशिका में से नमी बाहर निकालता है एवं सूक्ष्मजीवों की कोशिका का निर्जलीकरण करता है । यह Cl^- ion का आयनीकरण करता है जो कि जीवाणु कोशिका के लिए हानिकारक है । यह यौगिक जल में ऑक्सीजन की घुलनशीलता को कम करता है और जीवाणु कोशिका को CO_2 के प्रति संवेदनशील बनता है । यह यौगिक proteolytic enzymes की क्रिया के साथ Intrefre करता है ।

(C) मसाले (Spices)

मसाले खाद्य पदार्थों में से जीवाणुओं को खत्म करते हैं । मसालों की जीवाणु के प्रति मारक क्षमता उसकी मात्रा पर निर्भर करती है । सरसों के बीज एवं लौंग के अंदर वाष्पशील तेल पाए जाते हैं जिनकी मारक क्षमता जीवाणुओं के प्रति अधिक होती है ।

(1) सरसों के बीजों में वाष्पशील तेल पाया जाता हैं जिनमें एल्डिहाइड और एल्कोहल मिलते है ।

(2) दालचीनी और लौंग में सिनेमिक एल्डिहाइड और यूजीनोल होता है जो भोजन में विकृति पैदा करने वाले सूक्ष्म जीवाणुओं को मार देता है ।

लहसुन और प्याज के सत (अर्क) में एक्रोलीन पाया जाता है जो भोजन में विकृति पैदा करने वाले सभी सूक्ष्मजीवों को नष्ट कर देता है ।

(D) लकड़ी का धुंआ (Wood Smoke)

भोज्य पदार्थों की स्मोकिंग दो मुख्य कारणों से की जाती है । मनपसंद खुशबू डालकर भोजन का स्वाद बढ़ाना और भोजन का परिरक्षण करना । धुँआ, ओक महोगनी की लकड़ी जलाकर उत्पन्न

किया जाता है । इन पेड़ों में अधिक संख्या में वाष्पशील पदार्थ होते हैं जैसे - फार्मिक अम्ल, मिथाइल और प्रोपाइल आइसोमर तथा एलीफेटिक यौगिक जैसे मोम, रेजीन, ग्लाइकॉल आदि । इन पेड़ों के जलने से रासायनिक क्रिया होती है जिससे कीटोन, एल्कोहल, एल्डिहाइड और फार्मेल्डिहाइड उत्पन्न होते हैं । ये रसायन जब खाद्य पदार्थों में प्रवेश करते हैं तो खाद्य पदार्थों में उपस्थित विकृति उत्पन्न करने वाले सूक्ष्मजीवों को नष्ट कर देते हैं । स्मोकिंग की क्रिया में एक स्टेण्ड पर खाद्य पदार्थ रख दिया जाता है और स्टेण्ड के नीचे लकड़ी को जलाकर धुंआ (smoke) उत्पन्न किया जाता है । खाद्य पदार्थ को फिर घुमाते हैं जिसमें धुंआ उसकी हर सतह में प्रवेश कर जायें ।

6.7 रासायनिक संरक्षक (Chemical Preservatives) :

वह रासायनिक पदार्थ जो कि खाद्य पदार्थों में डालने के बाद खाद्य पदार्थ में मौजूद विकृति पैदा करने वाले सूक्ष्मजीवों को मारने का काम करते हैं ।

(A) प्रोपेनोएट (Propanoate)

प्रोपेनोएट वसीय अम्लों की छोटी श्रृंखला है जो कि जीवाणु की कोशिका कला पारगम्यता को प्रभावित करके जीवाणु को मारता है । सोडियम या कैल्सियम प्रोपेनोएट एक खाद्य परिरक्षक (food preservative) के रूप में काम में लिया जाता है । यह रासायनिक संरक्षक (chemical preservative) पनीर, केक आदि भोजन पदार्थों में मोल्ड की वृद्धि को रोकने का कार्य करता है ।

(B) नाइट्राइट (Nitrite)

नाइट्राइट का विघटन नाइट्रिक अम्ल में होता है । नाइट्रिक अम्ल जब रक्त में मौजूद हीम रंजक से मिलता है तो यह नाइट्रोसोग्लोबीन बनाता है । यह नाइट्रोसोग्लोबीन क्लोस्ट्रोडियम की कोशिका को नष्ट करता है ।

(C) बेन्जोइक अम्ल (Benzoic Acid)

यह अम्ल विघटित रूप में पाया जाने वाला एक शक्तिशाली अम्ल है । यह यीस्ट और मोल्ड के द्वारा उत्पन्न खाद्य विकृति से बचाव करता है । इसका विघटित रूप कोशिका झिल्ली द्वारा अमीनो अम्ल को ग्रहण करने को रोकता है ।

(D) सल्फरडाईआक्साइउ (Sulphur Dioxide)

सल्फरडाईऑक्साइड के विभिन्न रूप जैसे पोटेशियमबाईस्ल्फाइट, सोडियमथाईसल्फाइड, सोडियममेटाबाईसल्फाइट काम में आते हैं । ये पदार्थ जीवाणु में डाईसल्फाइड लिंकेज के रिड्क्शन में अवरोध (inhibition) उत्पन्न करता है ।

(E) इथाइलीन ऑक्साइड (Ethylene Oxide)

यह एक गैस है जो सभी जीवाणुओं को नष्ट कर देती है ।

(F) एल्कोहल (Alcohol)

एल्कोहल जीवाणु कोशिका के प्रोटीन भाग का स्कन्धन करती है । जिससे जीवाणु में प्रोटीन संश्लेषण प्रक्रिया रूक जाती है एवं जीवाणु कोशिका मर जाती है । यह यौगिक जीवाणु को खाद्य पदार्थ में मारने का काम करता है ।

6.8 डिब्बाबंदी (Canning) :

इस प्रक्रिया के जन्मदाता का नाम निकोलस एपर्ट है । इस प्रक्रिया के द्वारा खराब होने वाले खाद्य पदार्थो को लम्बे समय तक बिना खाद्य विकृति के भण्डारण किया जा सकता है । इस प्रक्रिया में खाद्य पदार्थ को सूक्ष्मजीवाणु रहित करके निर्जमीकृत कांच अथवा पत्थर के मर्तवानों में डिब्बाबंद कर दिया जाता है । इन डिब्बाबंद खाद्य पदार्थो को अंतरिक्ष यात्रियों के भोजन के लिए भेजा जाता है एवं लड़ाई के मैदान में अनेकों जगह भेजा जा सकता है ।

डिब्बाबंदी की प्रक्रिया

डिब्बाबंदी प्रक्रिया से पहले खाद्य पदार्थ को सूक्ष्मजीवों का विगलन करने वाली विभिन्न विधियों द्वारा सूक्ष्मजीव रहित करना चाहिए । सूक्ष्मजीवों का विगलन करने वाली विभिन्न विधियों का इस्तेमाल खाद्य पदार्थ के प्रारूप, गुण का अध्ययन करने के बाद इस्तेमाल में लिया जाना चाहिए।

डिब्बाबंदी प्रक्रिया दो प्रकार की है -

(A) उच्च ऊष्मा प्रक्रिया के द्वारा

खाद्य पदार्थ को उच्च ऊष्मा (80-100°C तापमान) खाद्य पदार्थ के गुण को देखकर दी जाती है । उच्च ऊष्मा का तापमान, समय आदि खाद्य पदार्थ के गुणन किस्म आदि पर निर्भर करती है । उच्च ऊष्मा प्रक्रिया को तापमान एवं समय के आधार पर तीन भागों में विभक्त किया है ।

1) HTST विधि (High Temperature Short Time Method)
2) HCF विधि (Heat Cool Fill Method)
3) PCF विधि (Pressure Filler Cooker Method)

1) उच्चताप कम समय विधि (High Temperature Short Time Method)

इस विधि के द्वारा द्रव्य खाद्य पदार्थ जैसे टमाटर का रस, शरबत शीतल पेय, को कम समय के लिए उच्च तापक्रम में उच्च दाब देकर इनकी डिब्बाबंदी कर दी जाती है । इस प्रक्रिया के बाद इन डिब्बाबंद खाद्य पदार्थो का पाश्चरीकरण किया जात है ।

2) हीट कूल फिल विधि (Heat Cool Fill Method)

इस प्रक्रिया द्वारा खाद्य पदार्थ की परत में पहले उच्च ताप, उच्च दाब के साथ दी जाती है । उसके बाद परत को ठंडा किया जाता है । यह प्रक्रिया नमकीन, मक्के के दानों, सॉरक्राट, अचार, हरे जैतून, डिब्बाबंद मछली जैसे सूशी जिनमें हर परत में पानी की मात्रा अलग-अलग होती है, के परिरक्षण के लिए इस्तेमाल होती है । इस प्रक्रिया में डिब्बाबंदी के बाद खाद्य पदार्थ को उच्च ताप नहीं दिया जाता है ।

3) प्रैशर कुकर-फिलर-प्रक्रिया (Pressure Cooker Filler Method)

इस प्रक्रिया में खाद्य पदार्थ को उच्च ताप उच्च दाबरहित से सूक्ष्मजीव रहित किया जाता है । उसके बाद खाद्य पदार्थ को डिब्बाबंद प्रक्रिया के बाद सील कर दिया जाता है । डिब्बाबंद खाद्य पदार्थ को उच्च ऊष्मा दी जाती है उसके बाद ठंडा किया जाता है ।

उच्च दाब डिब्बाबंद खाद्य पदार्थ (Pressurized Packed Food)

उच्च दाब (Pressurized) डिब्बाबंद खाद्य पदार्थ जैसे द्रव्य या पेस्ट को प्रोपेलेन्ट गैस जैसे नाइट्रोजन, कार्बनडाईऑक्साइड के साथ विलयन करके डिब्बाबंद किया जाता है । जब खाद्य पदार्थ और उच्च दाब युक्त प्रोपेलेन्ट गैस का विलयन होता है तो खाद्य पदार्थ उच्च दाब झाग में बदल जाता है । इस प्रक्रिया के द्वारा क्रीम, सलाद की ड्रेसिंग, चटनी आदि खाद्य पदार्थों को डिब्बाबंद किया जा सकता है ।

(B) शीतलीकरण

डिब्बाबंद प्रक्रिया के दौरान उच्च ताप, उच्च दाब के बाद खाद्य पदार्थ का शीतलीकरण किया जाता है वे खाद्य पदार्थ जिनको कांच की बोतल में डिब्बाबंद के बाद सील किया है उनको धीरे-धीरे ठंडी हवा के संपर्क (Air Current) के द्वारा शीतलीकरण किया जाता है ।

बोध प्रश्न

प्र.1 रिक्त स्थान भरो -

(1) .....एवं.....शैवालों में उच्च प्रोटीन मात्रा होती है ।

(2) दूध को..... की क्रिया द्वारा खाद्य विकृति से बचाया जाता है ।

(3) ..... एक किण्वित सब्जी है ।

प्र.2 बहुविकल्पीय प्रश्न

निम्न में से सही उत्तर को कोष्ठक में लिखें ।

(1) प्राकृतिक खाद्य योगज है ।

(a) नमक (b) बैन्जोइक अम्ल

(c) सल्फरडाइआक्साइड

(2) निम्न में कौन सा किण्वित पेय पदार्थ है ।

(a) वाइन (b) सेब

(c) पत्तागोभी

(3) निम्न में कौन सा रासायनिक संरक्षक है ।

(a) बेनज़ोइक अम्ल (b) हाइड्रोक्लोरिक अम्ल

(c) सिल्वर नाइट्रेट

प्र.3 निम्न का संक्षिप्त में उत्तर दीजिए ।

(1) खाद्य योगज को परिभाषित कीजिए ।

.....

(2) एककोशिकीय प्रोटीन (SCP) क्या है?

.....

6.9 सारांश (Summary):

इस इकाई के अध्ययन के बाद हमें ज्ञात होता है कि सूक्ष्मजीव जैसे मोल्डस, यीस्ट एवं जीवाणुओं का खाद्य सूक्ष्म जैविकी में महत्त्वपूर्ण योगदान है । स्पाइरुलीना जो कि एक शैवाल है

उसमें प्रोटीन की मात्रा 71 प्रतिशत होती है । इस शैवाल ने एककोशिकीय प्रोटीन नामक नई अवधारणा को जन्म दिया है । एककोशिकीय प्रोटीन के माध्यम से हम कई खाद्य पदार्थों का निर्माण कर विश्व की समस्या का समाधान करने की तरफ एक कदम उठा सकते हैं । किण्वित खाद्य पदार्थ जैसे शूशी, लेवन, पनीर, हरे जैतून में पौष्टिक तत्व की मात्रा अधिक होती है एवं इनका भण्डारण अधिक समय तक किया जा सकता है । खाद्य संरक्षण के विभिन्न तरीकों का अध्ययन कर हम सूक्ष्मजीवों द्वारा खाद्य पदार्थ के विगलन को रोक सकते हैं । रासायनिक संरक्षक तथा खाद्य योगज के द्वारा हम खाद्य पदार्थों को सूक्ष्मजीवों द्वारा की गई विकृति से बचा सकते हैं एवं डिब्बाबंदी के द्वारा पैरिसिबल खाद्य पदार्थों का लम्बे समय तक भण्डारण या डिब्बाबंदी के माध्यम से हम विभिन्न तरह के खाद्य पदार्थों को अंतरिक्ष, प्राकृतिक आपदाओं द्वारा ग्रसित क्षेत्रों में भेजकर मानव कल्याण में एक महत्त्वपूर्ण योगदान प्रस्तुत कर सकते हैं ।

6.10 बोध प्रश्नों के उत्तर:

उ.1

1. उडोगोनियम एवं स्पाइरूलीना
2. पाश्चरीकरण
3. सॉरक्राट

उ.2

1. (a)
2. (a)
3. (a)

उ.3

1. वे प्राकृतिक उत्पाद जैसे नमक, चीनी, मसाले जब खाद्य पदार्थों में डाले जाते हैं तो वे सूक्ष्मजीवों द्वारा खाद्य पदार्थों की विकृति को रोकते हैं ऐसे प्राकृतिक उत्पादों को खाद्य योगज कहते हैं ।
2. एककोशिकीय सूक्ष्मजीव जिसमें प्रोटीन उच्च मात्रा में पाया जाता है तथा इन सूक्ष्मजीवों को वाणिजयक खाद्य पदार्थ के उत्पादन के लिए काम में लिया जाता है ।

6.11 अभ्यासार्थ प्रश्न (Exercise Questions):

प्र.1 टिप्पणी कीजिए -

(a) रासायनिक संरक्षक

(b) किण्वित सब्जियाँ

(c) खाद्य योगज

प्र.2 भोजन में सूक्ष्मजीवों की वृद्धि को प्रभावित करने वाले कारकों का वर्णन कीजिए ।

प्र.3 मोल्ड, यीस्ट एवं जीवाणु का खाद्य सूक्ष्मजैविकी में महत्ता बताइये ।

प्र.4 निम्न में अन्तर स्पष्ट कीजिए ।

अपूयन एवं अनॉक्सी अवस्था

(1) उच्च ताप एवं निम्न ताप

(2) शुष्कन प्रक्रिया एवं तापीय उपचार प्रक्रिया

6.12 शब्दावली (Glossary) :

1.	एककोशिकीय प्रोटीन	-	Single Cell Protein
2.	डिब्बाबंद प्रक्रिया	-	Canning
3.	पाशच्यूरीकरण	-	Pasteurization
4.	समांगी किण्वन	-	Homofermentation
5.	विषमांगी किण्वन	-	Heterofermentation
6.	खाद्य संरक्षण	-	Food Preservation
7.	अपूयन	-	Asepsis

6.13 संदर्भ ग्रन्थ (Reference Books):

1. ऐडम, मौस फूड माइक्रोबायोलाजी पनिमा पब्लिशिंग कार्पो., नई दिल्ली ।

2. फ्रेजियर एवं वेशहॉफ, फूड माइक्रोबायोलोजी, टाटा मेक्ग्राहिल पब्लि कं. लि., नई दिल्ली ।

इकाई 7

अपशिष्ट जैवअपघटन

(Biodegradation of Waste)

इकाई की रूपरेखा

7.0 उद्देश्य

7.1 प्रस्तावना

7.2 अपशिष्ट के विभिन्न स्त्रोत

7.3 अपशिष्ट का संघटन एवं प्रकार

- 7.3.1 ठोस अपशिष्ट
- 7.3.2 तरल अपशिष्ट

7.4 अपशिष्ट उपचार - ठोस अपशिष्ट उपचार

- 7.4.1 भोतिक उपचार
- 7.4.2 रासायनिक उपचार
  - (a) दहन
  - (b) तापांशन
  - (c) गैसीकरण
- 7.4.3 सूक्ष्मजैविक उपचार
  - (a) शर्करीकरण
  - (b) गैसीकरण एवं कम्पोस्टिंग

7.5 अपशिष्ट उपचार - तरल अपशिष्ट उपचार

- 7.5.1 प्राथमिक उपचार
- 7.5.2 द्वितीयक उपचार
  - (a) मंथर फिल्टर
  - (b) सक्रियित आपंक
  - (c) ऑक्सीकरण ताल एवं खाई
- 7.5.3 तृतीय उपचार

7.6 सारांश

7.7 बोध प्रश्नो के उत्तर

7.8 अभ्यासार्थ प्रश्न

7.9 शब्दावली

7.10 संदर्भ ग्रन्थ

7.0 उद्देश्य (Objective):

1. विभिन्न प्रकार के अपशिष्टों के बारे में जानकारी प्राप्त करना ।
2. अपशिष्ट के विभिन्न स्त्रोतों के बारे में जानकारी प्राप्त करना ।
3. ठोस एवं तरल अपशिष्टों को विभिन्न प्रकार से उपचारित करने (जैसे भौतिक, रासायनिक एवं जैविक उपचार) के बारे में ज्ञानार्जन ।

7.1 प्रस्तावना (Introduction):

आधुनिक जीवन शैली से मनुष्य का जीवन बहुत ही आरामदायक हो गया है किन्तु इस के साथ एक प्रमुख समस्या उठ खड़ी हुई है अत्यधिक मात्रा में उत्पन्न अपशिष्ट के उपयुक्त निस्तारण की, जिससे पर्यावरण को न्यूनतम हानि हों । आधुनिक जीवन शैली के कारण पृथ्वी धीरे-धीरे एक बड़े कचरे को ढेर में तबदील होती जा रही है । पृथ्वी के वायुमंडल, जल स्त्रोतों एवं मृदों में अपशिष्ट पदार्थ मिल जाते हैं तथा विभिन्न जीवों पर हानिकारक प्रभाव डालते हैं । मनुष्य के क्रिया-कलापों से अंतरिक्ष एवं ध्रुवीय क्षेत्र भी अछूते नहीं रह पाये हैं । अंतरिक्ष में विभिन्न उपग्रहों के अपशिष्ट घूम रहे हैं । ध्रुवीय प्रदेशों में भी विभिन्न खोज यात्राओं के फलस्वरूप कचरों के ढेर जमा हो गये है ।

अपशिष्ट शब्द सामान्य रूप से सभी प्रकार के दूषित पदार्थ, कचरे व कूड़े करकट के लिए उपयोग किया जाता है जो मनुष्य के लिए उपयोगी नहीं है । अत: विभिन्न स्त्रोतों के आधार पर उसमें विभिन्न प्रकार के पदार्थ हो सकते है।

7.2 अपशिष्ट के विभिन्न स्त्रोत (Various Sources of Wastes) :

मनुष्य के विभिन्न क्रिया-कलापों एवं प्राकृतिक गतिविधियों के अनुसार अपशिष्ट के विभिन्न स्त्रोत हो सकते हैं जिनमें विभिन्न उद्योग, कृषि एवं कृषि आधारित उद्योग, घरेलू एवं शहरी (म्यूनिसिपल) स्त्रोत एवं प्राकृतिक वन इत्यादि शामिल हैं । विभिन्न स्त्रोतों के अनुसार अपशिष्ट घटक भी भिन्न हो सकते हैं ।

1. औद्योगिक इकाइयां - रासायनिक पदार्थ, उर्वरक, पेपर, प्लास्टिक पदार्थ, कपड़ा, तेल रिफाइनरी इत्यादि ।
2. कृषि एवं कृषि आधारित उद्योग - फसल उत्पादन, विभिन्न उत्पादों के प्रसंस्करण संबंधी उद्योग, एल्कोहल उद्योग, चीनी मिलें, चाय, कॉफी उद्योग ।
3. वन स्त्रोत
4. शहरी स्त्रोत - विभिन्न मानवीय क्रियाकलापों से उत्सर्जन, सीवेज
5. जंतु आधारित विभिन्न उद्योग - दुग्ध एवं डेयरी, बूचड़खाने, चमड़ा उद्योग ।

7.3 अपशिष्ट का संघटन एवं प्रकार (Composition and Types of Wastes):

अपशिष्ट का संघटन मुख्यतया इसके स्त्रोत पर निर्भर करता है । अपशिष्ट में अकार्बनिक एवं अक्रिय पदार्थ, कार्बनिक पदार्थ एवं मिश्रित प्रकृति के पदार्थ होते हैं । विभिन्न अपशिष्टों को दो मुख्य वर्गों में बांटा जा सकता है - ठोस अपशिष्ट एवं तरल अपशिष्ट ।

7.3.1 ठोस अपशिष्ट

विभिन्न क्षेत्रों अथवा स्त्रोतों के अनुसार इनमें विभिन्न प्रकार के घटक हो सकते हैं । सामान्यत: ग्रामीण क्षेत्रों एवं कृषि आधारित उद्योगों से उत्सर्जित अपशिष्ट में जैवनिम्नीकरणीय पदार्थों की मात्रा अधिक होती है । ये निम्न प्रकार के हो सकते हैं -

(i) अनाज, दलहनी, तेल उत्पादक आदि फसलों से प्राप्त भूसी एवं पादप

(ii) अपशिष्ट सब्जी एवं अन्य फसलों (जैसे कपास, तम्बाकू) से उत्पाद प्राप्त करने के बाद बचे पादप अंग आदि ।

(iii) **कृषि आधारित उद्योगों से प्राप्त अपशिष्ट** - जैसे तेल निष्कर्षण के बाद प्राप्त खली, फलों व सब्जियों के प्रसंस्करण से संबंधित उद्योगों से फल एवं सब्जियों के छिलके एवं अनुपयोगी भाग चाय, तम्बाकू आदि में अनुपयोगी पत्तियां एवं अन्य भाग, कपास, रेशम इत्यादि उद्योगों में बचे अनुपयोगी अंश, बीज आदि ।

(iv) **घरेलु अपशिष्ट** - बचा खुश भोजन, कागज, कपड़े, सब्जियों के छिलके, टिन अथवा कांच के डिब्बे, प्लास्टिक के डिब्बे आदि मनुष्य एवं पालतू जानवरों का मल ।

(v) **मांस आधारित उद्योगों से प्राप्त अपशिष्ट** - इसमें मुख्यत: मृत जंतुओं के विभिन्न अंग (जो मांस के रूप में उपयोगी नहीं हैं) जैसे जन्तुओं की त्वचा, पर, पैर, खुर, हड्डियों, आते इत्यादि ।

(vi) **शर्करा उद्योग** में गन्ने से रस निकालने के बाद बैगेस (baggase) प्राप्त होता है ।

शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्रों में भी उत्सर्जित घरेलू ठोस अपशिष्ट में विभिन्न जैव अपघटनीय पदार्थों के साथ ही कांच, प्लास्टिक एवं धातु से निर्मित उपयोग के बाद बचे खाली डिब्बे, बोतलें, प्लास्टिक से निर्मित पैकिंग पदार्थ आदि भी सम्मिलित होते हैं । जैव निम्नीकरणीय घटकों में बचा बासी भोजन, सब्जी, फलों के छिलके एवं अनुपयोगी (न पकाए जाने वाले) अंश, पुराने कपड़े, कागज तथा कार्ड बोर्ड की पैकिंग इत्यादि होते हैं । इनके अतिरिक्त विभिन्न खराब इलेक्ट्रॉनिक उपकरण व उनके घटक (Parts) भी शामिल होते हैं जो मुख्यत: प्लास्टिक एवं विभिन्न धातुओं से निर्मित होते हैं ।

विभिन्न कृषि आधारित उद्योगों वाले औद्योगिक क्षेत्रों से उत्सर्जित ठोस अपशिष्ट एवं घरेलू अपशिष्ट में जैवनिम्नीकरणीय पदार्थों में पादप उत्पादों में उपस्थित सेलुलोज, हेमीसेलुलोज, लिग्निन आदि पदार्थों की प्रमुखता होती है क्योंकि ये पदार्थ पादप कोशिका की भित्ति के अभिन्न घटक होते हैं । इनके अतिरिक्त पादप एवं जंतु ऊतकों से प्राप्त अपशिष्ट में कुछ मात्रा में

प्रोटीन, वसा, कोलेजन इत्यादि पदार्थ भी होते हैं । सीवेज से विलग किया गया आपंक (Sludge) भी मुख्य अपशिष्ट है ।

7.3.2 तरल अपशिष्ट (Liquid Waste)

तरल अपशिष्ट साधारणत: जल स्त्रोतों में ही प्रवाहित कर दिया जाता है तथा जल प्रदूषण का महत्त्वपूर्ण कारक है । इसमें जल में प्रवाहित विभिन्न रसायन, हाइड्रोकार्बन (तेल रिफाइनरियों से) कागज उद्योग से उत्सर्जित पल्प एवं बाईसल्फाइड विलयन, दुग्ध एवं डेरी उद्योगों से उत्सर्जित झाझ इत्यादि होते हैं । मांस आधारित उद्योगों से रक्त एवं अन्य पदार्थ भी जल में प्रवाहित किये जाते हैं । शर्करा उद्योग में चीनी निर्माण के दौरान लगभग 50% विभिन्न शर्करा युक्त शीरा (Molasses) भी महत्वपूर्ण उपउत्पाद एवं अपशिष्ट पदार्थ है ।

घरेलू एवं शहरी तरल अपशिष्ट में जल में प्रवाहित विभिन्न अकार्बनिक एवं कार्बनिक पदार्थ, डिटरजेंट तथा वाहित मल आदि मुख्य है ।

7.4 अपशिष्ट उपचार (Waste Treatment):

अपशिष्ट को उसके संघटन एवं प्रकृति के आधार पर विभिन्न प्रकार से उपचारित किया जाता है । ठोस अपशिष्ट में से अनिम्नीकरणीय एवं अक्रिय पदार्थों को अलग किया जाता है उसके बाद जैव निम्नीकरणीय (biodegradable) अंश का जैविक अपघटन द्वारा उपचारित किया जाता है । वाहित मल को भी संघटन के आधार पर उपचारित किया जाता है, जिनमें भौतिक, रासायनिक एवं सूक्ष्मजैविक (microbial) उपचार सम्मिलित हैं । भौतिक उपचार प्राथमिक उपचार, जैविक उपचार द्वितीयक उपचार कहलाता है ।

ठोस अपशिष्ट प्रबन्धन (Solid Waste Management)

7.4.1 भौतिक उपचार (Physical Treatment)

ठोस अपशिष्ट की मुख्य समस्या उपयुक्त निस्तारण (Suitable Disposal) की होती है । इस का एक बड़ा भाग अक्रिय पदार्थों का होता है जिसमें कांच, प्लास्टिक, धातु से निर्मित वस्तुएं होती है । उन्हें प्राथमिक स्तर पर कचरा एकत्रित करने के दौरान अथवा बाद में अलग करके पुनर्चक्रण (recycling) द्वारा फिर से उपयोग किया जा सकता है । शेष अधिकांश भाग में अपघटनशील कार्बनिक पदार्थ होते हैं ।

ठोस अपशिष्ट के निस्तारण का सरलतम उपाय निचले स्थानों का अपशिष्ट द्वारा भरा व करना है जिसे **लैड़ंफिल** या **भूमिभराव** (landfill) कहा जाता है ।

भूमि भराव में कचरे में उपस्थित कार्बनिक पदार्थों का धीमी गति से अनॉक्सी अपघटन (anaerobic decomposition) होता है जिसमें लगभग 3०-5० वर्ष लगते हैं । इस दौरान मीथेन (CH_4), कार्बनडाईऑक्साइड (CO_2), जल, कुछ ऐल्कोहल एवं कार्बनिक अम्लों का उत्पादन होता है जो आस-पास के क्षेत्र में विसरित हो जाते हैं तथा वह क्षेत्र धीरे-धीरे नीचे बैठ जाता है । किंतु खुला फैलाया गया कचरा रोगों, कीटों के प्रजनन आदि का कारक हो सकता है अत: वर्तमान में **स्वच्छता भूमि भराव** (sanitary land fills) किया जाता है ।

स्वच्छता भूमि भराव में नीची भूमि पर कचरा फैलाने के बाद उस पर मिट्टी की एक पतली परत डाली जाती है जिससे कचरे की सतह खुली नहीं रहती एवं उपरोक्त समस्या नहीं आती । भूमि भराव खाइयां बनाकर उनमें अपशिष्ट भरकर अथवा ढलान में रैम्प बनाते हुए अथवा पूरे क्षेत्र में समान रूप से फैलाकर किया जाता है । भूमि भराव वाले स्थान को भवन निर्माण आदि के उपयोग नहीं किया जाता क्योंकि अपघटन के कारण जमीन धीरे-धीरे बैठ जाती है । इसे मनोरंजन आदि के लिए उपयोग किया जा सकता है । 30-50 वर्ष बाद यह उपयोग के काबिल हो सकती है ।

7.4.2 रासायनिक उपचार (Chemical Treatment)

इस प्रक्रिया में मुख्यतया जैविक एवं कार्बनिक पदार्थों से रासायनिक अथवा अजैविक विधि से ऊर्जा प्राप्त की जाती है । इनमें प्रत्यक्ष रूप से जैव भार का दहन, गैसीकरण तथा तापांशन (Pyrolysis) आदि शामिल है ।

(A) दहन (Combustion)

ग्रामीण क्षेत्रों में लकडी, टहनियों आदि के प्रत्यक्ष दहन द्वारा ऊर्जा प्राप्त की जाती है । वर्तमान में कृषि अपशिष्ट, म्यूनीसिपल अथवा शहरी अपशिष्ट के अंश को ऊर्जा प्राप्ति के लिए उपयोग किया जाता है । लकड़ी एवं छाल के मिश्रण को भी ऊर्जा हेतु उपयोग किया जाता है ।

(B) तापांशन (Pyrolysis)

ऑक्सीजन की अनुपस्थिति में उच्च तापमान (200-500°C) अथवा अधिक पर कार्बनिक अपशिष्ट (जैसे लकड़ी के मोटे-पतले टुकड़े, चीपे, लकड़ी का बुरादा मूंगफली के छिलके, बैगेस आदि) का अपघटन (decomposition) तापांशन कहलाता है । इससे तरल कार्बनिक पदार्थ मीथेन (18% तक), हाइड्रोकार्बन, कार्बनमोनोऑक्साइड एवं हाइड्रोजन आदि बनते हैं । तापांशन में विभिन्न परिस्थितियों में विभिन्न प्रकार के उत्पाद बनते हैं । उससे प्राप्त तरल उच्च ऊर्जा उत्पादक ईंधन के रूप में उपयोगी होता है । उससे चारकोल भी प्राप्त होता है जो ईंधन के रूप में उपयोगी है ।

(C) गैसीकरण (Gasification)

इस प्रक्रिया में नियंत्रित मात्रा में वायु अथवा ऑक्सीजन की उपस्थिति में उच्च ताप (लगभग 1000°C) पर कार्बनिक पदार्थों का अपघटन होता है । इससे प्राप्त गैसों को विद्युत उत्पादन तथा सिंचाई आदि के लिए उपयोग किया जाता है ।

7.4.3 सूक्ष्मजैविक उपचार (Microbial Treatment)

सूक्ष्मजैविक उपचार में अपशिष्ट में उपस्थित कार्बनिक पदार्थों को सूक्ष्मजीवों द्वारा विभिन्न रसायनों, खाद्य पदार्थों अथवा खण्ड इत्यादि में परिवर्तित किया जाता है । सूक्ष्मजीवों में विभिन्न जीवाणु कवक, शैवाल एवं एक्टिनोमाइसिटीज इत्यादि सम्मिलित हैं जो कार्बनिक पदार्थों पर क्रिया करते हैं ।

1. शर्करीकरण (Saccharification)

ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्रों के घरेलू अपशिष्ट तथा कृषि अपशिष्ट, कृषि आधारित उद्योगों से उत्सर्जित अपशिष्ट में कार्बनिक पदार्थ विशेषकर पादप उत्पादों की अधिकता होती है । कृषि अपशिष्ट में गन्ने से इस निष्कर्षण के बाद शेष बचा भूसा, अनाज निकालने के बाद बचे पादप के विभिन्न भाग, सब्जी फल उत्पादन एवं संसाधन से उत्पन्न अपशिष्ट, लकड़ी, बुरादा आदि मुख्य हैं । इनमें मुख्यत: सेलुलोज, हेमीसेलुलोज एवं लिग्निन पाया जाता है ।

सैलुलोज ग्लूकोज इकाइयों के $\beta 1 \rightarrow 4$ बन्धों द्वारा बहुलकीकरण (Polymerization) के फलस्वरूप निर्मित होता है एक सेलुलोज अणु में लगभग 5000 से 10000 ग्लूकोज इकाइयां हो सकती है । हेमीसेलुलोज पादप भित्ति का लगभग 20% शुष्क भार निर्मित करता है । यह मुख्यत: जायलैन शर्कराओं से बनता है तथा उसमें ग्लूकोज, मैनोज़ तथा जायलोज अरैबिनोज शर्कराएं भी होती हैं जो क्रमश: हेक्सोज एवं पैन्टोज शर्कराएं है । इन शर्कराओं की मात्रा विभिन्न पादपों में भिन्न-भिन्न हो सकती है । लिग्निन विभिन्न प्रकार के कार्बनिक एल्कोहल से निर्मित जटिल यौगिक है जो पादप कोशिकाओं को दृढ़ता प्रदान करता है ।

अनेक सूक्ष्मजीवों में उनके अपघटन से संबंधित विकर (enzyme) होते हैं जो इनका जल अपघटन कर सकते हैं । जैसे ट्राइकोडर्मा रीसी (Trichoderma reesei), ट्राइकोडर्मा विरिडी (Trichoderma viride) एवं सेलुलोमोनास (cellulomonas) आदि ।

सेलुलोज के जल अपघटन के लिए इनमें सेलुलेज होता है जिसमें तीन प्रकार के विकर होते हैं $\beta 1-4$ एन्डोग्लूकानेज, $\beta 1-4$ एक्सोग्लूकानेज तथा $\beta 1-4$ ग्लूकोसाइडेज (सैलोबायेज) । $\beta 1-4$ एक्सोग्लूकानेज सेलुलोज श्रृंखला को मध्य में कहीं से भी तोड़ सकता है किन्तु $\beta 1-4$ एक्सोग्लूकानेजू श्रृंखला को अनापचयी (non reducing) छोर से काटता है । सैलोबायेज सैलाबायोज में से दो ग्लूकोज अणुओं को अलग करता है ।

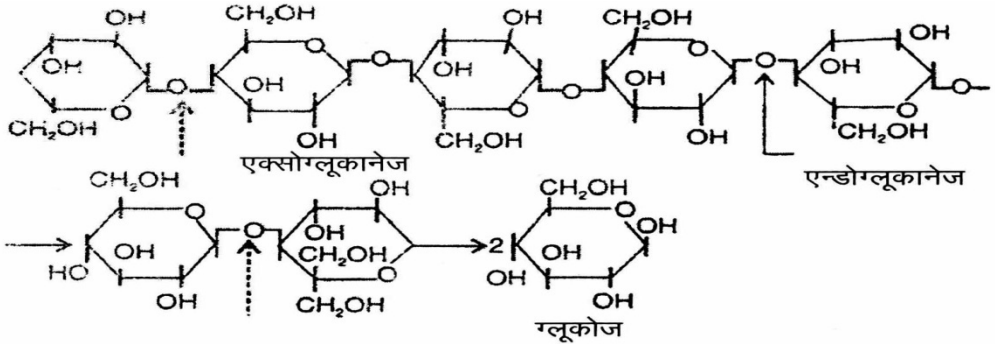

चित्र 7. व : सेलुलेज के विभिन्न घटकों के कटिंग विस्थल

इन विकरों के द्वारा सेलुलोज पहले सैलोवायोज फिर ग्लूकोज शर्करा में विघटित हो जाता है ।

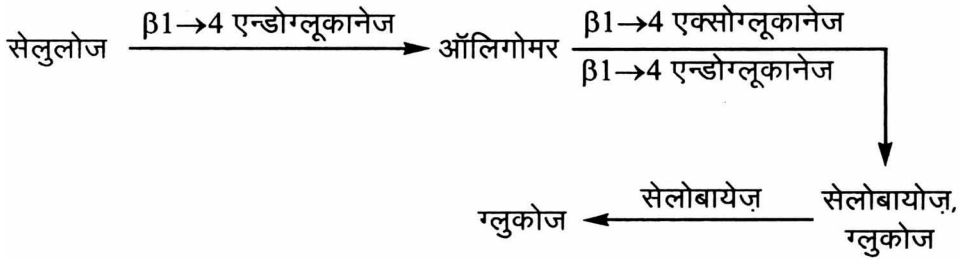

हेमीसेलुलोज के जल अपघटन के लिए एक्सोजायलनेज एन्डोजायलनेज एवं β जायालोसाइडेज विकर होते हैं जो पहले ऑलिगोमर फिर शर्कराओं में अपघटित करते हैं । इसी प्रकार पेक्टीनेज एवं लिग्नेजेज भी उन्हें एकक इकाइयों में तोड़ देते हैं । अनेक मंड युक्त अपशिष्टों को एमाइलेज आदि विकर शर्करा में परिवर्तित कर देते हैं । बेसिलस कोएग्लैन्स एस्पर्जिलस ओराइजी एस्पर्जिलस नाइजर आदि में ये विकर पाये जाते हैं । इस प्रकार विभिन्न कार्बनिक. पदार्थों को शर्करा में परिवर्तित करने की प्रक्रिया **शर्करीकरण** कहलाती है । बहुधा इनसे बाद में किण्वन द्वारा एल्कोहल बनाया जाता है जो पैट्रोल के साथ ईंधन के रूप में प्रयोग किया जा सकता है ।

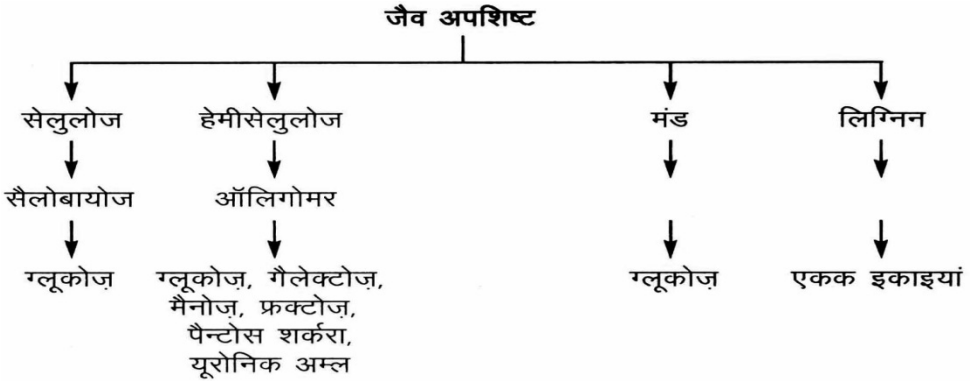

(B) गैसीकरण एवं कम्पोस्टिंग (Gasification and Composting)

कार्बनिक ठोस अपशिष्ट पर सूक्ष्मजीवों की सक्रियता के फलस्वरूप गैसों के मिश्रण का उत्पादन गैसीकरण कहलाता है इसके साथ उपउत्पाद के रूप में झूमस के समान पदार्थ बनाता है जिसे खाद के रूप में उपयोग किया जा सकता है ।

ठोस अपशिष्ट प्रबंधन हेतु कम्पोस्टिंग भ्रमइ भराव की अपेक्षा बेहतर विकल्प है क्योंकि उससे पर्यावरण प्रदूषण नहीं होता । इसके लिए पहले अकार्बनिक एवं कार्बनिक अपशिष्ट पदार्थों को अलग करना आवश्यक होता है । कम्पोस्टिंग सूक्ष्मजीवों द्वारा कार्बनिक पदार्थों के अपघटन की प्रक्रिया होती है जिससे ह्यूमस के समान उत्पाद बनता है जो खाद के रूप में उपयोग किया जा सकता है । कम्पोस्टिंग के लिए दो तीन विधियां उपयोग की जाती है ।

(i) इसमें कार्बनिक अपशिष्ट साधारण ढेरी के रूप में जमा कर दिया जाता है । इसमें अपघटन दर बहुत धीमी होती है एवं कम्पोस्ट तैयार होने में कई महीनें लग जाते हैं । किंतु इससे कीटों तथा दुर्गंध उत्पन्न होने की समस्या होती है । इसमें पहले मध्यतापरागी फिर ऊष्मारागी जीवाणु विकसित होते हैं एवं कुछ समय बाद फिर से मध्यतापरागी (mesophiles) जीवाणु कार्बनिक पदार्थों पर क्रिया करते हैं । ऊष्मारागी जीवाणु उच्च ताप पर तथा मध्यरागी अपेक्षाकृत सामान्य ताप पर सक्रिय होते हैं ।

(ii) वातन ढेरी (aerated) प्रक्रिया में कार्बनिक अपशिष्ट की ढेरी में पादप एवं पम्प की सहायता से वात की व्यवस्था की जाती है जिससे ढेरी के भीतर तापमान नियंत्रित रहता है ।

कम्पोस्टिंग में मुख्यत: बेसिलस एवं क्लोस्ट्रीडियम की तापरागी प्रजातियाँ, थर्मोमोनोस्पोरा, एस्पर्जिलस फ्यूमिगेटस, म्यूकर पूसिलव जीयोट्राइकम कीटमियम थर्मोफाइल एवं टोरुला सूक्ष्मजीव अपघटन प्रक्रिया में सहायक होते हैं ।

एक अन्य विधि में कार्बनिक अपशिष्ट को धीमी गति से कम्पोस्टर में प्रविष्ट करवाया जाता है तथा ब्लोअर (blower) के द्वारा उसमें हवा प्रविष्ट करवायी जाती है । रोलर कम्पोस्टर अक्ष पर गोल घूमता रहता है इससे पदार्थों एवं हवा का मिश्रण भली-भांति होता रहता है । इससे प्राप्त कम्पोस्ट उत्तम. होती है किन्तु इस प्रक्रिया का प्रारम्भिक खर्च अधिक होता है ।

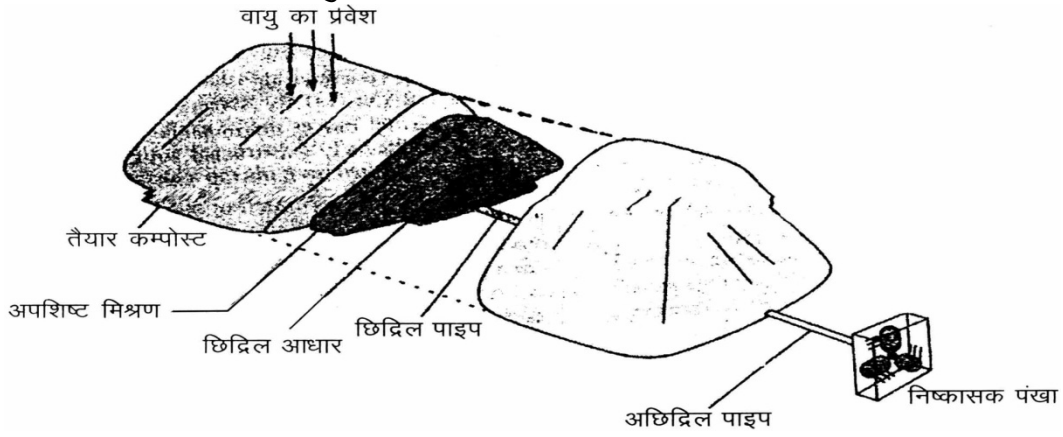

चित्र 7.2 कम्पोस्टिंग की वातन सुविधा युक्त विकसित विधि

कम्पोस्ट निर्माण एवं गैसीकरण की एक विधि बायो गैस संयंत्र है जिसमें अपशिष्ट पदार्थों के अवायवीय किण्वन के फलस्वरूप मीथेन (CH_4), कार्बनडाईऑक्साइड (CO_2) एवं अल्प मात्रा में नाइट्रोजन तथा हाइड्रोजन (H_2) गैसों का मिश्रण बनता है जिसे **बायोगैस** कहते हैं । इसे गोबर गैस भी कहा जाता है । इस गैस का उपयोग विशेषत: ग्रामीण क्षेत्रों में उपयोग ईंधन के रूप में, एवं प्रकाश उत्पादन के लिए किया जाता है । उसके जलने पर दुर्गन्ध नहीं आती तथा यह धूमरहित नीली लौ के साथ जलती है । बायो गैस के अतिरिक्त अपघटन के फलस्वरूप प्राप्त आपंक (sludge) खाद के रूप में उपयोगी होता है । अत: बायोगैस संयंत्र अपशिष्ट उपचार की उपयुक्त विधि है क्योंकि इससे प्रदूषण नहीं होता तथा इससे प्राप्त उत्पाद एवं उपउत्पाद दोनों उपयोग होते हैं ।

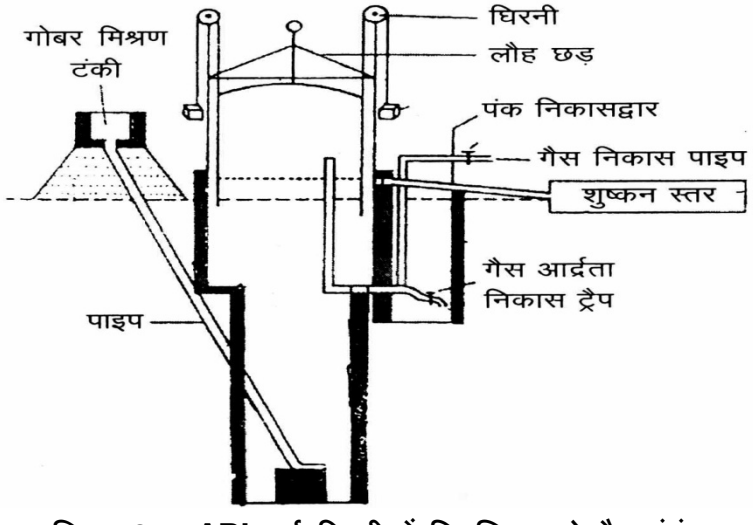

चित्र 7.3 : 1ARI, नई दिल्ली में विकसित बायो गैस संयंत्र

बायोगैस के संबंध में अनुसंधान, 1ARI नई दिल्ली में 1939 में प्रारंभ किया गया । अब तक भारत के विभिन्न राज्यों में लाखों बायोगैस संयंत्र स्थापित किये जा चुके है । दिल्ली में ओखला एवं दादर (मुंबई) में बड़े बायोगैस संयंत्र लगाये गये हैं जिनसे वहां के आसपास के क्षेत्र में पाइप द्वारा गैस सप्लाई की जाती है । उससे पर्यावरण प्रदूषण बहुत कम हो जाता है ।

बायोगैस संयंत्र के लिए पादप एवं जंतु अपशिष्ट दोनों का उपयोग किया जा सकता है अत: इसके लिए पालतू जानवरों से प्राप्त गोबर, मूत्र, घरेलू अपशिष्ट में पका अधपका खाना, कृषि एवं कृषि आधारित उद्योगों से प्राप्त अपशिष्ट, मांस, पोल्ट्री उद्योगों से प्राप्त अपशिष्ट एवं दुग्ध उद्योगों से प्राप्त अपशिष्ट सभी का उपयोग किया जा सकता है । हालांकि अधिकांश बायोगैस संयंत्रों में जानवरों के गोबर एवं कृषि अपशिष्ट का उपयोग किया जाता है ।

इस संयंत्र में अवायवीय अपघटन को तीन चरणों में बांटा जा सकता है -

(i) प्रथम चरण में अपशिष्ट व गोबर आदि में जल मिलाकर गाढ़ा घोल सा बनाया जाता है । इस चरण में जटिल कार्बनिक पदार्थों को जीवाणुओं द्वारा जल अपघटन कर सरल कार्बनिक पदार्थों में परिवर्तित किया जाता है तथा उनसे एल्कोहल एवं कार्बनिक अस्त बनते हैं ।

(ii) दूसरे चरण में अवायवीय एवं हाइड्रोजन उत्पादक जीवाणु सरल कार्बनिक पदार्थों एवं वसा अम्लों को एसीटेट, H_2, एवं CO_2 में परिवर्तित कर देते है । दूसरी ओर कुछ अन्य जीवाणु H_2 एवं CO_2 से एसीटेट फार्मेट एवं अन्य कार्बनिक अम्ल बनाते हैं ।

(iii) तृतीय एवं अंतिम चरण में एसीटेट, फार्मेट, अन्य अस्त एवं CO_2, H_2 से मीथेन उत्पादक जीवाणु मीथेन जल एवं कार्बनडाईऑक्साइड आदि बनाते हैं जो बायोगैस के रूप में उपलब्ध होती है । इस प्रक्रिया में मेथनोबैक्टरीयम(Methanobactarium), मेथनोकॉकस(Methanococcus), मीथेनोंब्रीवीबैक्टर (Methanobrevibacter) की कुछ प्रजातियां एवं मीथेनोसर्सिना(Methanosarcina) की अहम् भूमिका होती है । ये जीवाणु हाइड्रोजन एवं फार्मेट का उपयोग करते हैं एवं मीथेन उत्पादन करते हैं । कुछ जीवाणु एसीटेट व मीथेनॉल का प्रयोग करते हैं ।

$$4HCOOH \rightarrow CH_3 + CO_2 + H_2O$$

फार्मिक अम्ल मीथेन

$$CH_3COOH \rightarrow CH_4 + CO_2$$

एसीटेट

कुछ जीवाणुओं में कार्बनमोनोऑक्साइड एवं हाइड्रोजन से मीथेन बनती है ।

$$CO + H_2O \rightarrow CO_2 + H_2$$

$$CO_2 + 4H_2 \rightarrow CH_4 + 4H_2O$$

अच्छा कम्पोस्ट एवं बायो गैस उत्पादन दर अधिक हो इसके लिए मिश्रण में 50-60% जल, कार्बन एवं नाइट्रोजन अनुपात लगभग 25 : 1, pH 6-8 होना चाहिये । प्रारम्भ में मिश्रण को किसी अन्य बायोगैस संयंत्र के मिश्रण के द्वारा संरोपित किया जाता है । अवायवीय परिस्थिति को बनाये रखने के लिए संयंत्र वायुरोधी होने चाहिये ।

7.5 तरल अपशिष्ट प्रबन्धन (Sewage Management):

तरल अपशिष्ट मनुष्य के विभिन्न दैनिक एवं अन्य क्रियाकलापों के फलस्वरूप निर्मित होता है । इसमें मनुष्य द्वारा उपयोग के बाद वाहित जल, मलमूत्र के अतिरिक्त विभिन्न रासायनिक एवं कृषि अथवा जैवमास आधारित उद्योगों से उत्सर्जित अपशिष्ट भी होते हैं जो जल में विसर्जित कर दिये जाते हैं । उसमें 95% जल होता है जिसमें अनेक ठोस एवं कार्बनिक पदार्थ निलंबित (suspended) होते हैं तथा अनेक अकार्बनिक एवं कार्बनिक पदार्थ आयन अवस्था में भी होते हैं । इनके अतिरिक्त इसमें अनेक सूक्ष्मजीव भी होते हैं । सामान्यतः प्राकृतिक जलाशयों (नदी, झील, प्राकृतिक तालाब आदि) में जल प्रबन्धन एवं शुद्धीकरण की प्रवृत्ति अंतर्निहित होती है तथा उनका जल स्वतः ही साफ होता रहता है । कार्बनिक पदार्थों का उपभोग परपोषी जीव करते हैं तथा उनकी मृत्यु के पश्चात् सूक्ष्मजीवों द्वारा फिर से लवण आदि पादपों के उपभोग के लिए उपलब्ध हो जाते है, किंतु प्रदूषित जल में ऐसा नहीं होता ।

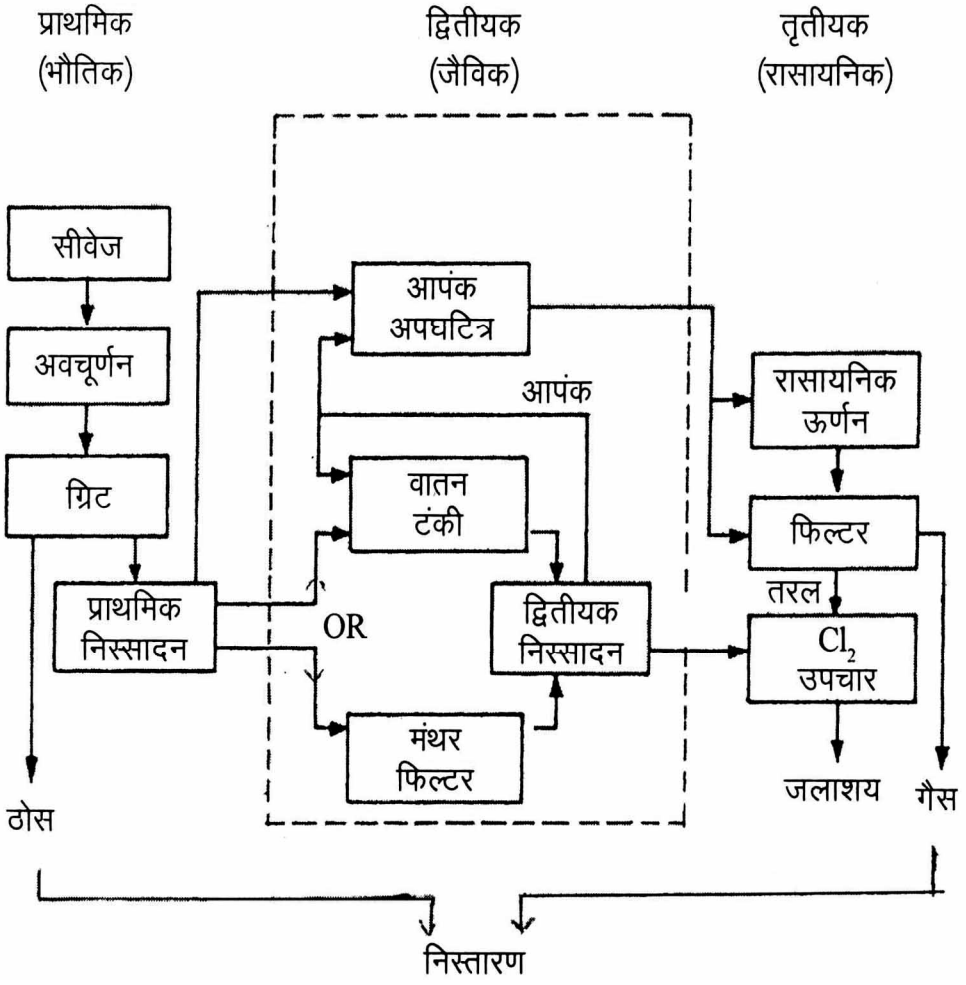

चित्र 7.4 तरल अपशिष्ट के प्रबन्धन के विभिन्न चरण

प्रदूषित जल तथा तरल अपशिष्ट में कार्बनिक एवं अन्य पदार्थों एवं सूक्ष्मजीवों की उपस्थिति के कारण जल की जैविक ऑक्सीजन आवश्यकता (biological oxygen demand) बढ़ जाती है । यह O_2 की वह मात्रा है जो सूक्ष्मजीवों द्वारा जैविक ऑक्सीकरण हेतु जल की प्रति इकाई आयतन के लिए आवश्यक होती है । यह सीधे-सीधे जल में कार्बनिक अपशिष्ट की मात्रा पर निर्भर करती है अत: अपशिष्ट की मात्रा के साथ BOD स्तर भी बढ़ जाता है तथा जल में विलेय ऑक्सीजन की मात्रा कम हो जाती है । अत: BOD का स्तर जल में अपशिष्ट की मात्रा का मापक माना जाता है ।

प्राथमिक, द्वितीयक एवं तृतीयक उपचार (Primary, secondary and tertiary treatments)

तरल अपशिष्ट के बृहद् स्तर पर प्रबन्धन में मुख्यत: तीन स्तरों पर उपचार किया जाता है - प्राथमिक, द्वितीयक एवं तृतीयक उपचार । **प्राथमिक उपचार** में मुख्यत: अविलेय एवं निलंबित कणों को भौतिक विधि से अलग किया जाता है । **द्वितीयक उपचार** सूक्ष्मजैविक उपचार है इसमें सूक्ष्मजीवों की सहायता से जल में उपस्थित कार्बनिक पदार्थों का अपघटन करवाया जाता है । **तृतीयक उपचार** में जल में उपस्थित अकार्बनिक पदार्थों को रासायनिक उपचार द्वारा अलग किया जाता है । इसी स्तर पर जल में उपस्थित हानिकारक परजीवी सूक्ष्मजीवों के लिए भी उपचार किया जाता है । यहां पर संक्षिप्त में इनका विवरण दिया जा रहा है ।

7.5.1 प्राथमिक उपचार (Primary treatment)

इस स्तर पर भौतिक उपचार होता है । वाहित मल एवं अपशिष्ट (Sewage) छलनी (Screens) अथवा विपाश (traps) से गुजरता है तथा मथन युक्ति। (skimming device) जैसे एलूमिनियम सल्फेट अथवा अन्य से भी उपचारित किया जाता है । फिर जल को नि:सादी टंकी (settling tank) में रखा जाता है । सीवेज में अधिकांश कार्बनिक पदार्थों को निस्सादन द्वारा जल में से हटाया जाता है, इसका खनिजन (mineralization) नहीं होता । इससे जल में उपस्थित छोटे-बड़े पिंड, मोटी रेत (grit) ऊपर तैरती मलफेन (scum) एवं ग्रीस आदि हटा दिये जाते हैं । इस प्रकार जल में कणीकीय रूप में उपस्थित लगभग 20-30% कार्बनिक अंश यहां पर हटा दिया जाता है । ये पदार्थ या तो टैंक की तली में अथवा ऊपर मलफेन के रूप में अलग होते हैं । उन्हें निकाल कर भूमि भराव अथवा कम्पोस्टिंग के लिए भेज दिया जाता है तथा तरल पदार्थ दूषित जल को द्वितीयक उपचार के लिये भेज दिया जाता है ।

7.5.2 द्वितीयक उपचार (Secondary Treatment)

द्वितीयक उपचार के दौरान जल में घुले हुए कार्बनिक पदार्थों का कुछ हद तक खनिजन होता है किन्तु अधिकांश अंश विलेय अवस्था से विलग किये जा सकने लायक ठोस में बदल दिया जाता है । यह चरण मुख्यत: सूक्ष्मजीवों की सक्रियता पर आधारित है । इस चरण में BOD में लगभग 90-95% गिरावट आती है तथा अनेक रोगकारक भी नष्ट हो जाते हैं । सूक्ष्मजीवों द्वारा वायवीय अथवा अवायवीय अपघटन किया जा सकता है । द्वितीयक उपचार में निम्न विधियां उपयोग की जाती है -

(A) मंथर फिल्टर (Trickling Filters)

मंथर फिल्टर का उपयोग वायवीय सीवेज उपचार का सरल एवं अपेक्षाकृत सस्ता तरीका है । प्राथमिक स्तर पर उपचारित जल को गोल घूमते हुए सेक्त्र अथवा स्टिंकलर (sprinkler) द्वारा सरंध्र स्तर (porous bed) पर छिड़का जाता है तथा तली (bottom) से जल को एकत्रित किया जाता है । सरंध्र स्तर में उपस्थित पदार्थ पर चिकनी परत होती है जिसमें अनेक सूक्ष्मजीव यथा जीवाणु कवक, सूत्रकृमि एवं प्रोटोजोआ आदि होते हैं ।

जीवाणुओं में जूग्लीया रैमीगैरा (Zooglea ramigera) एवं उनके समान जीवाणु होते हैं जो श्लेष्मी पदार्थ का स्त्रवण करते हैं । इनके अतिरिक्त इस श्लेष्मी चिकनी परत में बेगियाटोआ एल्बा (Beggiatoa alba), स्पैरोटिलस नेटेन्स (Spaerotilus natans) तथा सूडोमोनास, एक्रोमोबैक्टर(Pseudomonas achromobacter, Nocardia and Flavibacterium) की कुछ प्रजातियां सम्मिलित है । श्लेष्मी आवरण की भीतरी ओर काली परत में (Desulfovibrio) प्रजातियां होती है जिनके द्वारा विमुक्त हाइड्रोजन सल्फाइड की लोहे के साथ अभिक्रिया से फैरस सल्फाइड निर्माण के कारण यह परत काली दिखाई देती है । सीवेज जल में इन सूक्ष्मजीवों के लिए पर्याप्त पोषण होता है अत: ये सूक्ष्मजीव स्थायी परत बनाते हैं । जब परत इतनी मोटी हो जाती है कि पोषक तत्व भीतर तक नहीं जा पाते तब ये कोशिकाएं मृत होने लगती हैं तथा चिकनी परत हटने लगती है जिसे नि:सादन के द्वारा अलग किया जा सकता है । इन सूक्ष्मजीवों को ऑक्सीजन की सप्लाई इसमें उपस्थित सरंध्री आधार के द्वारा ही होती है ।

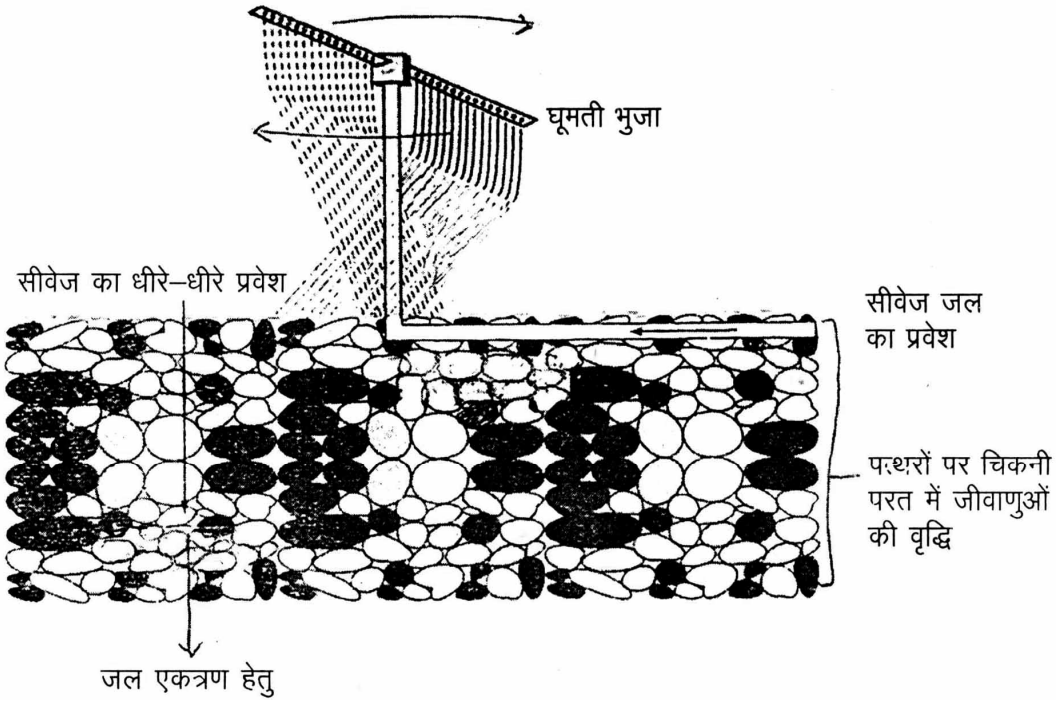

चित्र 7.5 : मंथर फिल्टर

(B) सक्रियित आपंक (Activated Sludge)

यह वाहित मलयुक्त जल की वायवीय उपचार विधि है जो सामान्यत: उपयोग की जाती है । इसमें निस्सादन टंकी से जल को वातन टंकी (aeration tank) में भेजा जाता है जहां यांत्रिक विडोलक (mechanical stirrer) की सहायता से अथवा बलपूर्वक अन्त:क्षेपण (injection) के द्वारा वायु जल में प्रवाहित की जाती है । अत्यधिक तीव्र वातन के कारण जल में उपस्थित महीन निलंबित एव कोलाइडी कण एकत्रित हो जाते हैं तथा उनका ऊर्णन (flocculation) हो जाता है । इसे द्वितीयक निस्सादन टंकी में कुछ समय निस्सादन के लिए छोड़ दिया जाता है । यहां से सक्रियित आपंक को फिर से प्राथमिक निस्सादन टंकी एवं वातक टंकी में भेजा जाता है । इससे अधिक ऑक्सीजन युक्त जल मिलने से सूक्ष्मजीवों की तीव्र गति से वृद्धि तथा कार्बनिक पदार्थों का उपयोग होता है सक्रियित आपंक में अनेक ग्राम अग्राही जीवाणु (Achromobacter), (Enterobacter), (Escherichia), (Pseudomonas) आदि मुख्य है । इस प्रक्रिया को बार-बार दोहराने से जल की BOD प्रारम्भिक जल नमूने की अपेक्षा 10-15% कम हो जाती है । वातन टंकी में धीरे-धीरे कार्बनिक पदार्थों का खनिजन (mineralization) हो जाता है ।

सक्रियित आपंक उपचार से अनेक लाभ है - (i) BOD में काफी नमी, (ii) निलंबित कणों में कमी, (iii) अनेक आंत्र परजीवियों (intestinal pathogens) जैसे सालमोनैला(Salmonella), शिगैला(Shigella) एवं इर्शेरिचिया कोलाई (E.coli) की संख्या में कमी (लगभग 90%) तथा (vi) अपेक्षाकृत कम भूमि की आवश्यकता ।

सक्रियित आपंक प्रणाली/विधि अधिक दक्ष एवं लचीली है तथा वाहित मल की सांद्रता तथा मात्रा में लगातार परिवर्तन को वहन कर सकती है ।

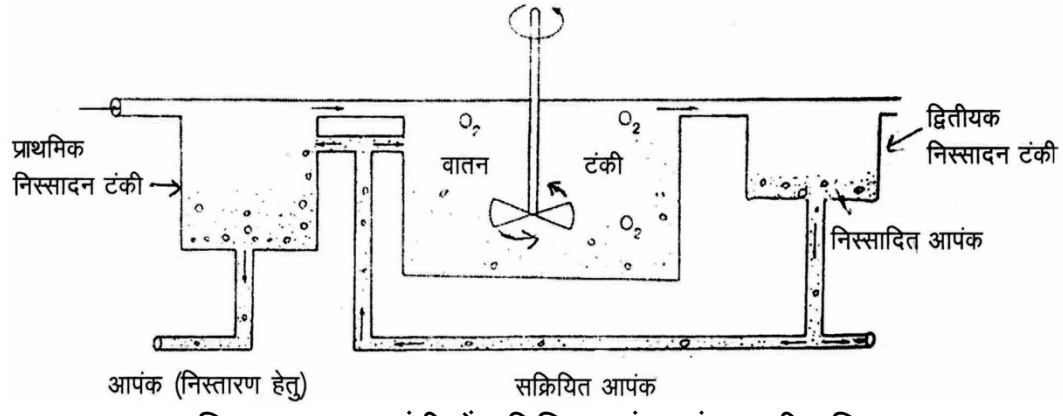

चित्र 7.8 : वातन टंकी में सक्रियित आपंक एवं जल की गति

(C) ऑक्सीकरण ताल अथवा ऑक्सीकरण खाई (Oxidation Pond and Oxidation Ditch)

ऑक्सीकरण ताल अथवा खाई जल के शुद्धीकरण के लिए उपयोगी कम लागत की विधि है जिसमें सूक्ष्मजीव एवं शैवाल आदि बायोफिल्म की अपेक्षा जल में निलंबित कणों के रूप में वृद्धि करते हैं । इस विधि का उपयोग अधिकांशत: ग्रामीण क्षेत्रों तथा औद्योगिक क्षेत्रों में किया जाता है । परपोषित अपघटनकारी जीवाणु जल में उपस्थित कार्बनिक पदार्थों का उपयोग एवं अपघटन करते हैं जिससे शेवालादि पोषण प्राप्त करते हैं । कार्बनिक पदार्थों का ऑक्सीकरण वायुमंडल से जल में विसरित O_2 तथा शैवालों से विमुक्त O_2 द्वारा होता है अत: वे ताल अपेक्षाकृत उथले व चौड़े

होते हैं । इनमें सामान्यत: क्लोरैलार सेनेडेत्मस (chlorella Scenedesmus) की कुछ प्रजातियां तथा (Spirulina Platensis) वृद्धि करता है । इस उपचार विधि पर पर्यावरण विशेषत: तापमान परिवर्तन का काफी प्रभाव पड़ता है अत: यह विधि मुख्यत: गर्म प्रदेशों में ही प्रयोग की जाती है ।

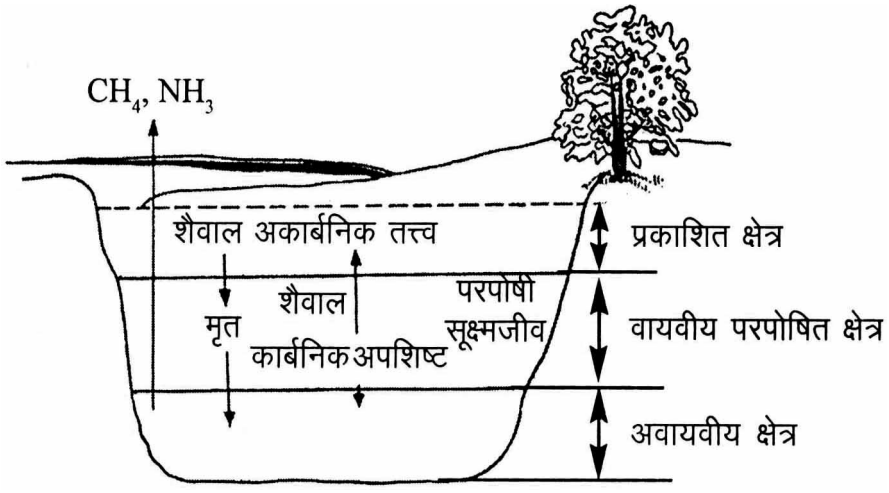

चित्र 7.7 : ऑक्सीकरण ताल

7.5.3 तृतीयक उपचार (Tertiary Treatment)

द्वितीयक उपचार के फलस्वरूप लगभग सभी कार्बनिक तत्त्वों का जैविक अपघटन हो जाता है । तृतीयक उपचार में जैव अनिम्नीकरणीय (non-biodegradable) कार्बनिक घटकों एवं अकार्बनिक पदार्थों को रासायनिक उपचार द्वारा हटाया जाता है । इसमें भारी धात्विक तत्वों के लवण, नाइट्रोजन एवं फास्फोरस के लवण आदि शामिल है । जल में उपस्थित घटकों के अनुसार उचित उपचार दिया जाता है । फास्फोरस को चूने के उपयोग द्वारा कैल्सियम फास्फेट के रूप में अवक्षेपित किया जाता है । कार्बनिक प्रदूषक तत्वों के लिए सक्रियित कार्बन फिल्टर का उपयोग किया जाता है । अमोनिया को उच्च प्राप्त पर अमोनिया के वाष्पीकरण द्वारा अथवा हाइपोक्लोरस अस्त उपचार द्वारा हटाया जा सकता है । इसके अतिरिक्त भारी धात्विक आयनों के लिए भी उपचार किया जाता है । तृतीयक उपचार अत्यधिक व्ययकारी होता है अत: जरूरी होने पर ही इसका उपयोग होता है ।

अंत में जल को पुन: उपभोग करने लायक बनाने के लिए रोगकारक जीवों को नष्ट करना आवश्यक होता है जो क्लोरीन गैस (Cl_2) तथा कैल्शियम अथवा सोडियम हाइपोक्लोराइट [$Ca(OCl)_2$ अथवा NaOCl] षष्ठ०ए11 द्वारा किया जाता है । ये जल के साथ मिलकर हाइपोक्लोरस अम्ल (HOCl) बनाते हैं जो तीव्र ऑक्सीकारक होने के कारण सूक्ष्मजीवों को नष्ट कर देता है ।

बोध प्रश्न

1. निम्न में से कौन सा उपचार रासायनिक उपचार नहीं है ?

   (A) तापाशन (B) दहन

(C) गैसीकरण (D) शर्करीकरण

2. निम्न में से कौनसा विकर सेलुलेज का घटक नहीं है ?

(A) एन्डोग्लूकानेज (B) एक्सोग्लूकानेज

(C) एमाइलेज (D) सेलोबायेज

3. सेलुलोज के जल अपघटन से प्राप्त होते है -

(A) केवल ग्लूकोज (B) गैलेक्टोज एवं ग्लूकोज

(C) केवल फ्रक्टोज़ (D) मैनोज एवं ग्लूकोज

4. अधिक बायोगैस एवं कम्पोस्ट उत्पादन के लिए मिश्रण में कार्बन नाइट्रोजन अनुपात कितना होना चाहिये ।

(A) 1 : 1 (B) 3 : 1

(C) 10 : 1 (D) 25 : 1

5. बायो गैस में कौन-कौन सी गैसें होती है ?

(A) CH_4, CO_2, O_2, H_2 (B) CH_4, CO_2, N_2, H_2

(C) CH_4, N_2, CO_2, O_2 (D) CH_4, CO_2, H_2

6. ऊर्णन (flocculation) प्रक्रिया किस में होती है ?

(A) निस्सादन टंकी में (B) वातन टंकी में

(C) तृतीयक उपचार प्रक्रिया में (D) उपरोक्त सभी में

6. मंथर फिल्टर (trickling filters) में काली परत किसके कारण होती है?

(A) एस्परर्जिलस (B) शैवाल

(C) डीसल्फोविब्रियो (D) उपरोक्त सभी

7. रोगकारक आंत्र परजीवियों की संख्या किरन प्रक्रिया में कम होती है?

(A) सक्रियित आपंक विधि (B) प्राथमिक उपचार

(C) मंथर फिल्टर विधि (D) निस्सादन टंकी में

रिक्त स्थान भरें / एक शब्द बतायें / सत्य / असत्य बतायें -

9. पृथ्वी पर सभी प्रकार के उत्सर्जन हेतु एकमात्र मनुष्य ही उत्तरदायी है । सत्य / असत्य

10. कृषि एवं घरेलू अपशिष्ट में मुख्य.....पदार्थ होते हैं ।

11. अपशिष्ट पदार्थों का पुनर्चक्रण एक प्रकार का.....उपचार है ।

12. .....भराव से कीट एवं रोगकारकों की प्रजनन समस्या नहीं होती ।

13. उच्च ताप पर कार्बनिक अपशिष्ट का अवायवीय अपघटन क्या कहलाता है?

14. विभिन्न कार्बनिक पदार्थों को सूक्ष्मजीवों की मदद से शर्करा में परिवर्तन.....कहलाता है ।

15. शर्करीकरण करने वाले कुछ सूक्ष्मजीवों के नाम बताइये ।

16. कम्पोस्टिंग में उपयोगी कुछ सूक्ष्मजीवों के नाम बताइये ।

17. कम्पोस्टिंग में उपयोगी कुछ सूक्ष्मजीवों के नाम बताइये ।
18. बायोगैस के अधिक उत्पादन के लिए मिश्रण की क्या विशेषता आवश्यक है?
19. मंथर फिल्टर में छिड़का गया जल.....स्तर में से होता हुआ.....में एकत्र होता है ।
20. सक्रियित आपंक में.....जीवाणुओं का आधिक्य होता है ।
21. तृतीयक उपचार में....., ... अथवा ..... का उपयोग किया जाता है ।

7.6 सारांश (Summary) :

अपशिष्ट उत्सर्जन मनुष्य एवं अन्य सजीवों के विभिन्न क्रिया कलापों के फलस्वरूप होने वाली आवश्यक हानिकारक प्रक्रिया है । मानवीय आधुनिक गतिविधियों जैसे औद्योगीकरण, विलासितापूर्ण जीवन के अतिरिक्त कृषि एवं प्राकृतिक गतिविधियों से भी अपशिष्ट उत्सर्जन होता है । स्त्रोत के अनुसार अपशिष्ट के संघटन में भी भिन्नता होती है । कृषि एवं कृषि आधारित उद्योगों में तथा घरेलू एवं म्यूनिसिपल अपशिष्ट में कार्बनिक पदार्थों का बाहुल्य होता है किन्तु रासायनिक उद्योगों से उत्सर्जित अवशिष्टों में रासायनिक पदार्थों का बाहुल्य होता है ।

अपशिष्ट मुख्यत: दो प्रकार के होते हैं - ठोस अपशिष्ट एवं तरल अपशिष्ट । इन सभी में जैव निम्नीकरणीय एवं अनिम्नीकरणीय दो प्रकार के घटक होते हैं ।

अपशिष्ट प्रबन्धन में अपशिष्ट को मुख्यत: तीन प्रकार से उपचारित किया जाता है । प्राथमिक अर्थात् भौतिक उपचार, द्वितीयक अर्थात् सूक्ष्मजैविक उपचार तथा तृतीयक अर्थात् रासायनिक उपचार । प्राथमिक उपचार में ठोस एवं निलंबित पदार्थों को तरल से अलग किया जाता है । ठोस अपशिष्ट के प्राथमिक उपचार में भूमि भराव एवं पुन चक्रण किये जा सकने वाले पदार्थों जैसे धातु कांच, प्लास्टिक आदि को अलग करना शामिल है । द्वितीयक उपचार में वायवीय एवं अवायवीय सूक्ष्मजीवों की प्रक्रिया के फलस्वरूप अनेक पदार्थों का अपघटन होता है । ठोस अपशिष्ट में कम्पोस्टिंग तथा बायोगैस उत्पादन इस के उदाहरण है । विघटन के पश्चात् बचा अपशिष्ट कम्पोस्ट खाद के रूप में उपयोग किया जाता है । बायोगैस संयंत्र में मीथेन उत्पादक जीवाणु एवं अन्य जीवाणुओं की सक्रियता से उत्पन्न गैस ईंधन के रूप में एवं अपघटन के पश्चात् शेष बचा आपंक खाद के रूप में उपयोगी होता है । तरल अपशिष्ट के प्राथमिक उपचार में तरल से ठोस एवं कणिकीय पदार्थों को अलग किया जाता है । इसके लिए छलनी, विपाश मथन युक्ति उपयोगी है फिर निस्सादन द्वारा अधिकांश ठोस अंश अलग हो जाता है । द्वितीयक उपचार में सूक्ष्मजीवों द्वारा अपघटन होता है । इसमें विभिन्न विधियों जैसे मंथर फिल्टर, सक्रियित आपंक एवं ऑक्सीकरण टैंक का उपयोग होता है इन सभी में वायवीय एवं अवायवीय सूक्ष्मजीव कार्बनिक पदार्थों का उपयोग करते हैं । इससे निलंबित कण श्लेष्मी पदार्थ से संयोजित होकर आपंक बनाते हैं जिसे अलग किया जा सकता है । इससे 9०० स्तर में काफी गिरावट आती है । अंत में आवश्यकता होने पर तृतीयक उपचार द्वारा अनिम्नीकरण कार्बनिक पदार्थों, भारी तत्वों जैसे लैड, सीसा आदि एवं अन्य अकार्बनिक तत्वों मुख्यत: (फास्फोरस एवं नाइट्रोजन) को अलग किया जाता है । यह प्रक्रिया अधिक व्ययकारी है । पीने योग्य पानी प्राप्त करने के लिए

जल को क्लोरीन अथवा हाइपोक्लोराइट से उपचारित किया जाता है जिससे रोगाणु नष्ट हो जाते हैं ।

7.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. D 2. C 3. A 4. D
5. B 6. B 7. C 8. A
9. असत्य 10. जैव निम्नीकरणीय कार्बनिक 11. भौतिक
12. स्वच्छता भूमि 13. तापांशन 14. शर्करीकरण 15. ए बेसिलस
16. एस्पर्जिलस फ्यूमिगेटस टोरुला जीमोट्राइकम बेसिलस एवं क्लास्ट्रीडियम की कुछ जातियाँ
17. मीथेनोजन जीवाणु - मीथेनोबेक्टीरियम मीथेनोकॉकस आदि
18. 50-60% जल, C: N अनुपात 25: 1, pH 6.8
19. संरध्र, तली
20. ग्राम अग्राही
21. चूना, सक्रियित कार्बन फिल्टर, क्लोरीन

7.8 अभ्यासार्थ प्रश्न (Exercise Questions):

1. अपशिष्ट शब्द से क्या तात्पर्य है?
2. विभिन्न स्त्रोतों से प्राप्त अपशिष्ट किन मुख्य समूहों में बांटा जा सकता है?
3. जैविक अपघटन की दृष्टि से अपशिष्ट को किन वर्गों में बांटा जा सकता है?
4. स्वच्छता भूमि भराव से आप क्या समझते है?
5. ठोस अपशिष्ट के रासायनिक उपचार की विधियों के नाम बताइये ।
6. कम्पोस्टिंग से क्या लाभ है?
7. बायोगैस संयंत्र को अधिक उपयोगी क्यों माना जाता है 7
8. कुछ मीथेन उत्पादक जीवाणुओं के नाम बताइये ।
9. प्राथमिक, द्वितीयक एवं तृतीयक उपचार में क्या अंतर है
10. म्यूनिसिपल तरल अपशिष्ट के द्वितीयक उपचार की कुछ विधियों के नाम बताइये ।
11. मंथर फिल्टर में वृद्धिकारक कुछ सूक्ष्मजीवों के नाम बताइये ।
12. सक्रियित आपंक विधि के लाभ बताइये ।
13. ऑक्सीकरण ताल में ऑक्सीजन का स्त्रोत क्या होता है '
14. तृतीयक उपचार में दो मुख्य उपचारों के बारे में बताइये ।
15. ठोस अपशिष्ट प्रबंधन पर एक लेख लिखिये ।
16. तरल अपशिष्ट प्रबंधन के विषय में विस्तार से समझाइये ।
17. निम्न में से किन्हीं तीन पर टिप्पणी लिखिये -

(i) ऑक्सीकरण ताल

(ii) सक्रियित आपंक

(iii) मंथर फिल्टर

(iv) गैसीकरण एवं कम्पोस्टिंग

(v) बायो गैस

(vi) तृतीयक उपचार

(vii) भूमि भराव

18. ठोस एवं तरल अपशिष्ट के जैविक (biological) प्रबन्धन के बारे में बताइये (द्वितीयक उपचार के बारे में बताइये) ।

19. अपशिष्ट के विभिन्न स्त्रोत एवं उनके वर्गीकरण के बारे मे बताइये ।

7.9 शब्दावली (Glossary):

अपशिष्ट	- Waste
जैवनिम्नीकरणीय	- Biodegradable
शीरा	- Molasses
निस्तारण	- Disposal
स्वच्छता भूमिभराव	-Sanitary landfill
तापांशन	-Pyrolysis
गैसीकरण	- Gasification
शर्करीकरण	- Saccharification
कम्पोस्टिंग	- Compositing
मीथेनोजनिक जीवाणु	- Methanogenic bacteria
बायोगैस	-Biogas
खनिजन	- Mindralization
निस्सादन	- Setting

7.10 संदर्भ ग्रन्थ (Reference Books):

1. शर्मा, माइक्रोबायलॉजी, रस्तोगी पब्लिकेशन्स, मेरठ ।
2. दुबे एवं महेश्वरी, माइक्रोबायलॉजी, एस. चांद एण्ड कम्पनी लिमिटेड, नई दिल्ली ।
3. एटलस एवं बर्था, माइक्रोबियल इकोलोजी पीयरसन एजुकेशन, नई दिल्ली ।
4. पुरोहित, माइक्रोबायलॉजी, एग्रोबायोस, बीकानेर ।
5. पवार एवं डागीनावाला जनरल माइक्रोबायलॉजी, हिमालय पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली ।

इकाई 8

चिकित्सकीय कारकों का सूक्ष्मजैविक उत्पादन

(Microbial Production of Pharmaceutical Products)

इकाई की रूपरेखा

8.0 उद्देश्य

8.1 प्रस्तावना

8.2 भेषजीक

8.2.1 इन्टरफेरोन क्या हैं?

8.2.2 मानव वृद्धि हार्मोन

8.3 विकर (Enzyme)

8.3.1 सिस्टिक फाइब्रोसिस के विरूद्ध विकर ०षैंद्रप्त3० 1 व एलिजनेट लायऐज

8.4 एकक्लोनीय प्रतिकाय की परिभाषा एवं चिकित्सकीय महत्ता

8.4.1 चिकित्सकीय कारक के रूप में एकक्लोनी प्रतिकायों का उपयोग

8.4.2 ई. कोलाई में प्रतिकायों का उत्पादन

8.4.3 एच.आई.वी. चिकित्सकीय कारक

8.5 सारांश

8.6 बोध प्रश्नों के उत्तर

8.7 अभ्यासार्थ प्रश्न

8.8 शब्दावली

8.9 संदर्भ ग्रंथ

8.0 उद्देश्य (Objective):

इस अध्याय के अन्तर्गत सूक्ष्मजीवों के द्वारा उत्पन्न किये जाने वाले विभिन्न चिकित्सकीय कारकों का वर्णन प्रस्तुत किया गया है । साथ ही विकरों का रोगों के उपचार हेतु उपयोगिता को प्रदर्शित किया गया है । इस अध्याय में आप निम्न बिन्दुओं से अवगत होंगे -

- इन्टरफेरोन का उत्पादन, शुद्धिकरण, अभियांत्रिकी व चिकित्सकीय उपयोग ।
- मानव वृद्धि हॉर्मोन की अभियांत्रिकी व इसकी महत्ता ।
- विकरो जैसे - DNAase एवं ऐल्जिनेट लायऐट का सिस्टिक फाइब्रोसिस के उपचार हेतु उपयोग ।
- एकक्लोनीय प्रतिकायों का चिकित्सकीय उपयोग ।
- ई. कोलाई तंत्र का प्रतिकायों के उत्पादन हेतु उपयोग ।

8.1 प्रस्तावना (Introduction):

सूक्ष्मजीवों द्वारा स्त्रावित प्रतिजैविकों (antibiotics) का चिकित्सा के क्षेत्र में सबसे महत्वपूर्ण स्थान है एवं इनके अभाव में सूक्ष्मजीवों जैसे कि जीवाणु, कवक, विषाणु इत्यादि के संक्रमण को रोकना अत्यन्त ही कठिन अथवा असंभव कार्य है । प्रतिजैविकों के अलावा सूक्ष्मजीवों की सहायता से अन्य महत्वपूर्ण चिकित्सकीय कारक जैसे की इंटरफेरोन (interferon), विकर (enzyme), एकक्लोनी प्रतिकाय (monoclonal antibodies), टीके (vaccines) इत्यादि का उत्पादन भी किया जाता है । चिकित्सकीय कारकों के विकास में पुर्नयोजी DNA तकनीक (recombinant DNA technology) का महत्वपूर्ण योगदान रहा है । पुन: संयोजन जैव तकनीकी के आविष्कार से पहले ज्यादातर भैषजिक बहुत कम भैषजिकों मात्रा में उपलब्ध होते थे, एवं इनकी कीमत भी बहुत ज्यादा थी किन्तु जैव प्रौद्योगिकी के प्रयोग से इन भैषजिकों का बड़े स्तर पर उत्पादन संभव हो सका । इन उत्पादों की लागत भी कम थी एवं इनकी क्रियाविधि (mechanism) का भी सही तरीके से अध्ययन किया जा सकता था । जैव प्रौद्योगिकी तकनीकों की सहायता से लगभग 300 विभिन्न भैषजिकों का उत्पादन किया जा चुका है ।

8.2 भैषजिक उत्पाद (Pharmaceutical Product):

8.2.1 इंटरफेरान क्या है (What are interferons)

इंटरफेरोन विषाणुजनित संक्रमण के समय सबसे पहले सक्रिय होने वाले भैषजिक कारक है । यह एक प्रकार के परपोषी विशिष्ट (host specific), कोशिकीय प्रोटीन (cellular protein) होते हैं । इनकी खोज सर्वप्रथम 1957 में इसाक्स एवं लिण्डरमेन (Issacs and Linderman) ने की थी । इसाक्स ने इसका नाम इंटरफेरोन इसलिए रखा क्योंकि यह विषाणु संक्रमण में दखल (interfere) करते है । यह 145 अमीनो अम्लों से बनी पेप्टाइड श्रृंखला होती है जिसका अणुभार 15000 डाल्टन होता है । यह साईटोकाईन (cytokine) प्रोटीन समूह की सदस्य होती है । इंटरफेरोन तीन प्रकार के होते हैं : IFNα, IFNβ एवं IFNγ । यह पोषक कोशिका की सतह पर पाये जाने वाले सतही ग्राही (surface receptors) से संलग्न होकर द्वितीयक प्रेषक (secondary messenger) को सक्रिय कर देते हैं जिसके कारण एक विशिष्ट प्रकार के प्रोटीन का निर्माण होता है । ये प्रोटीन्स विभिन्न प्रकार के विषाणु संक्रमण को रोकते हैं । इनमें से कुछ सतही ग्राही (surface receptor) का कार्य करते हैं जिनकी वजह से प्रतिरक्षी तंत्र (immune system) की कोशिका इस प्रकार की कोशिका को पहचान कर उन्हें नष्ट कर देती है । यह विषाणु के m-RNA संश्लेषण में बाधा डालती है जिसकी वजह से नये विषाणु जीनोम (viral genome) का उत्पादन नहीं हो पाता है । इंटरफेरान IFNα, IFNβ का व्युत्पन्न (derivation), ल्यूकोसाइट्स (leucocytes) एवं कनेक्टीव टीश्यू (connective tissue) के तंतुकोरक (fibroblast) से किया जाता है, एवं इनका संश्लेषण उन कोशिकाओं में होता है जिनमें विषाणुओं अथवा विषाणु RNA का संक्रमण हो चुका है । IFN का व्युत्पन्न प्रतिरक्षी कोशिकायों (immure

cells)से होता है एवं संश्लेषण वृद्विवर्धक कारकों (growth stimulating agents) की उपस्थिति की वजह से होता है । विभिन्न प्रकार के इंटरफेरोनस् के लक्षण (charactisties) सारणी 8.1 में इंगित है ।

सारणी 8.1 : इंटेरफेरोन के विशिष्ट लक्षण

क.सं.	लक्षण (Characteristics)	IFN α	IFN β	IFN γ
1.	प्रकार	16	-	-
2.	अमीनो अम्लों की संख्या	166-172	166	143-146
3.	घटक	मनोमर (components)	मनोमर(monomer)	डाईमर(dimer)
4.	आण्विक भार	20 KDa	26 KDa	17 KDa
5.	संश्लेषण	लिस्फोसाइट्स, मोनोसाईट्स माइक्रोफेजेस	फाइब्रोब्लास्ट्स कुछ उपकला कोशिकाएँ (some epithelial cells)	सक्रियT लिम्फोसाइट्स lymphocytes (activated T lymphocytes)
6.	जीन की उपस्थिति (location of gene)	गुणसूत्र 9	गुणसूत्र 9	गुणसूत्र 9
7.	स्थायित्व	एसिड स्थायी	एसिड स्थायी	एसिड
8.	प्रकार	टाईप I	टाईप I	टाईप II
9.	उत्पादन का कारण	सूक्ष्मजीवों द्वारा संक्रमण, प्रतिरक्षी कोशिकाओं व विदेशी कोशिका की उपस्थिति	संक्रमण,	प्रतिरक्षी कोशिकाओं एवं विदेशी कोशिका की उपस्थिति ।
10.	जीन की संख्या	15 अविकल्पी जीन	1	1

(a) इंटरफेरोन के चिकित्सकीय उपयोग (Medical application of interferon)

इंटरफेरानस प्रतिरक्षी (immune) तंत्र को मांडुलित (modulate) करते हैं । इंटरफेरोन (IFNα) का उपयोग हेपेटाईटिस B (Hepatitis B) एवं पेपीलोमा विषाणु (Papilloma virus) के विरूद्ध किया जाता है एवं यह एम.एच. सी. (major histocompatibility complex MHC) की अभिव्यक्ति को प्रेरित करते हैं । इंटरफेरान्स का उपयोग रेबीज (Rabies), केन्सर (Cancer), अस्थमा (Asthma), आर्थराइटिस (Arthritis) आदि के उपचार में भी किया जाता है । इनका रोग निरोधी कारक की तरह उपयोग अत्यन्त महत्वपूर्ण है ।

(b) इंटरफेरान्स का उत्पादन (Production of interferons)

1970 से पहले एक मानव इंटरफेरोन (human interferons) का एक मात्र स्त्रोत (source) श्वेत रक्त कणिकायें (WBC_s) थी । इस कारण इसकी कीमत काफी अधिक थी । 1970 के बाद जैव प्रौद्योगिकी की सहायता से इंटरफेरान्स का उत्पादन स्तनधारी (mammalian) कोशिका के द्वारा किया जाने लगा । यह विशिष्ट प्रकार की कोशिकायें मानव लिम्फोब्लास्टोइड कोशिका समूह (human lymphoblastoid cell line)में रोन्डाई विषाणु (Sendai virus)के संक्रमण से तैयार की जाती है । इन्हें नाम तथा नामत्ल्यूरा कोशिका समूह (Namlura cell line)कहा जाता है । इंटरफेरानस के उत्पादन हेतु इन कोशिकाओं को बहुत बड़े बायोरिएक्टर / फरमेन्टर (bioreactor/ fermentor) में संवर्धन किया जाता है एवं संवर्धन माध्यम में से interferon IFα का निष्कर्षण किया जाता है ।

IFN-γ के उत्पादन के लिए टी-लिस्फोसाइट्स (टी-lymphocytes) को प्रतिरक्षी जैसे की स्टेफाईलोकोकल एन्टेरोटोक्सिन ए (staphylococcal enterotoxin A) के द्वारा प्रेरीत किया जाता है । यह उत्प्रेरक कोशिकायें IFN~γ का स्त्राव करती है जिसे संवर्धन माध्यम से निष्कर्षित कर लिया जाता है । IFN-γ का उत्पादन बढ़ाने के लिए पुन: संयोजित स्तनधारी कोशिकाओं (recombinant mammalian cells) का उपयोग किया जाता है । इन पुन: संयोजित कोशिकाओं में इंटरफेरोन का जीन स्थानांतरित कर दिया जाता है । इस कार्य के लिये इंटरफेरोन cDNA का विलगन (isolation) किया जाता है ।

(c) इंटरफेरान cDNA का विलगन (Isolation of cDNA interferon)

1980 में गिलबर्ट एवं विसमान (Gilbert and Weisman) ने E। coli कोशिकाओं की सहायता से इंटरफेरान का सफलतापूर्वक उत्पादन किया । यह कार्य इंटरफेरान जीन (gene) के **cDNA** का विलगन कर cDNA समरूप (cDNA clones) बना कर किया गया । cDNA अथवा कापी DNA (copy DNA) mRNA अणु की सत्य कापी (true copy) होता है । cDNA की सहायता से किसी भी जीन को प्लाज्मिड द्वारा एक कोशिका से दूसरी कोशिका में स्थान्तरित कर रूपान्तरित कोशिकाओं (transform cells) का निर्माण किया जा सकता है । यह विशिष्ट कोशिकाएँ इच्छित जीन के उत्पाद (desired gene product) के उत्पादन के लिए काम ली जा सकती है । एक भली-भाँति परिचित (well characterized) c-DNA अणु को उपयुक्त वाहक (suitable vector) के साथ इस तरह संलग्न (insert) किया जाता है कि वह कोशिका के कार्यों में कोई बाधा नहीं डालता है । रूपान्तरित कोशिका जिसके प्लाज्मिड में mRNA' की cDNA कापी उपस्थित हो उसे cDNA समरूप (cDNA clone) कहा जाता है । c-DNA का उपयोग यूकेरिओटीक जीन (eukaryotic gene) की प्रोकेरियोटीक कोशिका (prokaryotic cell) में अभिव्यक्ति के समय अत्यन्त आवश्यक है ।

c-DNA का संश्लेषण करने के लिए mRNA को टेम्पलेट (template) की तरह प्रयोग में लिया जाता है । इसके लिए रिवर्स ट्रांसक्रिप्शन विकर (reverse transcription enzyme) की जरूरत होती है । यह विकर डीएनए पॉलीमरेज की तरह काम करता है एवं आर.एन.ए. से डीएनए.

का निर्माण करता है । इस कार्य के लिए इसे मुक्त 3'OH छोर (free 3'OH end) वाला प्राईमर चाहिए । इंटरफेरान के cDNA विलगन हेतु मानव ज्यूकोसाईट में से साईज फ्रेक्शनेटेड एम.आर.एन.ए. (size fractionated mRNA) को पृथक किया जाता है एवं इसे ई कोलाई के pBR 322 प्लाज्मिड की PSI साईट पर डाल (insert) दिया जाता है । इन रूपान्तरित ई कोलाई कोशिकाओं के फिर काफी सारे समरूप (clone) बनाये जाते हैं एवं इनका क्रूड इन्टरफेरान के साथ संकरण (hybridization) के लिए परीक्षण किया जाता है । इस संकरित मिश्रण (hybridization mixture)से cDNA का पृथक्करण कर इसको कोशिका मुक्त (cell free) प्रोटीन सश्लेषण सिस्टम (protein synthesis system) द्वारा ट्रांसलेशन किया जाता है एवं ट्रांसलेशन मिश्रण (translation mixture) का इंटरफेरोन एंटीवाइरल सक्रियता (interferon antiviral activity) के लिए परीक्षण (assay) किया जाता है । जिस मिश्रण में यह क्रिया पाई जाती है उसमें cDNA समरूप उपस्थित होते हैं ।

इस प्रक्रिया को दोहराने पर मानव इंटरफेरोन (human interferon) के cDNA के शुद्ध रूप (true form) को पृथक किया जाता है । इंटरफेरान के उत्पादन के लिए इन cDNA को ई कोलाई के अभिव्यक्ति वाहक (expression vector) में उपसमरूप (subclone) कर बड़ी मात्रा में इंटरफेरोन जीन की अभिव्यक्ति करवाई जा सकती है । 514 क्षारक युग्म (base pair) वाले मानव इंटरफेरोन जीन का सफलतापूर्वक ह:r कोलाई में संश्लेषण एवं समरूपण (cloning) किया जा चुका है । प्राकृतिक इंटरफेरोन (natural interferon) एवं rDNA तकनीक से उत्पादित इंटरफेरोंन एक दूसरे से शर्करा समूह (sugar group) की उपस्थिति से भिन्न होते हैं । प्राकृतिक इंटरफेरोंन में पॉलीपेप्टाइड श्रृंखला (polypeptide chain) में शर्करा समूह पाया जाता है किन्तु cDNA से बने इंटरफेरोन में यह अनुपस्थित होता है । इस कारण यह प्राकृतिक इंटरफेरोन के मुकाबले कम सक्रिय होता है ।

(d) मानव इंटरफेरान की अभियांत्रिकी (Engineering of human interferon)

इंटरफेरान्स तीन प्रकार के होते हैं । यह एक दूसरे से रासायनिक एवं संरचनात्मक (chemical and structural) रूप से भिन्न होते हैं । इनकी उत्पत्ति भी एक दूसरे से अलग प्रकार कई? होती है । इनकी प्रतिरोगजनकता (antiviral) विशिष्टता भी एक दूसरे से अलग होती है । इस कारण जीन अभियांत्रिकी (genetic engineering) द्वारा ऐसे इंटरफेरान बनाने की कोशिश की जा रही है जिसमें एक से ज्यादा इंटरफेरान्स के गुण उपस्थित हो । इस प्रकार के संकरित इंटरफेरोनस् (hybrid interferons) ज्यादा असरदार होंगे । इनके निर्माण हेतु एक दूसरे से मिलते जुलते (similar) जीनस की सक्रिय प्रदेश / प्रक्षेत्र (functional domains) को एक दूसरे के साथ संलग्न कर दिया जाता है एव इनको ई: कोलाई कोशिकाओं में स्थान्तरित कर इनकी अभिव्यक्ति (expression) करवायी जाती है । जीन उत्पाद (biological activity) अथवा प्रोटीन को संवर्धन माध्यम (culture media)से पृथक कर उसकी जैविक सक्रियता (biological activity) का अध्ययन किया जाता है । दो IFN एवं cDNA के DNA उपक्रम की तुलना (compare) करवाने पर यह देखा गया की इनमें दोनों में 60,92 एवं 150 स्थिति (positions)

पर प्रतिबन्ध साईट (restriction site) उपस्थित होती है । दोनों cDNA सूत्रों का इनकी सामान्य प्रतिबंधित साईट (common restriction)पर डाइजेशन (digestion)किया गया एवं दोनों DNA खण्ड (DNA fragment)को जोड़ने (ligate)पर काफी बड़ी मात्रा में वास्तविक जीन (original gene)की संकरण व्युत्पति (hybrid derivatives) मिली । इन संकर cDNA की सक्रियता (activity) मातृ DNA (parent DNA)से ज्यादा पाई गई । इसके अलावा, इन संकर इन्टरफेरान्स ने परीक्षण कोशिकाओं को 2'-5' ऑलिगोन्यूक्लियोटाइड सीन्थेटेज (oligonucleotide synthetase) नामक विकर के उत्पादन के लिए उत्प्रेरक (active)किया । यह विकर 2'-5' लिन्कड ओलीगोन्यूक्लिओटाइड का उत्पादन करती है जिससे एक सुप्त (latent) अन्तःकोशिकीय राइबोन्यूक्लिएज (cellular endoribonuclease)एन्जाइम का उपयोग होता है । यह विकर विषाणु एम.आर.एन.ए. को काटता (cleave) है । संकरित इन्टरफेरान्स से केन्सर के उपचार में भी सफलता मिली है ।

(e) इंटरफेरोन का शुद्धिकरण (Purification of interferon)

cDNA समरूप (cDNA clone) कोशिकाओं द्वारा उत्पादित इंटरफेरान को संवर्धन माध्यम से पृथक करने के लिए आयन विनिमय वर्णलेखी (ion exchange chromatography) या मीनरल चिलेट वर्णलेखी (mineral chelate chromatography), जैल फिल्ट्रेशन (gel filtration), उच्च दाब द्रव्य वर्णलेखी (HPLC), सामान्य अवस्था उच्च दाब द्रव्य वर्णलेखी (normal phase HPLC) एवं उत्क्रम अवस्था उच्च दाब द्रव्य वर्णलेखी (reverse phase HPLC) के संयुक्त (combined) उपयोग से 80,000 गुना तक शुद्धिकरण ([purification) किया जा सकता है ।

8.2.2 मानव वृद्धि हॉर्मोन (Human Growth Harmone) (HGH)

(a) **मानव वृद्धि हार्मोन की महत्ता**

मानव वृद्धि हार्मोन (Human growth harmone) एक प्रकार का अन्तस्त्रावी हार्मोन (endocrine hormone) है ।

मानव शरीर पर प्रभावशाली उपचयी (anabolic) एवं अपचयी (catabolic) क्रियाओं की वजह से इसको मानव शरीर का एक महत्वपूर्ण हार्मोन माना जाता है । इसे शरीर का मास्टर हार्मोन (master hormone)भी कहते हैं । यह बच्चों में वृद्धि एवं वयस्कों में उपापचयी क्रियाओं को नियंत्रित करता है । यह हार्मोन पिट्यूटरी ग्रंथि (pituitary gland) द्वारा स्त्रावित किया जाता है एवं रात्रि को सोते समय हाइपोथैलेमस जनित धनात्मक एव ऋणात्मक (positive and negative) संकेतों (signals) की अनुक्रिया में पल्स (pulse) में स्त्रावित (release) होता है । यह एक सहसंदेशवाहक (comessenger) IGF, की सहायता से शरीर के उत्तकों (tissues) हड्डियों (bones), उपास्थियों (cartilage), माँसपेशियों (muscles), चमड़ी (skin), यकृत (liver) एवं वृक्क (Kidney) की वृद्धि को नियंत्रित करता है । यह शरीर के विभिन्न अंगों में सामान्यतया संचरण (circulation) द्वारा पहुँचता है एवं लक्ष्य ऊतक (target tissue) के साथ

बंध कर अपना कार्य करता है । हॉर्मोन के ग्राही अणु (receptor molecule) पर बंधने से संकेत पारक्रमण (signal transduction) द्वारा जीन की अभिव्यक्ति का माडुलन (modulation) होता है । जिन बच्चों में इस हॉर्मोन की कमी होती है उनकी वृद्धि रूक जाती है । व्यस्कों में इसकी कमी के कारण कई प्रकार की परेशानियाँ जैसे कि मोटापा, थकान, अनिद्रा, कम स्मरणशक्ति, सान्द्रता (concentration) में कमी होना इत्यादि हो जाता है ।

मानव वृद्धि हॉर्मोन 191 अमीनों अम्लों की श्रृंखला से बना एक प्रोटीन है । इसमें 26 स्त्रावी अनुक्रम (secretory sequence) पाये जाते हैं । SDS (Somatropin Defficiency Syndrome) अथवा मानव वृद्धि हॉर्मोन की कमी एक आनुवांशिक दोष (genetic defect) है जो कि अप्रभावी जीन की आनुवांशिकता से होता है । यह भी माना जाता है कि SDS पिट्यूटरी अथवा हाइपोथैलेमस की बिमारी अथवा किसी सर्जरी (surgery) या विकीरण उपचार (radiation therapy) या फिर किसी चोट की वजह से भी हो सकती है ।

कुछ दशकों पहले इस बीमारी का कोई इलाज नहीं होता था । 1958 में मृत लोगों की पिट्यूटरी से निकाला गया हारमोन बच्चों में वृद्धि को बढ़ाने के लिए दिया जाने लगा । परन्तु इस तरह एकत्रित हॉर्मोन में क्रूटजफेल्डट जेकब रोग (cruetzfeldt Jakob Disease) के होने का खतरा होता था एव बहुत ज्यादा दानर्क्ता (doners) नहीं होने के कारण हॉर्मोन काफी कम मात्रा में उपलब्ध होता था । इन कारणों से वैज्ञानिकों ने हॉर्मोन के वैकल्पिक रूप (alternative form) की खोज शुरू की । 1985 में जेननटेक (Gentech) नामक कंपनी ने सर्वप्रथम जीन अभियांत्रिकी द्वारा मानव डीएनए. को सूक्ष्मजीवों में निवेश (insert) कर संश्लेषित HGH (synthetic HGH) का उत्पादन शुरू किया । इस कृत्रिम (synthetic) हॉर्मोन में 19। की बजाय 190 अमीनों अस्त थे । 1986 में एली एली लिली (Eli-liliy) ने 191 अमीनों अम्लों वाला हॉर्मोन तैयार कर लिया । जैव अभियांत्रिकी की सहायता से पुर्नयोगी मानव वृद्धि हॉर्मोन (recombinant human growth hormone) एक इंजेकान के रूप में बाजार में उपलब्ध होने लगा एवं 1996 में FDA ने व्यस्कों में इसके इस्तेमाल की आज्ञा जारी कर दी । आजकल उपलब्ध r-HGH (वास्तविक-पुर्नयोगी मानव वृद्धि हार्मोन) प्राकृतिक HGH का एक समान (identical) रूप है एवं बाजार में यह अंत:पेशीय अथवा उपत्वचीय (subcutaneous) इंजेमान के रूप में बेचा जाता है । चिकित्सकीय अध्ययन (clinical studies)से यह सिद्ध हो गया है की शरीर में HGH के प्रतिस्थापन (replacement) से बहुत से फायदे होते हैं जैसे कि शरीर के तनु शरीर भार (lean body mass) में वृद्धि, वजन घटना, शरीर में स्फूर्ति आना, शरीर के प्रतिरक्षी अनुक्रियाओं (immune reactions) का बेहतर होना, हड्डियों का मजबूत होना, कॉलेस्ट्राल एवं रक्त चाप का घटना, बालों का बढ़ना, त्वचा में चमक आना, नेत्र ज्योति का बेहतर होना इत्यादि । क्योंकि यह हॉर्मोन प्राकृतिक हार्मोन के समान है इसकी वजह से शरीर में एलर्जी क्रियाएँ (allergic reactions) नहीं होते हैं । HGH, IGFI के साथ मिलकर डी.एन. ए. की मरम्मत (repair) करता है । इस कृत्रिम हॉर्मोन का डायबिटीज एवं कैंसर के उपचार के लिए परीक्षण किया जा रहा है ।

(b) मानव वृद्धि हार्मोन की अभियांत्रिकी (Engineering of Human Growth Harmone)

सोमेटोस्टेटिन (somatostatin) जीवाणु कोशिका में उत्पादित होने वाले सर्वप्रथम मानव पेप्टाइड हॉर्मोन (human peptide hormone) था । इसके लिए सोमेटोस्टिन जीन को अभिव्यक्ति वाहक (expression vector) की सहायता से जीवाणु में प्रवेश (insert) कराया गया । इस जीन का संश्लेषण एकलसूत्री डीएनए. खण्ड के आठ टुकड़ों (blocks) से किया गया । हर टुकड़ा (block) कुछ न्यूक्लिओटाइड से बना था । अभिव्यक्ति वाहक pBr 322 प्लाज्मिड से बनाया गया था । इस वाहक में नियंत्रक क्षेत्र (control region) एवं जीवाणु लेक ऑपेरान (operon) के β-गेलेक्टोसाइडेस (β-galactosidase) जीन का एक बहुत बड़ा भाग भी संलग्न किया गया । सोमेटोस्टेटिन जीन को β-गेलेक्टोसाइडेस जीन के साथ जोड़ा गया एवं इस प्लाज्मिड को ई कोलाई जीवाणु कोशिका में प्रवेश करवा कर मानव हॉर्मोन का उत्पादन किया गया । अब सोमेटोट्रोपिन अथवा मानव वृद्धि हॉर्मोन के जीन का संश्लेषण भी किया जा रहा है । इसके लिए पहले रासायनिक तरीकों से पॉलीपेप्टाईड श्रृंखला को 191 अमीनों अम्लों में से पहले 24 अमीनों अम्लों के संश्लेषण के लिये जरूरी पेप्टाईड भाग का संश्लेषण किया गया । फिर रिवर्स ट्रांसक्रिप्टेस विकर की सहायता से पिट्यूटरी ऊतक (pituitary tisssues) से विलगित mRNA से हॉर्मोन के जीन को कॉपी किया गया । रेस्ट्रीमान एन्डोन्यूक्लीएज की सहायता से इस mRNA कॉपी में से इच्छित भाग को काट कर डीएनए. लाइगेज (DNA ligase) की सहायता से प्राकृतिक एवं संश्लेषित भागों को जोड़ा गया । इस पूर्ण जीन को लेक ओपेरोन (Lac operon) की सहायता से pBr322 प्लाज्यिड के रूपान्तरित रूप (modified form) में डाला गया । क्योंकि वृद्धि हॉर्मोन के संश्लेषित भाग का संश्लेषण प्रारम्भिक कोडोन (initiation codon)ATG के साथ किया गया था, अत: इस हॉर्मोन का जीवाणु कोशिका में बिना जीवाणु प्रोटीन की सहायता से संश्लेषण किया जा सकता है ।

(c) **जीन अभिव्यक्ति का इष्टतमीकरण (Optimizing gene expression)**

किसी भी प्रोटीन का सही मात्रा में उत्पादन (production) उस प्रोटीन को कोड (code) करने वाले जीन के अभिव्यक्ति (expression) पर निर्भर करता है । किसी भी जीन की अभिव्यक्ति का इष्टतमीकरण (optimizing expression) न केवल प्रोकेरियोटिक या यूकेरियोटिक तंत्र जिसमें वह अभिव्यक्त होगा पर निर्भर करता है बल्कि उस जीन की अभिव्यक्ति के लिये प्रयुक्त किये गये नियमनकारी अनुक्रम (regulatory sequence) पर भी निर्भर करता है । यह नियमनकारी अनुक्रम जीन के इष्टतम अभिव्यक्ति को तो निर्धारित करता ही है, साथ ही उसके तंत्र (system) में सही स्थान व जगह को भी निर्धारित करता है । इस नियमनकारी अनुक्रम में सबसे महत्वपूर्ण न्यूक्लियोटाइ अनुक्रम (nucleotide sequence) वर्धक (promotor) होता है जो इस जीन की अभिव्यक्ति के लिये मुख्य रूप से उत्तरदायी होता हैं ।

(d) **अभिव्यक्ति तंत्र (Expression System)**

जीन अभिव्यक्ति के लिये प्रोकेरियोटिक व यूकेरियोटिक दोनों ही तंत्रों का उपयोग किया जाता है लेकिन प्रोकेरियोटिक तंत्र को ज्यादा वरीयता दी जाती हैं क्योंकि वृहद स्तर पर इसके उत्पादन की लागत निम्न तथा लब्धि (yield) ज्यादा होती है ।

प्रोकेरियोटिक अभिव्यक्ति तंत्र (Prokaryotic expression system)

सामान्यत: प्रोकेरियोट में ई कोलाई को अभिव्यक्ति तंत्र की तरह उपयोग किया जाता है ।

प्रोकेरियोटिक (उदा. बैक्टीरिया आदि) में जीन अभिव्यक्ति को ओपेरॉन प्रारूप (operon model) द्वारा समझाया जा सकता हैं । ओपेरोन जीन का गुच्छा (cluster) होता है जिसमें संरचनात्मक जीन (structural gene), नियन्त्रक तत्व (control elements) एवं नियामक जीन (regulatory gene) को सम्मिलित किया जाता है । उदाहरण लेक्टोस ओपेरॉन अथवा लेक ओपेरॉन (lac operon) ।

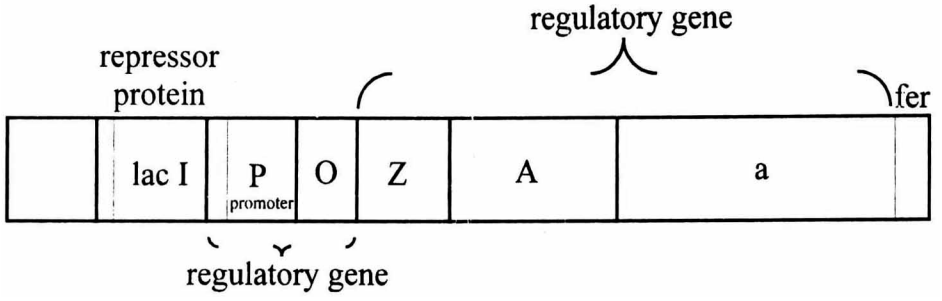

चित्र 8.1 : लेक ओपेरॉन

जब बैक्टीरिया को कार्बन स्त्रोत के रूप में लेक्टोरा उपलब्ध होता हैं तब ऊपर प्रदर्शित जीन अभिव्यक्त होते हैं जिनके द्वारा संश्लेषित विकर (enzyme) अथवा जीन उत्पाद (gene product) कार्बन स्त्रोत को गेलेक्टोस एवं ग्लूकोस में तोड़ कर कोशिका को उपलब्ध कराता है । इस ओपेरॉन में lac I जीन दमनकारी प्रोटीन को कोड करता है, जो लेक्टोस के कार्बन स्त्रोत के रूप में अनुउपलब्ध होने पर जीन अभिव्यक्ति को रोकता है ।

वर्धक एवं प्रचालक अनुक्रम (Promotor and operator sequence)

जब लेक्टोस एकमात्र कार्बन स्त्रोत (sole carbon) के रूप में उपलब्ध होता है, तब उसके खण्डन के लिये व इष्टतम जीन अभिव्यक्ति हेतु RNA पोलीमरेज प्रचालक (operator) से बंधित होता हैं तथा उस जीन का अभिव्यक्तिकरण संभव हो पाता हैं इस जीन को अभिव्यक्ति के फलस्वरूप प्राप्त प्रोटीन उत्पाद उपलब्ध स्त्रोत को खण्डित करके उसे कोशिका द्वारा प्रयोग हेतु उपलब्ध कराता है ।

जीन इष्टतम अभिव्यक्ति (Optimization of expression)

चूंकि P lac (lac promotor) जीन एक दुर्बल वर्धक (weak promotor)हैं अत: इस जीन की इष्टतम अभिव्यक्ति हेतु cAP(catabolic Activator Protein) की आवश्यकता होती हैं, जो cAMP (cyclic Adenosyl Monophosphate)के साथ cAP-cAMP संकुल बनाता है तथा लेक वर्धक (lac promotor)के उर्ध्व प्रवाह (up stream) में उपस्थित cAP क्रम पर बंध बनाता है । इस संकुल के बंधित होने से RNA पोलीमरेस के लक्ष्य स्थल (target site) व

CAP के सक्रियात्मक डोमेन में प्रोटीन-प्रोटीन अन्तःक्रिया (protein- protein interaction) से जीन की इष्टतम जीन अभिव्यक्ति होती है एवं CAP के सक्रियात्मक डोमेन (active domain) के बीच में प्रोटीन-प्रोटीन अन्तरक्रिया (protein- protein interaction) होने से इष्टतम जीन की. अभिव्यक्ति प्राप्त होती है ।

जीन की इष्टतम अभिव्यक्ति हेतु प्लाज्मिड का उपयोग (Use of plasmid for optimizing gene expression)

किसी भी जीन की इष्टतम अभिव्यक्ति के लिये उसे प्लाज्मिड के नियंत्रणकारी अनुक्रम (regulatory sequence) के नियंत्रण में उस प्लाज्मिड वाहक (plasmid vector) में समाकलित (integrate) कर दिया जाता है । इस पुर्नयोजित प्लाज्मिड वाहक (recombinant plasmid vector) को इच्छित जीवाणु परपोषी (desirable bacterial host) कोशिका में प्रवेश करवा दिया जाता है । इस कोशिका से जीन की अभिव्यक्ति द्वारा इच्छित प्रोटीन की प्राप्ति होती हे । प्लाज्मिड वाहक में निम्नलिखित अनुक्रम पाये जाते हैं.

(1) **DNA प्रतिकृति का उद्‌गम (Origin of DNA Replication)**

यह अनुक्रम प्लाज्मिड की प्रतिकृति व इसकी प्रतियाँ बनाने 'के लिये उत्तरदायी होता है । इसे ori नाम से संबोधित किया जाता है ।

(2) **वर्धक (Promotor) अनुक्रम**

यह नियामककारी अनुक्रम, समाकलित जीन की अभिव्यक्ति के लिए बहुत आवश्यक होता है । ई कोलाई में अभिव्यक्ति हेतु विभिन्न प्रकार के वर्धक का प्रयोग किया जाता है । परपोषी का RNA पोलीमरेस इस वर्धक से बंधित होता है तथा समाकलित जीन का अनुलेखन (translation) करता है जिससे आवश्यक प्रोटीन का संश्लेषण होता है ।

प्रबल वर्धक के उदाहरण

(a) lac Z वर्धक

(b) बेक्टिरियोफाज T_7 से प्राप्त वर्धक आदि ।

(3) **चयनित मार्कर (Salectable Marker)**

यह रूपान्तरित कोशिका के चयन हेतु प्रयोग किया जाता है । इसके अंतर्गत प्रतिजैविक प्रतिरोधी जीन जैसे केनामाइसिन प्रतिरोधी जीन आदि को प्रयोग में लाया जाता है । यह अनुक्रम इस प्रतिजैविक की उपस्थिति में भी रूपान्तरित कोशिकाओं को वृद्धि करने में सहायता प्रदान करता है।

(4) **प्रतिबंधित स्थल (Restriction Site)**

प्लाज्मिड में कुछ ऐसे विशिष्ट प्रतिबंधित स्थल (restriction sites) होते हैं जिस पर विशेष रेस्ट्रिक्सन ऐण्डोन्यूक्लिएज एन्जाइम (specific restriction endonuclease enzyme) कार्य करके उसमें एक कटाव (nick) उत्पन्न करता है । इस जगह पर अब इच्छित जीन को इसमें समाकलित कर दिया जाता है (चित्र 8.2) ।

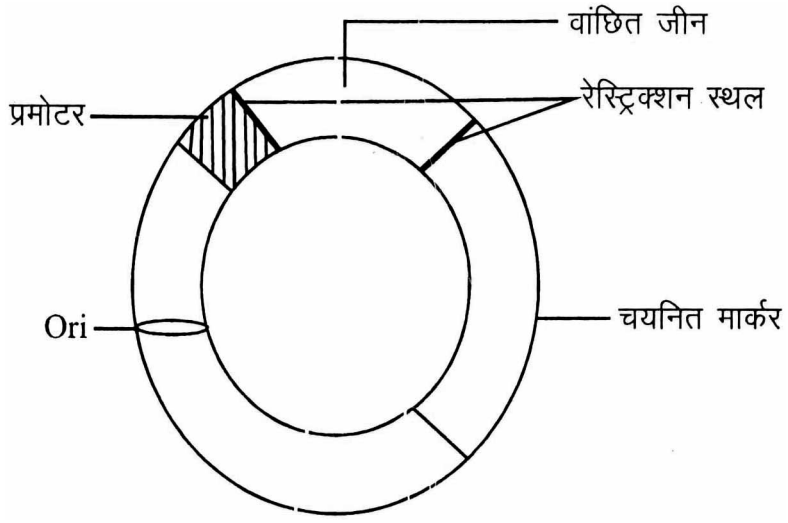

चित्र 8.2 : प्लाज्मिड पर पाई .'जाने वाले जीन अनुक्रम

इस प्रकार कई तरह से प्लाज्मिड रूपान्तरण से एक ऐसा प्लाज्मिड तैयार किया जाता है जो परपोषी कोशिका में समाकलित जीन की इष्टतम अभिव्यक्ति 'को प्रोत्साहित करता है ।

वर्धन अनुक्रम का जीन अभिव्यक्ति में महत्त्व (Importance of promotes sequence in gene expression)

जीन की इष्टतम अभिव्यक्ति प्लाज्मिड के वर्धक अनुक्रम पर निर्भर होती है । यह अनुक्रम भिन्न जीवाणु कोशिकाओं में भिन्न सक्रियता दर्शाता है । उदाहरणत: लेक वर्धक अनुक्रम ई कौलाई के बजाय अन्य जीवाणु में प्रबल अभिव्यक्ति को प्रदर्शित करता है ।

जीन की अभिव्यक्ति में संलग्न प्रोटीन की महत्ता (Importance of fusion protein in gene expression)

सामान्यतया जब बाहरी प्रोटीन किसी परपोषी में अभिव्यक्त होता हैं तो -इसका विघटन (degradation) हो जाता है तथा इष्टतम स्तर की प्राप्ति नहीं हो पाती है । अत: इष्टतम प्रोटीन की प्राप्ति हेतु इस बाहरी प्रोटीन जीन को स्थायी परपोषी प्रोटीन से सहसंयोजित कर लिया जाता है । इस संयोजन को संलग्न प्रोटीन (fusion protein) कहते हैं । संलग्न प्रोटीन में से इच्छित प्रोटीन को बाद में विदलित करके पृथक कर लिया जाता है ।

यूकेरियोटिक अभिव्यक्ति तंत्र

यूकेरियोट एवं प्रोकेरियोट जीन की अभिव्यक्ति में मुख्य अंतर यह है कि यूकेरियोट्स में इस प्रोटीन का पश्च अनुवादक रूपान्तरण (post translational modification) होता है । जिसके अन्तर्गत डाईसल्फाइड बंध निर्माण, प्रोटीन लयनकारी विदलन तथा कुछ अमीनों अस्त को हटाना आता है ।

यूकेरियोट्स में जीन की इष्टतम अभिव्यक्ति हेतु अभिव्यक्तकारी वाहक में निम्नलिखित लक्षण पाये जाने चाहिए -

(i) चयनकारी यूकेरियोटिक मार्कर (Selective eukaryotic)

(ii) यूकेरियोटिक वर्धक अनुक्रम (Eukaryotic promoter sequence)

(iii) यूकेरियोटिक अनुलेखनात्मक एवं अनुवादनात्मक रूकावट संकेत (Eukaryotic transcriptional and translational stop signal)

(iv) अनुक्रम जो अनुलेखित संदेशवाहक RNA की पोलीएडिनाइलेशन को संकेतिक करें ।

सामान्यत: उपयोग किये जाने वाले यूकेरियोटिक तंत्र

(i) सेकेरोमाइसिस सेरिविसी (Saccharomyces cerevisiae) (यीस्ट)

यह सामान्यत: यूकेरियोटिक तंत्र में जीन की इष्टतम अभिव्यक्ति के लिये प्रयोग किया जाता है क्योंकि -

(a) इसका वृहद स्तर एवं लघु स्तर पर आसानी से संवर्धन किया जा सकता है ।

(b) इसमें बहुत से प्रबल वर्धक होते है ।

(c) इसमें प्राकृतिक प्लाज्मिड पाया जाता है ।

(d) इसमें सामान्यत: विषमरूपी (hetrologous) प्रोटीन में पश्च अनुवादक रूपान्तरण हो सकता है ।

(e) यह हिटरोलोगस प्रोटीन को आसानी से स्त्रावित कर देता हैं जिससे उसका शुद्धिकरण सरल होता है ।

(e) इंटरफेरोन की इष्टम अभिव्यक्ति (Optimization of interferon gene expression)

इंटरफेरोंन जीन की इष्टतम अभिव्यक्ति हेतु c-DNA क्लोनिंग तकनीक का उपयोग किया जाता है । इस c-DNA को ह:r कोलाई कोशिका में प्रबल वर्धकों (strond promoters) की सहायता से अभिव्यक्त कराया जाता है । इस कोशिका में इंटरफेरोंन जीन एक अघुलनशील प्रोटीन के रुप मे अभिव्यक्त होता है । इसे घुलनशील बनाने हेतु पुर्नवलन (recoiling) की आवश्यकता होती है । घुलनशील प्रोटीन का निर्माण यह सिद्ध (prove) करता है कि इंटरफेरोन जीन की इष्टतम अभिव्यक्ति हो रही है । पुर्नवलन हेतु ग्लूटाथियोन-एस-ट्राँसफरेस (glulathione-s-transferase) टेग (tag) अथवा प्रबल वर्धकों का उपयोग किया जाता है । इंटरफेरोन जीन उत्पाद ग्लूटाथियोन के साथ संलग्न प्रोटीन के रूप में प्राप्त होता है । यह प्रोटीन, असंलग्न प्रोटीन की तुलना में अधिक स्थाई होता है ।

रूपान्तरित ई. कोलाई कोशिका को उच्च कोशिका घनत्व (high cell density) एवं 37°C पर उष्मायित (incubate) करने पर भी जीन की इष्टतम अभिव्यक्ति होती है ।

(f) मानव वृद्धि हार्मोन जीन की इष्टतम अभिव्यक्ति (Optimum expression of human growth hormone gene)

मानव वृद्धि हॉर्मोन की इष्टतम अभिव्यक्ति हेतु cDNA क्लोनिंग तकनीक का उपयोग किया गया । इस तकनीक में सर्वप्रथम पीयूष ग्रंथि (pituitary gland) से संदेशवाहक RNA (mRNA) प्राप्त किया गया । इस mRNA से फिर cDNA लाइब्रेरी का निर्माण किया गया । तत्पश्चात् इस cDNA को रेस्ट्रिक्शन विकर (restriction enzyme) की सहायता से एक विशिष्ट प्रतिबंधित स्थल (restriction site) पर से काटा (splice) किया गया जिससे cDNA एक 1 -

24 कोडोन एवं एक 25 - 191 कोडोन वाले खण्डों में विभाजित हो गया (चित्र 8.3) । अब 25 - 191 कोडोन वाले खण्ड की अभिव्यक्ति वाहक में निवेशित कर दिया गया । इस पुर्नयोजित वाहक को ई कोलाई कोशिकाओं में प्रवेश करवा दिया गया जहाँ 1 स्र० प्रमोटर के नियंत्रण में HGH जीन की इष्टतम अभिव्यक्ति होती है (चित्र 8.4) । जीन उत्पाद एक प्रकार का संलग्न प्रोटीन (fusion protein) होता है जिसमें से इच्छित प्रोटीन का पृथक्करण साइनोजन ब्रोमाइड (cyanogens bromide) की विदलन क्रिया (cleavage activity) द्वारा किया जाता है ।

(A) cDNA खण्ड

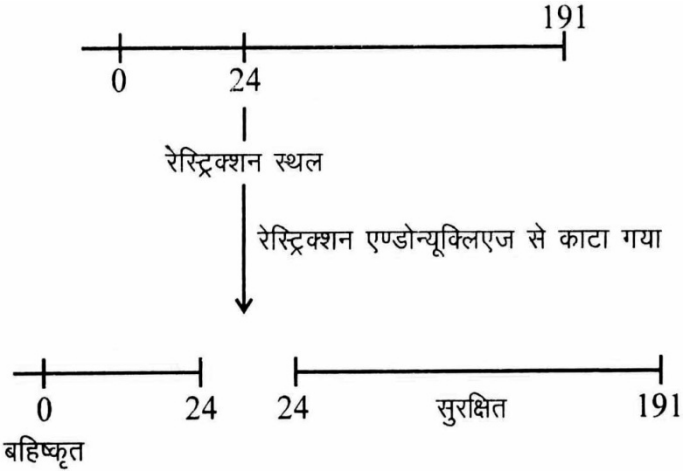

चित्र 8.3 : सोमेटोट्रोपिन जीन का p छ ष 4 खण्ड से पृथक्करण

(B)अभिव्यक्ति

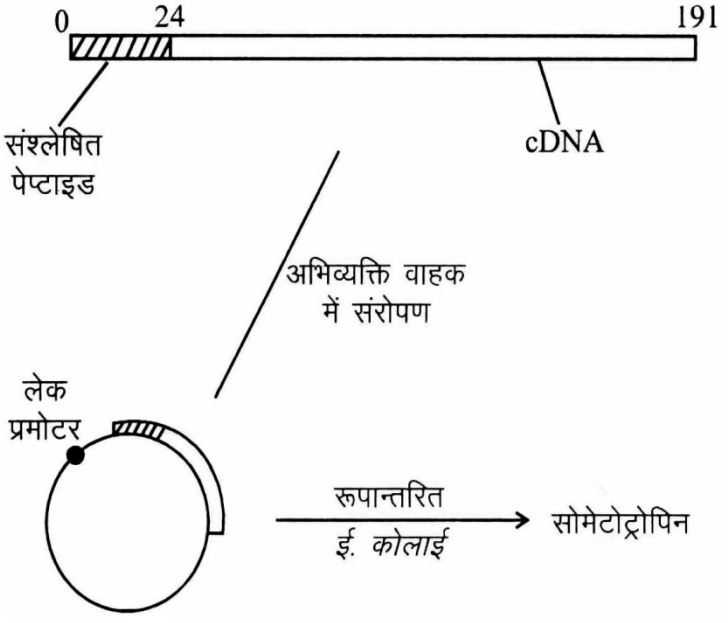

चित्र 8.4 : सोमेटोट्रोपिन जीन की अभिव्यक्ति

8.3 सिस्टीक फाइब्रोसीस के विरूद्ध विकर डी.एन.एज. I एवं एल्जिनेट लायेज (DNAase I and Alginate Lyase Against Cystic Fibrosis)

सिस्टीक फ्राइब्रोसिस रोग

सिस्टीक फाइब्रोसीस एक प्रकार की आनुवांशिक बीमारी है जिसका असर ज्यादातर फेफड़ों (lungs), यकृत (liver), अग्नाशय (pancreas) एवं आँत (intestine) में पाया जाता है । इस बीमारी की वजह से शरीर के बहुत सारे तंत्र एक साथ काम करना बंद कर देते हैं (multisystem failure) जिसकी वजह से अयोग्यता (disability) बद जाती है । सिस्टीक फाइब्रोसिस का शाब्दिक अर्थ है बाइलियरी ट्रेक्ट (biliary) में फाइब्रोसिस अथवा ऊतक नाश (tissue) होना । इस रोग में गाढ़े म्यूकस (thick mucus)ऊ के स्त्रवण एवं शरीर की प्रतिरोध क्षमता कम होने के कारण फेफडों में जीवाणुजनित संक्रमण हो जाता है ।

इस रोग के लक्षण ज्यादातर नवजात अथवा बचपन में ही दिखाई दे जाते हैं । नवजात में मेकोनियम इलियस (Meconium ileus)का पाया जाना इस रोग का एक विशिष्ट लक्षण है । यह रोग लाईलाज है एव रोगी की 20-30 साल की उम्र में मृत्यु हो जाती है ।

सिस्टिक फाइब्रोसिस के लक्षण (Symptoms of cystic Fibrosis)

यह रोग फेफड़ों, गुर्दे, अग्नाशय एवं आँतों में होता है । फेफड़ों एवं साइनसेस (sinuses) में यह रोग वायु पथ (air passages) में सूजन (inflammation) एवं म्यूक्स (mucus) द्वारा इन वायु पथ (air passages) के रूद्ध (blockage) होने की वजह से होता है । इससे रोगी को लगातार खाँसी आती है, बलगम (phelgm) का स्त्राव होता है एवं व्यायाम अथवा भारी काम करने की क्षमता कम हो जाती है । यह सारे लक्षण म्यूकस (mucus) में पाये जाने वाले जीवाणुओं के फैलने से न्यूमोनिया हो जाने की वजह से पैदा होते हैं । जैसे-जैसे रोग बढ़ता है फेफड़ों की संरचना पर भी असर होता है एवं साँस लेने में तकलीफ होने लगती है । इन लक्षणों के अलावा खाँसी के साथ खून आना (hemolysis), फेफड़ों के मुख्य वायुमार्ग (major airways) की संरचना में बदलाव आना (bronchiectasis), फेफड़ों के रक्त चाप का बढ़ना (pulmonary hypertension),हृदयघात (heart failure), शरीर में ऑक्सीजन की कमी होना (hypoxia), श्वसन तंत्र विकार (respiratory failure) इत्यादि भी इस रोग के लक्षण है । शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता कम होने से एवं फेफड़ों में संक्रमण के कारण दूसरे जीवाणु एवं कवक संक्रमण (bacterial and fungal infection) जैसे कि एलर्जिक ब्रोंकोपल्मोनेरी एस्पर्जिलोसीस (allergic bronchopulmonary aspergillosis), ऐस्परजिलस द्वारा संक्रमण, माईकोबैक्टीरियम एवियम (Mycobacterium), तपेदिक (tuberculosis) समूह के जीवाणु द्वारा संक्रमण इत्यादि भी हो सकते हैं । इस तरह के संक्रमण में सामान्य प्रतिजैविक (common antibiotics) भी काम नहीं करते हैं । पेरानासिका साइनस (paranasal sinus) के संक्रमण के कारण सिर दर्द, बुखार एवं चेहरे में दर्द रहता है । नासिका ऊतकों की अतिवृद्धि

(hypertrophy of nasal tissue) की वजह से नासिका (nasal polyps) बन जाते हैं जिसकी वजह से श्वास लेने में कठिनाई होती है । इस रोग की पहचान जन्म से पहले आनुवांशिक परिक्षणों (genetic testing)द्वारा की जा सकती है । स्वेट परीक्षण (sweat test) के दौरान नमक की अत्यधिक मात्रा का पाया जाना भी रोग की पुष्टिकरण (confirmation) का एक तरीका है ।

यह रोग सिस्टिक फ्राइब्रोसीस ट्रांसमेम्ब्रेन कंन्डकटेन्स रेगुलेटर जीन (cystic fibrosis transmembrane conductance; CFTR gene) के उत्परिवर्तन की वजह से होता है । इस जीन का उत्पाद एक महत्वपूर्ण क्लोराइड आयन चैनल (chloride ion channel) प्रोटीन होता है जो पाचक रस (digestive juice), पसीने (sweet) एवं म्यूकस (mucus) के निर्माण के लिये आवश्यक है । जिन लोगों में यह रोग नहीं पाया जाता है उनके पास इस CFTR जीन के दो सक्रिय अलील (active allele) पाये जाते हैं जबकि एक अलील भी बीमारी से बचाने के लिए काफी है । रोग तब होता है जब दोनों में से एक भी अलील सक्रिय CFTR प्रोटीन बनाने में सक्षम न हों । इस कारण इस रोग को अलिंगसूत्री प्रभावी (autosomal recessive) रोग माना जाता है । जिन नवजात शिशुओं में यह रोग पाया जाता है मिकोमियम ईलियम (Mecomium ileum) नामक अवस्था से पीड़ित होते हैं जिसके तहत उनकी आँतें पूरी तरह से रूद्ध (block) हो जाती है एवं वह मल का त्याग नहीं कर पाते हैं । आंतरिक महाशय झिल्ली (rectal membrane) के उभार (protrusion), मल की मात्रा बढ़ने से (increased feacal volume), कुपोषण (malnutrition) एवं खाँसी के कारण पेट पर दबाव बढ़ने (increased abdominal pressure) के कारण मलाशय सरक (rectal prolapse) जाता है ।

अग्नाशय (pancrease) से गाढ़े म्यूकस (mucus) के स्त्राव के कारण पाचक विकर (digestive enzymes) ड्यूओडिनम (deodenum) में नहीं पहुँच पाते हैं जिसके कारण रोगी को अग्नाशयशोथ (pancrealitis) हो जाती है । रोगी कुअवशोषण (malabsorption) का शिकार हो जाता है जिसकी वजह से उसे कुपोषण होता है, कमजोरी आती है एवं वृद्धि रूक जाती है । विटामिन A, D, E एवं K का अवशोषण (absorption) न होने के कारण ऑस्टिओपोरोसिस (osteoporosis) हो जाता है । ऐसे रोगियों में एसीडिटी (acidity), आँतों का अवरूद्ध होना (intestinal blockage),गुर्दे का सिरोसीस (liver cirrhosis), CFRD सिस्टिक फाइब्रोसिस रिलेटेड डायबिटिज (cystic fibrosis related diabetes) इत्यादि भी हो जाते हैं ।

8.4 एकल कोशिकीय प्रतिकाय की परिभाषा एवं चिकित्सकीय महत्ता (Definition of Monoclonal Antibodies and Medicinal Importance)

एकल कोशिकीय प्रतिकाय (Monoclonal Antibodies) हाइब्रीडोमा तकनीक (hybridoma technology)से बनाई गई एकदम शुद्ध (ultra pure) प्रकार की प्रतिकाय होती है । हाइब्रीडोमा

कोशिका लिस्फोसाइट्स एवं दुर्दम मज्जाबुर्द कोशिका (malignant myeloma cells) को एक दूसरे के साथ जोड़ (fuse) करके बनाई जाती है । इस प्रकार की कोशिका की यह खासीयत है कि यह सिर्फ एक ही प्रकार के प्रतिकायों का निर्माण करती है । दुर्दम मज्जाबुर्द (malignant myeloma) कोशिकायें बहुत तेजी से वृद्धि करती है एवं इनका संवर्धन एक कोशिका से अनिश्चित काल तक के लिए किया जा सकता है । इसके साथ जुड़ी हुई (fused) β-लिम्फोसाइट्स को पहले एक विशिष्ट प्रकार के प्रतिजन (antigen) से प्रतिरक्षी क्षमता युक्त (immunize) कर दिया जाता है । इस कारण संकर माइलोमा (hybrid myeloma) अथवा हाइब्रीडोमा (hybridoma) कोशिका में दोनों पैतृक कोशिकाओं (parent cells) की विशेषताएँ पाई जाती है, यानि कि यह कोशिकाएँ अमृत्य (immortal)होती है एवं बड़ी मात्रा में एक विशिष्ट प्रकार की प्रतिकाय (antibody) का स्त्रवण (secretion) कर सकती है ।

इस तकनीक की खोज सर्वप्रथम 1975 में मिलस्टीन एवं साथियों (Milstein) ने कैम्ब्रिज (Cambridge) में स्थित मेडिकल रिसर्च काउन्सिल लेबोरेट्री ऑफ मॉलीक्यूलर बॉयोलोजी (Medical Research Council Laboratory of Molecular Biology) में की । इस तकनीक से एकल कोशिकीय प्रतिकाय का बड़ी मात्रा में उत्पादन संभव हो सका । क्योंकि एक विशिष्ट प्रतिकाय एक विशिष्ट प्रकार के प्रतिजन (antigen) के विरूद्ध ही सक्रिय होते हैं अत: इनका चिकित्सकीय क्षेत्र में महत्वपूर्ण उपयोग किया जाता है । इन प्रतिकायों का निदान (diagnostic kit) चिकित्सा क्षेत्र में रिसर्च (medical research) एवं बहुत सारे प्रकार के रोगों के निदान के लिए उपयोग किया जाता है ।

एकल कोशिकीय प्रतिकाय बनाने की विधि को निम्न प्रकार से वर्णित किया जा सकता है -

चूहे में प्रतिजन का प्रवेश करवाना

↓

चूहे में निर्मित β-कोशिकाओं को एकत्रित करना

↓

इन β कोशिकाओं के साथ इच्छित माइलोमा

कोशिकाओं का मिश्रण (cell suspension) बनाना।

↓

इस मिश्रण मे कोशिका संगलन कारक (cell fusion agent) जैसे कि
पॉलीईथाइलीन ग्लाइकोल (polyethylene glycol) को मिलाना

↓

जुड़ी हुई कोशिकाओं (fused cells) को चयनित (selective) संवर्धन माध्यम पर
फैला कर संकरित कोशिकाओं का संवर्धन करना।

↓

एकल कोशिकीय प्रतिकाय स्त्रवण करने वाले संवर्धन (culture) की पहचान करना।

↓

इन कोशिकाओं का बारम्बार संवर्धन कर विशिष्ट प्रकार की
एकल कोशिकीय प्रतिकाय को एकत्रित करना।

↓

स्टाक संवर्धन (stock culture) का तरल नाइट्रोजन (liquid nitrogen) में संरक्षित (preserve) करना।

↓

समरूपी कोशिका पंक्ति (clone cell line) का हाइब्रीडोमा कोशिका के रूप में संवर्धन करना एवं एकक्लोनी प्रतिकायों का निर्माण करना।

हाइब्रीडोमा कोशिकाओं को कम से कम 5% CO_2 वातावरण में रखा जाता है क्योंकि यह क्षारकीय संवर्धन स्थिति (alkaline culture conditions) के प्रति संवेदनशील (sensitive)होते हैं । इस पूरी प्रक्रिया को 37°C के तापमान पर किया जाता है । एक क्लोनी प्रतिकायों के चिकित्सकीय उपयोग निम्न है -

- संक्रामक रोगों के उपचार हेतु अथवा चिकित्सकीय उपयोग (therapeutic applications)
- कैंसर के उपचार में (anticancerous agents)

- प्रतिरक्षी अनुक्रिया (immune response) को मांडुलित करने में (immuno modulators)
- संक्रमण के कारण / कारकों के डायग्नोसिस हेतु (diagnostic application)
- विशिष्ट प्रकार के प्रतिजनों के शुद्धिकरण में (immunopurification)

8.4.1 चिकित्सकीय कारक के रूप में एकक्लोनी प्रतिकायों का उपयोग (Use of monoclonal antibodies as therapeutic agents)

एकल क्लोनी प्रतिकायों के उपयोग का सबसे महत्वपूर्ण फायदा यह है कि एक मिश्रण में उपस्थित प्रतिकाय केवल एक ही विशिष्ट प्रकार के प्रतिजन के साथ क्रिया करते हैं अत: इस क्रिया से मिलने वाले परिणाम (result) पूर्णतया सही एवं भरोसेमंद होते हैं । इसके विपरित पारम्परिक प्रतिसीरम (conventional antisera) में एक से ज्यादा प्रकार के प्रतिकायों की उपस्थिति एक भ्रम (confusion)पैदा कर देती है एवं परीक्षण का परिणाम (result) भरोसेमंद नहीं होता है ।

एकल कोशिकीय प्रतिकायों को स्ट्रेप्टोकोकस एगेलेक्टेई(streptococcus agalactiae) के द्वारा नवजात शिशु में होने वाले संक्रमण (neonatal sepsis) के उपचार हेतु उपयोग में लिया जाता है ।

विषाणु जनित रोगों के उपचार में भी इन प्रतिकायों का बहुत महत्व है क्योंकि विषाणुओं के विरूद्ध अभी तक किसी सफलतम दवा (drug) की खोज नहीं हो सकी है । हाइब्रीडोमा तकनीक से किसी भी विशिष्ट रोगजनक के विरूद्ध विशिष्ट (specific) एकल क्लोनी प्रतिकायों का उत्पादन कर इनका उपचार किया जा सकता है । उदाहरणत: सायटोमिगेलो विषाणु (cytomegalo) जो कि एक खतरनाक रोगकारक है, के विरूद्ध प्रतिकायों के निर्माण पर खोज जारी है । एक क्लोनी प्रतिकायों का हर्पीज सिम्पलेक्स (Herpes simplex), रूबेला (Rubella), छोटी माता (Measles) इत्यादि के उपचार में भी उपयोग किया जा चुका है ।

इस प्रकार के प्रतिकायों का उपयोग मेजर हिस्टोकॉम्पटेबिलिटी कॉम्पलेक्स (MHC : Major Histocompatibility complex) की पहचान के लिए भी किया जाता है । इस तकनीक को प्रत्यारोपण अध्ययन (transplantation studies)एवं जनसंख्या आनुवांशिकी के अध्ययन (population genetic studies) में ऊतक प्ररूपिंग (tissue typing) के लिए किया जाता है । इन्हें कैंसर के उपचार के तरीकों की प्रभाविता को नियंत्रित करने में प्रयोग किया जाता है । इन तरीकों की सफलता को रक्त में उपस्थित कुछ विशिष्ट कैंसर चिन्हक (cancer markers) की मात्रा को माप कर किया जाता है । एकल क्लोनी प्रतिकाय इन विशिष्ट प्रकार के चिन्हक (marker) को पहचान कर उनके साथ प्रतिजन-प्रतिकाय जटिल (antigen antibody compex)बनाती है । मिश्रण में प्रयुक्त इस जटिल (complex) की मात्रा एवं प्रयोग में लाये गये प्रतिकायों की मात्रा से चिन्हक (marker) की मात्रा का पता किया जा सकता है । अगर चिन्हक (marker) की मात्रा कम हुई तो यह बतलाता है कि उपचार विधि सफल है । इन प्रतिकायों की सहायता से रक्त समूह (blood groups) की पहचान भी की जा सकती है ।

पहचान के अलावा प्रतिकायों को रोगों के उपचार अथवा रोग से बचाव के लिये भी काम लिया जाता है । इन प्रतिकायों को आविषालु पॉलीपेप्टाइड (toxic polypeptide) के साथ जोड़कर एक संयुग्मित अणु (conjugated molecule) जिसे इम्यूनोटोक्सिन (immunotoxin) कहा जाता है का निर्माण किया जाता है । इम्यूनोटोक्सिन अणु का प्रतिकाय भाग इसे लक्ष्य कोशिका (target cell) की पहचान कर उसके साथ बाँधने में मदद करता है । इसके साथ जुड़ा टॉक्सिन इस लक्ष्य कोशिका को नष्ट कर देता है ।

उदाहरण

केन्सर कोशिका को नष्ट करने के लिए बने विशिष्ट इम्यूनोटोक्सिन (immunotoxin) । इस अणु में रिसिन (Ricin) नामक टाक्सिन को एकल कोशिकीय प्रतिकाय के साथ जोड़ दिया जाता है । रिसीन अंरडी में पाया जाने वाला प्राकृतिक टाक्सिन है एवं दो भागों से बना होता है । टाक्सिन ए पॉलीपेप्टाइड (toxin A polypeptide)राइबोसोम की बड़ी इकाई (larger subunit) को निष्क्रिय कर देता है जिससे प्रोटीन संश्लेषण की प्रक्रिया रूक जाती है । B भाग एक प्रकार का कोशिका बाँधने वाला पॉलीपेप्टाइड; लेक्टिन (lectin) होता है । इस टॉक्सिन को ट्यूमर विशिष्ट एकल कोशिकीय प्रतिकाय के साथ जोड़ कर बनाये गये इम्यूनोटोक्सिन को जब कैंसर कोशिकाओं के साथ मिलाया गया तो यह ट्यूमर कोशिका की सतह पर उपस्थित ग्राही (receptor) के साथ जुड़ गया एवं उसकी प्रोटीन संश्लेषण की प्रक्रिया को बाधित कर दिया । परन्तु यह सामान्य कोशिकाओं के साथ नहीं जुड़ा । इसकी इस विशेषता के कारण इन प्रतिकायों का उपयोग शरीर में केन्सर कोशिका को नष्ट करने के लिए किया जाता है ।

(1)

ट्यूमर कोशिका + इम्यूनोटॉक्सिन
(ट्यूमर विशिष्ट प्रतिकाय एवं रिसीन)

↓

इम्यूनोटाक्सिन कैंसर कोशिका की सतह पर उपस्थित ग्राही प्रोटीन (receptor protein) के साथ जुड़ जाता है।

↓

केन्सर कोशिका के प्रोटीन संश्लेषण बाधित हो जाता है।

(2)

सामान्य कोशिका + इम्यूनोटोक्सिन

↓

कोशिका पर सतही ग्राही के अभाव में इम्यूनोटोक्सिन इस कोशिका के साथ जुड़ नहीं पाता है।

↓

कोशिका सामान्य तरीके से प्रोटीन का संश्लेषण करती है।

इसी प्रकार से इन प्रतिकायों का उपयोग रेडियोधर्मी अणु (radioactive molecule) अथवा किसी रसायन चिकित्सकीय अणु (chemotherapeutant) को पहचानने में भी किया जाता है । इस तकनीक में टाक्सिन के स्थान पर रेडियोधर्मी अणु जैसे कि 67 Cu, 212Pb इत्यादि को जोड़ दिया जाता है । जब यह रेडियोधर्मी प्रतिकाय (radioactive antibody) कैंसर कोशिका से जुड़ते हैं तो इससे निकलने वाले रेडियो विकिरण कैंसर कोशिका एवं आसपास की दूसरी कोशिकाओं को नष्ट कर देती है । अस्थि मज्जा प्रत्यारोपण (bone marrow transplant) के समय ग्राफ्ट निरस्तीरकरण (graft rejection) को बचाने के लिए T-लिम्फोसाईट्स को नष्ट करना जरूरी है । क्योंकि इन कोशिकाओं द्वारा जनित B-लिस्फोसाइट्स ग्राफ्ट (graft) को नष्ट कर देते है । अत: T कोशिका विशिष्ट (T cell specific) प्रतिकायों द्वारा दानदाता (donor) के अस्थि मज्जा में एवं ग्राही के संचरण तंत्र में उपस्थित T-कोशिकाओं को नष्ट कर दिया जाता है । इसके पश्चात् बची हुई कोशिकाओं को ग्राही (recepient) में स्थानान्तरित (transfer) कर दिया जाता है । इस प्रक्रिया से ग्राही के शरीर में बाहरी (foreign) प्रतिजन के विरूद्ध प्रतिकायों (antibodies) का निर्माण नहीं होता है । उदाहरण MabokT_3 जिन्हें गुर्दे (Kidney) के प्रत्यारोपण में प्रयोग किया जाता है ।

एकल क्लोनी प्रतिकायों को मानव शरीर में निष्क्रिय प्रतिरक्षिता (passive immunity) विकसित करने के लिए भी किया जाता है इससे शरीर की रोग प्रतिरोध क्षमता (immunity) बढ़ती है । इसके अलावा इन प्रतिकायों की सहायता से टीकों का निर्माण भी किया जाता है । अत: एकल कोशिकीय प्रतिकायों का चिकित्सकीय कारकों के रूप में उपयोग अत्यन्त ही फायदेमंद है । इससे होने वाले महत्वपूर्ण लाभ इस प्रकार है -

- यह प्रतिकाय शरीर में कैन्सर कोशिका को ढूंढने में सक्षम होते हैं, इस कारण शरीर में इस प्रकार की कोशिकाओं को ढूंढने का प्रयत्न नहीं करना पड़ता है ।
- इनकी सहायता से कैंसर कोशिका तक किसी भी विषालु (toxin), रसायनचिकित्सकीय (chemotherapentant) अथवा रेडियोधर्मी अणु को पहुँचाया जा सकता है ।
- क्योंकि यह प्रतिकाय केवल लक्ष्य कोशिका (टारगेट कोशिका) को ही पहचान कर सकते हैं, दूसरी सामान्य एवं स्वस्थ कोशिकाओं को कोई नुकसान नहीं होता है ।
- इनकी सहायता से आवश्यक दवाई (potent drug) की बहुत कम मात्रा को भी लक्ष्य कोशिका (टारगेट सेल) तक पहुँचाया जा सकता है ।

8.4.2 ई. कोलाई में प्रतिकायों का उत्पादन (Production of antibodies in E. coli)

एकक्लोनी प्रतिकायों का उपयोग कई रोगों से रक्षा के लिये किया जाता है । इसका उपयोग न केवल चिरकालीन संक्रमित बीमारी जैसे कि एड्स से बचाव के लिये किया जाता है, वरन् यह चिरकालीन खपत औषधि (chronic) के दुष्यप्रभाव से भी बचाने में भी सहायक सिद्ध हुई है ।

परम्परागत तरीकों में एकक्लोनी प्रतिकाय को प्रतिरक्षित जन्तु (immunized animal) से प्राप्त किया जाता है । लेकिन नई तकनीक की सहायता से एकक्लोनी प्रतिकायों को जीवाणु या यीस्ट तंत्र में तैयार किया जा सकता है ।

एकक्लोनी प्रतिकाय दो भारी (heavy) एवं दो हल्की अमीनों अस्त (light) श्रृंखलाओं से बने प्रोटीन पदार्थ होती हैं । प्रत्येक श्रृंखला में स्थिर (constant) एवं परिवर्तनशील क्षेत्र (variable) पाये जाते हैं ।

स्थिर श्रृंखला को Fc (crystalline fragment) एवं परिवर्तनशील श्रृंखला को Fab (antigen binding fragment) भ कहा जाता है । एकक्लोनी प्रतिकाय की भारी सुखला में एकल श्रृंखला परिवर्तनशील क्षेत्र खण्ड (ScFv; single chain variable fragment) पाये जाते हैं (चित्र 8.5) ।

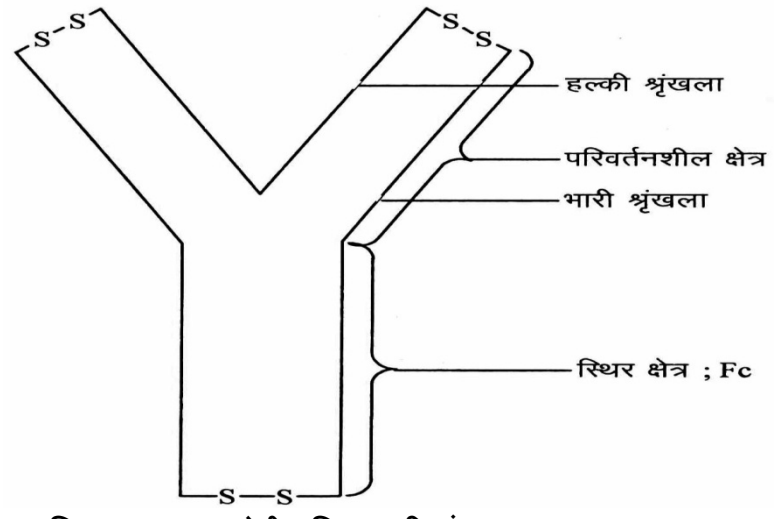

चित्र 8.5 एकलक्लोनी प्रतिकाय की संरचना

एकल श्रृंखला परिवर्तनशील क्षेत्रों (single chain variable region; ScFv) खण्डों का प्रयोग एकलक्लोनी प्रतिकायों के रूप में किया जा सकता है ।

ई कोलाई तंत्र का उपयांग मुख्यतया इन खण्डों के निर्माण के लिये किया जाता है । सर्वप्रथम Fab जीन को अभिव्यक्ति वाहक में निवेशित कर दिया जाता है । इस पुर्नयोजित वाहक को ई. कोलाई कोशिका में प्रवेश कर दिया जाता है जहाँ यह जीन अभिव्यक्त होता कर जीन उत्पाद का निर्माण करता है । इस प्रक्रिया को संक्षेप में निम्न प्रकार से दर्शाया जा सकता है ।

जीन + अभिव्यक्ति वाहक

↓

पुनर्योजित वाहक

↓ *ई. कोलाई* कोशिका में प्रवेश

रूपान्तरित जीवाणु कोशिका

↓ Fab जीन की अभिव्यक्ति

कोशिका द्वारा प्रोटीन; Fab खण्ड का स्त्रावण

↓

Fab प्रोटीन का शुद्धिकरण

↓

शुद्ध Fab प्रोटीन का एकक्लोनी प्रतिकाय के रूप में उपयोग

नई तकनीकी के अनुसार ई कोलाई तंत्र का उपयोग एकक्लोनी प्रतिकाय के निर्माण में किया जाता है ।

ई कोलाई अभिव्यक्ति तंत्र का उपयोग मुख्यतया: प्रतिकाय खण्डो के निर्माण के लिये किया जाता है । Fab खण्ड जो लक्षित प्रतिजन से बंधित होता है को ई कोलाई में सफलतापूर्वक अभिव्यक्त एवं स्त्रावित किया जाता है । इन Fab की बहुत सी निदानात्मक एवं चिकित्सकीय उपयोग किया जाता है ।

एकक्लोनी प्रतिकाय भारी श्रृंखला (heavy chain) एवं हल्की श्रृंखला (light chain) के बने होते हैं जिनमें स्थिर क्षेत्र (constant region) एवं परिवर्तनशील क्षेत्र (variable region) पाये जाते हैं ।

प्रतिकाय एकल श्रृंखला परिवर्तनशील क्षेत्र खण्डों (ScFv) जिसमें VH और VL (variable heavy and variable light) DNA जो लचिला (flexible) संयोजी अनुक्रम (linker sequence) से जुड़ी होती है, का प्रतिकायों पर आधारित चिकित्सकीय उपयोग होता है ।

पुनर्योगज ScFv's को प्रतिकायों को स्त्रावित करने वाली हाइब्रिडोमा (Hybridoma) कोशिकाओं से प्राप्त कर लिया जाता है ।

ScFv का निर्माण (Preparation of ScFv)

ScFv निर्माण के लिये सर्वप्रथम इस खण्ड से cDNA प्राप्त किया जाता है । इस चयन प्रक्रिया को विश्वसनीय बनाने के लिए हाइब्रिडोमा व पुनर्योगज DNA तकनीक का उपयोग किया जाता है । इसके अन्तर्गत ScFv को वाहक (vector) में समाकलित किया जाता है तथा ई कोलाई कोशिका को इन वाहकों द्वारा रूपान्तरित किया जाता है । यह ScFv ई कोलाई मे अघुलनशील अवस्था में अभिव्यक्त होते हैं, जिन्हें क्रोमेटोग्राफी द्वारा शुद्धीकृत उपयोग में लिया जाता है ।

क्रियाविधि (Mode of action)

ScFv अनेक भयानक संक्रमणों जैसे कि HIV के विरूद्ध उपयोग में लिये जाते हैं । यह HIV अणुओं को निम्न प्रकार से निष्क्रिय करते हैं

(i) ScFv खण्ड कोशिका में HIV के अक्रिय अणुओं (inactive molecules) के साथ संलग्न हो जाते हैं एवं HIV-I की प्रतिकृति (replication) को संदमित (inhibit) कर देते है ।

(ii) ScFv, अक्रिय राइबोसोमिय प्रोटीन (ribosomal protein) से जुड़कर एक काइमेरा प्रतिरक्षाविष (chimeric immunotoxin) का निर्माण करता है जो HIV-I संक्रमित कोशिका को मृत कर देता है । इस प्रकार या शरीर में HIV कोशिका के फैलाव को रोकता है ।

परम्परागत (conventional) तरीकों से एकक्लोनी प्रतिकायी के निर्माण में प्रतिरक्षित जन्तुओं का उपयोग होता है, जिसमें 3-4 महिनों का समय लग सकता है । जबकि ह:r कोलाईतंत्र सरल होने के साथ समय सीमा को भी कम करता है परन्तु ह:r कोलाईतंत्र का उपयोग करते हुए एकक्लोनीय प्रतिकायों का निर्माण बहुत महंगा होता है ।

8.4.3 एच.आई.वी. चिकित्सकीय कारक (HIV therapeutic agents)

टीका, रोगकारी कारक की वृद्धि को व उसके संक्रमण को रोकने के लिये तैयार किये जाते हैं । कई मामलों में जैसे एड्स विषाणु के विरूद्ध विश्वसनीय टीकों का निर्माण करना मुश्किल होता है क्योंकि यह सामान्य प्रतिकायों द्वारा पहचाने नहीं जाते हैं । आधुनिक तकनीकों द्वारा ई कोलाई यीस्ट कोशिका आदि तंत्रों का उपयोग कर एकक्लोनीय प्रतिकायों का निर्माण किया गया है जो इन विषाणु से बचाव करने में कारगर सिद्ध हुआ है ।

HIV-I संक्रमण की लक्ष्य कोशिका (target cell) TH कोशिका (Helper-T-lymphocyte) होती है । सामान्यतः, यह प्रतिरक्षी तंत्र में प्रतिरक्षाकारी प्रतिक्रिया को उत्पन्न करने वाली कोशिका है । प्रतिरक्षा प्रतिक्रिया (immune response) में TH कोशिका, प्रतिजन (antigen) के क्रियाकारी भाग (active part) से जुड़ती हैं तथा प्रतिरक्षी कारक (immune factors) का स्त्रवण (secretion) कर दूसरी कोशिकाओं को प्रतिरक्षी प्रतिक्रिया में भाग लेने के लिए उद्दीपत करती हैं । HIV विषाणु TH कोशिका में प्रवेश कर जाते हैं एवं प्रतिरक्षाकारी हमले से बच जाते हैं । संक्रमित TH कोशिका HIV कणों के उत्पादन एवं मुक्तीकरण के कारण नष्ट हो जाती है । कुछ संक्रमित कोशिकाएँ अन्य 1प्त कोशिकाओं के साथ संलयित (fuse) होकर इनकी कार्यकी को अवरूद्ध कर देती है ।

HIV संक्रमण से मुख्यतया: दो तरीकों से बचा जा सकता है.

(a) HIV के संक्रमण की प्रथम अवस्था में HIv के ग्लाइकोप्रोटीन (gp120) एवं TH कोशिका के CD_4 ग्राही (CD_4 receptor) के मध्य एक अनुक्रिया होती हैं । अत: CD_4 विशिष्ट एकक्लोनी प्रतिकायों का निर्माण कर इस अभिक्रिया को अवरूद्ध किया जा सकता है ।

(b) पुर्नयोजन तकनीक से संलग्न प्रोटीन का निर्माण किया जाता है । यह प्रोटीन CD_4 प्रोटीन एवं Fc प्रोटीन का बना होता है । यह प्रोटीन, विषाणु अथवा विषाणु संक्रमित कोशिकाओं से जुड़कर उनका विनाश करता है ।

एक अन्य तरीके अनुसार CD_4 कोडिंग अनुक्रम को अन्तराकोशिकोय विष (intracellular toxin) सूडोमोनास ऐक्सोटोक्सिन A की कोडिग अनुक्रम के साथ जोड़ दिया जाता है । जब CD_4 अनुक्रम, वायरस संक्रमित कोशिका से जुड़ता है तो अन्तराकोशिकीय विष, वायरस संक्रमित कोशिका को नष्ट कर देता है ।

बोध प्रश्न

1. भैषजिक की परिभाषा लिखिये ।
2. सूक्ष्मजीवों की सहायता से बनाये जाने वाले चिकित्सकीय कारकों के नाम बताओ ।
3. इन्टरफेरोन क्या है?
4. इन्टरफेरोन कितने प्रकार के होते हैं 7
5. इन्टरफेरोन के चिकित्सकीय उपयोगों को नामांकित कीजिये ।
6. इन्टरफेरोन cDNA को किस सूक्ष्मजीव की सहायता से विलगित किया जाता है ।
7. इन्टरफेरोन विलगन में रिवर्स ट्रांसक्रिपटेस की क्या भूमिका है ?

8. जीन अभियांत्रिकी से बने इन्टरफेरोन की क्या विशिष्टता हैं ?
9. इन्टरफेरोन शुद्धिकरण के लिये किन तकनीकों का उपयोग किया जाता है '
10. मानव वृद्धि हार्मोन की महत्ता लिखिये ।
11. मानव वृद्धि हार्मोन प्रोटीन में कितने अमीनों अस्त पाये जाते हैं ?
12. मानव वृद्धि हार्मोन की कमी से कौनसा रोग होता है ?
13. SDS रोग का क्या उपचार है?
14. कृत्रिम हार्मोन बाजार में किस रूप में मिलता है ?
15. कृत्रिम मानव वृद्धि हॉर्मोन को किस प्लाज्मिड की सहायता से बनाया जाता है '
16. इष्टतम जीन अभिव्यक्ति किस पर निर्भर करती है?
17. यूकेरियोटिक अभिव्यक्ति तंत्र में अधिकतर से किस वाहक का उपयोग किया जाता है?
18. प्रोटीन की इष्टतम प्राप्ति हेतु किस प्रकार के अभिव्यक्ति तंत्र का उपयोग किया जाता है?
19. मानव वृद्धि हॉर्मोन के इष्टतम अभिव्यक्ति हेतु किस तकनीक का उपयोग किया जाता है?
20. सिस्टिक फाइब्रोसिस किरन प्रकार का रोग हैं 7
21. सिस्टिक फाइब्रोसिस के लक्षण लिखिए ।
22. सिस्टिक फाइब्रोसिस के कारण किन सूक्ष्मजीवों से संक्रमण हो सकता है?
23. सिस्टिक फाइब्रोसिस रोग के उपचार में कौनसे एन्जाइम काम में आते हैं?
24. सिस्टिक फाइब्रोसिस के उपचार में DNAase की क्या भूमिका हैं ?
25. एल्जीनेट किस प्रकार सिस्टिक फाइब्रोसिस के उपचार में काम आता हैं?
26. एकक्लोनीय प्रतिकाय क्या है?
27. एकक्लोनीय प्रतिकाय किस प्रकार बनाये जाते हैं ?
28. हाइब्रिडोमा तकनीक का विकास किसने किया था?
29. एकक्लोनीय प्रतिकायों के उपयोगों को नामांकित कीजिये ।
30. एकक्लोनीय प्रतिकायों के निर्माण में किस स्तनधारी जन्तु की कोशिकाओं का उपयोग किया जाता है ।
31. एकक्लोनीय प्रतिकायों को किस प्रकार चिकित्सकीय कारकों के रूप में उपयोग किया जाता है?
32. पुनर्योजित ScFv किसे कहते हैं?
33. ScFv किस प्रकार HIV की प्रतिकृति को रोकता है '
34. ई। कोलाई तंत्र स्तनधारी तंत्र से किस प्रकार प्रतिकायों के उत्पादन के लिये बेहतर है?
35. HIV संक्रमण की लक्ष्य कोशिका कौन सी है?

8.6 सारांश (Summary) :

जैव प्रौद्योगिकी के विकास से मानव के हित में काम आने वाली कई उपलब्धियाँ हासिल की गई है जिनमें सबसे ज्यादा महत्वपूर्ण है सूक्ष्मजीवों की सहायता से मानव रोगों के उपचार हेतु काम आने वाले चिकित्सकीय कारकों का उत्पादन । इस उपलब्धि की विशेषता है कि सूक्ष्मजीवों में जीन अभियांत्रिकी द्वारा मानव जीन का प्रत्यारोपण कर ऐसे भैषजिकों का उत्पादन किया जा सकता है जिनका मानव शरीर पर कोई बुरा असर न हों । इन भैषजिकों की भौतिक एवं रासायनिक प्रकृति (physical and chemical nature) भी शरीर की कोशिकाओं द्वारा स्त्रावित भैषजिकों जैसे ही होती हैं । इस कारण शरीर की प्रतिरक्षी कोशिकाओं (immune cells) के द्वारा इनका क्षय नहीं होता है ।

मानव शरीर में रोग एवं संक्रमण के प्रति लड़ने की क्षमता के जिम्मेदार कोशिकाओं एवं पदार्थों में सबसे महत्त्वपूर्ण पदार्थ है इंटरफेरोन । यह एक प्रकार का कोशिकीय प्रोटीन है । कृत्रिम तरीके से बनाया गया इंटरफेरोन बहुत महंगा होता है एवं इसकी मात्रा भी काफी कम होती है । जीन अभियांत्रिकी की सहायता से अब कोशिका में इंटरफेरान जीन का प्रत्यारोपण कर रूपान्तरित कोशिका (transformed cell)बनायी गयी है जिससे इस प्रोटीन का उत्पादन किया जा सकता है । इसके लिए मानव लिम्फोब्लास्टोइड कोशिका में सेन्डाई विषाणु की सहायता से जीन का स्थानान्तरण कर रूपान्तरित कोशिकाओं को इंटरफेरान उत्पादन के लिए प्रेरित किया जाता है एवं संवर्धन माध्यम में इनका निष्कर्षण कर लिया जाता है । इस कार्य के लिए इंटरफेरान cDNA का विलगन कर उसके समरूप बनाये जाते हैं जिन्हें रूपान्तरित कोशिका बनाने में काम लिया जाता है । इंटरफेरान तीन प्रकार के होते हैं एवं एक दूसरे से रासायनिक एवं संरचनात्मक रूप से भिन्न होते हैं । जीन अभियांत्रिकी द्वारा ऐसे इंटरफेरान बनाने की कोशिका की जा रही है जिनमें एक से ज्यादा इंटरफेरान्स के गुण हो । यह संकरित इंटरफेरान पहले से ज्यादा प्रभावी होंगे ।

इसी प्रकार मानव शरीर के सबसे महत्वपूर्ण हॉर्मोन ' 'मानव वृद्धि हॉर्मोन' को भी जीन अभियांत्रिकी द्वारा सूक्ष्मजीव की सहायता से उत्पादित कराया जा रहा है । यह हॉर्मोन शरीर के ऊतकों, हड्डियों, उपास्थियों, माँसपेशियों, चमड़ी, यकृत एवं वृक्क की वृद्धि को नियंत्रित करता है । इसकी कमी के कारण शिशुओं की वृद्धि रूक जाती है । यह रोग एक आनुवंशिक दोष की वजह से होता है एवं उपचार हेतु शिशु को हॉर्मोन दिया जाता है । इस हॉर्मोन के जीन को सूक्ष्मजीवों में निवेश कराकर अब पुर्नयोगी मानव वृद्धि हॉर्मोन (rHGH) का संश्लेषण किया जाता है एवं इसे उपत्वचीय इंजेमान के रूप में बेचा जाता है ।

जैव प्रौद्योगिकी द्वारा उत्पादित तीसरा महत्वपूर्ण चिकित्सकीय कारक है एक कोशिकीय प्रतिकाय । यह भैषणिक हाइब्रीडोमा कोशिका लिम्फोसाईट्स एवं दुर्दम मज्जाबुर्द कोशिका के जोड़ से बनी कोशिकाओं द्वारा स्त्रावित होता है क्योंकि यह प्रतिकाय एक विशिष्ट प्रकार के प्रतिजन के विरूद्ध सक्रिय होते हैं अत: इनका चिकित्सा के क्षेत्र में महत्वपूर्ण स्थान है । इन्हें संक्रामक रोगों के उपचार हेतु कैंसर के उपचार में, प्रतिरक्षी अनुक्रिया को मांडुलित करने में, संक्रामक की पहचान हेतु एवं प्रतिजनों के शुद्धिकरण के लिए उपयोग में लिया जाता है ।

जैव प्रौद्योगिकी का मानव जाति के हित में उपयोग का एक और उदाहरण है एसे विकरों का उत्पादन जिन्हें चिकित्सकीय कारकों की तरह उपयोग में लिया जा सकें । डी.एन.एज 1 एवं एल्जीनेट इसी प्रकार के विकर है जिनका उपयोग सिस्टिक फाइब्रोसिस रोग के उपचार में किया जाता है । यह एक प्रकार का आनुवांशिक रोग है जिसकी वजह से शरीर में बहुत सारे तंत्र काम करना बंद कर दते हैं । इस रोग के कारण शरीर में गाढ़े म्यूकस का स्त्राव होता है जिसकी वजह से फेफड़ों के वायु पथ, आँतों, यकृत की नलियों में अवरोध पैदा हो जाता है एवं शरीर में बहुत सारे विकार पैदा हो जाते है । डी.एन.ए 1 एवं एल्जिनेट विकर म्यूकस में उपस्थित डी.एन.ए. को नष्ट कर देते है एवं गाढ़े म्यूकस को तरल कर दते हैं ।

इन सभी प्रकार के प्रोटीन की इष्टतम अभिव्यक्ति c-DNA की सहायता से कराई जा सकती है । इसमें अभिव्यक्ति वाहक का उपयोग कर पुर्नयोजित जीवाणु कोशिका द्वारा प्रोटीन का उत्पादन किया जाता है ।

8.7 बोध प्रश्नों के उत्तर :

1. यह एक प्रकार का यौगिक है जो बीमारी के उपचार एवं जीवों के स्वास्थ्य में सुधार करता है ।
2. सूक्ष्मजीवों से उपलब्ध चिकित्सकीय कारकों में इन्टरफेरोन विकर, एकक्लोनी प्रतिकाय, टीके इत्यादि है ।
3. इन्टरफेरोन विशिष्ट प्रकार के कोशिकीय प्रोटीन होते हैं जो विषाणुओं को नष्ट करते हैं ।
4. इन्टरफेरोन तीन प्रकार के होते हैं?
   IFNα, IFN and IFNγ
5. इन्टरफेरोन का चिकित्सकीय उपयोग हेपेटाइटिस B एवं पेपिलोमा विषाणु के विरूद्ध उपचार हेतु किया जाता है।
6. इन्टरफेरोन को ई. कोलाई कोशिका की सहायता से विलगित किया जाता है ।
7. रिवर्स ट्रांसक्रिप्टेस DNA पोलीमरेस की तरह कार्य करता है तथा संदेशवाहक RNA से c-DNA बनाने के लिये उपयोग किया जाता है ।
8. जीन अभियांत्रिकी के द्वारा संकरित इन्टरफेरोन बनाया जा सकता है । जिसमें सभी इन्टरफेरोन की विशेषताएं विद्यमान होती है । यह इन्टरफेरोन केन्सर के उपचार में सफल सिद्ध हुए है ।
9. इन्टरफेरोन की शुद्धिकरण हेतु आयन विनिमय, वर्णलेखी मिनरल किलेट वर्णलेखी जेल निस्पन्दन, उच्च दाब द्रव्य वर्णलेखी, सामान्य अवस्था, उच्च दाब द्रव्य वर्णलेखी एवं उत्क्रम अवस्था उच्च दाब वर्णलेखी का उपयोग किया जाता है ।
10. मानव वृद्धि हॉर्मोन, वृद्धि के नियमन में बहुत महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं ।
11. मानव वृद्धि हार्मोन प्रोटीन में 191 अमीनों अम्ल पाये जाते हैं ।
12. मानव वृद्धि हॉर्मोन की कमी से SDS (सोमेटोट्रोफिन डेफिसियेन्सी सिन्ड्रोम) जो एक आनुवांशिकता से होता है। यह एक प्रकार का आनुवांशिक रोग है ।

13. SDS रोग के उपचार हेतु प्राकृतिक एवं पुनर्योगी मानव वृद्धि हार्मोन को पूरक (supplement) के रूप में उपयोग किया जाता है ।
14. कृत्रिम हॉर्मोन बाजार में इन्जेक्शन के रूप में उपलब्ध है । यह अन्तःपेशिय अथवा उपत्वचीय इंजेक्शन के रूप में दिये जाते हैं ।
15. कृत्रिम मानव वृद्धि हॉर्मोन को PBR^{322} प्लाज्मिड़ की सहायता से बनाया जाता है ।
16. इष्टतम जीन अभिव्यक्ति परपोषी तंत्र एवं इसकी अभिव्यक्ति के लिए प्रयुक्त नियमकारी अनुक्रम पर निर्भर करती है ।
17. यूकेरियोटिक अभिव्यक्त तंत्र में सेकेरोमाइसिस सेरिविसी का उपयोग किया जाता है ।
18. इस हेतु प्रोटीन को संलयन प्रोटीन के रूप में अभिव्यक्त कराया जाता हैं जिसमें इच्छित जीन को स्थाई परपोषी प्रोटीन से सहसंयोजित कर लिया जाता है । जिससे प्राप्त प्रोटीन संलयन प्रोटीन के रूप में अभिव्यक्त होता है जो स्थाई होता है ।
19. मानव वृद्धि हॉर्मोन के इष्टतम अभिव्यक्ति हेतु c-DNA तकनीक का प्रयोग किया जाता है ।
20. सिस्टिक फाइब्रोसिस एक प्रकार का आनुवंशिक दोष है ।
21. सिस्तिक फाइब्रोसिस के लक्षण में फेफड़ों व साइनसिस में यह रोग वायु पथ में सूजन व म्यूकस द्वारा वायु पथ अवरूद्ध हो जाता है । मुख्य लक्षणों में खांसी के साथ खून आना, फेफड़ों के मुख्य वायु मार्ग के संरचना में बदलाव, फेफड़ों के रक्त चाप का बढ़ना, हृदयघात, शरीर में ऑक्सीजन की कमी आदि ।
22. सिस्टिक फाइब्रोसिस के कारण **ऐस्परर्जिलस** के संक्रमण से ऐस्परर्जिलोसिस तथा **माइकोबेक्टिरियम ऐवियम** के संक्रमण से तपेदिक हो जाता है ।
23. इस रोग के उपचार में DNAase I व ऐल्जिनेट लायऐस एन्जाइम का उपयोग किया जाता है ।
24. DNAase एन्जाइम DNA के फोस्फोडाईएस्टर लिकेज को तोड़ देता है इसी गुण के कारण इसका सिस्टिक फाइब्रोसिस के उपचार हेतु प्रयोग किया जाता है ।
25. ऐल्जिनेट लायऐस ग्लाइकोसाइडिक बंध को तोड़ देता है जिससे DNA का लयन हो जाता हैं इस प्रकार इसे सिस्टिक फाइब्रोसिस के उपचार में प्रयुक्त किया जाता है ।
26. एकक्लोनीय प्रतिकाय वह है जो किसी विशिष्ट प्रकार के प्रतिजन के विरूद्ध ही सक्रिय होते हैं ।
27. एकक्लोनीय प्रतिकाय हाइब्रिडोमा तकनीक की सहायता से बनाये जाते हैं ।
28. एकक्लोनीय प्रतिकाय के निर्माण हेतु तकनीक का विकास कोहलर व माइलस्टिन ने केम्ब्रिज विश्वविद्यालय में किया था ।
29. एकक्लोनीय प्रतिकाय का उपयोग संक्रामक रोगों के उपचार हेतु केन्सर के उपचार में, प्रतिरक्षी अनुक्रिया को माण्डुलित करने में, संक्रमण के कारकों के निदान हेतु विशिष्ट प्रकार के प्रतिजनों के शुद्धिकरण हेतु किया जाता है ।
30. एकक्लोनीय प्रतिकायों के निर्माण हेतु चूहे की β-कोशिकाओं का उपयोग किया जाता है ।

31. इसका उपयोग चिरकालिक संक्रमित बीमारी जैसे HIV ,संक्रमण से बचने के साथ-साथ, चिरकालिक औषधि खपत के दुष्प्रभाव से बचने के लिये होता है ।
32. यह प्रतिकाय एकल श्रृंखला परिवर्तित क्षेत्र खण्ड है जिसे एकक्लोनी प्रतिकायों के निर्माण में प्रयोग में लिया जाता है ।
33. ScFc HIV के अक्रिय अणुओं से बंधित होता है एवं HIV की प्रतिकृति को रोकता है ।
34. ई.कोलाई तंत्र, स्तनधारी तंत्र से बेहतर है क्योंकि स्तरनधारी तंत्र में प्रतिकाय उत्पादन में 3-4 महीने लगते हैं जबकि ई. कोलाई में केवल एक महीने में प्रतिकाय प्राप्त की जा सकती है ।
35. T-सहायक कोशिक HIV संक्रमण की लक्ष्य कोशिका है ।

8.10 अभ्यासार्थ प्रश्न (Exercise Question) :

1. इन्टरफेरोन की उपयोगिता पर निबंध लिखिये ।
2. इन्टरफेरोन-cDNA के विलगन एवं इन्टरफेरोन के उत्पादन की तकनीक का विवरण दीजिये ।
3. मानव वृद्धि हॉर्मोन की उपयोगिता को विस्तृत रूप से समझाइए ।
4. पुर्नर्योगज मानव वृद्धि हॉर्मोन के उत्पादन की प्रक्रिया लिखिए ।
5. एकक्लोनीय प्रतिकायों के उत्पादन के प्रक्रम को विस्तार से समझाइए ।
6. एकक्लोनीय प्रतिकायों के चिकित्सकीय कारकों के रूप में उपयोग पर निबंध लिखिए ।
7. इन्टरफेरोन व मानव वृद्धि हॉर्मोन के इष्टतम जीन अभिव्यक्ति हेतु आवश्यक कारकों का वर्णन कीजिये ।
8. एकक्लोनीय प्रतिकायों का कैंसर के इलाज में भूमिका को समझाइए ।
9. ई. कोलाई का प्रतिकायों के उत्पादन हेतु उपयोग पर विस्तृत विवरण लिखिए ।

8.7 शब्दावली (Glossary) :

प्रतिजैविक	-	Anitibiotic
बायोरिऐक्टर	-	Bioreactor
cDNA	-	Complementary DNA
रिवर्स ट्रांसक्रिप्सन	-	Reverse Transcription
रिवर्स अवस्था HPLC	-	Reverse Phase HPLC
जेल निस्पंदन	-	Gel Filtration
सिग्नल अनुवादन	-	Singla Transduction
अभिव्यक्त कारक	-	Expression vector
निष्क्रिय प्रतिरक्षिता	-	Inactive emmunity
केन्सर	-	Cancer
वर्धक	-	Promoter

रेस्ट्रिक्शन ऐण्डोन्यूक्लिएज	-	Restriction Endonuclease
पोलीऐडिनाइलेशन	-	Polyadenylation
B-कोशिका	-	B-Cell
माइलोमा कोशिका	-	Myeloma Cell
Th कोशिका	-	Th Cell

8.8 संदर्भ ग्रन्थ (Reference Books):

1. सिंह, बायोटेक्नोलोजी, कल्याणी पब्लिशर्स, नई दिल्ली ।
2. क्रिमीसिनोफ एवं फेरान्टे, बायोटेक्नोलोजी करंट प्रोग्रेस, टेक्मोमीक पब्लिशिंग कं. इन्क ।
3. ग्लिक एवं पैटरनेक मोलीक्यूलर बायोटेक्नोलोजी, पनिमा पब्लिशिंग कार्पोरेशन, नई दिल्ली ।

इकाई 9

टीकाकरण

(Vaccination)

ईकाई की रूपरेखा

9.0 उद्देश्य

9.1 प्रस्तावना

9.2 हर्पीज सिम्पलेक्स वाइरस टीका

9.2.1 रोग के लक्षण

9.2.2 टीकाकरण

9.2.3 टीका बनाने की विधि

9.3 खुरपका एवं मुँहपका रोग

9.3.1 रोग के लक्षण

9.3.2 टीकाकरण

9.4 तपेदिक

9.4.1 रोग के लक्षण

9.4.2 टीकाकरण

9.4.3 टीका बनाने की विधि व क्रियाविधि

9.5 पेप्टाइड टीका

9.5.1 टीका बनाने की विधि

9.5.2 टीके के लाभ

9.5.3 टीके की हानियाँ

9.5.4 कमियाँ

9.6 आनुवांशिक प्रतिरक्षण

9.6.1 टीका बनाने की विधि

9.6.2 क्रियाविधि

9.6.3 डिलीवरी तंत्र

9.6.4 लाभ

9.6.5 हानियाँ

9.7 क्षीण टीके

9.7.1 टीका निर्माण विधि

9.7.2 टीकाकरण विधि

9.7.3 क्रियाविधि

9.7.4 क्षीण टीकों के उदाहरण

9.7.5 उपयोगिता
9.7.6 हानियाँ
9.8 सारांश
9.9 बोध प्रश्नों के उत्तर
9.10 अभ्यासार्थ प्रश्न
9.11 शब्दावली
9.12 संदर्भ ग्रंथ

9.0 उद्देश्य (Objectives):

इस अध्याय में विभिन्न प्रकार के टीकों व कुछ विशिष्ट बीमारियों के लिए उपलब्ध टीकों का वर्णन प्रस्तुत किया गया है । इस अध्याय को पढ़ने के पश्चात् आप निम्नलिखित बिन्दुओं से अवगत हो जायेंगे ।

टीकाकरण (Vaccination) एवं टीकों की परिभाषा

- टीका के प्रकार
- HSV का टीकाकरण तथा उसकी रोकथाम ।
- टयूबरक्यूलोसिस के विरूद्ध टीकाकरण ।
- खुरपका और मुँहपका बीमारी के लिए उपलब्ध टीका तथा इस रोग की रोकथाम हेतु उपाय ।
- पेप्टाइड टीकों का उपयोग एवं इनके द्वारा बीमारियों की रोकथाम ।
- क्षीण टीके क्या है तथा क्षीण टीकों का उपयोग ।
- जननिक प्रतिरक्षा ।
- वाहक टीकों का महत्त्व ।

9.1 प्रस्तावना (Introduction):

ठीका (vaccine) एक प्रकार का प्रतिजनिक (antigenic) पदार्थ होता है जो शरीर में रोग निरोधक क्षमता प्रदान करता है । यह शब्द एडवर्ड जेनर (Edward Jenner) के द्वारा व्यूत्पन्न किया गया था एवं इसका उद्गम ग्रीक भाषा के शब्द वाका (vacca) यानि गाय से हुआ है ।

टीकाकरण की क्रिया में प्रतिजनिक पदार्थ को व्यक्ति विशेष के शरीर में विभिन्न तरीकों से प्रवेश करवाया जाता है, जिसके कारण व्यक्ति के शरीर में रोगों से लड़ने की क्षमता जागृत होती है । ये प्रतिजनिक पदार्थ शरीर में सक्रिय कृत्रिम प्रतिरोधकता (active artificial immunity)को उद्दीप्त (stimulate) करते हैं ।

टीके सामान्यत: विषाणु (virus), जीवाणु(bacteria)इत्यादि के जीवित अथवा दुर्बल प्रभेद (weakened strain)होते हैं । इनसे शरीर में रोग के मन्द (mild) लक्षण उत्पन्न होते हैं एवं रोगकारक(pathogen) के विरूद्ध प्रतिरक्षीकायों (antibodies) का निर्माण होता है । यह प्रतिरक्षीकाय व्यक्ति को इस विशिष्ट रोग से जीवन पर्यन्त सुरक्षा प्रदान करते हैं ।

टीकों के प्रकार (Types of Vaccines)

प्राय: सात प्रकार के टीकों का उपयोग किया जाता है । इन टीकों का विभिन्न वर्गों में बाँटा जा सकता है

(चित्र 9.1) -

(अ) टीके जिनमें रोगकारक का उपयोग किया जाये । ये निम्न प्रकार के होते हैं -

अक्रिय रोगकारक (Inactivated pathogen) :

यह रोगकारक संक्रामक (virulent) सूक्ष्मजीव होते हैं, जिन्हें रसायन या ऊष्मा द्वारा अक्रिय कर दिया जाता है, जिसके फलस्वरूप इनकी रोगजनक क्षमता नष्ट हो जाती है । फ्लू (Flu), कोलेरा (cholera), युबोनिक प्लेग (bubonic plague) तथा हिपेटाइटिस A के विरूद्ध काम में लिए जाने वाले टीके इसका उदाहरण है । इस प्रकार के टीके अधिकतर अपूर्ण (incomplete) या अल्पकालिक (short lived) रोगप्रतिरोधक क्रियाएँ प्रदान करते हैं ।

जीवित रोगकारक (Live pathogen) :

यह जीवित सूक्ष्मजीव (microorganisms) होते है जो कि ऐसी परिस्थितियों में संवर्धित किए जाते हैं जो उनके संक्रामक गुणों को समाप्त कर देती है । ये प्रारूपिक (typically) रूप से स्थायी (durable) रोगप्रतिरोधी क्रियाओं (immunological responses) को उत्तेजित करती है । इसके उदाहरण है - पीत ज्वर (yellow fever), मीजल्स (measles), रूबेला (rubella) और मम्पस (mumps) के टीके ।

(ब)टीके जिनमें रोगकारक स्त्रावित पदार्थों अथवा रोगकारक के किसी भागा का प्रयोग किया जायें । ये निम्न प्रकार के होते हैं -

टॉक्साइड टीके (Toxoid vaccines) :

यह सूक्ष्मजीवों के अक्रिय विष पदार्थ होते हैं जो कि रोगप्रतिरोधी क्रिया उत्पन्न करने हेतु उपयोग में लाये जाते हैं । टॉक्साइड आधारित टीकों के उदाहरण है - टिटेनस (Tetanus) एवं डिफ्थीरिया (Diptheria) के टीके ।

संयुग्मी टीके (Conjugate vaccines) :

कुछ जीवाणुओं का बाह्म आवरण (coat) बहु शर्कराओं (polysaccharides) से निर्मित होता है जो की अल्प प्रतिरक्षी (poorely immunogenic) होता है । इन बाह्मकवचों को प्रतिजनिक के प्रोटीन से जोड़कर शरीर में प्रवेश करवाया जाता है । प्रतिरक्षी तंत्र इस संयुग्मी को प्रोटीन प्रतिजनिक के कारण पहचानता है तथा प्रतिरक्षा प्रदान करता है । यह प्रक्रिया हिमोफिलस इन्फ्लुएंजी (Haemophilus influenza) वर्ग B टीका में प्रयुक्त होती है ।

पुर्नयोजित वाहक टीके (Recombinant Vector Vaccine) :

इस प्रकार के टीकों में सर्वप्रथम प्रतिजनिक जीन को एक प्लाज्मिड वाहक (plasmid Vector) में निवेशित (insert) कराया जाता है । इस पुर्नयोजित वाहक को परपोषी जीवाणु कोशिका में प्रवेश करा दिया जाता है । यह जीवाणु अब प्रतिजनिक का निर्माण करने लगते हैं । इन जीवाणुओं को वृहद स्तर पर संवर्धित किया जाता है एवं संवधित कोशिकाओं का लयन कर

जीवाणु लाईसेट (bacterial lysate) से प्रोटीन का शुद्धिकरण कर लिया जाता है । इस प्रोटीन को रोग रो प्रतिरक्षा प्रदान करने हेतु टीके के रूप में उपयोग में लिया जाता है ।

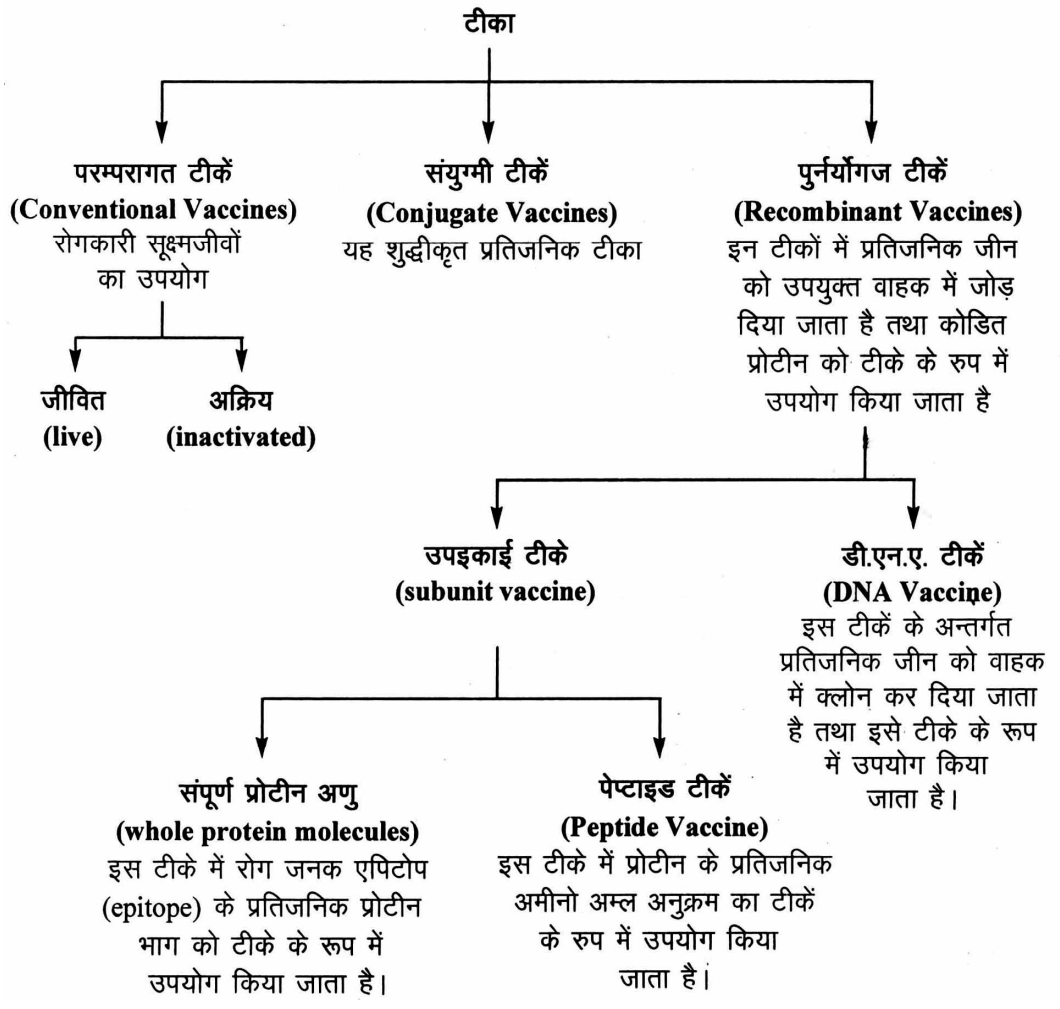

(A) उपइकाई टीके (Subunit vaccines) :

इसमें किसी संपूर्ण अक्रिय सूक्ष्मजीव (inactivated microorganisms) को प्रवेश न करवाकर उसके किसी खण्ड (fragment) को रोगप्रतिरोधी क्रिया (immune response) उत्पन्न करने हेतु उपयोग में लिया जाता है । उदाहरण - वाइरस सदृश्य कण (Virus Like Particle VLP) टीका, मानव पेपीलोमा वाइरस (Human papilloma Virus) के विरूद्ध तैयार किया गया है जो कि वाइरल वृहत प्रोटीन का बना होता है ।

(B) डी.एन.ए. टीके (DNA Vaccines) :

इस प्रकार के टीकों में प्रतिजनिक डी.एन.ए. अनुक्रम (antigenic DNA Sequence) अथवा जीन को अभिव्यक्ति वाहक (expression vector) में निवेशित करा कर, इस वाहक को टीके के रूप में प्रयोग किया जाता है । इस वाहक को टीके के रूप में प्रयोग किया जाता है । शरीर में इस वाहक की कई प्रतिकृतियाँ बन जाती है जो प्रतिजनिक प्रोटीन (antigenic protein) का

निर्माण करती है । प्रोटीन की पर्याप्त मात्रा बन जाने पर यह शरीर को रोग के प्रति सुरक्षा प्रदान करता है ।

टीकों से रोगों के विरूद्ध सुरक्षा मिलती है परन्तु टीकाकरण के बाद भी व्यक्ति के रोगग्रसित होने की संभावना रहती है । ऐसा इसलिए होता है क्योंकि परपोषी (host) का प्रतिरक्षा तन्त्र उचित रूप से या पूर्ण रूप से प्रतिक्रिया नहीं दर्शाता है । यहाँ तक कि परपोषी (host) में प्रतिकाय (antibody) विकसित करने पर भी मानव प्रतिरक्षा तन्त्र उत्तम नहीं होता है । कुछ रोगजनक उत्परिवर्तित (mutate) हो सकते हैं उदाहरण: सामान्य शीत (जुकाम) एवं इन्फ्लूएंजा (influenza) वाइरस । ऐसी स्थिति में प्रतिरक्षी तन्त्र संक्रमण को समाप्त करने में समर्थ नहीं हो सकता है ।

चित्र 9.1: टीकों के प्रकार

विभिन्न प्रकार के विषाण्वक व जीवाण्विक रोगों से प्रतिरक्षा प्राप्त करने हेतु विभिन्न टीकों का उपयोग विभिन्न आयुकाल में तथा विभिन्न मात्रा में दिया जाता है जिसे निम्न सारणी में दर्शाया गया है -

Vaccine	**Type**	**Dose Schedule**	**Route of Administrator**
Haemophilus Influenza B		1st Dose 6 Weeks	
Diptheria (D)	Toxoid	2nd Dose 10 Weeks	Deep Subcutaneous or Intramuscular
Tetanus (T)	Toxoid	3rd Dose 14 Weeks	
Wooping Cough (Pertusis)	Killed whole organism		
Oral Polio Virus	Live attenuated (three serotypes)		Oral
MMR	Live attenuated	15th Month	Deep, Subcutaneous
Measles	Live attenuated	9 Month	or Intramuscular
Booser 1 and 2 DTP	Live attenuated	18 Months and5 years	Deep, Subcutaneous or Intramuscular
Boster MMR	Live attenuated	$4\frac{1}{2}$ years	Deep, Subcutaneous or

BCG	Live attenuated	within 1st month	Intramuscular Intradermal
HIB Booster	Peptide	15 months	Deep, Subcutaneous or Intramuscular
Hepatitis B	Peptide	stan interval of 0,6 months at any age	Deep, Subcutaneous or Intramuscular
Hepatitis A	Peptide	2 years and Repeatat $2\frac{1}{2}$ Years	Deep, Subcutaneous or Intramuscular

9.2 हर्पीज सिम्पलेक्स वाइरस टीका (Herpes Simplex Virus Vaccine):

यह विषाणु मुख्यतया जननीक हर्पीज (Genital herpes) के लिए उत्तरदायी होता है । इसका संक्रमण नवजात में भी संक्रमित माँ के द्वारा हो जाता है तथा जन्मजात हर्पीज (Congential herpes) के लिए उत्तरदायी है । इस विषाणु के दो प्रतिरूप HSV-I तथा HSV-2 पाये जाते हैं जिसमें से HSV type 2 जननीक हर्पीज (gential herpes) के लिए उत्तरदायी है जो मुख्यतया लैंगिक संबन्धो के द्वारा फैलता है । हर्पीज सिम्पलेक्स विषाणु में आनुवांशिक पदार्थ के रूप में परम पाया जाता है । यह विषाणु कुल हर्पीज सिम्पलेक्स (herpes viridae), उपकुल अल्फा हर्पीज वाइरिनी (alpha virinae), वंश सिम्पलेक्स (simplex) में वर्गीकृत है ।

9.2.1 हर्पिस रोग के लक्षण

(1) रोग की शुरुआत में बुखार (fever) एवं संक्रमित अंगों (infected organs) में जलन (burning sensation) रहती है ।

(2) संक्रमित भाग पर छाले (Blisters) बन जाते हैं ।

(3) स्थानीय शोधा अनुक्रिया (local inflammatory response) के कारण संक्रमित स्थान पर सूजन हो जाती है। इस स्थान पर द्रव्य के साथ संक्रमण करने वाले विषाणु भी पाये जाते हैं।

कुछ मामलों में यह विषाणु सरवाईकल कैन्सर (cervical cancer) का भी कारक हो सकता है । इह विषाणु की सुप्तावस्था तंत्रिका कोशिकाओं में पायी जाती है । सूर्य का प्रकाश, बीमारी तथा तनाव आदि इस विषाणु के सक्रिय होने के लिए उत्तरदायी होते हैं ।

9.2.2 हर्पिस के विरूद्ध टीकाकरण (Vaccination Against Herpes)

HSV टीकाकरण में पेप्टाइडों, प्रोटीनों, विषाणु प्रोटीन के मिश्रणों, निर्जीव विषाणुओं, दोषयुक्त प्रतिकृति विषाणु, अक्रिय (attenuated) एवं प्रतिकृति कॉम्पीटेन्ट विषाणु का उपयोग किया गया है ।

कुछ टीके जो HSZ के विरूद्ध कारगर सिद्ध हुए है, इस प्रकार है :-

(अ) पेप्टाइड टीके

इस टीके में विषाणु प्रतिजन के प्रतिरक्षी भाग (immunogenic portion), जो कुछ अमीनों अम्लो मिलकर बना पेप्टाइड होता है, का उपयोग किया जाता है । यह टीका उच्च प्रतिरोधकता के लिये उत्तरदायी होता है । यह टीका कोशिकाओं (प्रतिरक्षी कोशिका) की उच्च मात्रा को प्रेरित करता है एवं रोग प्रतिरोधक क्षमता प्रदान करता है ।

पेप्टाइड टीकों को बनाने के लिए प्रतिजनिक प्रोटीन को पहचानना आवश्यक होता है । इस हेतु एकक्लोनी प्रतिकायों (monoclonal antibodies) का प्रयोग किया जाता है । संश्लेषित पेप्टाइड (synthesized peptide) अधिक प्रतिरक्षी नहीं होते है अत: इन्हें वाहक प्रोटीन (vector protein) से जोड़कर इसके अनुरूप एडल्युवेन्ट (adjuvant) को मिलाकर इसका उपयोग किया जाता है जिसके फलस्वरूप इसकी प्रतिरोधक क्षमता बढ़ जाती है ।

(ब) सबयूनिट टीके

इसके अन्तर्गत पूरे विषाणु का उपयोग करने के बजाय उनके घटकों को जिसमें मुख्यतया केपसिड (प्रोटीन खोल) या आवरीत प्रोटीन को टीके के रूप में प्रयोग किया जाता है । हर्पीज सिम्पलेक्स विषाणु में आवरित ग्लाइकोप्रोटीन D(glycoprotein) को सबयूनिट टीके के रूप में उपयोग किया जाता है जो प्रतिरक्षीकायो के उत्पादन को प्रेरित करता है । इस हेतु रक्षी प्रोटीन्स को पहचाना जाता है तथा इन प्रोटीन्स से पुर्नयोजी DNA तकनीक या संश्लेषित पेप्टाइड तकनीक द्वारा सबयूनिट टीका बनाया जाता है । यह निम्न प्रकार से तैयार किया जाता है -

- सर्वप्रथम प्रोटीन को कोड करने वाले जीन की पहचान की जाती है ।
- इसके उपरान्त इस जीन को क्लोन किया जाता है तथा इसे प्रोटीन के उत्पादन हेतु काम लिया जाता है ।
- प्राप्त रक्षी प्रोटीन का एकक्लोनी प्रतिकाय युक्त इम्यूनोसोरबेन्ट कॉलम द्वारा किया जाता है । इस शुद्ध प्रोटीन को अनुकूल एड्ज्यूवेन्ट (suitable adjuvant) के साथ मिलाकर टीके के रूप में उपयोग किया जाता है ।

(स) निर्जीव विषाणु टीका

इस टीके के अन्तर्गत विषाणु को विभिन्न उपायों द्वारा मृत किया जाता है एवं निर्जीव विषाणु का टीके के रूप में प्रयोग किया जाता है । इस प्रकार तैयार किए गए टीके का उपयोग दूसरे टीकों की अपेक्षा कम कारगर सिद्ध हुआ है ।

- HSV से ग्रसित कोशिकाओं से कोशिका निलंबन तैयार किया जाता है जिसमें से कोशिकाओं को पृथक् कर अधिप्लव प्राप्त कर लिया जाता है ।

- इस प्रक्रिया के फलस्वरूप तैयार अधिप्लवी (supernatant) जिनमें विषाणु कण एवं विषाणु प्रोटीन उपस्थित होते हैं को फार्मेल्डीहाइड से उपचारित किया जाता है । इस उपचार से विषाणु निर्जीव हो जाते हैं ।
- तैयार टीके को उपचार के लिए उपयोग किया जाता है ।

9.3 मुँहपका एवं खुरपका रोग:

यह रोग विषाणु द्वारा होता है जिसमें आनुवांशिक पदार्थ के रूप में एकसूत्रीय RNA पाया जाता है । यह पशुओं व सूअरों में होने वाला घातक रोग है । यह विषाणु हिरण, बकरियों, भेड़ों, घोड़े इत्यादि खुरधारी जानवरों में भी रोग के लिए उत्तरदायी है । मनुष्य में यह रोग दुर्लभता से होता है । यह विषाणु एपोवाइरस वंश एवं पिक्नोवाइरिडी कुल का सदस्य है ।

9.3.1 रोग के लक्षण

(1) इस रोग में तेज बुखार रहता है जो 2-3 दिन बाद एकदम से कम हो जाता है ।
(2) मुख के अंदर छाले (Blisters) हो जाते हैं जिससे झागदार लार स्त्रावित होती है ।
(3) इस तरह के फफोले पाँव पर भी हो जाते हैं जो फटने के बाद घाव के समान दिखाई पड़ते है ।
(4) वयस्क जानवरों का वजन कम हो जाता है ।
(5) गायों में दूध का उत्पादन कम हो जाता है ।

इस विषाणु का संक्रमण, संक्रमित पशु व खाद्य पदार्थ के सम्पर्क में आने पर होता है । मनुष्य में प्रमुख लक्षणों के रूप में उल्टीयाँ होना, बुखार, मुँह में लाल अल्सर का होना, त्वचा पर पुटिका (Cyst) का बन जाना इत्यादि है ।

9.3.2 टीकाकरण

मुख एवं खुर विषाणु के प्रमुख प्रकार पाये जाते हैं जिन्हें सीरम प्रारूप (serotypes) कहा जाता है । इस विषाणु के विरूद्ध टीके विकसित करना बहुत मुश्किल है क्योंकि यह विषाणु निरन्तर विकसित तथा उत्परिवर्तित (mutae) होता रहता है । इस कारण इसमें एक सीरम प्रारूप के लिए परिवर्धित किया गया टीका दूसरे सीरम प्रारूप से रक्षा प्रदान नहीं करता है । सीरम प्ररूपी में उत्परिवर्तित शृंखला होती है जो निश्चित रूप से जीन के लिए 30% अलग होती है अत: मुख एवं खुर रोग के टीके किसी भी विभेद (strain) के लिए विशिष्ट (specific) होने चाहिए । कुछ टीके जो मुख एवं खुर रोग के लिए उपयोग में आते हैं, इस प्रकार है -

(अ) निर्जीव विषाणु टीका

इस टीके के अन्तर्गत उत्तरदायी विषाणु को विभिन्न रासायनिक उपायों द्वारा मृत किया जाता है । इन निर्जीव विषाणुओं को अनुकूल एड्ज्यूवेन्ट के साथ मिलाकर टीके के रूप में प्रयोग किया जाता है ।

(ब) सबयूनिट टीका

इस टीके के अन्तर्गत उत्तरदायी वाइरस के प्रोटीन घटक को टीके के रूप में उपयोग किया जाता है । इसके लिए जीन जो इस प्रोटीन को कोड करता है को वेक्टर में प्रवेश कराकर उसके कई प्रतिरूप बनाये जाते हैं जो कि पर्याप्त मात्रा में प्रोटीन उपलब्ध कराते हैं जिससे उच्च प्रतिरोधक क्षमता प्राप्त होती है ।

9.4 ट्यूबरक्युलोसिस अथवा टीबी. (Tuberculosis or T.B)

यह रोग माइकोबैक्टीरियम ट्यूबरकुलोसिस (Mycobacterium tuberculosis) जीवाणु के द्वारा फैलता है । यह जीवाणु फेफड़ों में छोटी और सख्त गाँठें बनाता है जिन्हें ट्यूबरकल्स (tubercles) कहते हैं । इसलिए इस जीवाणु जनित रोग को ट्यूबरकुलोसिस कहा जाता है । यह रोग बहुतायत संक्रमित भोजन व पानी से फैलता है । संक्रमित मनुष्य से स्वस्थ मनुष्य में इस रोग का संक्रमण वायु के माध्यम से श्वसन तंत्र में होता है ।

9.4.1 रोग के लक्षण

(1) यह जीवाणु प्राथमिक अवस्था में फेफडों में छोटी एवं सख्त गांठे बनाता है जिन्हें ट्यूबरकल्स कहते हैं ।
(2) रोगी को बुखार व वजन कम होने की शिकायत रहती है ।
(3) रोगी के मुँह से खून के धब्बों युक्त कफ आता है जो इस रोग का मुख्य लक्षण है ।

9.4.2 टीकाकरण

ट्यूबरकुलोसिस रोग हेतु बी0सी0जी0 के टीके का प्रयोग किया जाता है । यह एक अक्रिय टीका (attenuated vaccine) है । यह टीका ट्यूबरकुलोसिस से प्रतिरक्षा के साथ-साथ इस रोग के अन्य लक्षण जैसे मस्तिष्क ज्वर से सुरक्षा प्रदान करता है । इस टीके को सर्वप्रथम दो फ्रांसीसी वैज्ञानिक कैलमाइट (Calmitte) एवं गुएरीन (Guarine) ने तैयार किया था इसलिए इसे बी.सी.जी नाम दिया गया ।

इस टीके का पूरा नाम Bacilus Calmitte Guarine है । यह टीका ट्यूबरकुलोसिस जीवाणु का कमजोर प्रतिरूप है । यह टीका बच्चों को पैदा होने के कुछ समय बाद भुजा के ऊपरी भाग में दिया जाता है । टीका लगाने की जगह पर 2-6 सप्ताह तक एक छोटा धब्बा रहता है जो कुछ समय बाद ठीक होकर दाग के रूप में रह जाता है । टीके के बाद कुछ दिनों तक बच्चे को बुखार की शिकायत रहती है जो कुछ दिन बाद सामान्य हो जाती है । टीके को 0.1 मिलीलीटर मात्रा में जिसमें 1.2 मिलीयन जीवित बैसीलाई जीवाणु होते हैं दी जाती है ।

9.4.3 टीके का निर्माण व क्रियाविधि (Mode of Action)

सर्वप्रथम माइकोबैक्टीरियम ट्यूबरैक्युलोसिस जीवाणु के कमजोर प्रतिरूप को तैयार किया जाता है । इस हेतु इस जीवाणु को बाइल पोटेटो (bile potato) संवर्धन माध्यम पर कुछ सालों तक संवर्धित किया जाता है ।

जीवाणु का कमजोर प्रतिरूप शरीर में प्रवेश करने के पश्चात् अपनी कई सारी प्रतिकृतियाँ बनाता है जिससे बहुतायत में प्रोटीन बनता है । यह प्रोटीन प्रतिरक्षीकायो (antibodies) के संश्लेषण

को उत्प्रेरक करते हैं । इरा प्रकार इस जीवाणु के प्रोटीन के विरूद्ध शरीर में पर्याप्त प्रतिरक्षीकायों के उपस्थित होने से जीवन पर्यन्त इस रोग के विरूद्ध प्रतिरोध प्राप्त होता है ।

9.5 पेप्टाइड टीके (Peptide Vaccine) :

यह टीका सबयूनिट टीके का ही एक प्रकार है जिसके अन्तर्गत संपूर्ण (antigenic) प्रतिजैनिक प्रोटीन का उपयोग करने के बजाय केवल छोटे-छोटे पेप्टाइड (peptide) भाग जो प्रतिरक्षी तंत्र को प्रेरित करते हैं, को टीके के रूप में प्रयोग किया जाता है । चूँकि इसके अन्तर्गत सिर्फ प्रतिरक्षी क्षमता वाले (immunoenic) छोटे से पेप्टाइड को टीके के रूप में प्रयोग किया जाता है, अत: इसे पेप्टाइड टीका कहते हैं । इस दिशा में आधुनिकीकरण के लिए संश्लेषित टीका तैयार किया गया जिसमें उपयुक्त एडज्यूवेन्ट (adjuvant) या वाहक प्रोटीन (carrier protein) का उपयोग किया जाता है जो खुरपका एवं मुँहपका रोग, हिपेटाइटिस बी एवं मलेरिया के लिए कारगर सिद्ध हुआ है ।

9.5.1 टीका बनाने की विधि (Technique of Vaccine Preparation)

(1) सर्वप्रथम प्रतिजन निर्धारक (antigenic determinant) से केवल प्रतिरक्षी क्षमता वाले पेप्टाइड (immunogenic peptide) का पृथ्यक्करण किया जाता है ।

(2) इन पृथक्किंत पेप्टाइडों (अमीनों अम्ल श्रृंखला) को बड़े वाहक प्रोटीन (carrier protein) से जोड़कर शरीर में रोग से प्रतिरक्षा के लिए प्रवेश करवाया जाता है । वाहक प्रोटीन इन छोटे पेप्टाइड्स को खण्डित (fragmented) होने से बचाता है तथा प्रतिरक्षी प्रभाव में वृद्धि करता है ।

(3) पेप्टाइड टीके के जरिये प्रभावी प्रतिरक्षा (effective immunization) को प्राप्त करने के लिए उच्च प्रतिरक्षी क्षमता वाले वाहक प्रोटीन का उपयोग किया जाता है ।

खुरपका एवं मुँहपका रोग (Foot and Mouth Disease) में कैप्सिड विषाण्वीय प्रोटीन (capsid viral protein) VP_1 को पेप्टाइड टीके के रूप में प्रयोग किया जाता है और उच्च प्रतिरक्षी क्षमता (higher immunogenic response) को प्राप्त करने के लिए VP_1 । पेप्टाइड को हिपेटाइटिस बी वाहक प्रोटीन (Hepatitis B carrier protein) से जोड़ दिया जाता है । इन टीकों की प्रतिरक्षी क्षमता को बढ़ाने के लिए इन टीकों में कुछ सुधार/परितर्वन (modification) किये गये है जो इस प्रकार है -

(1) हेल्पर टी-कोशिका एपीटोप (Helper T cell epitope) को पेप्टाइड में मिलाया (incorporate) जाता है व इस पेप्टाइड को टीके के रूप में प्रयोग किया जाता है ।

(2) प्रतिजनकता (antigenecity) को बढ़ाने के लिए पेप्टाइड का चक्रीकरण (cyclization).

(3) पेप्टाइड को इसके प्रोटीन के प्रतिजनिक क्षेत्र (antigenic region) में मिलाया जाना जैसे हिपेटाइटिस बी विषाणु की सतह या कोर (core) प्रतिजन में । इस प्रकार के मिश्रण (combination) से ऐसे पेप्टाइड का निर्माण होता है जो उच्च प्रतिरक्षी (highly immunogenic) होता है ।

9.5.2 पेप्टाइड टीके का लाभ (Advantage of Peptide Vaccine)

(1) पेप्टाइड टीके सुरक्षित, स्थायी एवं रासायनिक रूप से परिभाषित (chemically defned) होते हैं, इनमें कोई भी संक्रामक कारक (infection agent) नहीं होता है ।

(2) दूसरे टीकों की तुलना में पेप्टाइड टीकों का निर्माण सरल (simple) होता है तथा इसे कम मेहनत एवं आवश्यकतानुसार शुद्धिकरण द्वारा तैयार किया जाता है ।

पारम्परिक टीके की तुलना में पेप्टाइड टीका सुरक्षित, विशिष्ट एवं सस्ता होता है ।

9.5.3 हानियाँ (Disadvantages)

(1) ये टीके एकल प्रतिरक्षी पेप्टाइड (single immunogenic peptide) पर आधारित है अत: ऐसे विषाणुओं के विरूद्ध जिनमें प्रतिजैनिक प्रोटीन में अत्यधिक विभिन्नताएँ (variation) पाये जाती हो, टीके तैयार करना कठिन होता है ।

(2) प्रभावी पेप्टाइड टीके के निर्माण हेतु एपीटोप (जो कि रोगजनक का प्रतिजैविक भाग होता है एवं प्रतिरक्षी तंत्र को उत्प्रेरक करता है) में अखण्डित अमीनों अम्लों का छोटा टुकड़ा (stretch) उपस्थित होना चाहिए जो सामान्यत: संभव नहीं हो पाता है ।

(3) पेप्टाइड टीके की बनावट (conformation) संपूर्ण विषाणु (intact viral particle) एसीटोप जैसी नदी होती है ।

(4) यह टीके एकल एसीटोप से निर्मित होने के कारण पर्याप्त प्रतिरक्षा नहीं दे पाते हैं ।

वाहक टीके (Vector Vaccine)

यह एक आधुनिक प्रकार का टीका है जिसके अन्तर्गत प्रतिजन को कोड करने वाले जीन (gene) को पृथक्कृत करके वाहक (vector) में क्लोन (clone) किया जाता है । इस जीन का वाहक में प्रवेश तथा परपोषी में अभिव्यक्ति नियामककारी श्रंखला (regulatory sequence) के नियंत्रण में होता है । इसकी कई प्रतिकृतियों का निर्माण होता है । इन प्रतिकृतियों से पर्याप्त मात्रा में प्रोटीन का निर्माण होता है जो उच्च प्रतिरक्षी क्षमता को प्रेरित करता है ।

विषाणु के विरूद्ध टीका

इस तकनीक के अन्तर्गत विषाणु के विशिष्ट प्रोटीन को कोड करने वाले जीन को मंद रोगजनकता वाले (avirulent) विषाणु मुख्यतया वेक्सिनिया विषाणु (Vaccinia Virus) में निवेशित (introduce) करा दिया जाता है । इस प्रकार तैयार पुर्नयोजी विषाण्वीय टीके (recombinant viral DNA) को अन्य परपोषी में प्रवेश कराया जाता है जहाँ इसकी कई प्रतिकृतियों का निर्माण होता है । इन प्रतिकृतियों द्वारा निर्मित प्रोटीन को परपोषी से पृथक कर टीके के रुप मे उपयोग किया जाता है जो प्रतिरक्षी क्रियाओं को प्रेरित करता है ।

टीका निर्माण विधि (Vaccine Production)

यह टीका प्लाज्मिड वाहक की सहायता से निर्मित किया जाता है । सर्वप्रथम वाहक में विषाणु प्रमोटर अनुक्रम (viral promoter sequence) एवं उसके पास स्थित ऐसे जीन अनुक्रम, जो कि प्रतिजन प्रोटीन निर्माण हेतु तो आवश्यक नहीं होता है परन्तु प्रतिजन अनुक्रम के विषाणु जिनोम में निवेश (insertion) हेतु आवश्यक होता है कि पहचान की जाती है । इसके पश्चात्

प्रतिजन अनुक्रम को इन दोनों के मध्य निवेशित करा दिया जाता है । अब इस पुर्नयोजित वाहक को विषाणु संक्रमित परपोषी कोशिका संवर्धन (viral infected host cell culture) में मिला दिया जाता है । माध्यम में उपस्थिति संघटक परपोषी कोशिका द्वारा इस वाहक के अवशोषण को प्रेरित करते हैं । अवशोशण के पश्चात् यह वाहक जिनोम एवं संक्रमित परपोषी कोशिका में उपस्थित विषाणु जीनोम में समजात पुर्नयोजन (homologus recombination) में होता है जिसके कारण प्रतिजनिक जीन विषाणु जिनोम में निवेशित हो जाता है ।

परपोषी में जीन अभिव्यक्ति द्वारा प्रतिजनिक प्रोटीन का निर्माण होता है जिसका शुद्धिकरण कर उसे टीके के रुप में उपयोग में लिया जाता है । यह टीका निर्जीव विषाणु या सबयूनिट टीके से निम्न प्रकार से बेहतर है -

(1) इन विषाणुओं द्वारा निवेशीत प्रतिजनिक जीन की अभिव्यक्ति (expression) प्राकृतिक संक्रमण के समान होती है जिससे शरीर में प्रतिकायों का निर्माण होता है ।

(2) विषाणु की निरन्तर प्रतिकृति से पर्याप्त मात्रा में प्रतिजनिक प्रोटीन का निर्माण होता है जो अधिक मात्रा में प्रतिरक्षीकायों (antibodies) के निर्माण के लिए उत्तरदायी है ।

(3) प्रतिजनिक जीन को विषाणु के जीनोम में एक से अधिक जगहों पर निवेशीत कराया जा सकता है जिससे विषाणु की रोगजनकता (virulence) घट जाती है और ज्यादा मात्रा में प्रोटीन प्राप्त किये जा सकते हैं ।

दोष

यह टीका कम प्रतिरक्षी क्षमता वाले परपोषी (immunosuppressed host) जैसे एड्स के रोगी में लिए गंभीर विषाण्वीय संक्रमण (serious viral infection) कर सकता है ।

9.6 आनुवांशिक प्रतिरक्षण अथवा डी.एन.ए. टीकाकरण (Genetic Immunization or DNA Vaccination) :

यह टीकाकरण की नयी तकनीक है । यह अन्य टीकाकरण तकनीकों से बेहतर है । इसके अन्तर्गत प्रतिजनिक जीन (antigenic gene) को प्लाज्मिड वाहक में निवेशीत करा दिया जाता है तथा इस वाहक को सीधे ही परपोषी के शरीर में प्रवेश करवा दिया जाता है । जहाँ यह प्रतिकृति के फलस्वरूप पर्याप्त प्रतिजैनिक प्रोटीन (antigenic protein) बना लेता है तथा प्रतिरक्षी तंत्र (immune system) को इनके विरूद्ध प्रतिरक्षीकायों के निर्माण के लिए प्रेरित करता है । यह तकनीक कई जीवाणु व विषाणु जो ट्यूमर एवं एलर्जी के लिए उत्तरदायी है के विरूद्ध कारगर सिद्ध हुए है ।

9.6.1 DNA टीका बनाने का तरीका

(1) सर्वप्रथम उपयुक्त (suitable) वाहक (plasmid) को जीवाणु से पृथ्थकृत किया जाता है ।

(2) इस प्रतिजैनिक प्रोटीन (antigenic protein) के जीन को विषाणु या जीवाणु में पृथक कर इस वाहक में निवेशित कर दिया जाता है ।

(3) इस तरह तैयार वाहक DNA को शरीर में प्रवेश करा दिया जाता है ।

9.6.2 कार्यविधि (Mode of Action)

इन प्रतिजैनिक जीनधारी प्लाज्मिड को बिना एड्ज्यूवेन्ट के साथ मिलाये जब परपोषी में प्रवेश कराया जाता है तब यह उच्च प्रतिरक्षी क्षमता उत्प्रेरित करता है जिससे बड़ी मात्रा में पॉलीक्लोनल प्रतिकायों का निर्माण होता है जो विषाणु व जीवाणु के संक्रमण से सुरक्षा प्रदान करते हैं ।

9.6.3 टीकाकरण (Vaccination)

डी.एन.ए. टीके को सीधे ही पेशीय कोशिका (muscle cell) में प्रवेश करा दिया जाता है । इनमें से प्रतिजन cDNA पेशी (muscle) में चला जाता है जहाँ पर यह डी.एन.ए. अभिव्यक्त (express) होता है और प्रतिरक्षी अनुक्रिया को उत्प्रेरक करता है । डी.एन.ए. को निवेशीत कराने के लिए जीन गन तकनीक का उपयोग किया जाता है ।

9.6.4 लाभ (Advantages)

(1) डी.एन.ए. टीके का निर्माण सस्ते एवं सरल ढंग से किया जा सकता है । एक बार प्रतिजैनिक जीन (antigenic gene) के पृथ्थकृत होने पर डी.एन.ए. टीके का संश्लेषण सरल होता है । डी.एन.ए. टीका स्थायी होता है तथा आसानी से संग्रहित किया जा सकता है ।

(2) डी.एन.ए. टीका स्वयं ही एड्ज्यूवेन्ट टीके की तरह कार्य करता है अत: बाहर से एड्ज्यूवेन्ट को मिलाने की आवश्यकता नहीं रहती है ।

(3) डी.एन.ए. टीके की अतिसूक्ष्म मात्रा (10-100 μg) भी पर्याप्त प्रतिरक्षी क्षमता को उत्पन्न कर सकती है ।

(4) यह टीका एच.आई.वी. (HIV) विषाणु व मलेरिया के विरूद्ध कारगर सिद्ध हुआ है ।

(5) DNA टीके को बनाने में एक से ज्यादा प्रकार के विषाण्वीय जीन को वाहक में निवेशीत करा दिया जाता है जिससे यह अनेक प्रकार के विषाण्वीय रोगों के विरूद्ध उपयोग में लिया जा सकता है ।

हानियाँ (Disadvantage)

(1) डी.एन.ए. टीके प्रारम्भिक जाँच जन्तुओं पर की गयी है जिसमें यह मानव तंत्र (human system) पर कम प्रभावी पाया गया है ।

(2) डी.एन.ए. टीकाकरण में उपयोग आने वाला प्लाज्मिड डी.एन.ए. मानव गुणसूत्र (human chromosome) में प्रवेश कर इसकी प्रभाविता को कम करता है, साथ ही कैन्सर के लिए भी उत्तरदायी हो सकता है ।

(3) इस टीके का उपयोग ज्यादातर बच्चों में किया जाता है बच्चों का प्रतिरक्षी तंत्र (immune system) पूरी तरह विकसित नहीं होता है अत: इन डी.एन.ए. टीकों को शरीर का ही एक हिस्सा (self) समझ लिया जाता है एवं इनके विरूद्ध प्रतिरक्षी अनुक्रिया उत्पन्न नहीं होती है । इस प्रकार यह टीका शरीर के लिये अनुपयोगी हो जाता है ।

(4) डी.एन.ए. वैक्सीन के अन्तर्गत प्लाज्मिड डी.एन.ए. एवं विषाण्वीय आनुवांशिक पदार्थ को उपयोग में लिया जाता है अत: इसे सामान्य जनता द्वारा सम्पूर्ण रूप से स्वीकार नहीं किया गया है ।

9.7 क्षीण टीके (Attenuated Vaccines) :

इसके अन्तर्गत जीवित विषाणुओं की रोगजनकता (virulence) को विभिन्न उपायों द्वारा क्षीण कर दिया जाता है । जब इन्हें मनुष्य में टीकाकरण द्वारा प्रवेश करवाते है तब इनकी उपस्थिति से रोग के मन्द लक्षण उभरते हैं और उसके पश्चात् लम्बे समय तक रोगकारी विषाणु के विरूद्ध प्रतिरोधकता विकसित हो जाती है । उदाहरण - साबीन ओरल पोलीयो टीका (sabinoral polio vaccine), मीजेल्स मम्पस एवं रूबेला (MMR) टीका ।

9.7.1 टीका निर्माण विधि (Vaccine Production)

टीका निर्माण हेतु पाँच विभिन्न उपायों द्वारा विषाणु की रोगजनकता को क्षीण किया जा सकता है -

(अ)विषाणु की संक्रामकता को, विशिष्ट परपोषी के अलावा अन्य जीवों में प्रवेश करवाकर, कम किया जा सकता है।

उदाहरण - स्मॉल पॉक्स विषाणु (small pox virus) ।

(ब)ऐसे उत्परिवर्ती (mutant) का चुनाव करना जिसकी रोगजनकता कम हो । इस उत्परिवर्ती को सीधे ही अक्रिय टीकों के रूप में प्रयोग किया जा सकता है ।

उदाहरण - पोलियो विषाणु (polio virus) ।

(स)विषाणु की रोगजनकता को विभिन्न रासायनिक उपचारों के द्वारा कम किया जा सकता है ।

उदाहरण - माइकोबेक्टीरियम टयूबरक्युलोसिस (M. tuberculosis) ।

(द)विषाणु को प्रतिकूल परिस्थितियों जैसे उच्च ताप आदि में संवर्धन कराने पर भी रोगजनकता को क्षीण किया जा सकता है ।

(य)विषाणु रोगजनकता के लिए उत्तरदायी न्यूक्लियोटाइड श्रृंखला में विलोपन (deletion) एवं संकलन (addition) उत्परिवर्तन कराकर भी रोगजनकता को क्षीण किया जा सकता है ।

9.7.2 टीकाकरण विधि

यह टीका उपत्वचीय अथवा मुख के माध्यम से दिया जाता है । टीके के पश्चात् रोग के क्षीण लक्षण जैसे बुखार आदि के बाद लम्बे समय तक विषाणुजनित रोग से प्रतिरोधकता विकसित हो जाती है ।

9.7.3 क्रियाविधि (Mechanism of Action)

जब इस टीके को परपोषी में प्रवेश कराया जाता है तब प्रतिरक्षी कोशिकाएँ प्रतिरक्षीकायों (antibodies) के उत्पादन को प्रेरित करती हैं जो शरीर में रोगजनित विषाणुओं को उदासीन अथवा अक्रिय करती है । यह विषाणु द्वारा उत्पन्न रोग से प्रतिरोधकता प्रदान करता है ।

उदाहरण : पोलियो टीका मुख के माध्यम से लिया जाता है जो IgA प्रतिकाय के संश्लेषण को प्रेरित करता है तथा पोलियो से प्रतिरोधकता प्रदान करता है ।

9.7.4 क्षीण टीकों के उदाहरण (Examples of Attenuated Vaccines)

(a) साबीन पोलियो माइलीटीस टीका (Sabin Polio Myelites Vaccine)

इस टीके की 3 बूंदें, 3 बार, 4-8 सप्ताह के अंतराल में मुख द्वारा दी जाती है ।

(b) बी.सी.जी टीका (B.C.G Vaccine)

यह टीके की 0.1 मिलीलीटर मात्रा उपत्वचीय माध्यम से दी जाती है ।

(c) मीजेल्स टीका (Measles Vaccine)

इसे उपत्वचीय माध्यम से 0.5 मिली की मात्रा में दिया जाता है ।

(d) स्मॉल पाक्स टीके (Small Pox Vaccine)

इसे वेक्सीनिया विषाणु द्वारा तैयार किया जाता है एवं उपत्वचयी माध्यम में दिया जाता है । जीवन में सिर्फ एक बार दिया जाता है ।

9.7.5 उपयोगिता

(अ) क्षीण क्रियाविधि वाले जीवाणु परपोषी में आसानी से प्रतिकृत हो जाते हैं ।

(ब) इनका कार्य करने का तरीका प्राकृतिक संक्रमण के समान होता है । यह क्रमबद्ध के साथ-साथ स्थानीय प्रतिरक्षी क्षमता को भी उत्प्रेरक करते हैं ।

(स) यह लम्बे समय तक प्रतिरक्षी क्षमता प्रदान करते हैं ।

9.7.6 हानियाँ (Disadvantage)

(1) चूँकि क्षीण टीकों के अन्तर्गत रोगजनकता को उत्परिवर्तन के द्वारा क्षीण किया जाता है । अत: यदि उत्परिवर्तन प्रत्यावर्तित हो जाये तो विषाणु के संक्रामक रूप में बदलने का खतरा रहता है ।

(2) क्षीण टीकों की प्रमुख समस्या है कि इसकी क्रियाविधि में अन्य विषाणुओं द्वारा बाधा उत्पन्न की जाती है । जब इन विषाणुओं का संवर्धन, टीका बनाने के लिए किया जाता है इनमें दूसरे विषाणुओं का संदूषण (contamination) हो जाता है । जो क्षीण टीके की प्रभाविता को कम करता है ।

(3) क्षीण टीका वातावरणीय कारकों के प्रति अत्यधिक संवेदी होता है अत: इनके लम्बे समय तक संग्रहण पर इनकी प्रभावित कम हो जाती है ।

(4) इन टीकों को सही समय पर उचित मात्रा में नहीं लेने पर संक्रमण आदि का खतरा रहता है ।

(5) क्षीण टीके पूरी तरह से विषाणुजनित रोग को नष्ट करने में सक्षम नहीं है । अत: इस तरह का टीका

विकसित करने की आवश्यकता है जो मानव दवाईयों की दृष्टि से प्रभावी एवं सुरक्षित हों । वर्तमान में भी कई विषाणु है जिनके विरूद्ध कुछ दुविधाओं के कारण टीका विकसित नहीं किया

जा सकता है जैसे विषाणु के संवर्धन माध्यम में वृद्धि न होने के कारण आदि । इसी प्रकार कुछ विषाणुओं को क्षीण करना दुविधापूर्ण रहता है, कुछ नई तकनीकों के उपलब्ध होने के कारण इन सीमाओं से उभर पाना संभव हो सकता है ।

बोध प्रश्न

1) जननीक हर्पीस रोग के लक्षण लिखिए ।

.....

2) हर्पिस सिम्पलेक्स विषाणु के विरूद्ध कौन-कौन से टीके उपलब्ध है ?

.....

3) पेप्टाइड टीकों का निर्माण कैसे किया जाता है ?

.....

4) HSV (हर्पिस सिम्पलेक्स विषाणु) के लिए सबयूनिट टीका किस प्रकार से बनाया जाता है?

.....

5) HSV (हर्पिस सिम्पलेक्स विषाणु) का वर्गीकरण दीजिए ।

.....

6) HSV के विरूद्ध निर्जीव विषाणु टीका किस प्रकार से तैयार किया जाता है?

.....

7) टयूबरक्यूलोसिस (T.B.) किस जीवाणु द्वारा फैलाया जाता है ?

.....

8) इस रोग को टयूबरक्यूलोसिस क्यों कहते हैं ?

.....

9) टयूबरक्यूलोसिस रोग के लक्षण बताइये ।

.....

10) टयूबरक्यूलोसिस रोग हेतु मुख्य रूप से कौन सा टीका उपयोग में लाया जाता है ?

.....

11) B.C.G. का पूरा नाम लिखो ।

.....

12) B.C.G. टीके की कितनी मात्रा टीकाकरण के दौरान दी जाती है?

.....

13) मुख व खुरपका रोग के लिये उत्तरदायी विषाणु का वर्गीकरण किजिये ।

.....

14) मुख एवं खुरपका रोग मुख्यतया किन-किन जीवों में होता है ?

.....

15) मुख एवं खुरपका रोग के लक्षण बताइये ।

.....

16) मुख एवं खुरपका रोग में मुख्य रूप से किन टीकों का प्रयोग किया जाता है ?

.....

17) मुख एवं खुरपका रोग के विषाणु के कितनी सीरम प्रारूप पाये जाते हैं ?

.....

18) क्षीण टिकें किसे कहते हैं ?

.....

19) कुछ क्षीण टीकों के नाम लिखिए ।

.....

20) क्षीण टीकों की टीकाकरण क्रियाविधि बताइये ।

.....

21) क्षीण टीकों की उपयोगिता बताइये ।

.....

22) हाल ही में विकसित पोलियो के टीके का नाम लिखिये ।

.....

23) क्षीण टीकों की मुख्य हानियाँ बताइये ।

.....

24) पेप्टाइड टीके किसे कहा जाता है ?

.....

25) पेप्टाइड टीके किन बीमारियों के लिए उपयोगी है ?

.....

26) पेप्टाइड टीकों का कोई एक लाभ बताइये ।

.....

27) पेप्टाइड टीकों की कोई एन हानि बताइये ।

.....

28) आनुवांशिक प्रतिरक्षा किसे कहा जाता है ?

.....

29) डी.एन.ए. टीके की कार्यिकी समझाइये ।

.....

30) डी.एन.ए. टीकों का निवेशन किस तरह कराया जाता है ।

.....

31) डीएनए. टीकों का कोई लाभ बताइये ।

.....

32) डी.एन.ए. टीकों की कोई एक हानि बताइये ।

.....

9.8 सारांश (Summary):

टीका एक प्रतिजन निर्मित पदार्थ है जो विभिन्न रोगों के लिये, रोगमुक्त कारक के रूप में प्रयुक्त किया जाता है तथा जब इसे किसी व्यक्ति के शरीर में प्रवेश कराया जाता है, तब यह प्रतिरोधकता को तीव्र कर देता है जिसे टीकाकरण कहते हैं ।

टीकों का निर्माण कर, उनको रोगों के विरूद्ध उपयोग में लाया जाता है । कई रोगों के लिए जैसे कि हर्पिस रोग, माइकोबैक्टीरियम टयूबरक्यूलोसिस, खुरपका और मुँहपका वायरस के विरूद्ध टीकों का निर्माण किया जा चुका है । हर्पिस सिम्प्लेक्स वायरस के विरूद्ध कई टीकों का निर्माण किया जा चुका है । इसमें से मुख्य रूप से पेप्टाइड टीके, सब यूनिट टीके, निर्जीव विषाणु टीके, हर्पिस के विरूद्ध उपयोग में लाये जाते हैं । इन टीकों के निर्माण में मुख्य रूप से केप्सिड़, अमीनों अम्ल तथा विषाणु के कुछ घटकों का उपयोग किया जाता है ।

इसी प्रकार से माइकोबेक्टिरीयम टयूबरक्यूलोसिस जीवाणु द्वारा जनित टयूबरक्यूलोसिस बीमारी को रोकने के लिए बी.सी.जी. (BCG) का टीका उपयोग में लिया जाता है । जब यह विषाणु शरीर में प्रवेश करता है तो इसके विरूद्ध शरीर में प्रतिरक्षीकायों का निर्माण होता है ।

खुरपका और मुँहपका विषाणु के विरूद्ध संश्लेषित प्रतिरक्षीकाय इस रोग से प्रतिरोधकता प्रदान करता है । इसमें निर्जीव विषाणु टीके व सबयूनिट टीके मुख्य है जिनमें क्रमश: निर्जीव विषाणुओं, जीवाणुओं के प्रोटीन घटकों का उपयोग किया जाता है । इस रोग के विषाणु के कई सीरम प्रारूप उपलब्ध होने से एक सीरम प्रारूप के विरूद्ध विकसित टीका दूसरे सीरम प्रारूप के लिए उपयोग नहीं किया जा सकता है ।

टीकें कई प्रकार के होते हैं, एवं दूसरे प्रकार से विभिन्न रोगों की रोकथाम के लिए उपयोगी है । टीकों के प्रकार हैं पेप्टाइड टीके, वाहक टीके, DNA टीके आदि । यह टीके मलेरिया, हेपेटाइटिस बी इत्यादि के विरूद्ध उपयोग में लिये जाते हैं । यह सुरक्षित एवं स्थायी होने के साथ-साथ रासायनिक रूप से परिभाषित होते हैं ।

इन टीकों के निर्माण हेतु अवांछित अमीनों अम्लों की आवश्यकता होती है । क्षीण टीकों रोगकारक की रोगजनकता को विभिन्न उपायों द्वारा क्षीण कर दिया जाता है । इसका मुख्य उदाहरण हाल ही में विकसित साबीन जटिल पोलियो टीका है । कुछ अन्य उदाहरण में स्माल पाक्स विषाणु के विरूद्ध टीका, बी.सी.जी. टीका आदि है ।

आधुनिक टीके जो कारगर सिद्ध हुए है इनमें वाहक टीके मुख्य है जिसके अन्तर्गत प्रतिजन कोड करने वाले जीन को वाहक में क्लोन कर लिया जाता है तथा परपोषी में प्रवेश करा दिया जाता है । जहाँ पर्याप्त प्रोटीन तैयार हो जाता है जिसे प्ररिरक्षी टीके रूप में उपयोग किया जाता है ।

DNA टीकों में प्रतिजनिक प्रोटीन को प्लाज्मिड वाहक में निवेशित करा कर इसे सीधा ही शरीर में प्रवेश कराकर प्रतिरोधकता प्रदान की जाती है । इसका मुख्य लाभ है कि इसमें एड्ज्यूवेन्ट को मिलाने की आवश्यकता नहीं होती है ।

9.9 बोध प्रश्नों के उत्तर :

1. जननीक हर्पिस रोग में बुखार, संक्रमित भाग पर फफोला एवं जलन व स्थानीय शोय अनुक्रिया (local inflammation) होती है जिससे वह भाग लाल हो जाता है ।
2. हर्पिस सिम्पलैक्स विषाणु की रोकथाम के लिए पेप्टाइड टीके, प्रोटीनों, विषाणु प्रोटीन के मिश्रणों, निर्जीव विषाणुओं, दोषयुक्त प्रतिकृति विषाणु, अक्रिय एवं प्रतिकृति प्रतिस्पर्धी विषाणु का उपयोग किया जाता है ।
3. पेप्टाइड टीकों को बनाने के लिए सर्वप्रथम एपीटोप को पहचानना आवश्यक होता है तथा इस क्रिया में एक क्लोनी प्रतिरक्षीकायों का उपयोग किया जाता है ।
4. HSV के लिए सबयूनिट टीका बनाने हेतु मुख्य रूप से केप्सिड़ व आवरित प्रोटीन का उपयोग किया जाता है ।
5. HSV का वर्गीकरण निम्न प्रकार से है -

कुल - हर्पीज वाइरिडी
उपकुल - अल्का हर्पीज वाइरिनी
वंश - सिम्पलैक्स

6. HSV के विरूद्ध निर्जीव विषाणु टीका बनाने के लिए विषाणु से संक्रमित कोशिकाओं को पृथक करके सोनीकेट किया जाता है । इस प्रक्रिया के फलस्वरूप तैयार अधिप्लवी को फार्मेल्डिहाइड से उपचारित कर उपयोग लिया जाता है ।
7. टयूबरक्यूलोसिस रोग माइकोबैक्टीरियम ट्यूबरक्युलोसिस से होता है ।
8. इस रोग के जीवाणु फेफड़ों में छोटी और सख्त गाँठे बनाता है जिन्हें ट्यूबरकूलस कहते हैं । अतः यह रोग ट्यूबरक्युलोसिस कहलाता है ।
9. इस रोम में रोगी को बुखार व वजन कम होने की शिकायत रहती है । फेफड़ों में छोटी व सख्त गाँठें बनती है । फेफड़ों के संक्रमण फलस्वरूप मुँह में खून आने लगता है ।
10. ट्यूबरकुलोसिस रोग हेतु बी.सी.जी. का टीका दिया जाता है ।
11. बी.सी.जी. टीके का पूरा नाम बैसीलस कैलमाइट गुएराइन (Bacillus Calmittee Guarine) है ।
12. 0.1 Mililitre (मिलीलीटर)
13. FMDV का वर्गीकरण निम्न प्रकार है -

वंश - एप्पोवाइरस
कुल - पिक्नोवाइरिडी

14. यह विषाणु हिरण, भेड़ों, बकरियों तथा खुरधारी जानवरों में रोग के लिए उत्तरदायी होते हैं ।
15. इसमें रोगी को तेज बुखार रहता है साथ ही मुख के अंदर ग्लीस्टर हो जाते हैं, जिससे झागदार लार स्त्रावित होती है ।
16. fMDV में मुख्य रूप से निर्जीव विषाणु टीकों तथा सबयूनिट टीकों का उपयोग होता है ।
17. FMDV के सात सीरम प्रारुप पाये जाते हैं ।

18. इसके अन्तर्गत जीवित विषाणुओं की रोगजनकता को विभिन्न उपायों द्वारा क्षीण कर दिया जाता है तथा इस प्रकार तैयार टीकों का उपयोग रोग की रोकथाम के लिए किया जाता है ।
19. साबिन टीका, मीजेल्स मम्प्स एवं रूबेला टीका (MMR).
20. क्षीण टीकों का कार्य करने का तरीका प्राकृतिक संक्रमा के समान ही होता है । यह स्थानीय व क्रमबद्ध दोनों तरह की प्रतिरक्षी क्षमता को उत्प्रेरित करता है ।
21. यह टीकें परपोषी में तुरन्त प्रतिकृत होते हैं । अत: शीघ्र ही प्रतिरक्षी क्रियाएँ प्रेरित करता है ।
22. साबीन पोलियो माइलीटीस टीका जो मुख द्वारा लिया जाता है ।
23. क्षीण टीकों की दोष यह है कि इन टीकों को सूक्ष्मजीव की रोगजनकता में उत्परिवर्तन द्वारा अथवा विभिन्न उपचारों द्वारा क्षीण करके तैयार किया जाता है । इस कारण टीकाकरण के बाद इनके फिर से सक्रिय होने का खतरा होता है ।
24. इस टीके के लिए पूरे प्रतिजैविक प्रोटीन का उपयोग करने के बजाय केवल छोटे-छोटे पेप्टाइड भाग को उपयोग में लिया जाता है जो प्रतिरक्षी तंत्र को प्रेरित करते हैं ।
25. पेप्टाइड टीकें खुरपका व मुँहपका रोग, हेपेटाइटिस बी एवं मलेरिया के विरूद्ध कारगर सिद्ध हुये है ।
26. यह टीके रसायनों से मिलकर बने होते हैं अत: इसमें कोई भी संक्रामक कारक नहीं पाया जाता है ।
27. प्रभावी पेप्टाइड टीके के लिए एपीटोप में अखण्डित अमीनों अप्लों का छोटा टुकडा उपस्थित होना चाहिये जो सामान्यतया संभव नहीं हो पाता है ।
28. प्रतिजनिक जीन को प्लाज्मिड वाहक में प्रवेश करवाया जाता है तथा इस वाहक को सीधे ही परपोषी में प्रवेश करा दिया जाता है ।
29. जब DNA टीकें को एड्ज्यूवेन्ट के साथ परपोषी में प्रवेश कराया जाता है तो बड़ी मात्रा में पॉलीक्लोनल प्रतिकायों का निर्माण होता है जो रोग से प्रतिरक्षा प्रदान करती है ।
30. DNA टीकें को सीधे ही पेशीय कोशिका में प्रवेश करा दिया जाता है । इसके लिए जीन गन तकनीक उपयोग में ली जाती है ।
31. DNA टीकें की काफी कम मात्रा प्रतिरक्षा के लिए पर्याप्त होती है तथा इसमें कोई adjuvent मिलाने की आवश्यकता नहीं होती है ।
32. यह प्लाज्मिड DNA से निर्मित डी.एन.ए. टीका, मानव गुणसूत्र में प्रवेश कर जाता है जो जिससे इसकी प्रभाविता कम हो जाती है । यह कैंसर के लिए भी उत्तरदायी होता है ।

9.10 अभ्यासार्थ प्रश्न (Exercise Questions) :

1. हर्पिस सिम्पलैक्स विषाणु के लिये प्रयोग किये जाने वाले विभिन्न टीकों का विवरण कीजिए ।
2. ट्यूबर कुलोसिस रोग के लक्षण व इसके लिये उपयोग में लिये जाने वाले टीकों का निर्माण व इसकी कार्यिकी का विवरण कीजिये ।

3. खुर मुँहपका रोग (foot smouth disease) के लिये उपयोग किये जाने वाले टीकों का विवरण कीजिये ।
4. क्षीण टीके (attenuated vaccine) तैयार करने की विधियाँ व इनके उदाहरण लाभ व हानियों का विवरण दीजिये ।
5. पेप्टाइड टीके को बनाने का तरीका व इसके लाभ व हानियों का विवरण कीजिए ।
6. विषाणु के विरूद्ध वाहक टीके किस तरीके से तैयार किये जाते हैं ?
7. DNA टीके बनाने का तरीका उसकी डिलीवरी तथा लाभ व हानियों का विवरण दीजिये ।

9.11 शब्दावली (Glossary):

1. एडज्यूवेन्ट	-	Adjuvant
2. वाहक	-	Vector
3. उत्परिवर्तन	-	Mutation
4. क्षीण विषाणु	-	Atenuated Virus
5. एंटीसीरम	-	Antiserum
6. एटीन्यूटेड़ टीका	-	Attenuated Vaccines
7. आनुवांशिक प्रतिरक्षा	-	Genetic immunization)
8. प्रतिरक्षी क्रिया	-	mmune response
9. टीकाकरण	-	Vaccination
10. प्रतिजन निर्धारक अथवा एपिटोप	-	Antigenic Determinant or Epitope
11. पेप्टाइड़ टीका	-	Peptide Vaccine

9.12 संदर्भ ग्रन्थ (Reference Books) :

1. ग्लिक एवं पेटरनेक, मालीक्यूलर बायोटेक्नालॉजी, पनिमा पब्लिशिंग कॉर्पोरेशन, नई दिल्ली ।
2. शर्मा, माइक्रोबायोलाजी, रस्तोगी एण्ड कम्पनी, मेरठ ।
3. सिंह, बायोटेक्नोलाजी, कल्याणी पब्लिशर्स, नई दिल्ली ।

इकाई 10

महत्त्वपूर्ण उपापचयी पदार्थों का उत्पादन
(Production of Important Metabolities)

इकाई की रूपरेखा

10.0 उद्देश्य

10.1 प्रस्तावना

10.2 प्राथमिक उपापचयक (Primary metabolities)

10.2.1 विटामिन

10.2.2 कार्बनिक अम्ल

10.2.3 एल्कोहल

10.3 द्वितियक उपापचयक (Secondary metabolities)

10.3.1 प्रतिजैविक

10.3.2 सूक्ष्मजीवी आविष

10.4 सारांश (Summary)

10.5 शब्दावली (Glossary)

10.6 संदर्भ ग्रन्थ

10.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

10.8 अभ्यासार्थ प्रश्न

10.0 उद्देश्य (Objective):

सूक्ष्मजीव अपनी विभिन्न उपापचयी क्रियाओं (metabolic activities) के अन्तर्गत विभिन्न प्रकार के प्राथमिक एवं द्वितीयक उपापचयकों (primary and secondary metabolities) का निर्माण एवं स्त्रवण करते हैं । यह पदार्थ सूक्ष्मजीवों के अलावा मानव हित में भी काम आते हैं अत: मानव द्वारा इन पदार्थों का बहुआयामी (large scale) स्तर पर औद्योगिक उत्पादन (industrial production) किया जाता है ।

इस अध्याय में सूक्ष्मजीवों की सहायता से उत्पादित विभिन्न प्राथमिक एवं द्वितीयक उपापचय पदार्थों की महत्ता, इनकी उत्पादन विधि इत्यादि का विवरण दिया गया है । इस अध्याय को पढ़ने के बाद आप निम्नलिखित बिन्दुओं से अवगत हो जायेंगे :-

- प्राथमिक एवं द्वितीयक उपापचयकों में विभिन्नता ।
- सूक्ष्मजीवों द्वारा उत्पादित उपापचयकों की महत्ता ।
- इन पदार्थों की उत्पादन विधि ।
- इन पदार्थों के उत्पादन हेतु काम लिये जाने वाले सूक्ष्मजीवों के विशेष लक्षण ।

- उपापचयी पदार्थों (metabolities) के उत्पादन एवं वृद्धि अवस्थाओं में संबंध ।

10.1 प्रस्तावना (Introduction) :

जैव प्रौद्योगिकी का एक सबसे महत्वपूर्ण उद्देश्य है मानव हित हेतु काम आने वाले विभिन्न प्रकार के प्राथमिक एवं द्वितीयक उपापचयकों (primary and secondary metabolities) के उत्पादन हेतु सूक्ष्मजीवों का उपयोग । यह प्रक्रिया सूक्ष्मजीवों की किण्वन क्षमता (fermentation ability) पर आधारित है एवं इस कार्य हेतु सूक्ष्मजीवों का बहुत विशाल काँच अथवा स्टील के उपकरण में जिन्हें किण्वक या बायोरिएक्टर (fermentor or bioreactor) कहा जाता है, संवर्धन (culture) किया जाता है । इसके पश्चात् उत्पाद (product) अनुसार विभिन्न विधियों द्वारा उत्पाद प्राप्ति (product recovery) की जाती है ।

यह उत्पाद सूक्ष्मजीव कोशिका से लेकर कोशिका द्वारा स्त्रावित / उत्पादित अन्तरकोशिकीय (intercellular) अथवा बाह्यमकोशिकीय (extracellular) पदार्थ हो सकते है जैसे एकल कोशिकीय प्रोटीन (single cell protein), विकर (enzymes),प्रतिजैविक (antibiotics), विटामिन्स (vitamins) इत्यादि । इन पदार्थों के औद्योगिक उत्पादन हेतु सटीक एवं विशिष्ट प्रक्रम (accurate and specific) व व्यूह रचना (process designing) की आवश्यकता होती है जिसके अन्तर्गत किण्वक के प्रकार, भौतिक एवं रासायनिक पदार्थों की विभिन्न अवस्था तथा उत्पाद प्राप्ति के लिये अपनाये जाने वाले तरीकों का पूर्वनिर्धारण किया जाता है ।

प्राथमिक एवं द्वितीयक उपापचयी पदार्थों (metabolies) के उत्पादन हेतु सूक्ष्मजीवों का चयन

प्राथमिक एवं द्वितीयक उपापचयी पदार्थों (metabolites) के औद्योगिक उत्पादन हेतु विशेषीकृत (particular) सूक्ष्मजीवों का चयन तथा उनका विभिन्न उपायों द्वारा रख-रखाव अत्यन्त महत्त्वपूर्ण चरण है, इस हेतु उपयोग लिये जाने वाले सूक्ष्मजीवों में निम्नलिखित गुण होने चाहिए -

(1) प्रभेद आनुवांशिक रूप से स्थायी होना चाहिए ।
(2) प्रभेद को लम्बे समय तक भण्डारित किया जा सके ।
(3) प्रभेद में कायिक कोशिकाओं (somatic cells) का निर्माण करने की क्षमता होनी चाहिए ।
(4) प्रभेद में संरोपरण के पश्चात् तीव्र गति से संवर्धित होने की क्षमता होनी चाहिए ।
(5) प्रभेद शुद्ध (pure) होना चाहिए । इसमें अन्य सूक्ष्मजीवों अथवा जीवाणुभोजी (bacteriophage) द्वारा संदूषण (contamination) का खतरा नहीं होना चाहिए ।
(6) प्रभेद में कुछ उत्परिवर्ती कारकों (mutagenic agents) द्वारा उत्परिवर्तन किया जाना संभव होना चाहिए । इन उपापचयकों (metabolites) के सफलतापूर्वक उत्पादन हेतु जो महत्वपूर्ण प्रक्रम (conditions) होने चाहिए, वह है -

(a) इन पदार्थों के उत्पादन व सूक्ष्मजीवों की वृद्धि हेतु किण्वक इकाई (fermentor unit) में उपयुक्त pH, तापमान, वातहर, विलोडन (agitation) आदि की व्यवस्था होनी चाहिए ।

(b) किण्वक पात्र (fermentor vessels) ऐसे पदार्थ से बनी होनी चाहिए जो इन उपापचयक पदार्थों के उत्पादन द्वारा खराब न हों और न ही इन पदार्थों की रासायनिक प्रकृति में कोई परिवर्तन करें ।

(c) संवर्धन एवं उत्पादन पूर्णतया निर्जमीकृत अवस्था (sterile conditions) में होना चाहिए ।

सूक्ष्मजीवों द्वारा उपापचयी पदार्थों का उत्पादन

सूक्ष्मजीव उपापचयी पदार्थों के बहुआयामी स्तर पर उत्पादन हेतु आवश्यक स्थितियों को पहले प्रयोगशाला स्तर (smaller scale) पर निश्चित कर लिया जाता है जिसके आधार पर उपापचयकों के बड़े स्तर पर उत्पादन के प्रक्रम की रचना की जाती है । इस प्रक्रिया को उपापचयी पदार्थों का उत्पादन बढ़ाने की प्रक्रिया कहते हैं ।

सूक्ष्मजीवी उपापचयकों के उत्पादन हेतु प्रक्रिया निर्माण (process design) के लिये पहले सूक्ष्मजीवों की प्रयोगशाला स्तर पर एहर्लनमेयर (Ehlenmeyer flask) में वृद्धि करायी जाती है तत्पश्चात् इसे छोटे प्रयोगशाला किण्वक तथा फिर बड़े प्रक्रम किण्वक में वृद्धि करायी जाती है जिनमें क्रमश: माध्यम का आयतन 10 से 1000 लीटर तक बढ़ जाता है ।

सूक्ष्मजीवों द्वारा उपापचयकों (metabolites) का उत्पादन वृद्धि की अवस्थाओं पर निर्भर करता है । यह अवस्थाएँ निम्न प्रकार है -

(1) लेग अवस्था (Lag phase)

(2) लोग या चरघातांकी अवस्था (lag or exponential phase)

(3) स्तब्ध अवस्था (stationary phase)

(4) मृत अवस्था (death phase)

(1) लेग अवस्था (Lag phase)

जब संरोप (inoculum) को किसी पोषक माध्यम में संरोपित किया जाता है तो वह सूक्ष्मजीव उस बदली हुई नई दशा में अनुकूलित होता है । इसे लेग अवस्था कहते हैं ।

(2) लोग अवस्था (Log phase)

इस अवस्था में कोशिकाएँ उच्चतम दर पर वृद्धि करती है । लेग तथा लोग अवस्था को सम्मिलित रूप से पोष अवस्था (trophophase) कहते हैं ।

(3) स्तब्ध अवस्था (Stationary phase)

इस अवस्था में उच्चतम दर पर वृद्धि के पश्चात् वृद्धि रूक जाती है और कोशिकाएँ स्तब्ध अवस्था में प्रवेश कर जाती हैं ।

(4) मृत अवस्था (Death phase)

भोजन की कमी एवं विषैले पदार्थों के संग्रहण के कारण कोशिकाओं की संख्या में कमी होने लगती है तथा यह मृत अवस्था में प्रवेश कर जाती है ।

पोषक अवस्था (tropophase) में प्राथमिक उपापचयक बनते हैं जो वृद्धि के लिए आवश्यक होते हैं जैसे अमीनो अम्ल, न्यूक्लियोटाइड, प्रोटीन, न्यूक्लिक अम्ल, लिपिड, कार्बोहाइड्रेट आदि । इनमें से कई प्राथमिक उपापचयक जैसे विटामिन, कार्बनिक अम्ल एवं एल्कोहल आर्थिक महत्त्व

के होते हैं । यह उपापचयक पदार्थ प्रारूपी प्रकार (wild type) के सूक्ष्मजीवों द्वारा उत्पादित किये जाते हैं एवं उनकी वृद्धि के लिए आवश्यक होते हैं ।

इन उपापचयकों के उत्पादन को बढ़ाने हेतु किण्वन परिस्थितियों में अनुकूल बदलाव किये जाते हैं अथवा सूक्ष्मजीवों को अभियांत्रिकी द्वारा रूपान्तरित कर उपयोग में लिया जाता है ।

सूक्ष्मजीवी संवर्धन की स्तब्धावस्था (stationary phase) या उत्पादन अवस्था (idiophase) में ऐसे यौगिकों का संश्लेषण होता है जिनका कोशिकीय उपापचयी क्रियाओं में उपयोग नहीं होता है । इन यौगिकों को द्वितीयक उपापचयक (secondary metabolite) कहते हैं ।

द्वितीयक उपापचयकों का उत्पादन निम्न वृद्धिक (slow growing) एवं अवृद्धिक कोशिकाएँ (non growing cells) में होता है तथा यह निम्न वृद्धि दर वाले सूक्ष्मजीवों में ज्यादा होता है । सामान्यत: द्वितीयक उपापचयक तन्तुमय जीवाणु एवं कवकों में उपस्थित होते हैं ।

द्वितीयक उपापचयकों की महत्ता (Importance of secondary metabolites)

कुछ उपापचयक प्रतिसूक्ष्मजीवीय सक्रियता (antibiotic activity) प्रदर्शित करते हैं जो अन्य सूक्ष्मजीवों की वृद्धि को रोकते हैं । कुछ उपापचयी पदार्थ विकर संदमक (enzyme inhibitor) होते हैं जो विकर प्रक्रियाओं को प्रतियौगिक या अप्रतियौगिक (competitively or noncompetitively) रूप से संदमित करते हैं । कुछ उपापचयक भेषजगुणविज्ञानीय गुणधर्मों (pharmacological properties) के होते हैं ।

सारणी प्रथम में सूक्ष्मजीवी उपापचयकों के कुछ प्राथमिक उपापचयक एवं उनकी औद्योगिक उपयोगिता को दर्शाया गया है ।

सारणी 10.1: सूक्ष्मजीवीय उत्पाद एवं उनकी उपयोगिता

क्र.स.	प्राथमिक उत्पाद	औद्योगिक महत्त्व
1.	इथेनॉल (Ethanol)	एल्कोहॉलिक पेय का सक्रिय संघटक (active ingradient) है । इसका पेट्रोलियम के साथ मोटर कार के ईंधन के रूप में भी उपयोग किया जाता है ।
2.	सिट्रिक अम्ल (Citric acid)	खाद्य उद्योग (food industry) में उपयोगी होते हैं ।
3.	एसिटोन एवं ब्यूटेनॉल(Acetone and Butanol)	विलायक (solvent)
4.	ग्लूटामिक अम्ल (Glutamic acid)	सुगंध वर्धक
5.	लाइसिन (Lysine)	भोज्य संपूरकों (food suppliments) के रूप में उपयोग किए जाते हैं ।
6.	न्यूक्लिओटाइड (Nucleotides)	सुगन्ध वर्धक
7.	पॉलीसैकेराइड (Polysaccharides)	खाद्य उद्योग में उपयोग तेल पुन: प्राप्ति को बढ़ाता है ।

8. विटामिन (Vitamins) भोज्य संपूरकों के रूप में ।

10.2 प्राथमिक उपापचयक का उत्पादन (Production of Primary Metabolites):

सूक्ष्मजीवों की वृद्धि के लिए आवश्यक उपापचयक स्तब्ध अवस्था या लोग अवस्था में प्रचुर मात्रा में उत्पन्न होते हैं । कुछ महत्त्वपूर्ण प्राथमिक उपापचयकों का उत्पादन निम्न प्रकार से किया जाता है -

10.2.1 विटामिन (Vitamins)

यह शब्द कार्बनिक यौगिकों के उस समूह के लिये उपयोग किया जाता है जो अत्यन्त ही कम मात्रा में सूक्ष्मजीवों की सामान्य उपापचयन (general metabolism) एवं वृद्धि के लिये आवश्यक होते हैं । यह सहएन्जाइम (coenzymes) या सहएन्जाइम के संघटकों की तरह कार्य करते हैं । सामान्यतया सूक्ष्मजीव आवश्यकतानुसार विटामिन का संश्लेषण कर सकते हैं परन्तु जो सूक्ष्मजीव ऐसा करने में असमर्थ होते हैं वह इन्हें वृद्धि माध्यम से प्राप्त कर सकते हैं ।
स्तनधारी जीव (mammals) विटामिन का संश्लेषण नहीं कर सकते हैं । अत: उनके लिए सूक्ष्मजीव ही विटामिन का एक मुख्य स्त्रोत है । सूक्ष्मजीवों द्वारा उत्पादित विटामिनों में से मुख्य है - विटामिन B_{12} एवं राइबोफ्लेविन ।

(a) विटामिन B_{12}, (सायनोकोबाल अमीन)

विटामिन B_{12}, एक एकल यौगिक नहीं है बल्कि यह रासायनिक रूप से समान कोबामाइडों का समूह है । इन कोबामाइड्स को आभासी B_{12}, (Pseudo B_{12}) समूह कहा जाता है । यह कोबाल्ट पोरफायरीन (cobalt porphyrin) केन्द्रक के बने होते हैं जिएसरे राइबोज एवं फास्फेट (Ribose Phosphate) समूह जुड़े रहते हैं ।

विटामिन B_{12}, के संश्लेषण के लिए उत्तरदायी सूक्ष्मजीव

ब्यूटाइरीबैक्टीरीयम रेटजेरी (Butyribacterium retzeri), बेसीलस मेगाटीरीयम (Bacillus megaterium), स्ट्रेप्टोमाइसिस ओलीकासियस (Streptomyces olilkaceius), माइक्रोमोनोस्पारा (Micromonospora spp.), क्लीबसियेला न्यूमोनी (Klebsiella neumoniae) इत्यादि ।

उच्च उत्पादक क्षमता वाले सूक्ष्मजीव

प्रोपियोनीबेक्टीरियम फ्रूकेनरिची (Propiyonibacterium), प्रोपीयोनिबेक्टीरियम शर्मानी(propionibacterium sharmanii) एवं स्यूडोमोनास डीनाइट्रीफिकेन्स (Pseudomonas denitrificans) ।

आनुवांशिक अभियांत्रिकी तकनीकी से तैयार किये गये प्रभेद

रोडोस्यूडोमोनास प्रोटोमीकम (Rhodopseudomonas protomicum)

यह प्रभेद प्रोटियोयोनीबेक्टर रुब्रम (Proteonibacter rubrum) व रोडोस्यूडोमोनास स्फीसेइड्स (Rhodopseudomonas sphesaides) के संकरण (hybridization) से बनी है । यह प्रभेद 135 mg/litre विटामिन B_{12} का उत्पादन करते हैं ।

किण्वन स्थितियाँ (Fermentation conditions)

विटामिनों का उत्पादन पोषक तत्त्व धनी अपरिष्कृत माध्यम (nutritionally rich crude medium) जिसमें ग्लूकोज कार्बन स्त्रोत हो, में किया जाता है । प्राथमिक अवस्था (primary phase) में अवायवीय स्थिति (anaerobic conditions) रखी जाती है जबकि द्वितीयक अवस्था (secondary phase) वायवीय स्थिति (aerobic conditions) होती है । विटामिन B_{12} का अन्तरा कोशिकीय या कोशिका बंध यौगिकों के रूप में उत्पादन होता है ।

ग्लूकोस के स्त्रोत एवं अन्य सस्ते कार्बन स्त्रोत जैसे हाइड्रोकार्बन तथा उच्च एल्कोहल को भी विटामिन B_{12} के उत्पादन हेतु उपयोग में लिया जा सकता है । मिथेनॉल को भी कार्बन स्त्रोत के रूप में उपयोग किया जा सकता है।

उदाहरण - स्यूडोमोनास डीनाइट्रीफिफिकेन्स (Pseudomonas denitrificans)

उत्पादन प्रक्रिया को संक्षेप में निम्न प्रकार दर्शाया जा सकता है -

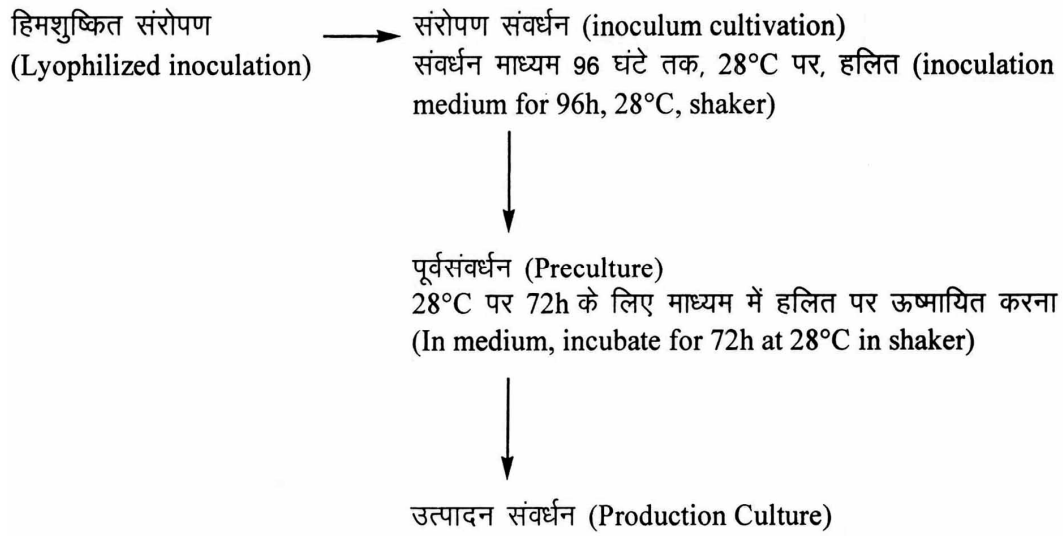

चित्र 10.1 - विटामिन B_{12}, की उत्पादन प्रक्रिया

किण्वक (fermentor) में माध्यम (medium) को 120°C पर 15 मिनट के लिए निर्जमीत (serilized) करके उसमें पूर्ण संवर्धन में से 150 मिली. संरोपण (inoculum) को मिला दिया जाता है । अब इसे 90 घंटों के लिए 29°C पर दोलनमय वातहर (stirring aeration) परिस्थिति में रखा जाता है जिसके पश्चात् माध्यम से कोशिकाओं को पृथक कर विटामिन B_{12} (vitamin B_{12}) को परिष्कृत (purify) किया जा सकता है ।

(b) राइबोफ्लेविन (विटामिन B_{12}) (Riboflavin - B_{12})

यह ऐलोकेसिन व्युत्पन्न (allocasin derivative) है जिसमें टेरीडिन वलय (Pteridine ring) एवं बेन्जीन वलय (benzene ring) एक दूसरे से संघनित (condense) पाये जाते हैं । इस

जटिल में C_5 पॉलीहाइड्रॉक्सी समूह (C_5 polyhydroxy group) से बनी एक पार्श्व श्रृंखला (side chain) पायी जाती है जो कि रिजिटोल (rigitol) व्युत्पन्न है ।

राइबोफ्लेविन के उत्पादन हेतु उपयोग में आने वाले सूक्ष्मजीव (Microorganisms used in production of riboflavin)

क्लोस्ट्रीडियम एसीटोब्यूटाइलिकम (Clostridium acetobutylicum), माइकोबैक्टीरियम समेगमेटिस (Mycobacterium smagmatis), माइकोकेण्डिडा राइबोफ्लेविना (Mycocandida riboflavina), केण्डिडा फ्लेवरी (Candida flerari), एरोमोथिसियम एस्बाई (Aeromothecium ashbyi), एशबया गोसीपी (Ashbya gosipi) । इनमें से एशबया गोसीपी (Ashbya gosipi) राइबोफ्लेविन संग्रहण के प्रति प्रतिरोध होता है ।

राइबोफ्लेविन का उत्पादन (Production of Riboflavin)

राइबोफ्लेविन का लगभग 50% विश्वव्यापी उत्पादन बैसीलस प्युमीलस (Bacillus pumilus) द्वारा ग्लूकोस के डि. राइबोस में जैव रूपान्तरण एवं फिर इसका राइबोफ्लेविन में रासायनिक परिवर्तन द्वारा किया जाता है ।

किण्वन प्रक्रिया (Fermentation mechanism)

राइबोफ्लेविन उत्पादन हेतु बेसिक माध्यम में 2.25% कॉर्न स्टीप लिकर (corn steep liquor), 3.5% औद्योगिक पेप्टोन (industrial peptone), 4.5 सोयाबीन तेल होता है । इस माध्यम में अन्य पूरकों (suppliments) जैसे कि विभिन्न प्रकार के पेप्टोन (peptone), ग्लाइसीन (glycine) आसवित विलेय (distillatory solvent) या यीस्ट निष्कर्ष (yeast extra) भी मिलाया जा सकता है । इस माध्यम में ग्लूकोस व इनोसिटोल को मिलाने से राइबोफ्लेविन का उत्पादन बढ़ जाता है ।

भौतिक अवस्थाएँ

(1) माध्यम को 26-28°C पर 4-5 दिन के लिए ऊष्मायित किया जाता है ।

(2) इस दौरान सूक्ष्मऑक्सी अवस्था विटामिन के उत्पादन को बढ़ाने हेतु उपयोग लेते हैं ।

यह किण्वन तीन चरणों में सम्पन्न होता है -

(अ)प्रथम चरण - इस दौरान सूक्ष्मजीव तो तीव्र गति से वृद्धि करता है परन्तु राइबोफ्लेविन का उत्पादन अल्प मात्रा में ही होता है ।

(ब)द्वितीय चरण - इस चरण में बीजाणु जनन (spore formation) होता है ।

(स)तृतीय चरण - इस चरण में कोशिका बंधित (cell bound) राइबोफ्लेविन का तीव्र गति से संश्लेषण होता है । राइबोफ्लेविन (riboflavin) माध्यम में मुक्त अवस्था (free) अथवा कवक तन्तु (mycelium) से बंधित अवस्था (bound farm) में पाया जाता है । कवक तंतुओं में से बंधित विटामिन को ताप उपचार (heat treatment) द्वारा विलगित किया जाता है एवं कवक तन्तु को पृथक कर राइबोफ्लेविन को माध्यम से शुद्धीकृत कर लिया जाता है ।

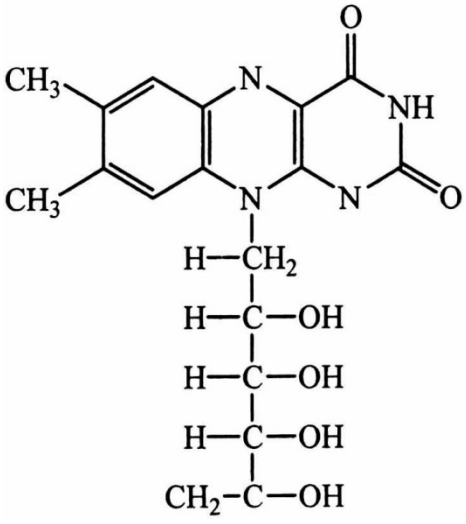

चित्र 10.2 : राइबोफ्लेविन की संरचना

विटामिन के उपयोग

(अ) राइबोफ्लेविन यौगिक सामान्य वृद्धि (general growth) एवं मानव एवं अन्य प्राणियों में जनन हेतु आवश्यक माना जाता है ।

(ब) इस विटामिन की कमी से बाधित वृद्धि (stunted growth), डर्मेटाइटिस (dermatitis) नेत्र क्षति (eye damage) इत्यादि हो जाती है ।

(स) विटामिन B_{12} का उपयोग विटामिन पूरक (vitamin supplement) मानव भोजन में किया जाता है ।

(द) विटामिन B_{12} को प्राणियों के भोजन में भी शामिल किया जाता है ।

सारणी 10.2 - अन्य विटामिन जो सूक्ष्मजीवों द्वारा उत्पादित किये जाते हैं (Other vitamins produced by microorganisms)

क्र.सं.	विटामिन	सुक्ष्मजीव
1.	विटामिन C	ऐस्पेर्जिलस नाइगर (Aspergillus niger)
2.	विटामिन D	विटामिन D के अर्गेस्टीरॉल पूर्ववर्ती (Argesterol precursor), कवक एवं यीस्ट ।

बोध प्रश्न

1. विटामिन को परिभाषित कीजिए ।

   .....

2. विटामिन B12 की रासायनिक संरचना बताइये ।

   .....

3. विटामिन B12 के उत्पादन हेतु किन-किन सूक्ष्मजीवों का उपयोग किया जाता है ?

.....

4. राइबोफ्लेविन के उत्पादन हेतु उपयोग किये जाने वाले सूक्ष्मजीवों का नाम बताओ ।

.....

5. राइबोफ्लेविन की रासायनिक संरचना बताइये ।

.....

6. राइबोफ्लेविन के उत्पादन हेतु उपयोग किये जाने वाले प्रभेद (mutant) का नाम बताओ।

.....

10.2.2 कार्बनिक अम्ल (Organic acids)

कार्बनिक अम्ल का उत्पादन प्राकृतिक पदार्थों से किण्वन प्रक्रिया द्वारा सूक्ष्मजीवों की सहायता से किया जाता है । ज्यादातर ऐसे पदार्थों को पोषक माध्यम (nutrient medium) किया जाता है जो सस्ते हो बहुतायत में पाये जाने वाले हो या जो किसी औद्योगिक प्रक्रिया में बनने वाले अपशिष्ट (waste) हो जिसमें अकार्बनिक एवं कार्बनिक यौगिक उपस्थित हो । सूक्ष्मजीवों की सहायता से उत्पादित कुछ महत्त्वपूर्ण कार्बनिक अम्लों को प्राप्त करने की विधि इस प्रकार है -

(a) सिट्रिक अम्ल (Citric acid)

सिट्रिक अम्ल बहुत से सूक्ष्मजीवों द्वारा उत्पादित किया जाने वाला एक बहुउपयोगी किण्वन उत्पाद है । इसका सर्वप्रथम औद्योगिक उत्पादन जॉन एवं एडमंड (John and Edmond 1826) ने किया था ।

सिट्रिक अम्ल उत्पादन के लिए मुख्यतया एर्स्पजीलस नाइगर का प्रयोग किया जाता है जो भिन्न-भिन्न प्रकार के कार्बनिक स्त्रोतों का विशिष्ट अवस्थाओं (specific conditions) में उपापचय (metabolism) करने में सक्षम होता हैं।

सिट्रिक अम्ल का व्यावसायिक उत्पादन (Commercial production of citric acid)

सिट्रिक अम्ल के व्यावसायिक उत्पादन हेतु एर्स्पजीलस नाइगर (Aspergillus niger) को माध्यम (medium) की सतह (surface) पर निलंबित संवर्धन (submerged culture) के रूप में वातहर पात्र (aerated vats) में संवर्धित किया जाता है । ज्यादातर संवर्धन हेतु उथले पात्र (shallow pan) में सतह पर एर्स्पजीलस (Aspergillus) का संरोपण (inoculation) बेहतर माना जाता है ।

सूक्ष्मजीव जिनके द्वारा सिट्रिक अम्ल का उत्पादन होता है वह निम्न है -

एर्स्पजीलस नाइजर (Aspergillus niger), एर्स्पजीलस क्लेवेटस (Aspergillus clavatus), एर्स्पजीलस वेन्टी (Aspergillus ventii), पेनिसिलियम व्यूरियम (Penicillium citrinus), म्यूकर पाइरीफार्मेस (Mucor pyriformis), केण्डिका लाइपोलाइटिका (Candida lipolytica), केण्डिका ओलीयोफिला (Candida oliophila), केण्डिका गुइलेइमोण्डिस (Candida guilermondis) आदि ।

किण्वन (fermentation) निम्न में से किसी एक प्रक्रिया द्वारा होता है -

(i) कोजी प्रक्रिया (Kozy process)

इसके अन्तर्गत एर्स्पजीलस नाइगर का ठोस क्रियाकारक के साथ उपयोग किया जाता है ।

(ii) द्रवित सतह संवर्धन प्रक्रिया (Liquid surface culture process)

इसके अन्तर्गत एर्स्पजीलस नाइगर तरल माध्यम की सतह पर तैरती रहती है ।

(iii) निलम्बन प्रक्रिया (Sumerged process)

इस प्रक्रिया के अन्तर्गत कवक तन्तु गहरे टैंक में पूरे माध्यम में वितरित रहते हैं ।

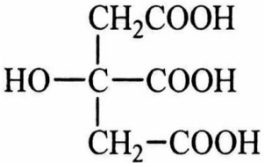

सिट्रिक अम्ल (2-हाइड्रॉक्सी-1,2,3,-प्रोपीन डाइकार्बोसइक्लिक अम्ल)

किण्वन हेतु भौतिक एवं रासायनिक परिस्थितियाँ (Physical and chemical conditions for fermentation)

1. **कार्बोहाइड्रेट स्त्रोत (Carbohydrate source) -** चुकन्दर मोलासेज को बहुतायत में इस तकनीक में प्रयोग किया जाता है लेकिन निलम्बन संवर्धन के लिए शुद्ध सुक्रोस उच्च परिष्कृत सिरप का उपयोग भी किया जाता है । सूक्ष्मजीवों द्वारा सिट्रिक अम्ल के निर्माण हेतु माध्यम में कार्बोहाइड्रेट की 20-25% सान्द्रता आवश्यक होती है । शर्करा की इससे अधिक सांद्रता अम्लों के निर्माण को संदमित करती है ।
2. **pH -** सिट्रिक अम्ल के उत्पादन हेतु निम्न pH (low pH) की आवश्यकता होती है । माध्यम की pH 2 से 5 तक रखने हेतु उसमें हाइड्रोक्लोरिक अम्ल (HCl) मिलाया जाता है । पात्र संवर्धन (vat culture) या सतह संवर्धन (surface culture) में pH को 3-5 तक अनुरक्षित (maintain) किया जाता है ।

3. नाइट्रोजन स्त्रोत हेतु अमोनियम लवणों (ammonium salt's) का उपयोग किया जाता है ।

सर्वप्रथम माध्यम को किण्वक में भरने के पश्चात् उसे स्कंध संवर्धन (stock culture) में उपस्थित बीजाणु द्वारा संरोपित कर दिया जाता है ।

पात्र संवर्धन के लिए सिट्रिक अम्ल के उत्पादन हेतु अत्यधिक वायवीय स्थितियों की आवश्यकता होती है । संरोपित माध्यम का तापमान 25°C से 30°C की परास में रखा जाता है तथा इसे 7-10 दिन के लिए ऊष्मायित (incubate) कर दिया जाता है ।

सिट्रिक अम्ल की पुर्नप्राप्ति (Recovery of citric acid)

7-10 दिन के ऊष्मायन के पश्चात् माध्यम जिसमें सिट्रिक अम्ल उपस्थित होता है को $Ca(OH)_2$ द्वारा उपचारित किया जाता है जिसमें कैल्सियम सिट्रेट (calcium citrate) अवक्षेपित (precipitate) हो जाता है । इस अवक्षेप (precipitate) को H_2SO_4 व सक्रिय कार्बन के साथ उपचारित कर इसे आयन विनिमय बेंड (ion exchange band) में से निकाला जाता है । प्राप्त शुद्धीकृत विलयन को वाष्पीकृत कर क्रिस्टलीकृत अवस्था में बदल दिया जाता है । शेष बचे हुए लिकर (liquor) को फिर से पुर्नप्राप्ति धारा (recovery stream) में डाल दिया

जाता है । इस प्रकार प्राप्त सिट्रिक अम्ल को फिर सान्द्रित, रंगहीन एवं क्रिस्टलीकृत किया जाता है । इस प्रक्रिया को संक्षेप में निम्न प्रकार दर्शाया जा सकता है - (चित्र 10.3)

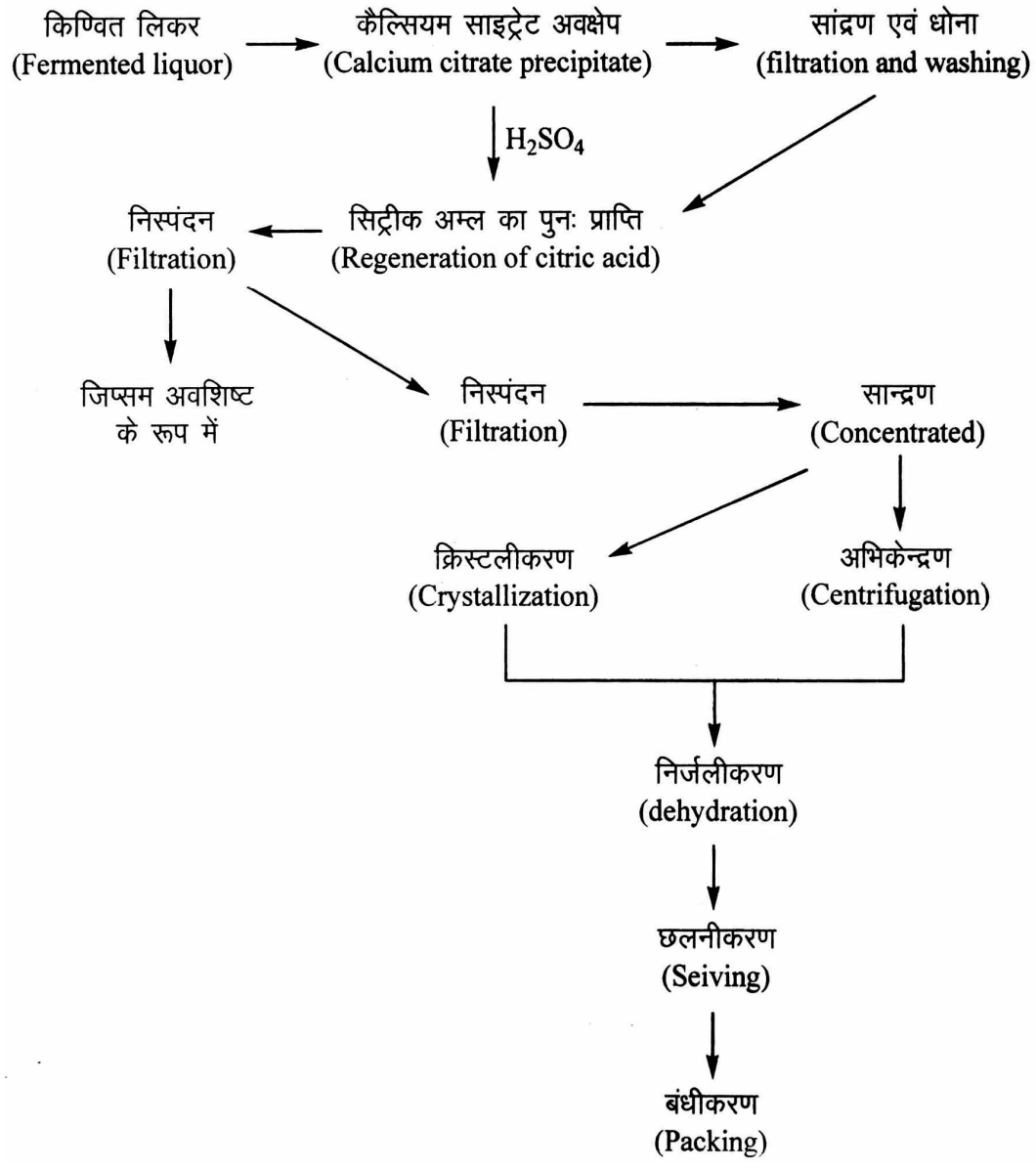

चित्र 10.3 - सिट्रिक अम्ल उत्पादन

सिट्रीक अम्ल उत्पादन की कार्यिकी (Physiology of citric acid production)

सिट्रिक अम्ल, सिट्रिक अम्ल चक्र (citric acid cycle) में बनने वाला मुख्य कार्बनिक अम्ल है । जब कवक तन्तु तीव्रता से वृद्धि करता है तब इस यौगिक का निर्माण सिट्रिक अम्ल चक्र के मध्यवर्ती (intermediate) के रूप में होता है जिसका उपयोग फिर ऊर्जा मुक्तिकरण हेतु किया जाता है । सिट्रिक अस्त के औद्योगिक उत्पादन हेतु इस प्रकार की संवर्धन दशाओं को अनुरक्षित किया जाता है जो कवक वृद्धि को रोकती है । सिट्रिक अम्ल चक्र निम्न pH एवं विशिष्टीकृत एन्जाइम संदमक (specific enzyme inhibitor) की उपस्थिति के कारण बाधित

(interrupted) हो जाती है । सिट्रिक अम्ल उत्पादन के दौरान संघनित (condensed) विकरों (enzymes) की प्रक्रिया बढ़ जाती है तथा आइसोसिट्रिक अम्ल डिहाइड्रोजिनेज (isoitric acid dehydrogenase) एवं एकोनिटेज (Aconitase) की सक्रियता रूक जाती है । (चित्र 10.4)

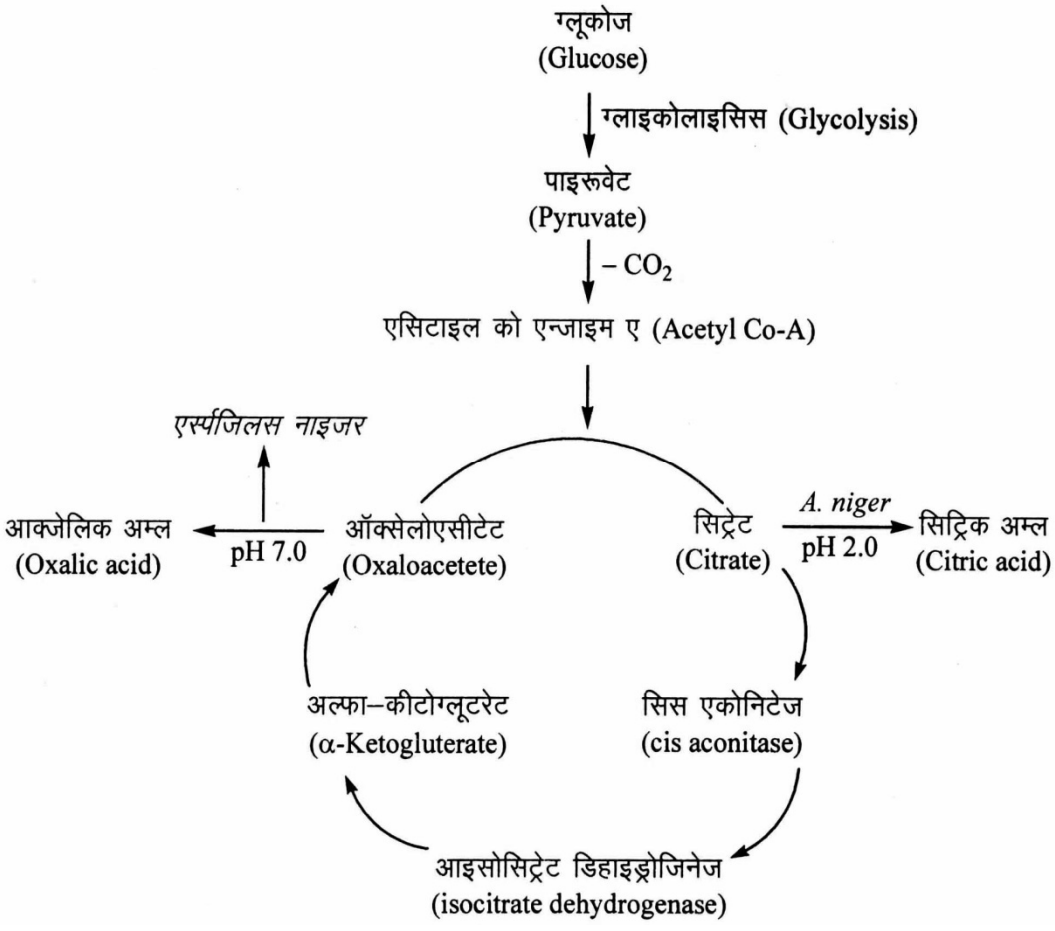

चित्र 10.4 - सिट्रिक अम्ल की कार्यिकी

सिट्रिक अम्ल के उपयोग

1. सिट्रिक अम्ल को बाजार में क्रिस्टलीकृत मोनाहाइड्रेट या क्रिस्टलीकृत सोडियम लवण के रूप में बेचा जाता है ।
2. सिट्रिक अम्ल का उपयोग शीतल पेय, जैली, जैम, वाइन, कैंकी एवं हिमीकृत फल (frozen fruits) में किया जाता है ।
3. इसका उपयोग कृत्रिम सुगंध के रूप में भी किया जाता है ।
4. चिकित्सकीय क्षेत्र में इसे रक्त स्थानान्तरण (blood transfusion) के रूप में उपयोग किया जाता है ।
5. सौन्दर्य प्रसाधन उद्योगों में इसे एस्ट्रेन्जर लोशन (astrenger lotions) में बाल धोने एवं बालों को सीधा करने वाले द्रव्यों में उपयोग किया जाता है ।

6. इसमें एन्टीऑक्सीडेन्ट क्रिया (antioxidant activity) होती है अतः इसे तेल एवं कटे हुए फलों को ऑक्सीकृत (oxidize) होने से रोकने के लिये उपयोग किया जाता है ।

(b) लेक्टिक अम्ल (Lactic acid)

लेक्टिक अम्ल प्रकृति में विस्तृत रूप से वितरित पाया जाता है तथा प्राथमिक रूप से यह खट्टे दूध एवं आवश्यक रूप से रक्त एवं पेशीय ऊतकों में पाया जाता है । लेक्टिक अम्ल को सर्वप्रथम सेल्ड ने (Seld 1789) खट्टे दूध में खोजा था ।

लेक्टिक अम्ल का प्रथम औद्योगिक उत्पादन 1881 में क्लिंटन प्रोसेसिंग कम्पनी (M/s Clinton Processing Company) क्लिंटन टाऊन (USA) द्वारा किया गया था ।

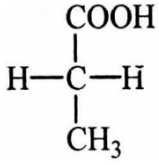

चित्र 10.5 - लेक्टिक अम्ल

लेक्टिक अम्ल उत्पादन हेतु प्रयुक्त सूक्ष्मजीव (Microorganisms used for lactic acid production)

मुख्यतया लेक्टिक अम्ल जीवाणु का प्रयोग लेक्टिक अम्ल उत्पादन हेतु किया जाता है । इसमें लेक्टिक अम्ल जीवाणु की निम्न जातियों का प्रयोग होता है -

लेक्टोबेसिलस डेलस्रुकी (Lactobacillus delsruki), लेक्टोबेसिलस पेन्टोसस (Lactobacillus pentosus), लेक्टोबेसिलस बल्गेरिकम (Lactobacillus bulgaricum), लेक्टोबेसीलस केसी (Lactobacillus casie) और स्ट्रेप्टोकोकस लेक्टिस (Streptococcus lactis) आदि कवक अथवा माल्डस जिनका प्रयोग इस हेतु किया जाता है, वे मुख्यतया राइजोजिन्स (Rizogenes) वंश से सम्बन्ध रखती है । मुख्यतया राइजोपस ओराइजी (Rhizopus oryzae) का इस हेतु प्रयोग किया जाता है । एक नई प्रभेद स्पोरोलेक्टोबेसिलस इनुलिनस (Sporolactobacillus inulinus) का भी उच्चतम उत्पादन हेतु प्रयोग किया जाता है ।

किण्वन परिस्थितियाँ (Fermentation conditions)

लैक्टिक अम्ल उत्पादन हेतु कार्बोहाइड्रेट एवं नाइट्रोजन स्त्रोतों के साथ विटामिन का प्रयोग किया जाता है । विभिन्न प्रभेदों हेतु आवश्यकतानुसार विशिष्ट स्त्रोत का उपयोग किया जाता है । मुख्यतया मोलासेज (molases), माल्टोस (maltose), लेक्टोस (lactose), सुक्रोज (sucrose), हाइड्रोलाइसेज (hydrolysate) इत्यादि का उपयोग किया जाता है । इसके साथ ही माध्यम में कैल्सियम कार्बोनेट व अमोनियम हाइड्रोजन फास्फेट को भी शामिल किया जाता है । सामान्यतया माध्यम में अंकुरित माल्ट को भी मिश्रित कर लिया जाता है तथा pH को 5.5 एवं 6.5 के मध्य अनुरक्षित किया जाता है ।

लेक्टिक अम्ल उत्पादन अल्प वातहर (microaerobic) स्थिति में किया जाता है तथा pH को उदासीन अवस्था पर अनुरक्षित किया जाता है क्योंकि लेक्टिक अम्ल जीवाणु तीव्र गति से कम होती pH को सहन नहीं कर सकते हैं, साथ ही pH प्रारम्भ में कार्बोहाइड्रेट के लेक्टिक अम्ल में

रूपान्तरण पर प्रतिकूल असर करता है । लेक्टिक अम्ल संक्षारक (corrosive) होता है अत: किण्वन हेतु लकड़ी की नलिकाओं का उपयोग किया जाता है । लेक्टोबेसिलस डेल्ब्रुकी (Lactobacillus delbrucki) का बड़े संवर्धन संयंत्रों में 45-55°C तापमान पर संवर्धन किया जाता है । किण्वन की प्रक्रिया निम्न चरणों में सम्पन्न होती है -

प्रथम चरण - इस दौरान सूक्ष्मजीव तो तीव्र गति से वृद्धि करता है परन्तु लेक्टिक अम्ल का अल्प मात्रा में उत्पादन होता है ।

द्वितीय चरण - इस चरण में लेक्टिक अम्ल का अधिकतम उत्पादन होता है ।

तृतीय चरण - इस चरण में लेक्टिक अम्ल का उत्पादन घटता जाता है परन्तु कोशिका लयन (cell lysis) बढ़ जाता है ।

किण्वन प्रक्रिया (Fermentation process)

सूक्ष्मजीवों द्वारा या तो D(-) लेक्टिक अम्ल अथवा L(+) लेक्टिक अम्ल अथवा इन दोनों का रेसीमीक मिश्रण (racemic solution) बनाया जाता है । लेक्टिक अम्ल के रेसीमिक मिश्रण के निर्माण के लिए रेसीमेस विकर समूह (racemose group of enzymes) उत्तरदायी होते हैं । यह अभिक्रिया निम्न प्रकार से होती है -

$$C_{12}H_{22}O_{11} + H_2O \xrightarrow[\text{लेक्टेज}]{\text{Lactase}} \underset{\text{ग्लूकोज और गेलेक्टोज}}{2C_6H_{12}O_6} \xrightarrow[\text{System of enzymes}]{\text{विकर क्षेत्र}} \underset{\text{लेक्टिक अम्ल}}{2CH_3CHOHCOOH}$$

राइजोपस ओराइजी (Rhizopus oryzae) केवल L(+) लेक्टिक अम्ल उत्पादित करता है । हालांकि इससे उत्पादन बहुत धीरे एवं उत्पाद प्राप्ति भी कम होती है । अंतिम उत्पादों के निर्माण के आधार पर किण्वन को निम्न दो प्रकारों में बाँटा जा सकता है -

(a) समकिण्वकीय प्रक्रिया (Homofermentive process)

इस प्रक्रिया में लेक्टोबेसीलस डेलसुकी (Lactobacillus delsruki), लेक्टोबेसीलस पेन्टोसम (Lactobacillus pentosum), लेक्टोबेसीलस कोसी (Lcatobacillus cosie), स्ट्रेप्टोकोकस लेक्टिस (Streptococcus lactis) आदि जीवाणुओं का प्रयोग किया जाता है ।

यह जीवाणु EMP प्रक्रिया (Embden Meyerhaf Pathway) का प्रयोग प्रारूपिक अम्ल (Precursor acid) के निर्माण में करते हैं तथा उसे लेक्टेट डिहाइड्रोजिनेज द्वारा लेक्टिक अम्ल में बदल देते हैं । यह सभी सूक्ष्मजीव अवायवीय है हालांकि कुछ ऑक्सीजन की उपस्थिति को सहन कर सकते हैं । अंतिम उत्पाद लेक्टिक अम्ल होता है ।

(b) विषमकिण्वकीय प्रक्रिया (Heterofermentive process)

इस हेतु मुख्यतया ल्यूकोनॉस्टाक मिसेन्टेरोइस (Leuconostoc mesenterois) का उपयोग किया जाता है । जिसमें लेक्टिक अम्ल, CO_2, इथेनॉल, एसीटिक अम्ल, H_2O व कुछ अन्य उत्पाद बनते है ।

लेक्टिक अम्ल प्राप्ती (Lactic acid recovery)

किण्वन माध्यम में $CaCO_3$ डाला जाता है । यूष (broth) की pH 10 रखी जाती है तथा इसे गर्म कर छाना जाता है । इस उपचार द्वारा जीवाणु मर जाते हैं । फिर इसे H_2SO_4 एवं सक्रिय

चारकोल (active charcol) द्वारा उपचारित किया जाता है तथा इसे कैल्सियम लेक्टेट के रूप में क्रिस्टलीकृत कर लिया जाता है ।

इस चरण के बाद निष्कर्ष को ठंडे पानी से धोकर अभिकेन्द्रीत (centrifuge) किया जाता है । इस प्रकार प्राप्त किण्वन यूथ (broth) को आसवित (distill) करके ईस्टर (ester) को प्राप्त कर लिया जाता है । प्राप्त यूष (broth) को जल के साथ उबाला (boil) जाता है जो ईस्टर को विघटित कर देता है । इस प्रकार उत्पाद को आसवित करके लेक्टिक अम्ल का जलीय विलयन प्राप्त किया जाता है ।

लेक्टिक अम्ल को तृतीयक ऐल्केलाइन (tertiary alkaline) लवण के रूप में भी प्राप्त किया जा सकता है । इस हेतु किण्वन यूष (fermentation broth) में कार्बनिक विलायक को मिलाया जाता है तथा इसे अपघटित कर मुक्त अम्ल प्राप्त कर लिया जाता है ।

लेक्टिक अम्ल के उपयोग (Uses of lactic acid)

1. लेक्टिक अम्ल एक दुर्बल अम्ल (weak acid) है जिसमें बेहतर विलायक गुण होता है तथा इसके पॉलीमराइजेशन गुण के कारण इसे पॉलीमर बनाने के लिए उपयोग में लिया जाता है ।
2. यह खाद्य एवं पेय पदार्थों में अम्लीयता प्रदान करता है तथा खाद्य सामग्री के लिए संग्राहक (preservative) की तरह कार्य करता है ।
3. इसका उपयोग वस्त्र उद्योग एवं वस्त्र धाबन (textile & laundry industry) में किया जाता है ।
4. लेक्टिक अम्ल की शुद्ध अवस्था को प्लास्टिक उद्योग में उपयोग किया जाता है ।
5. कैल्सियम लेक्टेट का उपयोग बेकिंग पाउडर में किया जाता है ।

(c) एसीटिक अम्ल अथवा सिरका (Acetic acid or vinegar)

एसीटिक अम्ल या सिरके का सूक्ष्मजैवीय उत्पादन प्राचीन काल से किया जा रहा है । इसका औद्योगिक उत्पादन सर्वप्रथम खुले पात्रों में किया गया । यह प्रक्रिया बहुत धीमी थी एवं इसमें जीवाणु की एक तह वाइन की सतह पर तैरती रहती थी ।

सूक्ष्मजीव जो एसीटिक अम्ल उत्पादन हेतु प्रयोग किए जाते हैं ।

एसीटिक अम्ल का उत्पादन दो चरणों में सम्पन्न होता है । प्रथम चरण में अवायवीय रिथति में यीस्ट द्वारा शर्करा को इथेनॉल में बदल दिया जाता है फिर इथेनॉल को वायवीय स्थिति द्वारा ऐसीटिक अम्ल में ऐसीटोबेक्टर (acetobacter) एवं ग्लूकोनोबेक्टर (gluconobacter) द्वारा बदल दिया जाता है । इस प्रक्रिया को एसीटीफिकेशन (acetification) कहा जाता है । इस प्रकार प्रथम चरण हेतु सैकेरोमाइसिस सेरेविसी वेराइटी इलिप्सोइड्स का उपयोग किया जाता है तथा द्वितीय चरण हेतु एसीटोबेक्टर व ग्लूकोनोबेक्टर जाति का प्रयोग किया जाता है । यह जीवाणु ग्राम ऋणात्मक (gram negative), केटेलेज धनात्मक (catalase positive), ऑक्सीडेज ऋणात्मक (oxidase negative) एवं पूर्ण एरोबिक (obligate aerobes) होती है ।

उत्पादन हेतु किण्वन परिस्थितियाँ

ऐसीटिक अम्ल के उत्पादन हेतु माध्यम में फलों का रस, माँड युक्त सब्जियाँ, माल्टयुक्त दानें जैसे ज्वार, चावल, मक्का, गन्ना, मोलासेज शहद, एल्कोहल आदि का उपयोग किया जाता है ।

जब सिरके (vinegar) के उत्पादन में फलों के रस जैसे सेव के रस का उपयोग किया जाता है तो उत्पादित विनेगर को सिडर विनेगर (cider vinegar) कहते हैं । जब इसे माल्टयुक्त दानों से बनाया जाता है तो इसे माल्ट विनेगर (malt vinegar) तथा इथेनॉल से उत्पादित सिरके को स्प्रीट विनेगर (spirit vinegar) कहा जाता है । सिरके के उत्पादन में ब्लेक स्ट्रेप (black strap), मोलासेज के जलीय विलयन को जिसमें फॉस्फोरस व नाइट्रोजन युक्त यौगिक होते हैं, पोषक पूरक (nutrient suppliment) की तरह काम में लिया जाता है ।

मोलासेज माध्यम में 10% एल्कोहल व 1% ऐसिटिक अम्ल मिलाने से उत्पादन बढ़ जाता है । यह संवर्धन दो प्रकार से करवाया जा सकता है -

1. **निलम्बित तरीकें (Submerged culture)** से संवर्धन में विभिन्न तरह के पोषक संरूपों (nutrients) का उपयोग किया जाता है ।
2. **पेकिंग माध्यम (Packing medium) -** यह किण्वन प्रक्रिया एक पेक्ड बेड (Packed bed) प्रकार के किण्वक (fermenter) में किया जाता है जिसमें ढीले बंधे हुए (loosely packed) कॉलम का उपयोग किया जाता है ।

ऐसीटिक अम्ल जीवाणु अनऑक्सीय परिस्थिति के प्रति अत्यन्त संवेदनशील होते है अत: उनके संवर्धन में बिना किसी प्रतिरोध के ऑक्सीजन की आपूर्ति अति आवश्यक होती है ।

किण्वन प्रक्रिया (Fermentation process)

सिरके का सूक्ष्मजैवीय उत्पादन निम्न प्रकार से किया जा सकता है -

(अ) धीमी प्रक्रिया (Slow process) - इस प्रक्रिया में एसीटिक अम्ल के उत्पादन हेतु किण्वित फलों का रस व माल्ट लीकर (liquor) का प्रयोग किया जाता है ।

सर्वप्रथम फलों के रस से एल्कोहल का निर्माण किया जाता है इस हेतु धान किण्वन प्रक्रिया (Batch fermentation process) का उपयोग किया जाता है । इसके अन्तर्गत किण्वित रस को पात्र में भर लिया जाता है तथा सिरका बैक्टीरिया द्वारा इसे एसीटिक अम्ल में परिवर्तित किया जाता है । सिरका बैक्टीरिया माध्यम पर पतली परत की तरह वृद्धि करते हैं जो एल्कोहल के एसीटिक अम्ल में परिवर्तन को इंगित करता है ।

(ब) तीव्र प्रक्रिया (Fast process) - यह एक लगातार किण्वन प्रक्रिया है, जिसके अन्तर्गत मातृ सिरके को पात्र में एक चौथाई भर लिया जाता है तथा सक्रिय सिरका जीवाणुओं द्वारा संरोपित किया जाता है । एसीटिक अम्ल के उत्पादन हेतु माध्यम में एल्कोहॉलिक लाइसेट को भी मिलाया जाता है । इस प्रक्रम को 21-29˚C तक कुछ सप्ताह से कुछ महीनों तक चलाया जाता है तथा जीवाणु की द्रव्य माध्यम पर पतली परत में वृद्धि एसीटिक अम्ल के उत्पादन को इंगित करती है । पुन: प्राप्ति हेतु कुछ भाग को अलग किया जाता है तथा इसे एल्कोहॉलिक लीकर की समान मात्रा के द्वारा विस्थापित कर दिया जाता है ।

इस प्रक्रिया की बड़ी समस्या सिरका जीवाणु की जिलेटिनस फिल्म की क्लांतिनत (grouping) है, जो अम्लीयकरण को रोकता है, इसे बनाने के लिए तैरती फ्रेम का उपयोग करते हैं ।

(स) तीव्र जेनेरेटर प्रक्रम (Fast generating process) - इस प्रक्रिया के अन्तर्गत इथेनॉल को एसीटिक अम्ल जीवाणु की पतली परत पर फुहारित (trikled) किया जाता है । इस प्रक्रम में एक बड़े टैंक में लकड़ी की एक चौड़ी व मोटी परत (wood shaboys) बनायी जाती है अब फव्वारे (sprinkler) की सहायता से इस परत पर इथेनॉल का छिड़काव किया जाता है । लकड़ी के टुकड़ों की परत में उपस्थित एसीटिक अम्ल जीवाणु इथेनॉल को एसीटिक अम्ल में परिवर्तित कर देता है । इस प्रक्रिया में एल्कोहल का एसीटिक अम्ल में अधिकतम परिवर्तन हो जाता है जिससे एसीटिक अम्ल की प्राप्ति बढ़ जाती है । (चित्र 6)

(द) मेकिनस प्रक्रिया (Makin's process) - इस प्रक्रिया के अन्तर्गत सिरके जीवाणु के मिश्रण की सूक्ष्म बूंदे एवं पोषक ऐल्कोहालिक विलयन को संवर्धन कक्ष (fermenter) में प्रवेशित किया जाता है ।

(य) निलम्बित प्रक्रिया (Submerged process) - इसके अन्तर्गत विडोलित माध्यम (agitated medium) का उपयोग किया जाता है जिसमें 8-12% इथेनॉल होता है । इस विडोलित माध्यम को ऐसीटोबेक्टर ऐसीटाइ जीसस द्वारा संरोपित कर 24-29°C तक अनुरक्षित (maintain) रखा जाता है ।

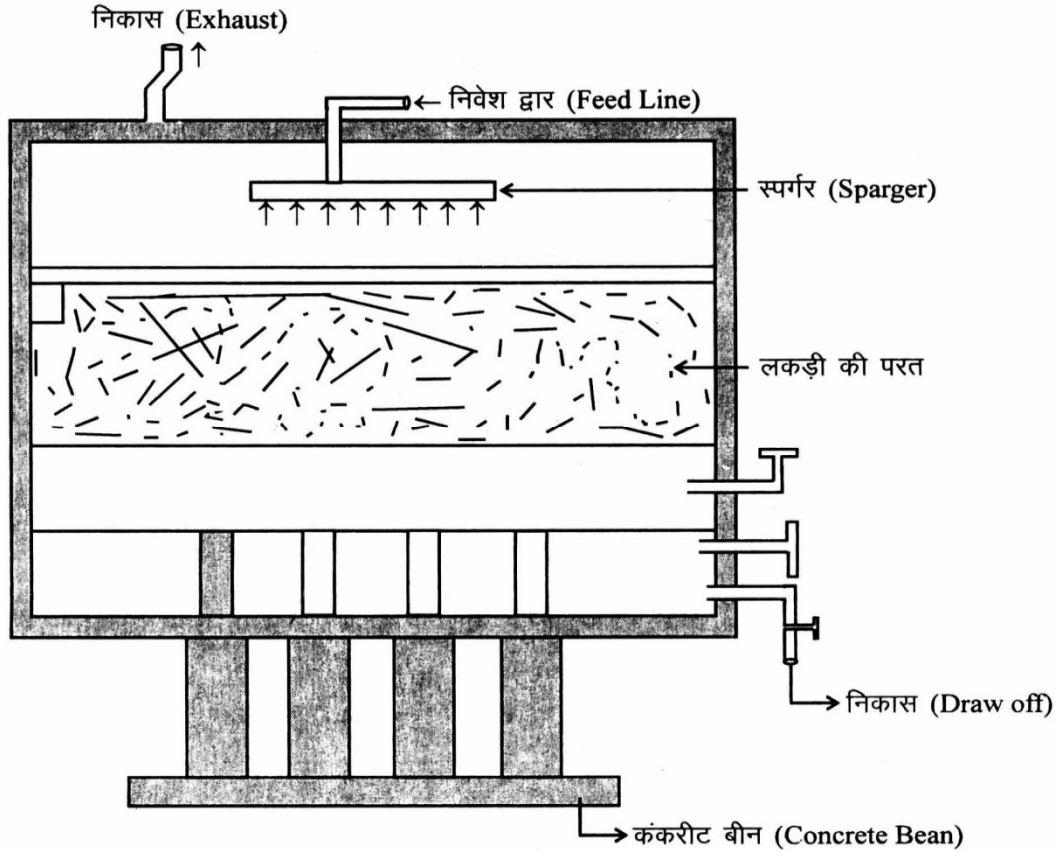

चित्र 10.6 - सिरके के उत्पादन की प्रक्रिया

ऐसीटिक अम्ल के उत्पादन की कार्यिकी (Physiology of acetic acid production)

ऐसीटिक अम्ल के उत्पादन के लिए मुख्य रूप से ग्लूकोनोबेक्टर (Gluconobacter) व ऐसीटोबेक्टर (Acetobacter) का तथा इनकी विभिन्न प्रजातियों का उपयोग किया जाता है इसमें से ग्लूकोनोबेक्टर सबआक्सीडेन्ट (Gluconobacter suboxident) में कार्यक्रिय (active) TCA चक्र (cycle) में अनुपस्थित होता है । जबकि सक्सिनेट डिहाइड्रोजिनेज (succinate dehydrogenase) के अलावा इस चक्र के सभी एन्जाइम उपस्थित होते हैं । यह जीवाणु ग्लूकोस तथा अन्य कार्बोहाइड्रेट को किण्वित नहीं कर सकते क्योंकि इनमें ई.एम.पी. (E.M.P) अनुपस्थित होता है । अत: यह जीवाणु श्वसनीय स्थिति में ग्लूकोस के उपापचयन (metabolic) हेतु रूपान्तरित पेन्टोस चक्र का उपयोग करते हैं ।

ऐसीटोबेक्टर (Acetobacter) प्रजातियों में कार्यकीय टी.सी.ए. (TCA cycle) उपस्थित होता है । पेन्टोस के C_2 -C_2 विदलन (cleavage) के फलस्वरूप उत्पन्न एसीटाइल फास्फेट (Acetyle phosphate) को कार्बन डाई ऑक्साइड में आक्सीकृत कर दिया जाता है तथा ऑक्सीकारी फास्फोराइलेशन (oxidative phosphorylation) द्वारा ऊर्जा उत्पन्न होती है ।

ऐसीटोबेक्टर (Acetobacter) एवं ग्लूकोनोबेक्टर (Gluconobacter) इथेनॉल (ethanol) के ऐसीटिक अम्ल (acetic acid) में ऑक्सीकरण के लिए उत्तरदायी है । इथेनॉल (ethanol) के ऑक्सीकरण हेतु दो झिल्ली से जुड़े (membrane associated) डिहाइड्रोजिनेज, ऐल्कोहल डिहाइड्रोजिनेस (alcohol dehydrogenase) होते हैं तथा इस ऑक्सीकरण में उत्पन्न इलेक्ट्रॉन (electron) को श्वसन चक्र (respiratory cycle) में सीधे स्थानान्तरित कर दिया जाता है ।

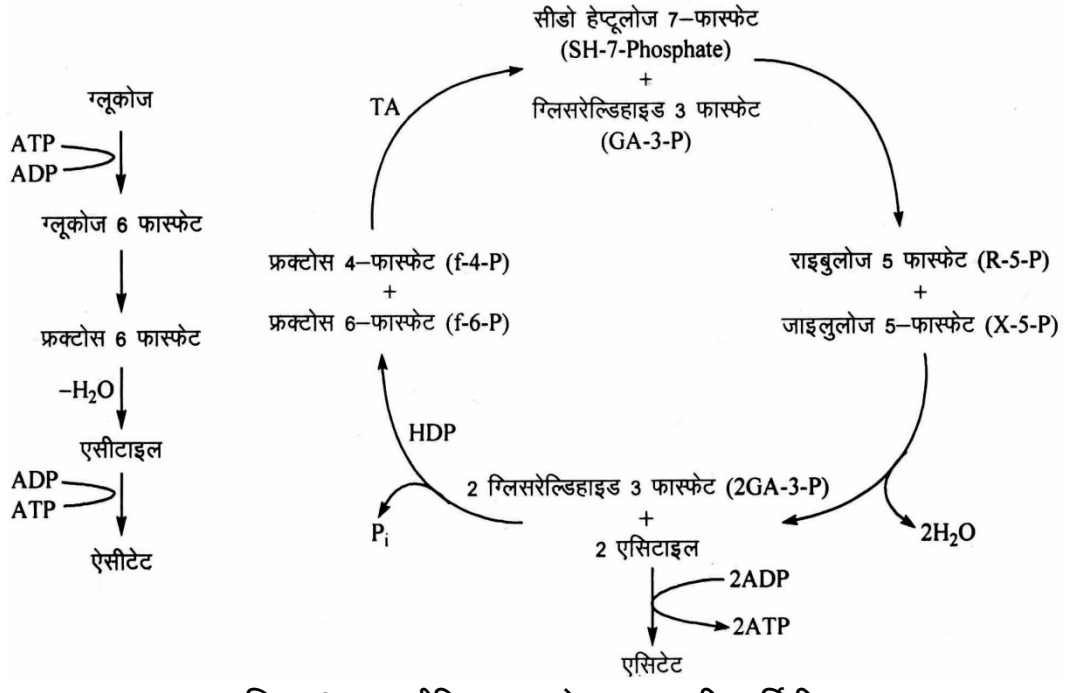

चित्र 10.7 - एसीटिक अम्ल के उत्पादन की कार्यिकी

प्राप्ति (Recovery)

ऐसीटिक अम्ल की पुन: प्राप्ति हेतु इसको इथाइल ऐसीटेट द्वारा निष्कर्षित किया जाता है तथा फिर इसे अधिक शुद्धिकरण के लिए आसवित (distill) किया जाता है ।

सिरके का उपयोग (Uses of Vinegar)

1. सिरके का प्रयोग अचार, साँस आदि में स्वाद को बढ़ाने के लिए किया जाता है ।
2. इसका उपयोग प्रयोगशालाओं में विलय (solvent) के रूप में भी किया जाता है ।
3. इसे खाद्य उत्पादों के संग्रहण (preservation) में भी प्रयुक्त किया जाता है ।

(d) ग्लूकोनिक अम्ल (Gluconic Acid)

सूक्ष्मजीवों द्वारा ग्लूकोनिक अम्ल का निर्माण ग्लूकोस क्रियाकारक की क्रिया ग्लूकोआक्सीडेज एन्जाइम (glucooxidase enzyme) की उपस्थिति में कराई जाती है । इसका उत्पादन सर्वप्रथम 1911 में ऐल्सबर्ग (Elseburg) ने स्यूडोमोनास (Pseudomonas) जीवाणु में की थी तथा इसके उत्पादन हेतु 1928 में कवक का सबसे पहले उपयोग किया गया था ।

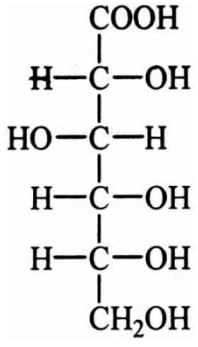

चित्र 10.8 - ग्लूकोनिक अम्ल

ग्लूकोनिक अम्ल का उत्पादन (Production of gluconic acid)

ग्लूकोनिक अम्ल का निर्माण दो चरणों में पूरा होता है । इसमें प्रथम चरण में ग्लूकोस (glucose) से ग्लूकोनोलेक्टोन (glucolactone) बनता है । जिसे ग्लूकोनिक अम्ल (gluconic acid) में हाइड्रोलाइस (hydrolyse) कर दिया जाता है । इसके लिए जीवाणु (bacterium) एसिटोबेक्टर (Acitobacter) एवं स्यूडोमोनास (Pseudomonas) तथा कवक (fungi) जैसे पेनिसिलियम (Penicillium), ऐस्पर्जिलस (Aspergillus), पुलुलेरिया (Pulolaria) आदि का उपयोग किया जाता है । इन सभी सूक्ष्मजीवों के द्वारा तथा इनका उपयोग करके ग्लूकोनिक अम्ल का उत्पादन किया जाता है ।

ग्लूकोनिक अम्ल के उत्पादन के चरण और स्थितियाँ (Conditions for gluconic acid production)

ग्लूकोनिक अम्ल (gluconic acid) के उत्पादन के लिए 4.5 से 6.5 pH पर किण्वन किया जाता है एवं वृद्धि माध्यम में फास्फोरस (phosphorus) व नाइट्रोजन (nitrogen) यौगिकों की सान्द्रता को नियंत्रित रखा जाता है । कैल्शियम ग्लूकोनेट (calcium gluconate) के उत्पादन

हेतु 13-15% से कम ग्लूकोस (glucose) की आवश्यकता होती है । यदि उत्पाद (product) सोडियम ग्लूकोनेट (sodium gluconate) के रूप में चाहिए, तो 28-30 प्रतिशत तक ग्लूकोस का उपयोग किया जाता है ।

इसमें किण्वन प्रक्रिया 20 घण्टों तक, 28-30°C तापमान पर तथा उच्च वातहर स्थिति में कराई जाती है । ऑक्सीजन (oxygen) की घुलनशीलता एवं ग्लूकोनिक अम्ल (gluconic acid) की प्राप्ति को बढ़ाने के लिए तंत्र का दाब (pressure) बढाया जाता है । ग्लूकोनिक अम्ल का उत्पादन मुख्य रूप से दो प्रक्रियाओं द्वारा किया जाता है ।

(i) किण्वन प्रक्रिया

इस प्रक्रिया में दो चरण मुख्य होते हैं -

(i) सतही प्रक्रिया (surface process)

(ii) निलम्बित प्रक्रिया (submerged process)

(i) **सतही प्रक्रिया (Surface process) -** इस प्रक्रिया में किण्वन (ferment) हेतु ठोस माध्यम या तरल माध्यम का उपयोग किया जाता है । सतही प्रक्रिया में ठोस माध्यम को निर्जमीकरण के पश्चात् चौड़े पात्र में 3-5 सेमी, मोटी परत के रूप में बिछा दिया जाता है । इसमें आवश्यक जीवाणु को संरोपित कर 28°C , पर ऊष्मायित (incubate) किया जाता है । तरल माध्यम का उपयोग कर ग्लूकोनिक अम्ल (gluconic acid) का उत्पादन बहुत प्राचीन प्रक्रिया है । इस तकनीक को कम निवेश तथा शीतकरण के लिए कम ऊर्जा की खपत के कारण उपयोग में लिया जाता है । इस प्रक्रिया में निर्जमित तरल माध्यम को वितरण तंत्र (distribution system) द्वारा एक चौड़े पात्र को फैलाया जाता है जिसके पश्चात् इस पर छिड़काव (spraying) या थमन क्रिया (blowing) द्वारा आवश्यक जीवाणु को संरोपित कर इसे 30-40°C पर उष्मायित (incubate) किया जाता है ।

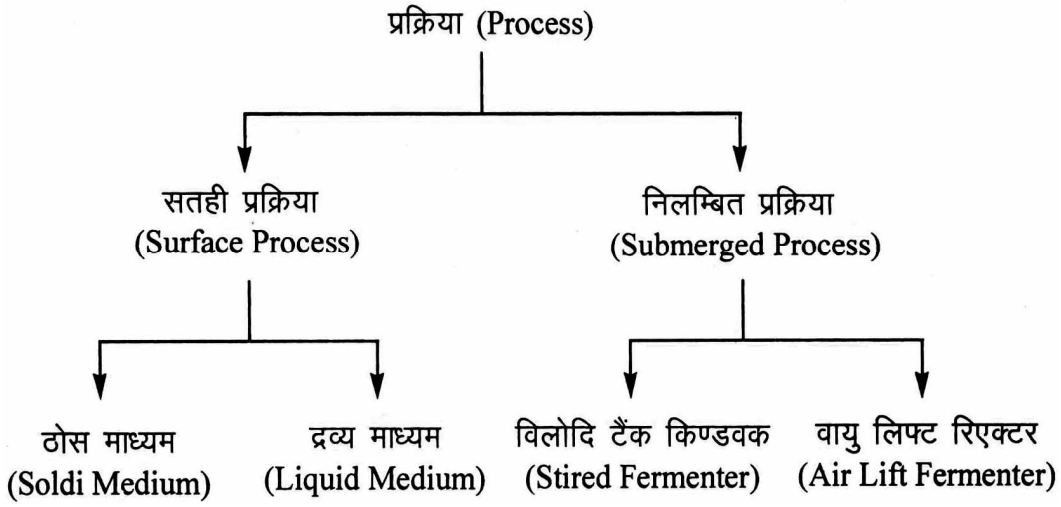

(ii) **निलम्बन प्रक्रिया (Submerged process) -** इस प्रक्रिया में उत्पादन में अधिक समय लगता है । परन्तु कम लागत तथा कम पारिश्रमिक (labour) इसको आकर्षक बनाती है । निलम्बन प्रक्रिया के अन्तर्गत उत्पादन अवस्था (iso stage) में ग्लूकोनिक अम्ल

(gluconic acid) का उत्पादन पोषी अवस्था (tropho state) में कवक जाल की संरचनात्मक प्रवृत्ति पर निर्भर है । ऐस्पर्जिलस नाइगर (Aspergillus niger) द्वारा ग्लूकोनिक अम्ल (gluconic acid) उत्पादन हेतु सूक्ष्म आक्सीय अवस्था (microaerophilic condition) को अनुरक्षित (maintain) किया जाता है तथा वातहर दर (aeration) को भी कम रखा जाता है । सामान्यतया माध्यम की श्यानता (viscosity) कम होने के कारण दोलन (stirrer) की आवश्यकता नहीं होती परन्तु कभी-कभी दोलित किण्वित (fermenter) अथवा वायु लिपट बायोरिएक्टर (Air lit bioreactor) का उपयोग किया जाता है । निलम्बन प्रक्रिया में सतह प्रक्रिया की तरह ही किण्वन के कारण माध्यम की रासायनिक प्रवृत्ति निरन्तर बदलती रहती है एवं झाग (foam) का निर्माण होना भी एक महत्त्वपूर्ण समस्या है । इस हेतु प्रतिझागकारी (antifoaming agent) कारक जैसे लार्ड तेल (lard oil) तथा प्रतिझागकारी (antifoaming devices) का उपयोग किया जाता है ।

उत्पादन की कार्यिकी (Physiology of Production)

ग्लूकोनिक अम्ल का उत्पादन दो पदों में होता है । सर्वप्रथम ग्लूकोस, ग्लूकोनोलेक्टोन में परिवर्तित होता है जिसे अगले पद में ग्लूकोनिक अम्ल में परिवर्तित कर दिया जाता है । इस प्रक्रिया के दौरान $FADH_2$, से दो प्रोटोन (proton) ऑक्सीजन को स्थानान्तरित कर दिये जाते हैं जिससे हाइड्रोजन पर-ऑक्साइड (H_2O_2) का निर्माण होता है । केटेलेज एन्जाइम (catalase enzyme) द्वारा हाइड्रोजन परआक्साइड (Hydrogen peroxide) में से जल को विलगित कर दिया जाता है क्योंकि ग्लूकोस ऑक्सीडेज (glucose oxidase) विकर की सक्रियता से हाइड्रोजन परआक्सीडेज (Hydrogen peroxidase) का निर्माण होता है अत: इस विकर को प्रतिजैविक (antibiotics) की तरह प्रयोग में लिया जा सकता है । इस रूप में इसे नोटेटम (Notatum) अथवा पेनिसिलियम B (Penicillium B) के नाम से जाना जाता है (चित्र 10.9) ।

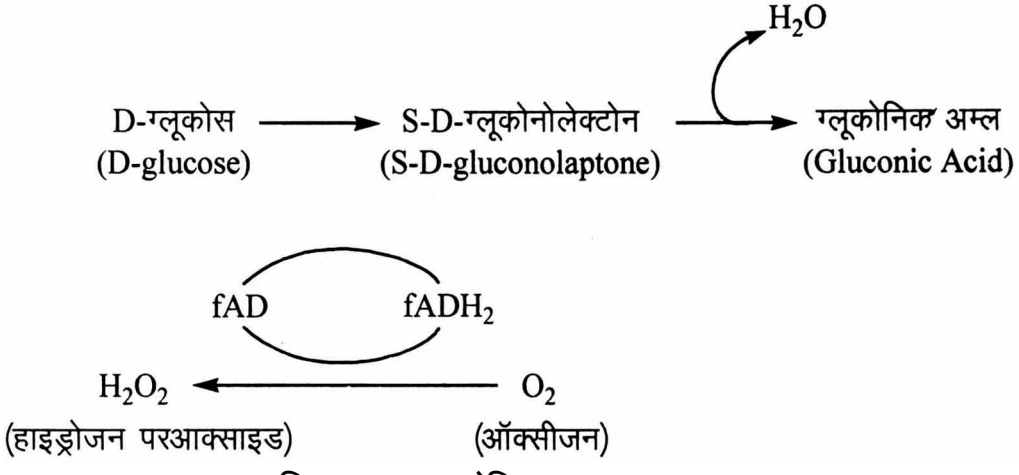

चित्र 10.9 - ग्लूकोनिक अम्ल का उत्पादन

उत्पाद की पुन: प्राप्ति (Recovery of product)

ग्लूकोनिक अम्ल की पुन: प्राप्ति हेतु इसमें से सर्वप्रथम अभिकेन्द्रण (centrifugation) व घूर्णित छनित्र (rotating filter) द्वारा कवक जाल (fungi net) को पृथक कर दिया जाता है । इसके पश्चात् माध्यम की pH में परिवर्तन किया जाता है तथा ग्लूकोनिक अम्ल को अवक्षेपित (percipitate) कर लिया जाता है ।

उपयोग (Uses)

(i) ग्लूकोनिक अम्ल के लवण कैल्सियम ग्लूकोनेट तथा सोडियम ग्लूकोनेट का प्रयोग मुख्यतया चिकित्सा क्षेत्र में किया जाता है ।

(ii) ग्लूकोनिक अम्ल व इसके लवण का उपयोग भोजन भेषनिक (pharmaceutical) एवं अन्य औद्योगिक क्षेत्रों (industrial area) में भी किया जाता है ।

(iii) इसके अलावा इसका उपयोग बोतल धोने, धातु को साफ करने, फोटोग्राफी (photography), लिथोग्राफी (lethography), प्रतिजैविक (antibiotic) की स्थिरता एवं विलेयता को बढ़ाने के लिये इसे प्रतिजैविक संकुल में निवेशित (incorporate) भी किया जाता है ।

(iv) कैल्सियम ग्लूकोनेट (calcium gluconate) का उपयोग मरीज में कैल्शियम की कमी को दूर करने व सोडियम ग्लूकोनेट का उपयोग रक्त के थक्के को हटाने एवं आंशिक घुलनशीलता के लिए किया जाता है ।

कार्बनिक अम्लों के उत्पादन हेतु प्रायोगिक सूक्ष्मजैविकीय प्रक्रम सारणी 3 में दर्शाये गये है ।

सारणी 10.3

कार्बनिक अम्ल (Organic acid)	**सूक्ष्मजीव (Microorganism)**	**सब्सट्रेट (substrate)**	**प्रक्रम (Process duration)**	**उत्पाद का उपयोग (Uses)**
इटोनिक अम्ल (Etonic acid)	ए. इटेकोनिकस ए. टेरस A. Etaconics A. terrans	ग्लूकोस (glucose)	24 घण्टे	* पेपर उद्योग में * अपमार्जक उद्योग में
फ्यूमेरिक अम्ल (Fumeric acid)	राइजोपस जाति केन्डिडा जाति (Rhizopus spp.)	ग्लूकोसn ऐल्केलाइड (glucose	3 Day 35°C 7 Day alkaloid)	रेजिन उत्पादन में (Resin production)

		n		
	(Candida spp.)			
प्रोपियोनिक अम्ल	प्रोपियोनिबेक्टिरिया	लेक्टोस	812 दिन तक	कवकनाशी
(Propionic acid)	(Propionibacteria)	(lactose)	तापमान 30˚C	
		ग्लूकोस (glucose)	तक रहता है ।	
		स्टार्च (Starch)		
मेलिक अम्ल	लूकोनॉस्टाक ब्रेविस	फ्यूमेरिक अम्ल	24 घण्टे	खाद्य पदार्थों में उपयोगी
(Maleic acid)	(Luconostoc bravis)	(fumaric acid)		
	केन्डिडा (Candida)	n-ऐल्केलाइड (n	alkalids)	
सक्सिनिक अम्ल	ब्रेविबेक्टीरियम	ग्लूकोस	4 दिन	रासायनिक विलायकों के रूप में
(Succinic acid)	(Bravibacterium)	(glucose)		
α-कीटो ग्लूटेरिक अम्ल	केन्डिडा (Candida)	nऐल्केलाइन (n	40 दिन alkaline)	रासायनिक विलायकों के रूप में
(α-ketoglutaric acid)	ऐसीटोबेक्टर (Acetobacter)	ग्लूटामिक अम्ल	(glutamic acid)	
सेलिसिलिक अम्ल	स्यूडोमोनास जाति	ग्लूकोस	51 घण्टे	भेषजिक(pharmaceuticals) एवं रासायनिक(chemical) उद्योगों में
(Salicylic acid)	ऐरुजिनोसा (Pseudomonas spp.)			

	Aeriginosa & oliovarenes			
आक्सेलो एसीटिक अम्ल	ऐस्पर्जिलस नाइगर	n-ऐल्केलाइन	47 दिन	रासायनिक विलायकों में
	(Aspergillus niger)			(Chemical solvent)
Oxalo acetic acid	स्क्लेरोटियम (Sclerotium)			

बोध प्रश्न

7. सिट्रिक अम्ल का प्रथम बार औद्योगिक उत्पादन कब व किसने किया ?
.....

8. सिट्रिक अम्ल औद्योगिक उत्पादन हेतु किन सूक्ष्मजीवी का उपयोग किया जाता है?
.....

9. सिट्रिक अम्ल के दो उपयोग बताइये ।
.....

10. ऐसीटिक अम्ल के औद्योगिक उत्पादन हेतु किन सूक्ष्मजीवों का प्रयोग किया जाता है?
.....

11. ग्लूकोनिक अम्ल के उत्पादन हेतु किन सूक्ष्मजीवी का प्रयोग किया जाता है?
.....

10.2.3 एल्कोहल (Alcohol)

विभिन्न प्रकार के एल्कोहॉलिक पदार्थों का उपयोग ईंधन तथा पेय पदार्थों में किया जाता है । इसे विलायक (solvent) के रूप में भी प्रयोग में लिया जाता है । आधुनिक युग में सूक्ष्मजीवी किण्वन द्वारा एल्कोहल (alcohol) का उत्पादन वृहद पैमाने (large scale) पर किया जाता है । इस हेतु शकरकंद, आलू मक्का, कसावा (Cassawa) व गन्ने का उपयोग क्रियाकारी (substrate) के रूप में किया जाता है । कुछ महत्त्वपूर्ण एल्कोहॉलिक तरल पदार्थों का उत्पादन निम्न तरीकों से किया जाता है ।

(a) इथेनॉल (Ethanol)

इथेनॉल के उत्पादन के लिए कई शर्करा (sugars) का प्रयोग क्रियाकारी की तरह किया जाता है क्योंकि प्राय: यह पाया जाता है कि किण्वन प्रक्रिया द्वारा शर्कराओं की अधिकतम ऊर्जा (maximum energy) को इथेनॉल के रूप में संग्रहित करके रखा जा सकता है । यह प्रक्रिया निम्न प्रकार से होती है -

$$C_{12}H_{22}O_{11} + H_2O \longrightarrow 4C_2H5OH + 4CO_2 + \text{Energy}$$

(97% रूपान्तरण)

इथेनॉल उत्पादन हेतु उपयोगी सूक्ष्मजीव (Use of microorganism for production of ethanol)

इथेनॉल उत्पादन हेतु यीस्ट (yeast) जैसे सैकेरोमाइसीस सेरेविसी (Saccharomyces cerevisiae), सेकैरोमाइसीस यूएरम (Saccharomyces uarum), सेकेरोमाइसीस काल्सबर्गेन्सिस (Saccharomyces carlsbergensis) तथा केण्डिडा ब्रेसिकी (Candida brassici), केण्डिडा यूटेलिस (Candida utalise), क्लोईवेरोमाइसिस फेजिलीस (Claviromycis fasilise), क्लोईवेरोमाइसिस लेक्टिस (Claviromycis lactis) एवं बैक्टीरिया जइमोमोनास मोबीलिस (Zymomonas mobilis) का प्रयोग किया जाता है ।

यह पाया गया है कि फ्यूजेरियम (Fusarium), बेसीलस(Bacillus) एवं पेकाईसोलीन टेनोकिलस (Pachysolen tannophilus) में भी शर्करा को इथेनॉल में परिवर्तित करने की क्षमता होती है ।

इथेनॉल के उत्पादन के लिए तीन प्रकार के क्रियाकारी पदार्थों (substrates) का उपयोग किया जाता है । यह निम्न प्रकार है -

(अ) मूल, कंद एवं बीज जिनमें स्टार्च (starch) उपस्थित होता है ।

(ब) शकरकंद तथा गन्ने से प्राप्त रस तथा मोलासेज ।

(स) प्रसाधित काष्ठ (processed wood) से प्राप्त लकड़ी तथा अवशिष्ट पदार्थ ।

यद्यपि दूध का व्हे (milkwhey) का उपयोग कर उत्पादन करने का प्रयास किया गया है परन्तु इसका औद्योगिक रूप से उपयोग नहीं किया गया है ।

जब यीस्ट को इथेनॉल के उत्पादन हेतु प्रयोग किया जाता है, तो हाइड्रोलाईज्ड स्टार्च (hydrolysed starch) का प्रयोग किया जाता है क्योंकि यीस्ट में एमाईलेज (amylase) उपस्थित नहीं होता है । अन्य सूक्ष्मजीवों के उपयोग के समय सर्वप्रथम सूक्ष्मजैवीय स्टार्च का हाइड्रोलाइसिस (hydrolysis) किया जाता है एवं इसके बाद हाइड्रोलाइज्ड स्टार्च को सूक्ष्मजैवीय (microbial) सूल्यूलेज (cellulase) के साथ संपूरण (supplement) किया जाता है । इस तरह अपचयित शर्करा (reducing sugar) प्राप्त होती है । (चित्र 10.10)

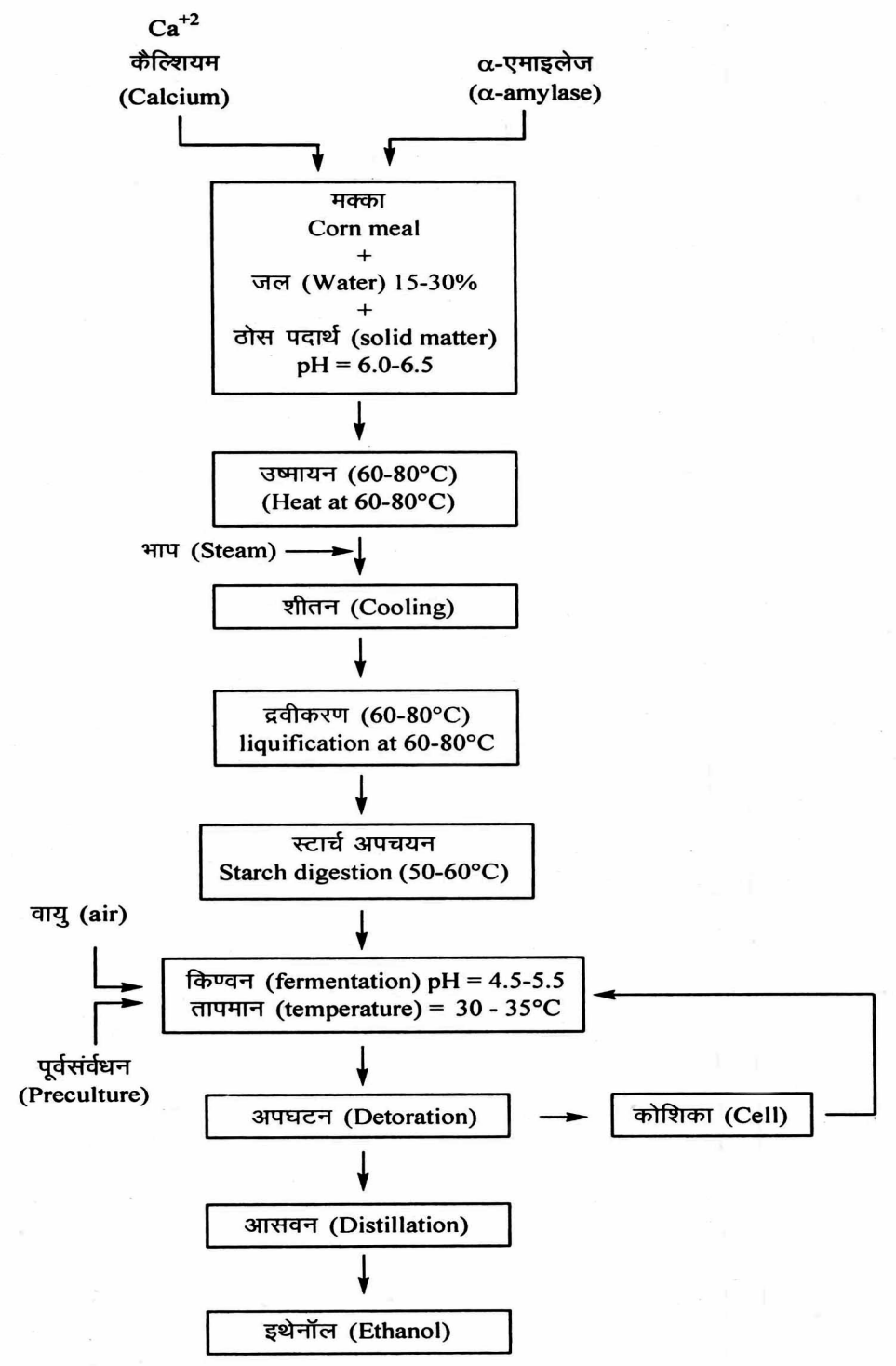

चित्र 10.10 - इथेनॉल का उत्पादन

शर्करा एवं स्टार्च के अलावा कुछ अन्य यौगिकों जैसे कि मोलासेज (molasage), बेन्जीन (benzene), जलीय पादप (aqueous plant), लकडी (wood), सल्फाइट (sulphite waste) अपशिष्ट इत्यादि को भी हाइड्रोलाइज्ड (hydrolysed) कर सेल्यूलोज के साथ सम्पूरक

(suppliment) करके उनसे इथेनॉल (ethanol) का उत्पादन किया जाता है । एथेनॉल के निर्माण हेतु pH 5.7 तथा तापमान (temperature) 30-37°C तक नियमित किया जाता है । यह प्रक्रिया निम्न प्रकार से होती है ।

किण्वन अवस्था (Fermentation Condition)

इथेनॉल का उत्पादन निरन्तर किण्वन (continuous fermentation) एवं बेच किण्वन (batch termentation) द्वारा किया जाता है ।

(i) निरन्तर किण्वन (Continuous fermentation)

यह धीमी प्रक्रिया है जिसे इथेनॉल के उच्च स्तर पर उत्पादन हेतु उपयोग किया जाता है । निरन्तर किण्वन में डेनिश सिस्टम (Denish system) का उपयोग किया जाता है । इसमें पोषक माध्यम में मोलासेज (molasage) के समान डाइअमोनियम फास्फेट भोज्य (additive) का उपयोग किया जाता है । सल्फयूरिक अम्ल की मदद से pH 5 पर व्यवस्थित की जाती है तथा तापमान को 35°C पर रखा जाता है । किण्वन के पश्चात् कोशिकाओं (cells) को अभिकेन्द्रण (centrifuge) द्वारा पृथक् कर लिया जाता है तथा इन कोशिकाओं (cells) को फिर से प्रथम किण्वक में जोड़ दिया जाता है ।

इथेनॉल के जैव संश्लेषण (biosynthesis) में जाइमोमोनास मोबिलीज (Zymomonas mobilis) का उपयोग किया जाता है । इथेनॉल उत्पादन में दो समानान्तर बायोरिएक्टर्स का उपयोग किया जाता है । जिसमें हर एक का आयतन समान होता है ।

(ii) बैच किण्वन (Batch fermentation)

इस प्रक्रिया को मुख्यतया इथेनॉल के उत्पादन हेतु प्रयोग में लाया जाता है जिसमें स्टार्च हाइड्रोलाइसेट (starch hydrolysate) या मोलासेज (malasage) तथा 3 प्रतिशत संरोपण (inoculam) का प्रयोग किया जाता है । यह प्रक्रिया 35-36°C एवं pH 4.0-4.5 पर कराई जाती है । किण्वन प्रक्रिया का समय कोशिका चक्रण (cell recycling) द्वारा कम किया जा सकता है । इसके अन्तर्गत 80% कोशिकाओं को कोशिका पृथक्कारी (cell seperator) द्वारा पृथक कर इसे किण्वक (fermentor) में डाल दिया जाता है । उच्च गुणवत्ता वाले मोलासेज के प्रयोग से 90 प्रतिशत इथेनॉल की प्राप्ति हो सकती है ।

इथेनॉल उत्पादन की विभिन्न प्रक्रियाओं का तुलनात्मक अध्ययन सारणी 10.4 में दिया गया है -

सारणी 10.4

किण्वन प्रक्रिया	शर्करा की सान्द्रता	कोशिका सान्द्रता	इथेनॉल सान्द्रता	विशिष्ट उत्पाद
(Fermentation Process)	**Sugar Concentration (%)**	**Cell concentration (in gm/l)**	**Ethanol Concentration (g/l)**	**Specific Product (g/g cell ur)**

बैच(Batch)	16.7	21.3	85.6	0.42
निरन्तर(Contimuous)	15.6	19.7	79.1	0.72
निरन्तर कोशिका चक्र(Continuous with cell recycling)	16.7	100	85.6	0.42

उत्पाद की प्राप्ति (Product recovery)

कोशिकाओं को पहले अभिकेन्द्रण (centrifuge) के द्वारा पृथक किया जाता है और इसके पश्चात् छानकर आसुतीकरण (distillation) द्वारा शुद्धीकृत कर दिया जाता है । इस तरह प्राप्त इथेनॉल 94.5 प्रतिशत शुद्ध होता है।

उपयोग (Uses)

इथेनॉल को प्रयोगशाला में विलायक की तरह उपयोग में लिया जाता है । इसके अलावा ईंधन एवं एल्कोहॉलिक पेय पदार्थ बनाने में भी इसका उपयोग किया जाता है ।

(b) ब्यूटेनॉल (Butanol)

सर्वप्रथम पाश्चर ने 19वीं शताब्दी में जीवाणुओं द्वारा ब्यूटेनॉल के उत्पादन का विवरण दिया । प्रथम विश्वयुद्ध से पहले सूक्ष्मजीवी प्रक्रियाओं का उपयोग केवल ब्यूटाडाइईन (butadiene) के निर्माण में किया जाता था । इसके बाद सबसे पहले वीजमान (Weizmann) ने ऐसीटोन (acetone), ब्यूटेनाल (butanol) एवं इथेनॉल (ethanol) के उत्पादन हेतु क्लास्ट्रीडियम एसीटोब्यूटाइलिकम (Clostridium acetobutylicum) का उपयोग किया ।

ब्यूटाइरिक अम्ल, ब्यूटेनॉल, एसीटोन एवं आइसोप्रोपेनाल को स्टार्च, मोलासेज (mollasage), सुक्रोज (sucrose), लकड़ी (wood), हाइड्रोलाइसेट (hydrolysate) तथा पेन्टोसेस (pentoses) के क्लोस्ट्रीडियम (Clostridium) किण्वन द्वारा प्राप्त किया जाता है । उत्पाद की मात्रा किण्वन परिस्थितियों एवं उपयोग किये जाने वाले सूक्ष्मजीवों पर निर्भर करती है ।

किण्वन परिस्थितियाँ (Fermentation Conditions)

(a) संरोपण (inoculum)

बीजाणुओं के उत्पादन (production of spores) एवं संरोपण (inoculum) की तैयारी इस प्रक्रिया में सबसे महत्त्वपूर्ण चरण होता है । क्लोस्ट्रीडियम एसीटोब्यूटाइलिकम के स्टॉक संवर्धन (stock culture) को 30 साल तक रेत (sand) में संग्रहित करके रखा जा सकता है । उत्पादन किण्वक (fermenter) को 1 : 3000 के कम अनुपात में संरोपित किया जाता है । संरोपण (inoculum) का उस अवस्था तक संवर्धन किया जाता है, जो उत्पाद के निर्माण के लिए आवश्यक है । इसके मुख्य लाभ है :-

- संदूषण से प्रतिरोधकता
- कम किण्वन समय
- उच्च उत्पादन

- किण्वक शर्करा की उच्च सान्द्रता

(b) भौतिक परिस्थितियाँ (Physical conditions)

निर्जमीत किण्वक (fermentor) को CO_2 के द्वारा गैसीकृत (gasses) किया जाता है । साथ ही संरोपण के पहले व बाद में किण्वक के घटकों (component) को कार्बनडाईऑक्साइड के द्वारा मिश्रित किया जाता है । किण्वन हेतु मोलासेज (mallasage) तथा कार्न स्टीप लिकर का प्रयोग किया जाता है तथा शुरूआत में pH 5.8 से 6.0 तक तथा तापमान 34°C पर रखा जाता है । यह किण्वन प्रक्रिया 36 घण्टों तक चलती है । इस 36 घण्टे के किण्वन में तीन अवस्थाऐं होती है ।

1. 18 घण्टों के बाद एसिटिक अम्ल (acetic acid) व ब्यूटाइरिक अम्ल (butyric acid) के निर्माण के कारण pH 5.2 तक कम हो जाती है ।
2. अगले 18 घण्टों में यह अम्ल एसीटोन व ब्यूटेनॉल में परिवर्तित हो जाते हैं जिसकी वजह से माध्यम का pH बढ़ जाता है ।
3. अगली अवस्था में सूक्ष्मजीव की वृद्धि व एसीटोन एवं ब्यूटेनॉल का उत्पादन रूक जाता है तथा pH 5.8 पर स्थिर हो जाता है । अब इस मिश्रण से उत्पाद को पृथक कर दिया जाता है । इस प्रक्रिया में जीवाणुभोजी (bacteriophage) एवं लेक्टोबेसिलाई (lactobacilli) का संदूषण एक प्रमुख समस्या है ।

ब्यूटेनॉल उत्पादन की कार्यिकी (Physiology of butanol production)

इस प्रक्रिया में निर्मित n-ब्यूटेनॉल के साथ हाइड्रोजन एवं कार्बनडाईऑक्साइड भी बनते हैं । ग्लूकोज की पूर्ण आक्सिडेशन (oxidation) से ऊर्जा का विमुक्तीकरण हो जाता है । परन्तु अगर ग्लूकोज इथेनॉल में परिवर्तित होता है तो ग्लूकोस में निहित ऊर्जा का अत्यधिक बड़ा भाग इथेनॉल में भण्डारित हो जाता है । यह इथेनॉल अब विभिन्न चरणों द्वारा एसिटेल्डिहाइड, एसीटिक अम्ल या अन्य मध्यवर्ती यौगिकों (mediate compounds) एवं अंत में ब्यूटेनॉल में परिवर्तित हो जाता है । इस प्रक्रिया को निम्न रेखीय आरेख द्वारा दर्शाया जा सकता है ।

ब्यूटेनॉल की 0.5% से कम सान्द्रता का कोशिका पर कोई प्रभाव नहीं होता है । जबकि उच्च सान्द्रता पर राह कोशिका झिल्ली के फास्फोलिपिड़ को क्षति पहुंचाता है । 1.3% से उच्च सान्द्रता पर ब्यूटेनॉल का उत्पादन रूक जाता है ।

(c) ग्लिसरॉल (Glycerol)

ग्लिसरॉल का उत्पादन प्राचीन समय से सूक्ष्मजीवों के द्वारा किया जाता रहा है । इसके उत्पादन के लिए विभिन्न कच्चे सस्ते माल को सूक्ष्मजीवों की क्रिया के द्वारा ग्लिसरॉल में परिवर्तित कर दिया जाता है । ग्लिसरॉल का उत्पादन मुख्य रूप से किण्वन की भौतिक तथा रासायनिक क्रियाओं पर निर्भर करता है ।

ग्लिसरॉल उत्पादन हेतु उपयोग आने वाले सूक्ष्मजीव

ग्लिसरॉल उत्पादन हेतु ओस्मोटोलरेन्ट यीस्ट (osmotolerant yeast) के प्रभेदों जैसे सैकेरोमाइसीज रॉक्सी (Saccharomyces roxii), टोरुलोप्सिस मेगनोलियई (Torulopsis magnoliae) तथा पिश्वीया फेलियोसा (Pischia faliosa) का उपयोग किया जाता है ।

वर्तमान में लवणप्रिय शैवाल (Halophilic alga) ड्यूनेलिएला सेलिना (Deunaliala celina) को ग्लिसरॉल उत्पादन हेतु प्रयुक्त किया जाता है ।

किण्वन परिस्थितियाँ (Fermentation Conditions)

ग्लिसरॉल के उत्पादन हेतु शैवाल को सर्वप्रथम उच्च लवण सान्द्रता वाले संवर्धन माध्यम पर संवर्धित किया जाता है । इससे ग्लिसरॉल की उच्च सान्द्रता प्राप्त होगी । वृद्धि संपूर्ण होने पर इसे कम लवण सान्द्रता वाले माध्यम पर स्थानान्तरित कर दिया जाता है जिससे माध्यम में ग्लिसरॉल स्त्रावित हो जाता है । ग्लिसरॉल के उच्च उत्पादन हेतु एल्केलाइन माध्यम का प्रयोग किया जाता है । साथ ही माध्यम में सोडियम सल्फाइट मिलाया जाता है जिसके अतिरिक्त लाभ होते हैं । यह उन जीवाणुओं की वृद्धि को रोक देता है जो यीस्ट की क्रियाविधि को प्रभावित कर सकते हैं ।

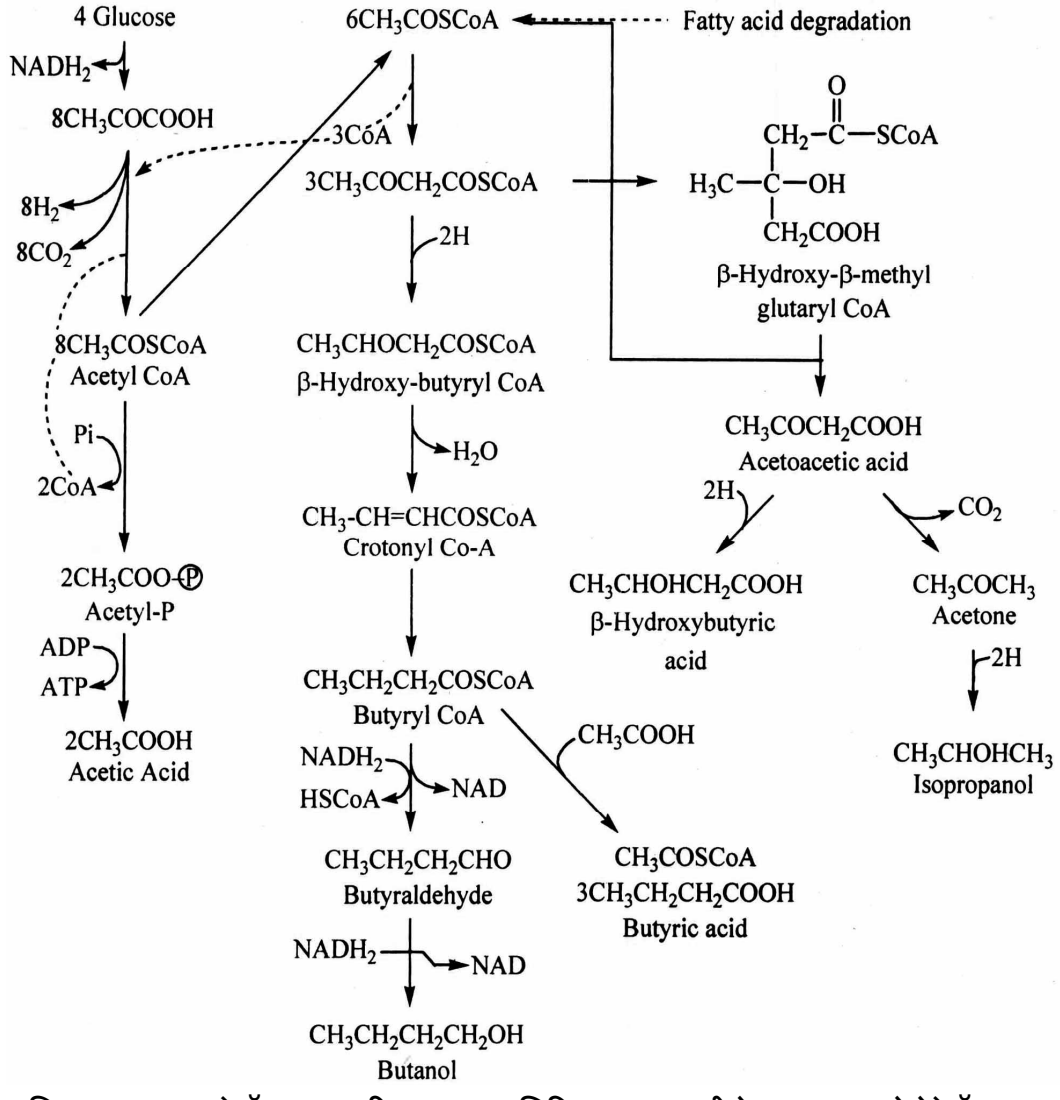

चित्र 10.11 - ब्यूटेनॉल, ब्यूटाइरिक अम्ल, एसिटिक अम्ल, एसीटोन तथा आइसोप्रोपेनॉल का जैविक संश्लेषण

ग्लिसरॉल संश्लेषण (Glycerol synthesis)

सामान्तया जो ग्लिसरॉल उत्पादन होता है वह कम मात्रा में होता है परन्तु किण्वन प्रक्रिया को रूपान्तरित करके ग्लिसरॉल उत्पादन को बढ़ाया जा सकता है ।

यह इस प्रकार से किया जाता है -

इथेनॉल किण्वन में ऐसीटेल्डिहाइड मध्यवर्ती के रूप में बनता है । अगर इसमें सोडियम बाइसल्फाइट (sodium bisulphite) मिलाया जाता है जो ऐसीटेल्डिहाइड सल्फाइट जटिल (acetaldehyde complex) बनाता है । सामान्यतया इस प्रक्रिया की ऊर्जा $NADH_2$ के रूप में प्राप्त होती है, यह $NADH_2$ ग्लाइकोलाइसिस (glycolysis) के प्रथम चरण से प्राप्त होता है । यह ऐसिटेल्डिहाइड (acetaldehyde) पुन: आक्सीकृत (oxidised) हो जाता है तथा इथेनॉल (ethanol) बनाता है । परन्तु अगर ऐसिटेल्डिहाइड को सल्फाइट जटिल (sulphie complex) में से हटा देते है तो $NADH_2$ डाइहाइड्राक्सी ऐसिटोन फास्फेट (Dihydroxi acetone phosphate) के ग्लिसरॉल (glycerol) फास्फेट में अपचयन हेतु उपलब्ध रहती है जिसके लिए ग्लिसरेल्डिहाइड फास्फेट डिहाइड्रोजिनेज विकर (glyceraldihide phosphate dehydrogenase enzyme) जिम्मेदार होता है ।

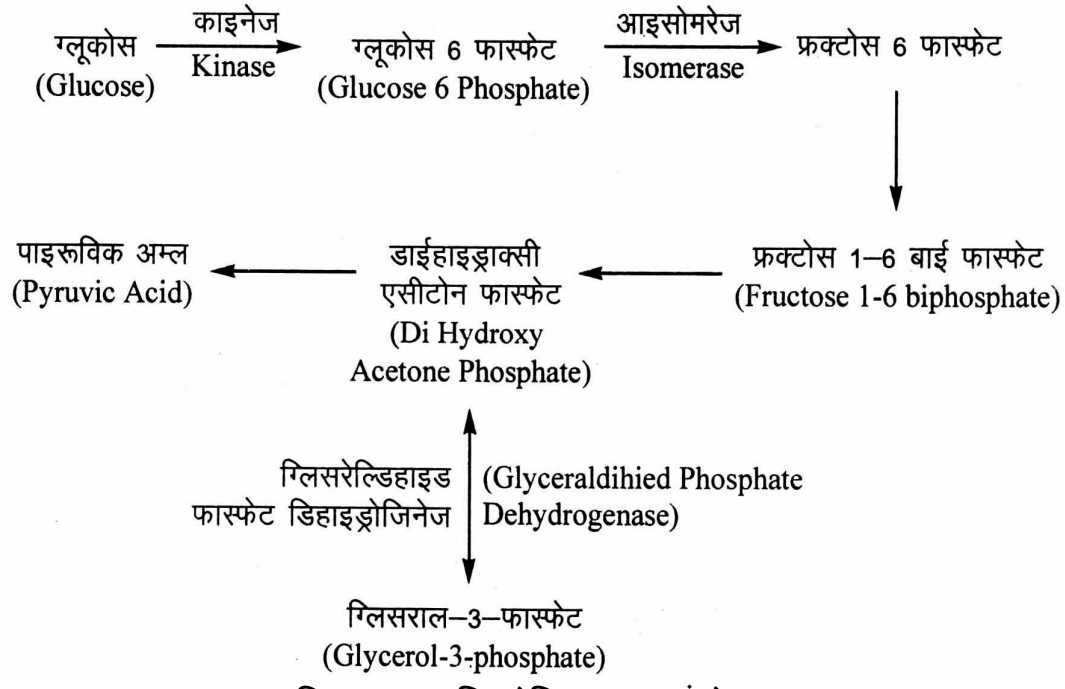

चित्र 10.12 - ग्लिसरेल्डिहाइड का संश्लेषण

बोध प्रश्न

12. इथेनॉल उत्पादन हेतु किन सूक्ष्मजीवों का उपयोग किया जाता है ?

    .....

13. इथेनॉल उत्पादन हेतु उपयोग किये जाने वाले पदार्थ (substrate) का नाम दीजिए ।

    .....

14. इथेनॉल के जर्मनी फेड्रल रिपब्लिक द्वारा जैव उत्पादन हेतु किरन जीवाणु का उपयोग किया जाता है?

.....

15. ब्यूटेनॉल उत्पादन हेतु किन सूक्ष्मजीवों का प्रयोग किया जाता है?

.....

16. ग्लिसरॉल उत्पादन हेतु किन सूक्ष्मजीवों का प्रयोग किया जाता है?

.....

10.3 द्वितीयक उपापचयक (Secondary Metabolites) :

प्रतिजैविक (Antibiotics)

प्रतिजैविक वह रासायनिक पदार्थ है जो कुछ सूक्ष्मजीवों द्वारा स्त्रावित किये जाते हैं तथा सूक्ष्मजीवों की वृद्धि और विकास को अवरूद्ध करते हैं । ज्यादातर प्रतिजैविक एक्टीनोमाइसिटीज विशेषत: स्ट्रेप्टोमाइसीज (Streptomyces) वंश तथा कुछ अन्य तन्तुमय कवक द्वारा उत्पादित किये जाते हैं ।

"एन्टीबायोटीक" शब्द सर्वप्रथम वैक्समेन (Waksmann) ने 1940 में दिया था । प्रतिजैविकों का अध्ययन 1929 में ‘‘पेनिसिलिन" की खोज के साथ शुरू हुआ जब एडवर्ड फ्लेमिंग (Edward Flemming) ने यह सिद्ध किया कि पेनिसिलियम नोटेटम (Penicillium notatum) के ब्रोथ संवर्धन के छनित्र में ग्राम धनात्मक जीवाणुओं के विरूद्ध प्रतिजीवाण्वीय क्रियाविधि उपस्थित होती है ।

वर्तमान में, प्रतिजैविकी का संश्लेषण रासायनिक क्रियाओं द्वारा किया जाता है, सल्फोनेमाइड्स (Sulphonamides), नेलिडिक्सिक अम्ल (Nellidicsic acid) तथा अर्धसंश्लेषी पेनिसीलीन (Semi synthetic penicillin) । बहुत सी प्रतिजैविक चिकित्सारसायनी कारकों (chemotherapeutants) के रूप में उपयोग की जाती है । कुछ प्रतिजैविक बहुत ज्यादा विषैले होने के कारण चिकित्सा में उपयोग नहीं किये जाते हैं । ऐसे प्रतिजैविकों (antibiotics) को अचिकित्सकीय कारक (nontherapeutic agents) की तरह उपयोग किया जाता है उदाहरण: कोल्विसिन्स (Colchicins) ।

चिकित्सारसायनी कारक रूपी प्रतिजैविकों को जीवाणुओं के विरूद्ध जैसे स्ट्रेप्टोमाइसिन (streptomycin), कवकों के विरूद्ध जैसे ग्रीसियोफल्विन (grisieofulvin), प्रोटोजोओन्स के विरूद्ध जैसे फ्यूमेजिलिन (feumazilin) एवं विषाणु के विरूद्ध जैसे रिफामाईसिन (rifamycin) को उपयोग में लिया जाता है ।

(a) पेनिसिलिन

यह बहुतायत से उपयोग किये जाने वाला प्रतिजैविक है । यह प्रतिजैविक ग्राम धनात्मक जीवाणुओं के साथ-साथ ज्यादातर विषाणुओं व रिकेट्सिया के विरूद्ध कारगर सिद्ध हुई है । पेनिसिलिन्स कई पेनिसीलिन का समूह है जो कि एक-दूसरे से अमीनो समूह (amino group) से संलग्न पार्श्व श्रृंखला के कारण भिन्न होते हैं ।

बहुत सी पेनिसिलिन्स 6-अमीनोपेनिसिलेनिक अम्ल के व्युत्पन्न है तथा इन सभी की संरचना में b-lacton चक्र उपस्थित होता है जो प्रतिजैविक क्रिया के लिए उत्तरदायी होता है । यद्यपि यह प्रतिजैविक स्तनधारी के लिए विषालु नहीं होते हैं, परन्तु इनसे कभी-कभी एलर्जिक प्रतिक्रियाएँ उत्पन्न हो सकती है ।

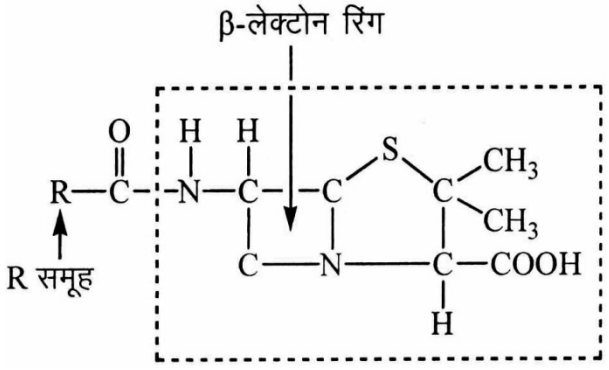

चित्र 10.13 - अमीनोपेनिसिलेनीक अम्ल

पेनिसिलिन उत्पादन हेतु पेनिसिलियम क्राइसोजिनम (Penicillium chrysogenum) का उपयोग किया जाता है । प्रारम्भ में फ्लेमिंग ने पेनिसिलियम नोटेटम (Penicillium notatum) से पेनिसिलिन की खोज की थी परन्तु इससे पेनिसिलिन काफी कम मात्रा में प्राप्त होती है अत: उच्च उत्पादक पेनिसिलियम क्राइसोजिनम का वरण किया गया ।

किण्वन अवस्थाऐं (Fermentation conditions)

पेनिसिलिन के उच्च उत्पादन हेतु माध्यम बहुत महत्त्वपूर्ण होता है । माध्यम में कोर्न स्टीप लिकर का उपयोग किया जाता है जो कोर्न स्टार्च निर्माण (manufacture) का सहउत्पाद है । यह नाइट्रोजिनस उत्पाद पेनिसिलिन के उच्च उत्पादन हेतु आवश्यक होता है । कोर्न स्टीप लिकर में मुख्य कार्बोहाइड्रेट लेक्टोज है जो पेनिसिलिन उत्पादन हेतु महत्त्वपूर्ण कार्बन स्त्रोत है क्योंकि यह धीरे-धीरे स्वांगीकृत किया जाता है । साथ ही यह कार्बनिक अम्ल के संग्रहण को रोकता है । कोर्न स्टीप लिकर में पेनिसिलिन उत्पादन हेतु आवश्यक पूर्वगामी अणु जैसे फिनायलएनीन (phenylaneane) फिनाइलइथाइलअमीन (phenylethylamene) भी पाये जाते हैं । इसके साथ ही पेनिसिलिन उत्पादन हेतु जो उत्पादन माध्यम उपयोग किया जाता है उसमें अमोनियम सल्फेट, $CaCO_3$, $Ca(OH)_2$, ग्लूकोज, सोडियम हाइड्रोजन फास्फेट तथा फिनाइल एसिटिक अम्ल (phenyl acetic acid) का उपयोग भी किया जाता है ।

पेनिसिलिन उत्पादन हेतु pH 5.2 तथा तापक्रम 23-25°C तक रखा जाता है इसके साथ वातहर (aeration) एवं एजीटेशन आवश्यक होता है ।

किण्वन

संदूषण विकास (Inoculum development)

संदूषण की तैयारी ज्वार के बीजों पर की जाती है । इस हेतु एक फ्लास्क में 15 ग्राम बीजों में मातृ संवर्धन (पेनिसिलियम क्राइसोजिनम) को मिला करके इसे 25°C पर 7 दिन के लिए रख दिया जाता है । ज्वार के बीज पर जो बीजाणु विकसित होते हैं उन्हें आसुत जल में मिला करके

बीजाणु निलंबन तैयार कर लिया जाता है । इसकी प्रतिजैविक सक्रियता की जाँच के पश्चात् इसे मुख्य किण्वक में संदूषित किया जाता है ।

पेनिसिलिन उत्पादन हेतु पेनिसिलियम क्राइसोजिनम को स्टीर किण्वक (stirred fermenter) में वर्धीत करवाया जाता है । इसके लिए 30,000 लीटर संवर्धन माध्यम को टैंक में रखा जाता है तथा निर्जमित करके पेनिसिलियम क्राइसोजिनम के संग्रहित निलम्बन से संदूषित किया जाता है ।

टैंक में बहुत सी युक्तियाँ होती है जो निरन्तर रूप से ग्लूकोज सिरप, NaOH तथा H_2SO_4 को डालती रहती है तथा pH को 6.8 से 7.4 के मध्य अनुरक्षित करके रखती है एवं कूलींग कोइल्स (cooling coils) तापमान को 23 से 25°C के मध्य बनाये रखती है । इसके साथ ही कुछ अन्य युक्तियाँ एवं पम्प होते हैं जो झाग विरूद्ध कारक (antifoam agents) एवं पूर्वगामी (precursors) को किण्वक (fermentor) में डालते रहते हैं । उदाहरण: फिनाइल एसीटिक अम्ल (phenyl acetic acid) का उपयोग एक पेनिसिलिन G के पूर्वगामी हेतु किया जाता है ।

किण्वन में पेनिसिलियम क्राइसोजिनम की वृद्धि को तीन भागों में बाँटा जाता है -

प्रथम अवस्था (Ist Phase)

इस भाग में कवक जाल (mycelium) की वृद्धि होती है । प्रतिजैविक की प्राप्ति बहुत कम होती है । कार्न स्टीप लिकर में उपस्थित लेक्टिक अम्ल अधिकतम दर से उपयोग किया जाता है । इस अवस्था में अमोनियम मुक्त होती है जिससे pH बढ़ने लगता है ।

द्वितीय अवस्था (IInd Phase)

लेक्टोज एवं अमोनियम नाइट्रोजन के तेजी से उपभोग के कारण पेनिसिलिन का अधिकतम उत्पादन इसी अवस्था में होता है । इसके साथ ही कवकजाल का भार (mass) भी बढ़ता है ।

तृतीय अवस्था (IIIrd Phase)

इस फेज में प्रतिजैविक की सान्द्रता कम होने लगती है साथ ही कवकजाल के स्वअपघटन से अमोनिया मुक्त होती है जिससे pH बढ़ता है ।

पेनिसिलिन प्राप्ति (Recovery of Penicillin)

सात दिन के किण्वन चक्र के बाद संपूर्ण माध्यम को पेनिसिलिन की प्राप्ति हेतु शस्य (harvest) कर लिया जाता है । पेनिसिलिन के सामान्य pH पर जलीय अवस्था (aqueous phase) में रहने न अम्लीय pH पर विलायक अवस्था (solvent phase) में उपस्थित रहने के गुण के कारण इसकी पोटेशियम पेनिसिलिन के रूप में प्राकृतिक विलयन से प्राप्ति आसान होती है । एक बार किण्वन के पूरे होने पर पूरे यूष माध्यम (broth culture) को कवकजाल से पृथक करके इसमें विलायक जैसे अमाइल या ब्यूटाइल एसीटेट मिलाया जाता है । इस प्रकार प्राप्त इमलसन (emulsion) को अभिकेन्द्रित (centrifuge) किया जाता है तथा एसीटेट को पृथक कर लिया जाता है । इसके पश्चात् एसीटेट में फास्फेट बफर मिलाया जाता है तथा इसे अभिकेन्द्रित किया जाता है । यह अंतिम चरण बार-बार दोहराया जाता है फिर ब्यूटेनॉल को जलीय मिश्रण में मिलाया जाता है तथा पेनिसिलिन के पोटेशियम लवण को पृथक कर लिया जाता है । पोटेशियम पेनिसिलिन का आगे ओर शुद्धीकरण किया जा सकता है ।

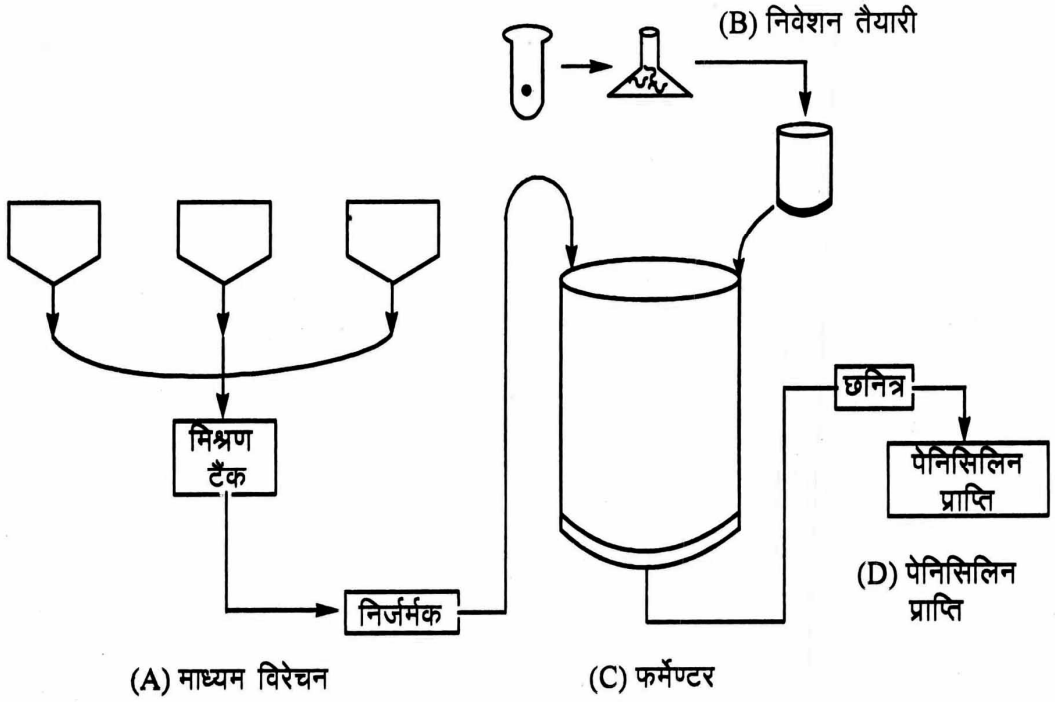

चित्र 10.14 - पेनिसिलिन की प्राप्ति

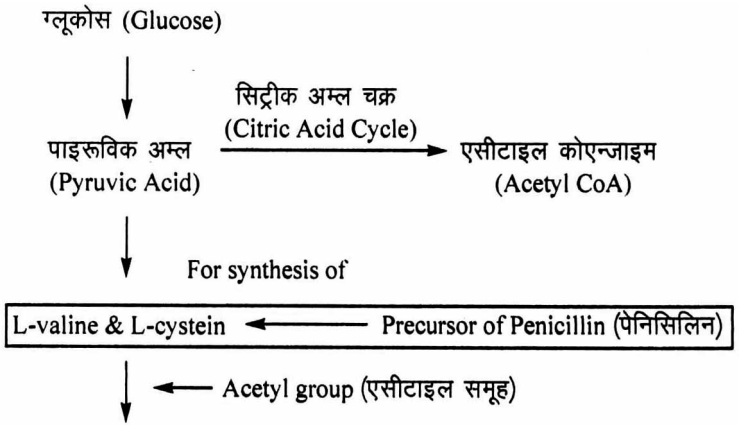

चित्र 10.15 - पेनिसिलिन जैव संश्लेषण (Penicillin biosynthesis)

पेनिसिलिन उत्पादन की कार्यिकी (Physiology of penicillin production)

पेनिसिलिन का उत्पादन कवकों की विभिन्न जैव रासायनिक प्रक्रियाओं के दौरान होता है जो वृद्धि के लिए तो आवश्यक नहीं होती है परन्तु कवक की नियमनकारी अभिक्रियाओं (regulatory activities) के लिए आवश्यक होती है ।

पेनिसिलिन का अधिकतम उत्पादन या तो सिट्रिक अम्ल चक्र की अक्रियाशील (inactivated) अवस्था में अथवा जब पाइरूविक अम्ल (pyruvic acid) का एसिटाइल को एन्जाइम ए (Acetyl CoA) में रूपान्तरण नहीं हो रहा हो तब होता है । इस प्रकार पाइरूवेट अधिक मात्रा में संग्रहित होता है जिससे पेनिसिलिन के डाइपेप्टाइड पूर्वगामी अमीनो अम्ल L-वेलीन तथा L-सिस्टीन का

निर्माण होता है । यह अंतिम मध्यवर्ती होता है जो एसाइल समूह से जुड़कर पेनिसिलिन के संश्लेषण हेतु उत्तरदायी होता है । इस प्रक्रिया को संक्षेप मे निम्न प्रकार से दर्शाया जा सकता है ।

(b) टेट्रासाइक्लिन्स (Tetracyclins)

टेट्रासाइक्लिन की विस्तृत प्रतिजैविक सक्रियता एवं कम विषालुता (toxicity) के कारण यह एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण चिकित्सकीय कारक के रूप में उपयोग होते हैं ।

टेट्रासाइक्लिन विस्तृत प्रतिजैविक है जो ग्राम धनात्मक व ग्राम ऋणात्मक जीवाणुओं के साथ-साथ रिकेट्सियास (Rickettsia), माइकोप्लाज्मा (Mycoplasma), लेप्टोस्पाइरास (Laptospirose), स्पाइरोकिट्स (Spirochetes) व क्लेमाइडिया (Clamidia) पर भी प्रभावी होता है । सिफेलोस्पोरीन (Cephalosporin) एवं पेनिसिलिन के बाद टेट्रासाइक्लिन ही विस्तृत रूप से उपयोग होने वाला प्रतिजैविक है । क्लोरोटेट्रासाइक्लिन इस समूह का प्रथम प्रतिजैविक है जिसे 1945 में विलगित किया गया था ।

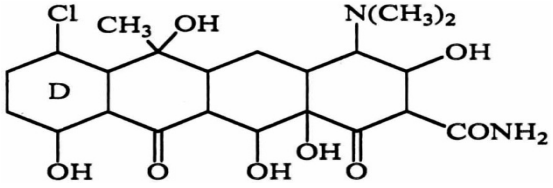

चित्र 10.16 - क्लोरोटेट्रासाइक्लिन की संरचना (Structure of Chlorotetracyclin)

टेट्रासाइक्लिन की संरचना में नेफ्थलीन चक्र होता है (चित्र 10.16) । कई तरह के अन्य अर्धसंश्लेषी (semisynthetic) प्रतिजैविकों को दूसरे टेट्रासाइक्लिन से प्राप्त किया जा सकता है । जैसे 6-डाइमिथाइल टेट्रासाइक्लिन (6- Dimethyltetracycline), 7-क्लोरोटेट्रासाइक्लिन (7-Bromotetracyclin), 7-क्लोरो-6-डाइमिथाइल क्लोरोटेट्रासाइक्लिन (7-chloro-6-dimethylchlorotetracyclin), 7-ब्रोमोटेट्रासाइक्लिन (7-Bromotetracyclin), 7-ऑक्सीटेट्रासाइक्लिन (7-oxytetracyclin), 5-ऑक्सीटेट्रासाइक्लिन (5-oxytetracyclin) आदि ।

सूक्ष्मजीव जो टेट्रासाइक्लिन उत्पादन हेतु उपयोग किये जाते है -

स्ट्रेप्टोमाइसीस आरीयोफेसिएन्स, स्ट्रेप्टोमाइसीस रेमोसस, नोकार्डिया सल्फ्यूरिया इत्यादि ।

किण्वन अवस्थायें (Fermentation Conditions)

टेट्रासाइक्लिन उत्पादन हेतु जो संघटक उपयोग में लिये जाते हैं वह इस प्रकार है : शर्करा - 3% कोर्न स्टीप लिकर - 1%, $CaCO_3$ - 1%, $(NH_4)_2SO_4$ - 0.2%, NH_4Cl - 0.1% । माध्यम की भौतिक एवं रासायनिक अवस्था सूक्ष्मजीव की वृद्धि व क्लोरोटेट्रासाइक्लिन उत्पादन हेतु बहुत महत्त्वपूर्ण होती है ।

प्रतिजैविक की प्राप्ति, pH, संरोपण की उम्र तथा माध्यम की अवस्था पर निर्भर करती है । वातहर भी इसके उत्पादन में एक महत्त्वपूर्ण कारक है ।

किण्वन प्रक्रिया (Fermentation process)

प्रभेद विकास (Strain development)

ऐसे प्रभेद जिनसे उच्च मात्रा में टेट्रासाइक्लीन की प्राप्ति हो, उन्हें उन उत्परिवर्ती (mutant), जिनमें प्रतिजैविक संश्लेशण अवरूद्ध हो, के पुन: बदलाव (reverstant) से प्राप्त किया जा सकता है ।

स्ट्रेप्टोमाइसीस ऑरोफेसिएन्स (Streptomyces oerufaciens) तथा स्ट्रेप्टोमाइसीस राइनोसर (Streptomyces rhinoser) के उच्च उत्पादक उत्परिवर्ती प्रभेदों को UV किरणों द्वारा उत्पन्न उत्परिवर्तियों के द्वारा प्राप्त किया जा सकता है ।

प्रतिजैविक उत्पादन (Antibiotic Production)

टेट्रासाइक्लीन का उत्पादन विडोलित किण्वक (stirred fermenter) में किया जाता है । इस हेतु 24-28 घंटों तक स्ट्रेप्टोमाइसीज के निलम्बित बीजाणु (submerged spores) विकसित किए जाते हैं जिससे द्वितीयक कवकजाल वृद्धि करता है ।

यदि ग्लूकोज को कार्बोहाइड्रेट स्त्रोत की तरह उपयोग किया जाता है तो किण्वक में इसे लगातार निवेशित करना जरूरी होता है । स्टार्च को अतिरिक्त स्त्रोत की तरह काम लेते हैं । टेट्रासाइक्लीन का उत्पादन फास्फेट के कारण दमित होता है अत: यह किण्वन फास्फेट की कम मात्रा में कराया जाता है ।

टेट्रासाइक्लीन की अधिकतम प्राप्ति हेतु इष्टतम ऑक्सीजन (optimal O_2 supply) महत्त्वपूर्ण होती है, विशेषत: किण्वन के प्रथम घंटे में । जब वातहर (aeration) के लिए ऑक्सीजन से परिपूर्ण वायु (oxygen enriched air) उपयोग की जाती है तब टेट्रासाइक्लीन प्रचुर मात्रा में प्राप्त होता है । टेट्रासाइक्लीन का उत्पादन निम्न प्रकार से किया जा सकता है -

1. क्लोरोटेट्रासाइक्लीन का उपयोग करते हुए रासायनिक विधि द्वारा ।
2. क्लोराइड मुक्त संवर्धन माध्यम में किण्वन द्वारा ।
3. माध्यम में क्लोराइड मंदक को जोड़कर जैसे मरकेप्टोबेन्जोथायोजेल (mercaptobenzothiogel) ।
4. उत्परिवर्ती के चुनाव द्वारा जो क्लोरीनीकरण (chlorination) क्रिया नहीं कर सकें ।

प्रथम चरण में कवक जाल की वृद्धि होती है तथा कार्बोहाइड्रेट उपभोग होता है । द्वितीय अवस्था में टेट्रासाइक्लीन उत्पादन बढ़ता है तथा तृतीय अवस्था के अन्तर्गत जैसे-जैसे कार्बोहाइड्रेट उपभोग बढ़ता है, माध्यम का pH घटता है तथा प्रतिजैविक का संश्लेषण कम हो जाता है । यह प्रक्रिया निम्न प्रकार से होती है -

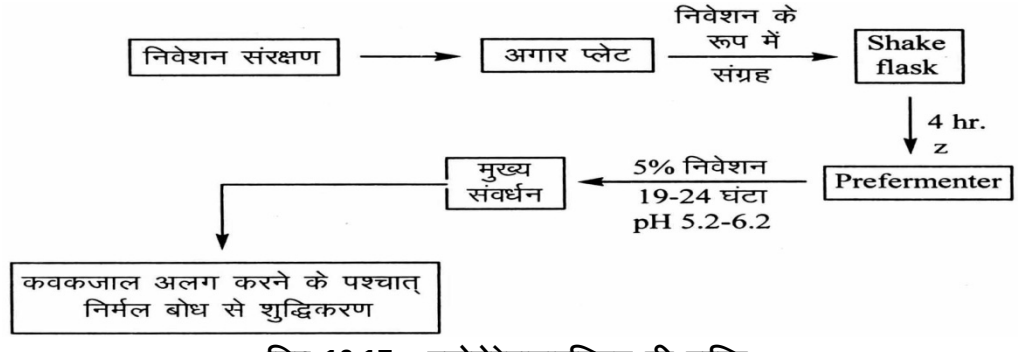

चित्र 10.17 - क्लोरोटेट्रासाइक्लिन की प्राप्ति

पुर्नप्राप्ति (Recovery)

सर्वप्रथम कवकजाल को ब्रोथ संवर्धन से फिल्टर कर लिया जाता है । प्राप्त फिल्ट्रेट में से क्लोरोटेट्रासाइक्लीन को निष्कर्षण (entraction), अवक्षेपण (precipitation) तथा अधिशोषण (adsorption) द्वारा पृथक कर लिया जाता है । यह सामान्य कार्बनिक विलायकों में कठिनाई से घुलता है परन्तु जल में घुलनशील होता है ।

कार्यिकी (Physiology)

क्लोरोटेट्रासाइक्लीन के उत्पादन को निम्न भागों में विभाजित किया जा सकता है ।

(a) सर्वप्रथम ग्लूकोज का एसीटाइल कोएन्जाइम-ए में रूपान्तरण होता है ।

(b) एसिटाइल को एन्जाइम ए का एसीटाइल को-ए कार्बोक्सीलेज द्वारा मेलोनिल को एन्जाइम ए में रूपान्तरण होता है जो ट्रांसअमीनेशन प्रक्रिया द्वारा मेलेनोमाइल को-ए में परिवर्तित हो जाता है । यह ऐन्थ्रेसीन सिन्थेज एन्जाइम से बंधित रहता है जो एसिटाइल को-ए के आठ अणुओं के साथ संघनित्र (condense) होकर पॉलीपेप्टाइड बनता है । ट्राइसाइक्लीन मध्यवर्ती में साइक्लीजेशन की ऐन्थ्रेसीन सिन्थेज एन्जाइम पर ही होता है ।

इस ट्राइसाइक्लीक मध्यवर्ती के चरण दर चरण रूपान्तरण द्वारा विभिन्न टेट्रासाइक्लीन का उत्पादन होता है ।

(c) स्ट्रेप्टोमाइसीन (Streptomycin)

यह प्रतिजैविक विशेषत: ट्यूबरकुलोसिस के रोग कारक माइकोबैक्टीरियम ट्यूबरकुलोसिस (Mycobacterium tuberculosis) के विरूद्ध प्रभावी होता है । साथ ही इसके लम्बे समय तक उपयोग से कम सुनाई देना जैसे लक्षण प्रकट होते हैं ।

बाजार में उपलब्ध स्ट्रेप्टोमाइसीन

कैल्शियम क्लोराइड युक्त स्ट्रेप्टोमाइसीन का हाइड्रोक्लोराइड है । स्ट्रेप्टोमाइसीन के उत्पादन के दौरान प्रारम्भिक अवस्था में मोनोसाइडोस्ट्रेप्टोमाइसीन (Monosydostreptomycin) या हाइड्रॉक्सी स्ट्रेप्टोमाइसीन (Hydroxi streptomycin) बनता है जो सूक्ष्मजीव की क्रिया द्वारा आसानी से स्ट्रेप्टोमाइसीन में रूपान्तरित कर दिया जाता है ।

सूक्ष्मजीव जिनका उपयोग स्ट्रेप्टोमाइसीन उत्पादन हेतु किया जाता है

स्ट्रेप्टोमाइसीन उत्पादन हेतु मुख्यतया स्ट्रेप्टोमाइसीस ग्रीसीयम (Streptomycis grecious) का उपयोग किया जाता है । इसकी खोज शेड्स (Schatz), बर्गी (Burgy) तथा बैक्समेन (Waksman) ने 1944 ने की । इसके बाद स्ट्रेप्टोमाइसीज ग्रीसस की बहुत सारे आनुवांशिक रूपों से उन्नत प्रभेदों का विकास किया गया जिनसे इस प्रतिजैविक का उच्च मात्रा में उत्पादन किया जा सकता है ।

किण्वन अवस्थायें (Fermentation conditions)

स्ट्रेप्टोमाइसीन के उत्पादन हेतु संवर्धन माध्यम में सोयाबीन तेल (10 gm), ग्लूकोज (10 gm), पेप्टोन (5 gm), मीट निष्कर्ष (5 gm) तथा NaCl (5 g) का उपयोग किया जाता है । संवर्धन माध्यम का pH 6.5-7.0 तक रखा जाता है तथा संरोपण के बाद इसे 28°C तापमान पर ऊष्मायित (incubate) कर देते हैं ।

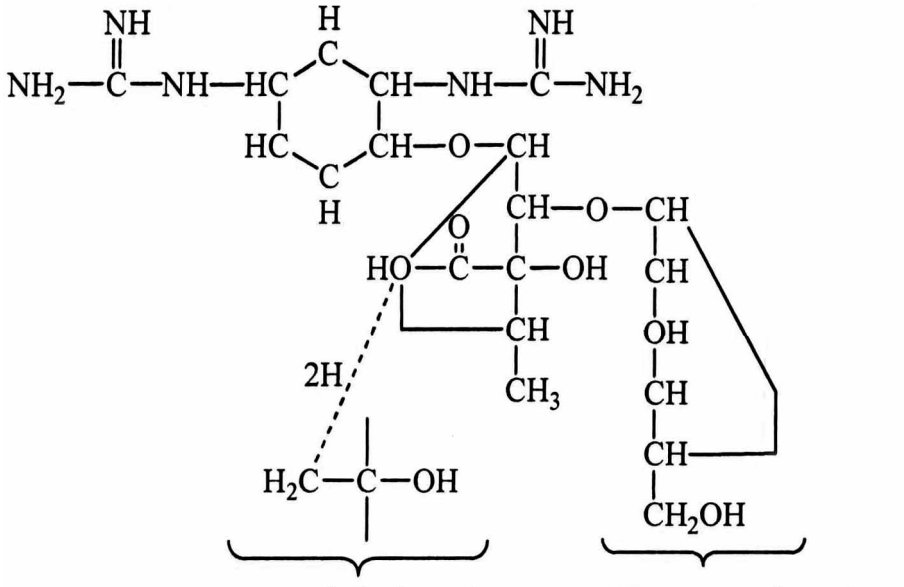

चित्र 10.18 - स्ट्रेप्टोमाइसीन का उत्पादन

किण्वन (Fermentation)

स्ट्रेप्टोमाइसीन उत्पादन हेतु किण्वन की क्रिया विलोडीत किण्वक (stirred fermenter) में उच्च वातहर एवं एजीटेशन की परिस्थिति मे कराई जाती है ।

सर्वप्रथम कवक जाल से बीजाणुओं का बहुत बड़ी संख्या में उत्पादन करवाया जाता है इसके पश्चात् कवकजाल को तरल माध्यम में संवर्धित करवाया जाता है । यह प्रक्रिया 28°C तापमान पर 5-7 दिनों में पूरी होती है । स्ट्रेप्टोमाइसीन उत्पादन की तीन महत्त्वपूर्ण अवस्थाएँ है -

प्रथम अवस्था

इस अवस्था में कवकजाल की वृद्धि होती है तथा यह प्रोटीनलयनकारी (proteolytic) विकरों की सहायता से सोयाबीन मील से अमोनिया को मुक्त करता है । सोयाबीन मील में उपस्थित कार्बन स्त्रोत का उपयोग वृद्धि को उत्प्रेरक करता है ।

इस अवस्था में स्ट्रेप्टोमाइसीन का उत्पादन कम होता है तथा pH बढ़ता है ।

द्‌वितीय अवस्था (IInd Phase)

इस चरण में अमोनिया एवं ग्लूकोज का शीघ्रता से उपयोग होता है । इस कारण स्ट्रेप्टोमाइसीन का संश्लेषण भी तीव्रता से होता है । इस चरण में कवकजाल में वृद्धि नहीं होती है ।

तृतीय अवस्था (IIIrd Phase)

इसमें संवर्धन माध्यम में शर्करा की कमी होने से स्ट्रेप्टोमाइसीन उत्पादन रूक जाता है । कोशिका लयन होता है तथा अमोनिया मुक्त होने लगती है ।

पुर्नप्राप्ति (Recovery)

कवकजाल को छानकर पृथक कर लिया जाता है फिर यूष माध्यम (broth culture) को सक्रिय कार्बन से उपचारित किया जाता है । अब स्ट्रेप्टोमाइसीन को तनु अम्लों द्वारा अवक्षेपित किया जाता है । इसको शुद्ध करने से पहले छान कर सुखा दिया जाता है ।

सूक्ष्मजीवों द्वारा उत्पादित होने वाले कुछ अन्य प्रतिजैविक निम्न है :-

1.	एम्फोटेरिसिन-B (Amphotericin B)	स्यू. नोडोसस (Pseudomonas nodusus)
2.	बेसीट्रेसीन (Basitracine)	बेसीलस लाइकेनीफोर्मीस (Bacillus licheniformise)
3.	कार्बोमाइसीन (Carbomycine)	स्ट्रेप्टोमाइसीस हेलोस्टेडी (Streptomycis halostudy)
4.	क्लोरोटेट्रासाइक्लीन (Chlorotetracyclin)	स्ट्रेप्टोमाइसीस ऑरोफेसीएन्स (Streptomycis aurofaciens)
5.	क्लोरेमफेनीकोल (Chloramphenicol)	स्ट्रेप्टोमाइसीस बेनीसुलेई (Streptomycis benisulae)
6.	इरीथ्रोमाइसीन (Erythromycin)	स्ट्रेप्टोमाइसीस इरीथ्रस (Streptomycis erythrus)
7.	फ्यूमेजिलीन (Fermagiline)	एर्स्पजीलस फ्यूमीगेटस (Aspergillus fumigatus)
8.	ग्रीसवेफ्लूवीन (Greecevafluvine)	पेनिसीलीयम ग्रीसीयोफल्विन (Penicillium .grisiofulvin)
		पेनिसीलियम नाइग्रीकेन्स (Penicillium nigrikens)
9.	कनामाश्सीन	स. केनामाइसीट्स (Streptomycin canomycetus)
10	नीओमाइसीन	स. फेड्रीएइ (Streptomyces fedriae)
11.	नोजोबायोसीन	स. नीवेन्स, स. स्फीरोइड्स (S. nivenus, S. spheroides)
12.	नीस्टेटीन	स. नोरसेई (S. naorseii)
13.	ओलीएडोमाइसीन	स. एन्टीबायोटीक्स
14.	आक्सीटेट्रासाइक्लीन (Oxytetracyclin)	स. टाइमोसस (S. tymosus)
15.	पेनिसीलीन	पेनिसिलियम क्राइसोजिनम (P. crysogenum)
16.	पॉलीमिक्सीन बी	बेसीलस पॉलीमिक्सा (B. polymyxa)
17.	स्ट्रेप्टोमाइसीन	स्ट्रेप्टोमाइसीस ग्रीसीयस (S. grisius)
18.	टेट्रासाइक्लीन	क्लोरोटेट्रासाइक्लीन डीक्लोरीनेशन एवं हाइड्रोजीनेशन डीक्लोरीनेटेड माध्यम के सीधे किण्वन से ।
19.	वाइरा ए (एडिनिन एरेबिनोसाइड)	स. एन्टीबायोटिक्स (S. antibiotics)

20.	सिफेलोस्पोरिन्स	सिफेलोस्पोरियम एक्रीनोमियम (Cephalosporium acrenomium)
21.	वेरीयोटीन	पेसीलोमाइसीस वेरीओटीन (Pacelomyces vareotin)

बोध प्रश्न

17. प्रतिजैविक की परिभाषा दीजिये ।

.....

18. पेनिसीलीयम के उत्पादन हेतु उपयोग किये जाने वाले सूक्ष्मजीवों का नाम बताइये ।

.....

19. टेट्रासाइक्लिन के उत्पादन हेतु उपयोग किये जाने वाले संवर्धन माध्यम का संघटन बताइये ।

.....

20. स्ट्रेप्टोमाइसीन के उत्पादन हेतु उपयोग किये जाने वाले संवर्धन माध्यम का संघटन बताइये ।

.....

21. टेट्रासाइक्लीन उत्पादन हेतु उपयोग किये जाने वाले सूक्ष्मजीवों का नाम बताइये ।

.....

22. पेनिसिलीन के निर्माण हेतु किस पूर्वगामी अणु का उपयोग किया जाता है?

.....

10.3.2 सूक्ष्म जीवों द्वारा उत्पादित किए जाने वाले आविष (Microbial toxins)

आविष प्रभावी एवं विशिष्ट प्रकार के जहरीले पदार्थ है जो जीवों द्वारा उत्पादित किये जाते हैं । यह मुख्यतया अमीनो अम्ल श्रृंखला होती है जिनका अणुभार अलग-अलग होता है । आविष कई तरह के जीवों जैसे जीवाणु कवक, शैवाल एवं पादपों द्वारा उत्पादित किये जा सकते हैं । इनमें से कई बहुत ज्यादा विषैले होते हैं ।

सूक्ष्मजीवी आविष (Microbial toxins)

सूक्ष्मजीवी आविष वह रासायनिक पदार्थ है जो सूक्ष्मजीवों द्वारा उत्पादित किये जाते है । यह भोज्य पदार्थों में प्राकृतिक रूप से मिलते हैं ।

जीवाणु, कवक तथा शैवालों की कुछ जातियों द्वारा आविषों का उत्पादन करवाया जाता है ।

सूक्ष्मजीवों द्वारा उत्पादित होने वाले आविषों को निम्न श्रेणियों में रखा जा सकता है -

	सूक्ष्मजीव	**उत्पादित आविष**
1.	जीवाणु जनित (उदाहरण: बेसीलस सेरस Bacillus cereus)	जीवाण्वीय आविष
2.	कवक जनित (उदाहरण: पेनिसिलियम एक्सपानसम Penicillium expansum)	कवकाविष

3. शैवाल जनित (उदाहरण: माइक्रोसिसटीस Microcystes) शेवालविष

यह रासायनिक पदार्थ मानव के लिए विषैले हो सकते हैं । इन आविषों का प्रभाव मृदु से लेकर दीर्घकालिक तक हो सकते हैं । इनके विषैलेपन की परास (range) निम्न कारकों पर निर्भर करती है -

1. शरीर में आविष की मात्रा ।
2. व्यक्ति की आविषो के प्रति संवेदनशीलता ।
3. आविषो की विषालुता ।

आविष कई तरह के भोज्य पदार्थों में पाये जाते हैं (तालिका 5)

तालिका 10.5 - कुछ भोज्य पदार्थ जिनमें सूक्ष्मजीवी आविष पाये जाते हैं ।

	सूक्ष्मजीवी आविष के प्रकार	**खाद्य पदार्थो के उदाहरण**
1.	जीवाण्वीय आविष	बेकरी उत्पाद, ग्रेवी, पका हुआ माँस, डेयरी उत्पाद, खुले भोज्य पदार्थ
2.	कवकाविष	फसलें, मूँगफली, अंजीर, सूखे हुए फल मसाले, मक्का, चावल, दालें, काँफी, बीयर, ज्यूस ।
3.	शैवालाविष	कवच मछलियाँ (shell fish) एवं क्रस्टेशियन्स (Crustaceans)

तालिका 10.6 - आविष उत्पादन

	आविष का प्रकार आवश्यक स्थितियाँ	**आविष उत्पादन हेतु स्थान**	**आविष उत्पादन**
(A)	जीवाण्वीक आविष	बैक्टीरिया की भोज्य पदार्थो में पर्याप्त वृद्धि ।	भोज्य पदार्थो में ।
		अनुकूल वातावरणीय दशायें(तापमान, नमी, ऑक्सीजन,पोषक पदार्थ)	जब संदूषित भोज्य पदार्थों का उपयोग किया जाता है तो शरीर में आविष का उत्पादन होता है
(B)	कवकाविष	भोज्य पदार्थों में कवक की वृद्धि के पश्चात् आविष का उत्पादन होता है ।	भोजन में आविष उत्पादन होता है ।
		अनुकूलन वातावरणीय दशाओं के होने पर आविष का उत्पादन होता है जैसे (तापमान, नमी, आक्सीजन, पोषण)	
(D)	फाइकोटॉक्सिन या शेवालाविष	शैवाल की समुद्री जल में पर्याप्त मात्रा तक वृद्धि के पश्चात् शैवालाविष का उत्पादन होता है	समुद्री जल में आविष काउत्पादन होता है ।

(a) कवकाविष (Mycotoxins)

कवकाविष कवकों द्वारा उत्पादित किए जाने वाले द्वितीयक उपापचयक है । कवकाविष तथा प्रतिजैविक के मध्य कोई अंतर नहीं है बस इनमें सम्बन्धित विषालुता (Relative toxicity) तथा मेजबान (host) विशिष्टता में अंतर होता है । यह दोनों ही सूक्ष्मजीवों के साथ-साथ उच्च कुल के जीवों के लिए भी विषैले होते हैं ।

कवकाविष कवक के ऐसे उपापचयक है जिनमें जैव विपरित सक्रियता (adverse biological activity) होती है । सभी कवक विषों को कवकाविषों में सम्मिलित नहीं किया जाता है । कवकों के कुछ उपापचयक जैसे कि पेनिसिलिन जो कि जीवाणुओं को तो मार देते हैं परन्तु जानवरों के लिए कम जहरीले होते हैं, को कवकाविष की जगह प्रतिजैविकों की श्रेणी में सम्मिलित किया जाता है ।

कवकाविषों का उत्पादन करने वाले कवक कृषि उत्पादों को संदूषित करते हैं । ऐसे उत्पादनों को ग्रहण करने पर मानव व जानवरों में विषालुता पैदा होती है ।

कवकाविष उत्पादित करने वाले कवकों के उदाहरण है एस्परजिलस (Aspergillus), क्लेवीसेप्स (Claviceps) फ्यूजेरियम (Fusarium), पेनिसिलियम (Penicillium), स्टेकीबोट्राइट्स (Stachybotrytes) तथा ट्राइकोथिसीयम (Trichothecium)।

वृहद् कवक आविष उत्पादन करने वाली जातियाँ और उनके रोग जनक प्रभाव (Major mycotoxin producing and their pathological effects)

क्र.स.	रोग संरक्षण	आविष यौगिक	कवक प्रजातियाँ	रोग जनक प्रभाव
S.No.	(disease syndrome)	(Toxic compound)	(fungal species)	(pathological effects)
A)	अफ्लाटाक्सिकोसिस	अफ्लाटोक्सिन	एस्पर्जिलस पर्लवस	हेपेटोटाक्सीक कार्सिनोजेनिक
	(Aflatoxicosis)	(Aflatoxin)	(Aspegillus flavus)	
			एस्पर्जिलस पेरासिटिकस	
		(A. parasiticus)		
B)	ऐमिटीक सिंड्रोम	डिआक्सीनीवेलीनोल	फ्यूजेरियम ग्रोमिनीरन	खाद्य पदार्थो में
	(Emetic syndrome)	(Deoxynivalenol)	(fusarium graminaerum)	(Food poison)
C)	अर्गोटिज्म	अर्गोट एलकेलोइड्स	क्लेविसेप्स परपूरिया	न्यूरोटाक्सिक, वाहिका संकीर्णन
	(Ergotism)	(Ergot	(Claviceps	(Neurotoxic,

		alkaloides)	purpurea)	Vaso constriction),
D)	एस्ट्रोजेनिक सिन्ड्रोम	जियारेनिनोन	फ्यूज़ेरियम ग्रेमिनीरम	सूअरों में ग्लूकोवेजीनेलीस
	(Estrogenic syndrome)	(Zearanenone)	(F.sporotrichoides)	(Glucovaginalis in swine)
E)	हीमेरोटाक्सिक सिन्ड्रोम	ट्राइकोथिसिन्स	फ्यूज़ेरियम स्पोरोट्राईकोइड्स	उल्टी, मुख में सड़न
	(Haemarotoxic syndrome)	(Trichothecence)	(F.sporotrichoides)	(Vomiting & oral necrosis)
F)	आकराटाक्सिकोसिस (Ochratoxicosis)	आकराटाक्सिन	ए.ओकरासियक (A. ochraceus) पेनिसिलियम स्पी. (Penicillium spp.)	नेफ्रो टाक्सिसिटी(Vomiting & oral necrosis)
G)	स्टेकाईबोट्रियोटाक्सिकोसिस	मेक्योचक्रिय ट्राइकोथिसिन्स	स्टेकीवोटराइस केरटरम माइटीथीसियम स्पी	म्यूकोसल नेक्रोसिस
	(Stachybortyotoxicosis)	(Macrocyclic tricholhecenes)	(Stachybotrytes mitotheceum spp.)	(Mucosal necrosis)

अफ्लाआविष (Aflatoxin)

आविष को उपापचयी के सन्निकट संबंधी (closely relaed) समूह में रखा गया है । यह विश्वव्यापी मोल्ड (mold) एस्पर्जिलस फ्लेवस (A.flavus) व कवकों की अन्य जातियों द्वारा उत्पादित किया जाता है । आविष के अतिरिक्त एस्पर्जिलस फ्लेवस (A.flavus) द्वारा कई तरह के उपापचयी रसायनों का उत्पादन किया जाता है । कुछ जाने पहचाने उपापचयीयों के नाम निम्न है :-

वर्सीकोलोरीन, स्टेटिंग मेटोसीस्टीन, एस्परीटाक्सीन, पेरासीटीसोल फ्लेवेसोल एस्परजीलिक एसिड, कोजीक एसिड, आक्सलिक अस्त, एस्परजीलोमेटास्मीन और β-नाइट्रोप्रोपिओनिक अम्ल ।

आविष का उत्पादन

कवक का संश्लेषण करने के लिए इसके बीजाणुओं (spores) को पेट्रीप्लेट्स में उपस्थित अगार माध्यम में संरोपित किया जाता है तथा इसे $27°C$ ताप पर उष्मायित कर दिया जाता है, जिससे कवक समूह (colony) का निर्माण होता है ।

संरोपण (Inoculum) की तैयारी (preparation of Inoculum)

संरोपण के लिए कई अलग-अलग माध्यमों का उपयोग किया जाता है । यह माध्यम मुख्य रूप से निम्न संघटकों से मिलकर बने होते हैं ।

आलू का स्टार्च, अगार (Agar) माध्यम, डेक्सट्रोस (Dextrose), NaCl, आसुत जल (distill watar) ।

आविष उत्पादन करने वाले प्रभेद को पहचानकर निर्जमित मृदा में स्टॉक के लिए संरोपित किया जाता है तथा साथ ही कवक से आविष प्राप्ति के लिए अनुकूल माध्यम पर आविष उपापचय प्राप्त करने के लिए संरोपित किया जाता है । माध्यम को निर्जर्मित करने के लिए आटोक्लेव का उपयोग किया जाता है । माध्यम के लिये नमी युक्त मक्का व चावल का 1:1 अनुपात उपयोग में लिया जाता है । यह माध्यम कवक की वृद्धि को सफलतापूर्वक बढ़ाता है एवं आविष उपापचयको के उत्पादन में भी बढ़ोतरी करता है ।

संरोप को सब्स्ट्रेट में संरोपित करने से पहले इसे 30 मिनट के लिए $121°C$ पर आटोक्लेव कर दिया जाता है । कवक के लिए आदर्श तापमान 22 से $25°$तथा कुछ कवकों के लिए $36 \pm 2°C$ होता है तथा कवकों को उसकी वृद्धि के अनुसार 2 सप्ताह या तीन दिन के लिए रखा जाता है ।

संवर्धन निस्पंद (culture felterate) को प्राप्त करने के लिए विलगित (isolate) को पेप्टोन, ग्लूकोस या जेपेक-डाक्स (Zapak-dox) माध्यम पर तीन सप्ताह तक $25°$C पर वृद्धि के लिए रखा जाता है ।

निष्कर्षण और पहचान (Extraction and Identification)

सामान्यतया जब माध्यम मे आविष (aflatoxin) की सान्द्रता कम होती है तो इसे TLC (thin layer chromatography) तकनीक द्वारा पृथक कर इसकी पहचान की जाती है । यदि आविष (Aflatoxin) अधिक मात्रा में उपस्थित होता है तो इसकी पहचान अवशोषण वर्णलेखिकी (absorption chromatogtaphy) द्वारा निश्चित की जाती है एवं सांद्रता मोलर अवरोधक कारक (concentration molar restriction coefficient) द्वारा इसकी सांद्रता की गणना की जाती है ।

इसकी अतिसूक्ष्म मात्रा को निश्चित करने के लिए आविष की फ्लूरोसेन्स तीव्रता (fluorescense intensity) का ज्ञान मानक (Known standard) की तीव्रता से तुलना की जाती है ।

आविष, मेथिल एल्कोहल, क्लोरोफार्म व एसीटोन मैं घुलनशील होता है । एक बार इन विलायकों का उपयोग कर आविष के निष्कर्षण के पश्चात् इसे तरल-तरल क्रोमेटोग्राफी (liquid-liquid chromatography)-कालम क्रोमेटोग्राफी (column chromatography) द्वारा शुद्ध किया जा सकता है । आविष की तीव्रता को मापने के लिए फोटोवोल्ट डेन्सिटोमीटर (photovolt densitometer) का उपयोग किया जाता है ।

आविष के विलगन (isolation) तथा इसकी उपस्थिति को निश्चित करने हेतु HPLC (High pressure liquid chromatography) एवं MS (Mass spectroscopy) तकनीकों का उपयोग भी किया जाता है ।

आविष प्रतिस्थापित बाईफ्यूरेनोकुमारिन्स (bifuranocoumarins) का समूह होते हैं । इनमें 5-मेथाक्सीकुमारिन्स (5-methoxycoumarin moeity) पायी जाती है । इनमें चमकने की ओर

UV को अवशोषित करने की क्षमता होती है । इसी 5-मेथाक्सी कुमारिन्स के कारण ही यह चमकता हुआ दिखता है । इन यौगिकों को TLC प्लेट पर पृथक हुये दृश्य रंग (visible colour) एवं सापेक्ष चलन (relative mobility) के आधार पर आठ प्रकार के सन्निकट संबंध (closely related) उपापचयों में विभाजित किया जाता है । यह आविष है $B_1, B_2, G_1, G_2, M_1, M_2, B_2A, G_2a$ 1, है ।

आविष का जैव संश्लेषण (aflatoxin biosynthesis)

आविष द्वितीयक उपापचय (secondary meatbolites) होते हैं । इनका कवक के लिए कोई महत्त्व नहीं होता है । यह आविष प्राथमिक उपापचयको विशेषकर एसीटाइल CoA (acetyl CoA) से व्युत्पन्न होते हैं । इसके अलावा कुछ मध्यस्थ जिन से इनका निर्माण हो सकता है वह हैं आक्सेलोऐसीटेट (OAA), मेलेनिन, वसा युक्त अम्ल, अमीनो अम्ल एवं शिफिनिक अम्ल आदि ।

कुछ आविष उपापचयी ग्लूकोस एवं अमीनो अम्लों से भी व्युत्पन्न होते हैं । अधिकाशत: द्वितीयक उपापचयी पॉलीपेप्टाइड वर्ग से सम्बन्धित है जो एसीटाइल CoA तथा मेलेनिन CoA के कुछ अन्य अणुओं के एक क्रमिक परिवर्तन से बनते हैं ।

(b) शैवाल आविष (Phycotoxin)

प्रबल आविषों का समूह है । यह आविष साइनोबैक्टीरिया कुल के सदस्यों की कोशिका में निर्मित होते है । साइनोबैक्टीरिया कोशिका के लयन के परिणामस्वरूप यह पदार्थ जल में मुक्त हो जाते हैं । अत: कोशिकाओं के नष्ट हो जाने के बाद ही यह आविष प्रभाव को प्रदर्शित करते हैं । इन आविषों में एक विशेष प्रकार की गंध पाई जाती है । यह आविष सामान्यतया पशुओं में विषालुता के लिये उत्तरदायी होते हैं ।

शैवाल आविष मुख्य रूप से माइक्रोसिस्टीस (Microcystin), एनाबीना (Anabaena), नॉस्टाक (Nostoc), एकीनीजोमीनोन (Akhanizomenon), प्लान्फ्टोथ्रिक्स (Planktothrix) और सिलिन्ड्रोपर्मोपसिस (Cylinderospermum) द्वारा उत्पादित किये जाते हैं ।

शैवाल आविष के प्रभाव

माइक्रोसिस्टीन (Microcystin) एवं नाडूलेरिन (Nodularin) यकृत में विकार उत्पन्न करते है । तंत्रिका अव्यवस्था (nerve disorder) के अन्तर्गत आविष एसीटाइल कोलीन के एनालॉग की तरह तथा कोलीन एस्टर को नियंत्रित तथा सोडियम आयन पम्प (sodium ion channels) को अवरूद्ध करने का कार्य करते हैं । उदाहरण एनाटॉक्सिन (anaoxin)एवं एक्सीटॉक्सिन (axitoxin) ।

फायकोटाक्सिन के उत्पादन के लिए माध्यम का उपयोग

आविष उत्पादन के लिए साइनोबैक्टिरिया को सिलिकॉन युक्त लवणीय जल में संवर्धित किया जाता है । इस हेतु इसे 10 से 14 घंटे तक एकान्तरण प्रकाश व अंधकार की स्थिति में रखा जाता है । संवर्धन (culture) की चरगताकि (exponential) वृद्धि को बनाये रखने के लिए इसे दो सप्ताह में नये माध्यम (fersh medium) पर स्थानान्तरित करना पड़ता है ।

आविष विश्लेषण (Toxin analysis)

नमूने में से आविष को निष्कर्षित करने हेतु 0.1 एसीटिक अम्ल की 0.5 ml मात्रा को मिलाया जाता है तथा इस प्रकार प्राप्त नमूने को बर्फ पर रखकर ठंडा कर लिया जाता है तथा इसे $-80°C$ पर रखा जाता है अब इस नमूने को हिमशुष्किंत नमूना (lypholized) कहा जाता है । हिमशुष्किंत नमूने के विश्लेषण हेतु इसमें फिर से 0.1M एसीटिक अम्ल मिलाया जाता है तथा आविष के निष्कर्षण हेतु हिमशुष्किकृत नमूने की सोनीकेटर द्वारा कोशिकाओं को लयन किया जाता है तथा कोशिका कचरे (cell debries) की अभिकेन्द्रण द्वारा पृथक कर लिया जाता है इस तरह प्राप्त कोशिका निस्यन को $0.4\mu m$ के छिद्र वाले फिल्टर से छान लिया जाता है, इस प्रकार प्राप्त छनित को विश्लेषित कर आविष का विश्लेषण कर लिया जाता है ।

(c) बैक्टीरियल आविष (Bacterial toxin)

यह रासायनिक आविष बैक्टीरिया द्वारा उत्पादित किए जाते हैं । जीवाणुओं की रोगजनकता के लिये उत्तरदायी होते हैं । जीवाणु द्वारा उत्पादित आविषों को रासायनिक स्तरपर दो प्रकार में बाँटा जा सकता है -

1. लिपोपॉलीसैकेराइड्स (lipopolysaccharides)
2. प्रोटीन्स (Proteins)

इन आविषों को अंत:आविष (endotoxin) एवं बाहय आविष (exotoxin) भी कहा जाता है । सारणी 7 में इनकी भिन्नता को दर्शाया है ।

1. लिपोपॉलीसैकेराइड्स (Lipopolysaccharides)

इस प्रकार के आविष मुख्यतया ग्राम ऋणात्मक जीवाणु की कोशिका भित्ति पर जुड़े रहते हैं अथवा जीवाणु के संरचनात्मक घटक होते हैं । यह मुख्यतया लिपोपॉलीसैकेराइड्स (Lipopolysaccharides) अथवा लिपोऑलीगोसैकेराइड (lipooligosaccharide) होते हैं । यह अत:आविष (endotoxins) कहलाते हैं । घुलनशील अंत:आविष का असर जीवाणु कोशिका के आस-पास ही दिखाई देता है ।

यह आविष प्रतिजैविकों की क्रियाविधि के कारण कोशिका से मुक्त तो हो जाते हैं परन्तु यह जीवाणु की समीपता में रहकर क्रिया करते रहते हैं ।

जीवाणु जो अंत:आविष उत्पादन करते है उनमें मुख्यतया ई. कोलाई (E.coli), साल्मोनेला (Salmonella), शीगेला (Shigella), स्यूड़ोमोनास (Pseudomonas), नाइसिरिया (Neissaria), हिमोफिलीस इंफ्लुएंजी (Hemophilus influenzae), बेडिटेला परटुसीस (Bordetella pertussis) तथा वीब्रीओ कोलेरी (Vibrio cholerae) है ।

सारणी 10.7 : अंत: एवं बाह्य आविष में भिन्नता (Difference between endo and exotoxin)

	लक्षण	अंत: आविष (Endotoxin)	बाह्य आविष (Exotoxin)
1.	रासायनिक प्रकृति	लिपोपॉलीसैकेराइड (m W-10KDa)	प्रोटीन (mW-50-1000 KDa)
2.	कोशिका से सम्बन्ध	बाह्य भित्ति का एक भाग होता हैं ।	बाह्यकोशिकीय विसरण योग्य
3.	उबालने पर विकृतिकरण	नहीं	अक्सर
4.	प्रतिजनकता	हाँ	हाँ
5.	आविषाभ निर्माण	नहीं	हाँ
6.	क्षमता (Potency)	अपेक्षाकृत कम (>100 μg)	अपेक्षाकृत ज्यादा (1 g)
7.	विशिष्टता (specificity)	कम परास की	ज्यादा परास की
8.	विकर सक्रियता	नहीं	ज्यादातर
9.	रोगजनकता	हाँ	सामान्यतया

2. **प्रोटीन्स (Proteins)**

यह उपापचयक सामान्यतया बैक्टीरिया द्वारा स्त्रावित किये जाते हैं एवं इनका असर अथवा सक्रियता की अभिव्यक्ति जीवाण्विक वृद्धि वाले क्षेत्र से दूर होती है । इस कारण इन्हें बाह्य आविष (exotoxins) भी कहा जाता है । यह मुख्यतया प्रोटीन्स होते हैं जो कि परपोषी की उपापचयिक क्रियाओं में व्यवधान डालते हैं । यह विकर के रूप में अथवा अपने उपापचयक के रूप में कोशिका को प्रभावित करते हैं ।

यह ग्राम धनात्मक तथा ग्राम ऋणात्मक दोनों तरह के जीवाणुओं द्वारा उत्पादित किये जाते हैं । जीवाण्विक प्रोटीन आविष सबसे ज्यादा ताकतवर मानव जहर (Human poisons) है तथा अति तनु अवस्था में भी उच्च सक्रिय होते हैं ।

जीवाण्विक प्रोटीन आविष एवं इन्हें स्त्रावित करने वाले सूक्ष्मजीवों के उदाहरण निम्नानुसार है -

	आविष (toxin)	जीवाणु (Bacteria)
1.	बोटुलिनम आविष (botulenum)	क्लोस्ट्रीडियम बोटुलिनम (Clostridium botulinum)
2.	टिटेनस आविष (tetanus)	क्लोस्ट्रीडियम टिटेनाई (C. tetani)
3.	डिफ्थेरिया आविष (diphtheria)	कोरीनीबैक्टीरियम डिफ्थीरीएइ (Corynebacterium

diphtheriae)

4. अल्फा आविष (alpha) स्टेफाइलोकॉकस आरीयस (Staphytococcus aureus)

जीवाण्विक आविष के संश्लेषण तथा स्त्रावण का नियंत्रण

आविषों का संश्लेषण तथा स्त्रावण कुछ नियामनकारी कारकों द्वारा नियमित होता है । यह नियामनकारी कारक वातावरणीय संकेतों के प्रति संवेदनशील होते हैं । उदाहरणस्वरूप - डिफ्थीरिया उत्पादन, माध्यम में आइरन की उपस्थिति द्वारा दमित किया जा सकता है । कोलेरा आविष तथा सम्बन्धित रोगजनक कारक वातावरणीय परासरण तथा तापमान द्वारा नियंत्रित होता है ।

बोध प्रश्न

23. सूक्ष्मजीवी आविष की परिभाषा दिजिए ।

.....

24. सूक्ष्मजीवी आविष कितने प्रकार के होते हैं?

.....

25. कवकाविष उत्पादन करने वाले कवकों के नाम दिजीए ।

.....

26. अफ्लाटॉक्सिन उत्पादन करने वाली कवकों के नाम लिखो ।

.....

27. 3 शैवालाविष उत्पादित करने वाली शैवालों के नाम दिजिये ।

.....

28. जीवाण्वीय आविष कितने प्रकार के होते हैं और क्या होते हैं?

.....

10.4 सारांश (Summary) :

सूक्ष्मजीवों का उपयोग विभिन्न प्रकार के प्राथमिक व द्वितीयक उपापचयको जैसे विटामिन, कार्बनिक अस्त एल्कोहल आदि के औद्योगिक उत्पादन हेतु किया जाता हैं यह प्रक्रियायें सूक्ष्मजीवों की कार्बनिक यौगिकों के किण्वन करने की क्षमता पर आधारित है । विटामिन जैसे विटामिन B_{12}, विटामिन B_2, आदि का संश्लेषण प्राकृतिक रूप से उपलब्ध सूक्ष्मजीवों के साथ-साथ आनुवांशिक रूप से सुधारे गये प्रभेदों द्वारा किया जाता है । इस हेतु उपयुक्त माध्यम घटक तथा भौतिक एवं रासायनिक स्थितियाँ मुख्य भूमिका अदा करते हैं । प्रथम चरण में सूक्ष्मजीवों की वृद्धि होती है द्वितीय चरण में विटामिन का सूक्ष्मजीवों द्वारा संश्लेषण किया जाता है जो तृतीय चरण में तेजी से कम होता है ।

कार्बनिक अम्ल जैसे सिट्रिक अम्ल, लेक्टिक अम्ल, ग्लूकोनिक अम्ल, एसिटीक अम्ल का उत्पादन भी किण्वन प्रक्रिया द्वारा सूक्ष्म जीवों का उपयोग करके किया जाता है । कार्बनिक अस्त उत्पादन हेतु ज्यादातर सस्ते कच्चे माल का प्रयोग किया जाता है जो अन्त औद्योगिक प्रक्रियाओं के अपशिष्ट अथवा सह उत्पाद (by product) होते हैं एवं जिनका औद्योगिक महत्व भी कम

होता है । सूक्ष्मजीवों की अभिक्रिया द्वारा विभिन्न जैव संश्लेषण मार्गों द्वारा इन्हे उपयोगी कार्बनिक अन्तों में परिवर्तित कर दिया जाता है ।

एल्कोहल के औद्योगिक उत्पादन हेतु शकरकंद, आलू कसावा व गन्ने का उपयोग किया जाता है । एल्कोहल का उत्पादन लगातार किण्वन के साथ-साथ धान किण्वन (batch fermentation) से भी किया जाता है, एल्कोहल की प्राप्ति बढ़ाने हेतु उपयुक्त। माध्यम घटकों व माध्यम की अनुकूल स्थिति का उपयोग किया जाता है ।

प्रतिजैविकों के उत्पादन हेतु सूक्ष्मजीवों का उपयोग बहुत प्राचीन है । यह कार्य फ्लेमिंग द्वारा पेनीसिलिन की खोज से शुरू हुआ था । सूक्ष्मजीवों की सहायता से पेनिसिलिन, टेट्रासाइक्लीन, स्ट्रेप्टोमाइसीन प्रतिजैविकों आदि का उत्पादन किया गया है । इसके लिए संरोपण (inoculation) विकास के पश्चात् सूक्ष्मजीव का उपयुक्त किण्वन स्थितियों में संवर्धन कराया जाता है । प्रतिजैविकों का उत्पादन चरणबद्ध तरीके से होता है ।

सूक्ष्मजीविय आविष (microbial toxin) के अन्तर्गत कवक आविष (कवक द्वारा उत्पादित), फाइको आविष (शैवाल द्वारा उत्पादित) व जीवाण्विक आविष (जीवाणु द्वारा उत्पादित) आदि आते हैं । ये आविष भोज्य पदार्थों एवं जल को संदूषित कर देते हैं । इस संदूषित जल अथवा भोज्य पदार्थ को ग्रहण करने से मनुष्य एवं पशुओं में विषालुता के लक्षण पैदा हो जाते हैं । यह आविष यकृत, तंत्रिका तंत्र आदि को नुकसान पहुँचाते है । कभी-कभी विषालुता के कारण मनुष्य अथवा जानवर की मृत्यु भी हो जाती है ।

10.5 बोध प्रश्नों के उत्तर :

1. विटामिन शब्द उन कार्बनिक यौगिकों के समूह के लिए उपयोग किया जाता है जो काफी कम मात्रा में सूक्ष्मजीवों की सामान्य उपापचय व वृद्धि के लिए आवश्यक होते हैं तथा सहएन्जाइम या सहएन्जाइम के संघटकों की तरह कार्य करते हैं ।
2. विटामिन B_{12} एकल यौगिक नहीं है बल्कि यह रासायनिक रूप से निकटवर्ती कोबामाइड समूह है, इन कोबामाइड्स को स्यूगे B_{12} समूह भी कहा जाता है । यह कोबाल्ट पोरफाइरीन केन्द्रक के बने होते हैं जिससे राइबोज एवं फास्फेट समूह जुड़े रहते हैं ।
3. विटामिन B_{12} के उत्पादन हेतु ब्यूटाइरीबैक्टीरिम, रेडजेरी, बैसीलस मेगटिरियम, स्ट्रेप्टोमाइसिस, ओलीकासियस माईक्रोमोनोस्पोरा प्रजातियाँ, क्तेबसियेला न्यूमोनी आदि का उपयोग किया, जाता है ।
4. राइबोफ्लेविन के उत्पादन हेतु क्लोस्ट्रीडियम एसीटोब्यूटाड़लिकम, माईकोबैक्टीरियम, स्मेगमेटिस, माइकोकेण्डिडा राइबोफ्लेविना, केण्डिडा फ्लेररी, एरोथिसियम एस्पाई, एस्बिया गोसीपी आदि का उपयोग किया जाता है ।
5. राइबोफ्लेविन, एलोकेसिन व्युत्पन्न है जो टेरीडिन वलय का बना होता है जो कि बेन्जीन वलय में संघनित रहती है । पार्श्व श्रृंखला C5 पॉलीहाइड्रॉक्सी समूह की बनी होती है, वीबीटोल का व्युत्पन्न है ।

6. राइबोफ्लेविन के उत्पादन के लिए उपयोग किये जाने वाले प्रभेद उत्परिवर्ती का नाम बेसीलस प्यूमीलस है जो ग्लूकोस के डीराइबोज में जैव रूपान्तरण हेतु आवश्यक होता है ।
7. सिट्रिक अम्ल का प्रथम बार उत्पादन जॉन एवं एडवर्ड ने 1826 में किया ।
8. सिट्रिक अम्ल के औद्योगिक उत्पादन हेतु एस्परजीलस नाइगर, एस्परजीलस क्लेवेटस, एस्परजिलस वेन्टी, पेनिसिलियम ल्यूटियम, पेनिसिलियम सिट्रीनस, म्यूकर पाईरीफोरमेस, केण्डिडा लाइपोलाईटिका, केण्डिका ओलीयोफिला, केण्डिडा गुईलेरमोण्डिस आदि उपयोग आती है ।
9. सिट्रिक अम्ल के दो उपयोग है

(i) शीतल पेय, जैली, जेम, वाइन, केण्डी एवं हिमीकृत फल में ।

(ii) चिकित्सकीय क्षेत्र में रक्त स्थानान्तरण तथा फेनियल उत्पादन हेतु ।

10. एसिटीक अम्ल के औद्योगिक उत्पादन हेतु एसीटोबेक्टर, ग्लूकोनोबेक्टर तथा सैकेरोमाइसीस सेरेविसी किस्म इलिप्सोइड्स का उपयोग करते हैं ।
11. ग्लूकोनिक अम्ल के उत्पादन हेतु एसीटोबेक्टर, स्यूडोमोनास, पेनिसिलियम तथा एस्परजिलस चुलुलेरिया का उपयोग करते हैं ।
12. इथेनॉल उत्पादन हेतु सैकेरोमाइसीस सेरेविसी, सै. यूएरम, सै. कल्सबर्गेन्सीस, केण्डिडा ब्रेसीकी, केण्डिडा यूटेलिस, क्लोईवेरोमाइसीस फेजिलीस, क्लोईवेरोमाइसीस लेक्टीस तथा जाइमोमोनास मोबीलीस का उपयोग करते हैं ।
13. इथेनॉल उत्पादन हेतु उपयोग किये जाने वाले पदार्थ मूलकंद एवं बीज जिनमें स्टार्च होते है, शकरकंद तथा गन्ने से प्राप्त मोलासेज प्रसाधित तने से प्राप्त लकड़ी तथा अवशिष्ट पदार्थ इत्यादि का उपयोग करते हैं ।
14. इथेनॉल के जर्मनी फेड्रल रिपब्लिक द्वारा उत्पादन हेतु जाइमोमोनास मोबिलीस जीवाणु का उपयोग किया जाता है ।
15. ब्यूटेनॉल उत्पादन हेतु क्लोस्ट्रीडियम एसीटोब्यूटाइलिकम, क्लोस्ट्रीडियम ब्यूटाइलिकम तथा क्लोस्ट्रीडियम फेलियोसा की विभिन्न जातियों का उपयोग करते हैं ।
16. ग्लिसरोल उत्पादन हेतु सैकेरोमाएसीस रॉक्सी, टोरुलिटसीम मेग्नोलियाई तथा पिश्चिया फेलियोसा तथा डयूनेलिएला सेलिना का उपयोग करते हैं ।
17. प्रतिजैविक वह रासायनिक पदार्थ है जो कुछ सूक्ष्मजीवों द्वारा स्त्रावित किये जाते हैं तथा सूक्ष्मजीवों की वृद्धि और विकास को अवरूद्ध करते हैं ।
18. पेनिसिलियम के उत्पादन हेतु उपयोग आने वाले सूक्ष्मजीव है - पेनिसिलियम क्राइसोजिनम तथा पेनिसिलियम नोटेटम ।
19. टेट्रासाइक्लिन के उत्पादन के लिए उपयोग किये जाने वाले संवर्धन माध्यम का संघटन इस प्रकार है - शर्करा 3%, कॉर्न स्टीप लिकर - 1%, $CaCO_3 - 1\%, (NH_4)_2 SO_4 - 2\%$ तथा $NH_4Cl = 0.1\%$
20. स्ट्रेप्टोमाइसीन के उत्पादन हेतु निम्न संघटक संवर्धन माध्यम में उपयोग किये जाते हैं -

सोयाबीन तेल - 10 gm

ग्लूकोज - 10 gm

मीट निष्कर्ष - 5 gm

NaCl - 5 gm

21. टेट्रासाइक्लीन उत्पादन हेतु उपयोग किये जाने वाले सूक्ष्मजीव स्ट्रेप्टोमाइसीस ऑरीयोफेसिएन्स, स्ट्रेप्टोमाइसिस रेमोसस तथा नोकार्डिया सल्फ्यूरिया है ।
22. पेनिसिलीन G के निर्माण हेतु पूर्वगामी अणु के रूप में फिनाइल एसीटिक एसिड का उपयोग करते हैं ।
23. सूक्ष्मजीवी आविष वह रासायनिक पदार्थ है जो सूक्ष्मजीवों द्वारा उत्पादित किये जाते है तथा इनमें रोग उत्पन्न करने की क्षमता के लिए उत्तरदायी होते हैं । ये प्राकृतिक रूप से भोज्य पदार्थों में पाये जाते हैं ।
24. सूक्ष्मजीवी आविषों को मुख्य रूप से तीन भागों में बाँटा गया है - कवकाविष, शैवालाविष जीवाण्विय आविष ।
25. कवकाविष उत्पादन करने वाली कवक है - एस्परजिलस स्पी., क्लेवीसेट्स प्रजातियाँ, फ्यूज़ेरियम माइरोथिसियम, पेनिसिलियम स्टेकीबोट्राइट्स तथा ट्राइकोथिसीयम ।
26. अफ्लाटॉक्सिन उत्पादन करने वाली कवकें एस्परजिलस फ्लेक्स, एस्परजिलस पेरासिटीकस तथा फ्यूज़ेरियम मोनीलोफोर्मी है ।
27. शैवाल विष उत्पादित करने वाली शैवाल माइकोसिस्टिस, एनाबिना, नॉस्टाक, एकीनीजोमिनोन तथा प्लान्प्टोथ्रिक्स है ।
28. जीवाण्वीय आविष रासायनिक पदार्थ है जो जीवाणु द्वारा उत्पादित किए जाते हैं तथा दूसरे जीवों में रोगजनकता उत्पन्न करते हैं । रासायनिक स्तर पर ये दो प्रकार के होते हैं -
    (1) लियोपॉलीसैकेराइड्स
    (2) प्रोटीन्स

10.6 अभ्यासार्थ प्रश्न (Exercise Questions) :

1. विटामिन B_{12} के उत्पादक हेतु आवश्यक किण्वन स्थितियों का वर्णन किजिये ।
2. टिप्पणी लिखिये -

(अ) सिट्रिक अम्ल एवं ऐसिटिक अम्ल का औद्योगिक उत्पादन

(ब) ग्लूकोनिक अम्ल का सूक्ष्मजीवों द्वारा उत्पादन ।

3. इथेनॉल के उत्पादन हेतु उपयोग में लिये जाने वाली किण्वन प्रक्रियाओं का वर्णन करो ।
4. पेनिसिलिन उत्पादन की किण्वन स्थितियाँ तथा जैव संश्लेषण की क्रियाविधि का वर्णन करो ।
5. टेट्रासाइक्लिन व स्ट्रेप्टोमाइसिन के किण्वन प्रक्रिया को विस्तार से समझाइये ।
6. विभिन्न प्रकार के सूक्ष्मजीवीय आविषों का वर्णन करो ।

10.7 शब्दावली (Glossary) :

द्वितीयक मेटाबोलाइट - Secondary Metabolites

जैवप्रौद्योगिकी	-	Biotechnology
ट्रोफोअवस्था	-	Trophophase
इडियोअवस्था	-	idiophase
वायुलिफ्ट फरमेन्टर	-	Airlift fermenter
प्रतिजैविक	-	Antibiotics
बेच किण्वन	-	Batch fermentation
लगातार किण्वन	-	Continuous fermentation
अन्तआविष	-	Enfotoxin

10.8 संदर्भ ग्रंथ (Reference Books):

1. पेल्जार, चेन एवं क्रिग, माइक्रोबायोलोजी, मेकग्रॉ-हिल बुक कम्पनी, नई दिल्ली ।
2. पुरोहित एवं माथुर, बायोटेक्नोलोजी फन्टामेन्टलस एवं एप्लीकेशन, स्टूडेण्ट एडिशन, जोधपुर ।
3. टारो एवं वर्गीस, एप्लाइड माइक्रोबॉयोलोजी, बायोसाइन्सेस बुक डिस्ट्रीब्यूटर ।
4. फिन्केल्सटीन एवं बाल, बायोटेक्नोलॉजी ऑफ फिलामेन्टस फन्जाई - टेक्नोलॉजी एण्ड प्रोडक्ट्स बटरवर्थ हिनमान ।

इकाई11

औद्योगिक उत्पाद - I

(Industrial Products -I)

इकाई की रूपरेखा

11.0 उद्देश्य

11.1 प्रस्तावना

11.2 अभिक्रिया वातावरण पुननिर्माण

11.3 रासायनिक रूपान्तरण

11.3.1 एल्कलीकरण द्वारा ।

11.3.2 प्रोटीऐज से अभिक्रिया द्वारा

11.3.3 स्थल निर्देशित उत्परिवर्तक द्वारा

11.3.4 pH में परिवर्तन द्वारा ।

11.4 अन्तराणविक क्रॉस लिंकिग

11.5 निश्चलीकरण

11.5.1 भौतिक अधिशोषण

11.5.2 आयनिक बंधता

11.5.3 सहसंयोजक बंधता

11.5.4 जेल संपाशन

11.5.5 सूक्ष्म संपूटन

11.5.6 निश्चलीकृत विकर की विशेषताएँ

11.6 विकर का उद्योगों में उपयोग

11.7 विकर का विश्लेषणात्मक उद्योग में उपयोग

11.8 विकर का चिकित्सा में उपयोग

11.9 सारांश

11.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

11.11 अभ्यासार्थ प्रश्न

11.12 शब्दावली

11.13 संदर्भ ग्रन्थ

11.0 उद्देश्य (Objectives) :

इस इकाई का उद्देश्य

1. औद्योगिक उत्पादों के उत्पादन में अभिक्रिया वातावरण पुनःनिर्माण की जानकारी प्राप्त करना ।
2. विकरों में रासायनिक रूपान्तरण का अध्ययन करना ।
3. विकरों में निश्चलीकरण प्रक्रिया का अध्ययन करना तथा निश्चलीकृत विकर के उपयोग तथा विशेषताओं की जानकारी लेना ।
4. विकरों का उद्योगों में उपयोग का अध्ययन करना ।
5. विकरों का विश्लेषणात्मक उद्देश्य का अध्ययन करना ।
6. विकरों का चिकित्सीय उपयोग में अध्ययन करना ।

11.1 प्रस्तावना (Introduction):

सूक्ष्मजीवों के औद्योगिक उपयोग के लिये इन सूक्ष्मजीवों की अत्यधिक मात्रा में जरूरत होती है तथा यह प्रक्रिया सूक्ष्मजीवों को एक बड़े पात्र (container) में पोषक माध्यम (nuritive media) में उगाकर किया जा सकता है । ये पात्र (container) सामान्यत: फर्मेन्टर (farmentor) कहलाते हैं । ये किण्वक (fermentor) संरचना में काफी जटिल होते हैं । औद्योगिक किण्वक (indusrial fermentor) की संरचना इस प्रकार की होती है कि उसमें सूक्ष्मजीवों द्वारा उत्पन्न उत्पाद की मात्रा अपनी अधिकतम सीमा में हो तथा अन्य अनुपयोगी सूक्ष्मजीवों की उस तरल माध्यम में वृद्धि न हों । उद्योगों में उपयोग होने वाले फर्मेन्टर का आकार / आयतन सामान्यत 5000 तथा 10,000 गैलन तक होता है । फर्मेण्टर के भीतर तरल माध्यम में वातन (aeration) तथा प्रक्षोभन (agitation) के कारण फोम का निर्माण होता है इस फोम का निर्माण सामान्यत उस माध्यम में होता है जो प्रोटीन तथा पेप्टाइड से भरपूर होते हैं तथा ये प्रोटीमोलाइटिक जीवाणु इस फोम का निर्माण करते हैं । यह फोम सामान्यत: किण्वक (fermentor) में संक्रमण (contamination) के कारण होता है ।

किण्वन (fermentation) प्रक्रिया के समाप्त होने पर, किसी भी किण्वन उत्पाद को पहचानने में विकर विश्लेषण (enzyme assay) एक महत्त्वपूर्ण योगदान निभाता है क्योंकि विकर विश्लेषण अत्यधिक विशिष्ट (highly specific) होते हैं तथा ये जैविक रूप से सक्रिय तथा निष्क्रिय पदार्थ के मध्य आसानी से विभेद (differentiate) कर लेते हैं । इसलिये विभिन्न किण्वन प्रक्रिया में विकरों का उपयोग किया जाता है किन्तु इस प्रक्रिया को test करने के लिये अनुकूल तापमान तथा pH की आवश्यकता होती है क्योंकि विकर इसके अलावा निष्क्रिय होते हैं, अर्थात् अभिक्रिया प्रदर्शित नहीं करते ।

विकर विश्लेषण में उत्पन्न विकर अस्थायी (unstable) होते हैं तथा सूक्ष्मजीवों द्वारा उत्पन्न विकर अत्याधिक सूक्ष्म मात्रा में उत्पन्न होते हैं अत: इन विकर के उत्पादन के लिये विशिष्ट परिस्थितियों की आवश्यकता होती है । इसके अलावा विकर को लम्बे समय तक संग्रहित (store) करके नहीं रखा जा सकता, इनकी आधार (substrate) के लिये विशिष्टता (specificity) होती है । विकर की इन सभी गुणों/कारकों को ध्यान रखकर विभिन्न वैज्ञानिकों ने विभिन्न किण्वन उद्योगों में विकर के उपयोग को बढ़ाने के लिये विकर के रासायनिक रूपान्तरण

तथा उसके संग्रहण (storage) को बढ़ाने के लिये निश्चलीकरण प्रक्रिया की खोज की । रासायनिक रूपान्तरण में विकर के सक्रिय क्षेत्र पर उपस्थित अमीनो अम्ल पार्श्व श्रृंखला को एल्कलीकरण, प्रोटीऐज विकर द्वारा, स्थल निर्देशित उत्परिवर्तक तथा pH में परिवर्तन द्वारा परिवर्तित कर दिया जाता है । यह रूपान्तरित विकर अपने उपयुक्त आधार (suitable subtrate) की अत्याधिक सांद्रता होने पर पुन: सक्रिय (activate) होकर रासायनिक क्रिया पूर्ण करते है । इसी प्रकार निश्चलीकृत विकर को विभिन्न प्रकार से बनाया जाता है । निश्चलीकृत सामान्यत: विकर के साथ किसी अविलेय वाहक को जोड़ देना है जिसमें यह विकर अपनी उत्प्रेरक क्षमता नहीं खोता । किन्तु इस प्रकार के विकर को लम्बे समय तक संग्रह कर के रखा जा सकता है । निश्चलीकरण करने के विभिन्न तरीके हैं जैसे भौतिक अधिशोषण, आयनिक बंधता, सहसंयोजक बंधता, संपाशन (entrapment) तथा सूक्ष्म सहन आदि ।

इस प्रकार के रासायनिक रूप से रूपान्तरित विकर तथा निश्चलीकृत विकर का विभिन्न उद्योगों जैसे की औद्योगिक, विशलेष्णात्मक तथा चिकित्सा में उपयोग किया जाता है जिसका विस्तार से विवरण हम इस अध्याय में करेंगे ।

11.2 अभिक्रिया वातावरण पुर्ननिर्माण (Reaction Environment Rebuilding):

बहुत से उदाहरणों द्वारा यह सिद्ध किया जा चुका है कि विभिन्न आधार (substrate) अणु अथवा विशिष्ट धात्विक आयन (metal ions) उदाहरणत: Ca^{2+} तथा Zn^{2+} की उपस्थिति का विकर के स्थायित्व में महत्त्वपूर्ण योगदान होता है । जैसे कि बैसिलस लाइकेनिफार्मिस द्वारा उत्पन्न α -एमाइलेज को 4 ppm Ca^{+2}, आयन के द्वारा स्थायी (stabilize) करा जा सकता है जो कि इस विकर की सक्रियता को (6 घण्टे तक $70°C$ के उष्मायन (incubation) 100% तक बनाये रखती है । किन्तु यह तरीका अन्य जीवाणु से प्राप्त होने वाले α -एमाइलेज पर लागू नहीं होता । यह प्रक्रिया मुख्यत: प्रोटीन की संरचना में अतिरिक्त बंध के द्वारा उत्पन्न स्थायित्व के कारण होती है जैसे कि मायोग्लोबीन में से हीम समूह को अलग करने पर उसके प्रोटीन के α -हेलिक्स में 75-60% तक कमी देखी गई है ।

इसके अलावा उच्च अणुभार वाले जलस्नेही बहुलक (जैसे कि डेक्सट्रान, पोलीइथाइलिन ग्लाइकॉल) को विकर विलयन में डालने से विकर की स्थायित्वता (stability) बढ़ जाती है जो कि या तो विलयन की श्यानता (viscosity) में वृद्धि कर देता है अथवा विकर के चारों तरफ उपस्थित जल की सक्रियता को कम कर देता है (जो कि विकर की हाइड्रेशन शैल बनाती है) परिणामस्वरूप यह विकर के निरूपण (interact) को परिवर्तित नहीं होने देता । इस प्रक्रिया में शायद ये जलस्नेही बहुलक विकर में उपस्थित जलस्नेही समूही को जल के अणुओं से क्रिया नहीं होने देते जिसके फलस्वरूप विकर के अणु में उपस्थित जलस्नेही अणु स्वयं से अन्तःक्रिया (interact) करके विकर अणु की अकुण्डलन (unfloding) होने से बचाते है । यह प्रक्रिया α -एमाइलेज विकर में देखी गयी जहाँ 80% शुष्क ठोस स्टार्च "विलयन" की उपस्थिति में यह विकर $110°C$ तक पर भी कार्यशील होता है ।

हाल ही में ट्रीहेलोज (α -D-ग्लूकोपायरेनोसाइल-α -D-ग्लूकोपायरोसाइड) का उपयोग शुष्क विकर के निर्माण में स्थायित्व देने के किया गया है । इस के उपयोग से उच्च तापक्रम पर भी न्यूक्लिऐज विकर को स्थायी (stabilze) देखा गया है । ट्रीहेलोज की उपस्थिति विकर को सापेक्ष रासायनिक स्थायित्व (relative chemical stability) देता है तथा साथ ही इसकी अपचयनकारी प्रकृति ट्रीहेलोज स्थायित्वकारी तत्त्व बनाता है ।

हम यह जानते है कि विकर में उपस्थित जल की सांद्रता को कम करके विकर का स्थायित्व बढ़ाया जा सकता है । यह सभी जानते हैं कि विकर के जलीय विलयन को $100°C$ पर गर्म करने से विकर सारी सक्रियता खो देता है वहीं शुष्क पाउडर के रूप में विकर का उपयोग करने से (जहाँ उसे 12 $moldm^{-3}$ α -हेप्टेनॉल तथा ट्राइब्यूटाइराइलग्लिसरॉल के मिश्रण) में रखने से उसकी अर्धआयु को $100°C$ तक पर भी बढ़ाया जा सकता है । इस प्रक्रिया में सम्पूर्ण तंत्र में जल की मात्रा केवल 0.015% थी । वहीं जल की मात्रा को बढ़ाने से (0.8%) विकर की अर्धआयु 15 मिनट तक घट गई।

इन सभी अभिक्रियाओं में निम्न अनुपयोगी बातें देखी गयी जैसे कि विकर की विशिष्ट सक्रियता में कमी, आधार विशिष्टता में परिवर्तन तथा अवांछित उत्पादों का बनना जैसे कि α -एमाइलेज के उपयोग करने पर विभिन्न अवांछित ट्राइसेकेराइड बनें । इसी प्रकार स्थायी लाइपेज (stabilized lipase) अपने मूल या प्राकृतिक लाइपेज के स्थान पर उच्च द्‌वितीयक तथा तृतीयक एल्कोहल से अभिक्रिया करने में असमर्थ था तथा साथ ही इसकी विशिष्ट सक्रियता $100°C$ पर अपने प्राकृतिक लाइपेज की तुलना में कम थी । इन सभी बातों को ध्यान में रखते हुए यह कहाँ जा सकता है कि विकर के स्थायित्व को बढ़ाने के लिये प्रोटीन्स की सांद्रता को बढ़ा देना चाहिए । यह मुख्यत: तीन प्रकार से काम करता है । (i) यदि अभिक्रिया में असक्रियता का कारण प्रोटीपोलाइसिस या आटोलाइसिस है तो एकान्तरित आधार की उच्च सांद्रता का उपयोग करके विकर की हानि को रोका जा सकता है (ii) प्रोटीन्स के मध्य भौतिक अन्योन्य क्रिया (interactions) मुख्यत: उसकी सांद्रता पर निर्भर करती है । अत: प्रोटीन्स की उच्च सांद्रता प्रोटीन्स की अवक्षेपण (precipitate) अथवा संकुलन (aggergate) प्रकृति को कम करके, विकर के मध्य विशिष्ट तथा स्थायी अभिक्रिया को होने देता है । (iii) विकर के प्रोटीन्स अणु के मध्य स्थायित्व उसमें विशिष्ट प्रकार के गतिज क्रियाकलाप (Kinetic mechanism) के द्‌वारा संचालित होता है ।

वातावरण पुर्ननिर्माण (Enviromnet Rebuilding)

सिद्धान्त: यह माना जाता है कि विकर का तापमान स्थायित्व (thermostability), विकर में उपस्थित जलरोधी अन्योन्य क्रिया (hydrophobic interactions) का परिणाम है । मॉजहेव तथा मॉर्टीनेक (Mozhaev & Martinek) ने एक सरल आलेख (route) द्‌वारा विकर स्थायित्वकरण को बढ़ाने के लिये इन पारस्परिक अन्तक्रिया का उपयोग किया । उनके अनुसार किसी भी विकर में उपस्थित जलरोधी समूह तक पहुँचने के लिये विकर अणु को सर्वप्रथम अकुण्डलित (यूरिया तथा डाइसल्फाइड से क्रिया के द्‌वारा) तथा इसके पश्चात् उसे रासायनिक रूपान्तरित करने के पश्चात् पुनकुण्डलित किया जाना चाहिये । यह प्रक्रिया कम अणुभार वाले

लाइगेण्ड (ligand) की उपस्थिति में की जानी चाहिये जो कि विकर अणु के केन्द्र में सम्मिलित हो जाये अथवा विकर अणु अपनी अप्राकृतिक (non native) अवस्था में पुन: कुण्डलित हो जायें ।

मॉजेव तथा मार्टिनेक ने निम्न प्रक्रिया ट्रिपसिन विकर पर उपयोग ली तथा पाया कि पुन: कुण्डलन के 50% पर करने के पश्चात् विकर अपने पूर्वज विकर से $90°C$ तापमान पर 50 गुना अधिक स्थायी था । पूर्वानुमान के अनुसार यह बढ़ी हुई विकर स्थायित्व उच्च तापमान पर पुन: कुण्डलन के परिणामस्वरूप बने हुए उच्च सामर्थ्य वाले जलरोधी अन्तक्रिया का परिणाम थी ।

11.3 रासायनिक रूपान्तरण (Chemical Modification):

यदि किसी विकर की पार्श्व अमीनो अम्ल श्रृंखला में परिवर्तन करने से अनुउत्क्रमणीय संदमक की सहायता से उसकी उत्प्रेरक क्षमता कम हो जाती है, तो यह माना जाता है कि वह पार्श्व अमीनो अम्ल श्रृंखला विकर के सक्रिय क्षेत्र (active site) से जुड़ी हुई थी । इसके अलावा विकर की उत्प्रेरक क्षमता (catalytic activity) में कमी का कारण उसके तृतीयक संरचना में परिवर्तन होना भी है जिसके कारण परिवर्तित अमीनो अम्ल अवशेष (residue) उस सक्रिय क्षेत्र पर उपस्थित नहीं होता । इस घटना से बचने का तरीका (i) आधार (substrate) की अत्यधिक मात्रा बढ़ा देना है जिससे कि वह आधार बन्ध्य स्थान (substrate binding site) को रोककर अमीनो अम्ल अवशेष (residue) में परिवर्तन को रोक सकें । दूसरे तरीके में अत्यधिक मात्रा में व्युत्क्रमणीय संदमक (reversible inhibitor) अर्थात् प्रतियोगी संदमक (competitive inhibitor) का उपयोग किया जायें जो विकर की आधार बन्धय स्थान से जुड़ जायें अर्थात् यदि कोई विकर आधार (substrate) की अनुपस्थिति में अपने अमीनों अम्ल पार्श्व श्राप में परिवर्तन के कारण अपनी उत्प्रेरक क्षमता (catalytic activity) खो देता है, किन्तु वहीं विकर आधार (substrate) की संतृप्त अवस्था में उपस्थिति में उत्प्रेरक क्षमता दिखाता है तो यह माना जाना है कि उस विकर में अमीनों अम्ल अवशेष, विकर के सक्रिय क्षेत्र पर उपस्थित था ।

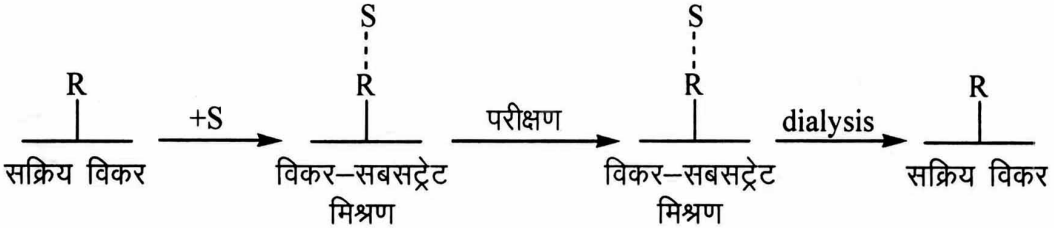

सामान्यत: यह माना जाता है कि विकर की उत्प्रेरक स्थान (catalytic site) पर रासायनिक रूपान्तरण का परिणाम विकर की रासायनिक एवं उत्प्रेरक क्षमता खोने के रूप में दृष्टिगोचर होता है । हालांकि इस दशा में भी विकर से आधार (substrate) जुड़ेगा किन्तु उन के बीच कोई रासायनिक क्रिया नहीं होगी अथवा आधार विकर से जुडने में असमर्थ होगा ।

1960 में विकर रूपान्तरण पर किये गये अध्ययन से पता चला कि विभिन्न अमीनों अम्ल जैसे कि हिस्टीडीन, सिस्टीन, सीरीन, मीथीयोनीन, टायरोसीन, एस्पारटेट, ग्लूटामेट, लाइसिन तथा ट्रिपटोफेन आदि विकर के सक्रिय क्षेत्र (active site) से जुड़े रहते हैं अथवा ये विकर के सक्रिय क्षेत्र स्थान पर पाये जाते हैं ।

11.3.1 एल्कलीकरण द्वारा (By Alkylation)

क्रेस्टफील्ड, स्टेन तथा मूर (1963) ने विकर राइनोम्यूक्लिऐज के हिस्टीडीन अवशेष (residue), का आयडोएसीटेट के द्वारा एल्कलीकरण कराकर राइनोन्यूक्लीएज को निष्क्रिय किया ।

सामान्यत: हिस्टीडीन- 119 अथवा हिस्टीडीन-12 का उपयोग एल्कलीकरण के लिये किया जाता है । आयडोएसीटएमाइड हालांकि आयडोएसीटेट के समान एल्कली एजेन्ट (alkylating agent) है किन्तु यह एन्जाइम की सक्रियता पर कोई प्रभाव नहीं डालता । सामान्य परिस्थितियों में आयडोएसीटेट, हिस्टीडीन अवशेष (histidine residue) पर कोई प्रभाव नहीं डालता, अपितु कुछ विशेष परिस्थितियों (pH = 55) पर ही आयडोएसीटेट, हिरटीडीन-12 तथा हिस्टीडीन-119 को प्रभावित करता है । एल्कलीकरण द्वारा राइबोन्यूक्लिऐज विकर की असक्रियता (inactivation) को विलयन में अत्यधिक मात्रा में फास्फेट डाल देने से दूर किया जा सकता है क्योंकि फास्फेट, विकर के सक्रिय स्थान (active site) से बंधित हो जाते हैं ।

द्वितीय तकनीक जो विकर को असक्रिय (inactive) करने के काम में ली जाती है वह है, अमीनो अम्ल की पार्श्व श्रृंखला का प्रकाशीय ऑक्सीकरण (photo oxidation) करवाकर (यह प्रक्रिया एक प्रकाश संवर्धन (photosensitiser) जैसे की मिथाइलीन ब्लू अथवा रोज बंगाल का उपयोग करके की जाती है) । यह प्रक्रिया अविशिष्ट (nonspecific) प्रकार की होती है तथा हिस्टीडीन, ट्रिपटोफेन, मिथियोनीन तथा सिस्टीन अवशेष (residue) को भी ऑक्सीकृत कर देती है । इस प्रक्रिया में झोलेज (enolase) का सिर्फ एक हिस्टीडीन अवशेष प्रभावित हुआ किन्तु वह इनोलेज को निष्क्रिय करने के लिये पर्याप्त था । इनोलेज को पुन: सक्रिय, मैग्नीशियम आयन की सहायता से किया जा सकता है जो कि इनोलेज को प्रकाशीय आक्सीकरण प्रक्रिया से बचाता है । हिस्टीडीन अवशेष (histidine residue) के ऑक्सीकरण के उत्पाद का प्रकार विभिन्न कारकों पर निर्भर करता है (जैसे वातावरण) भारी तत्त्वों (heavy metals) की थायॉल समूह के लिये विशेष लगाव (affinity) होती है तथा इस प्रकार पैपेन (papain) विकर को p-क्लोरोमरक्यूरीबेन्नोऐट (PCMB) तथा इसी समान मर्करी मिश्रण (compound) के द्वारा निष्क्रिय किया जाता है । ये अभिकर्मक विशेष तौर से -SH समूह पर आक्रमण करते हैं ।

बेन्जीन रिंग में आयोडीकरण अथवा नाइट्रीकरण प्रक्रिया के द्वारा अथवा फीनॉल समूह के एसाईलेशन के द्वारा कार्बोक्सिलेज विकर को निष्क्रिय (inactiveate) किया जा सकता है ।

लिन तथा कोशलैण्ड (Lin & Koshland 1969) ने लाइसोजाइम के समस्त कार्बोक्सिल समूह को अमीनोमीथेनसल्फोनिक अम्ल तथा कार्बोमाइड के द्वारा रूपान्तरित करके निष्क्रिय कर दिया तथा इस प्रक्रिया में आधार की मात्रा को 50%, तक बढ़ा कर विकर लाइसोजाइम को पुन: सक्रिय

कर दिया । यह प्रक्रिया निर्देशित करती है कि ये रूपान्तरित कार्बोक्सिल समूह विकर के सक्रिय क्षेत्र (active site) से सम्बन्धित थे ।

11.3.2 प्रोटीएजेज की सहायता से विकर का रासायनिक रूपान्तरण (Chemical modification by treatment with proteases)

किसी भी विकर के प्रोटीन समूह को रासायनिक प्रक्रिया द्वारा परिवर्तित कर देने से प्रोटीन में उपस्थित अमीनो अम्ल पार्श्व श्रृंखला में परिवर्तन हो जाता है । यह परिवर्तन विकर के प्राथमिक संरचना (primary structure) पर प्रभाव डालता है । यह प्रक्रिया सामान्यत: प्रोटीपोलाइटिक विकर (proteolytic enzyme) की सहायता से पूर्ण की जाती है । कभी-कभी यह स्थिति विकर के सक्रिय क्षेत्र की संरचना की जानकारी देती है । उदाहरण: विकर फ्रक्टोज बाइफास्फेट एल्डोलेज (Fructose biophosphate aldolase) में उपस्थित C-टर्मिनल टायरोसीन अवशेष (C-terminal tyrosine residue) हटा देने से विकर अपनी उत्प्रेरक क्षमता खो देता है (Fructose-1,6 biphosphate substrate के प्रति) । यह प्रक्रिया दर्शाती है कि C-टर्मिनल टॉयरोसीन अवशेष, आधार के 6--फास्फेट के समूह से बंधित होता है ।

11.3.3 विकर का स्थल निर्देशित उतपरिवर्तक द्वारा रासायनिक रूपान्तरण (Enzyme modification by site directed mutagenesis)

इसमें विशिष्ट अमीनो अम्ल समूह के विकर का निर्माण करके उनके प्रभाव का अध्ययन किया जा सकता है ।

उदाहरण के लिये क्रेक तथा सहायक (Gaik & Colleagues, 1987) ने ट्रिपसीन विकर में उपस्थित एस्पारर्जिन को एस्पार्टेट-102 से विस्थापित किया और देखा कि उदासीन pH, पर ट्रिपसिन विकर की ऐस्टर आधार (ester substrate) से क्रिया 10,000 गुना तक कम हो गयी ।

11.3.4 pH में परिवर्तन के द्वारा (Effect by Changing pH)

हम यह जानते है कि विकर में उपस्थित आयनीकरण संभव (ionizable) अमीनो अम्ल माध्यम के pH से अत्याधिक प्रभावित होते हैं तथा जिसके फलस्वरूप विकर की उत्प्रेरक क्षमता में परिवर्तन होता है । pH के अत्यधिक परिवर्तन करने से विकर में उपस्थित प्रोटीन की तृतीयक संरचना प्रभावित होती है जिसके फलस्वरूप विकर अपनी उत्प्रेरक क्षमता खो देता है । किसी भी विकर की उत्प्रेरक क्षमता (catalytic acitivity) विकर में उपस्थित अमीनो अम्ल श्रृंखला के आयनीकरण (ionization) पर निर्भर करती है ।

11.4 अन्तराणविक क्रॉस लिंकता (Intramolecular Cross Linking):

क्रॉस लिंकिग प्रक्रिया का उपयोग विकरों के निश्चलीकरण के लिये सर्वप्रथम क्यूओजो तथा रिचर्ड (1964) (Quiocho & Richards) ने कार्बोक्सीपेप्टाइडेज A निश्चलीकरण के लिये किया । विभिन्न अभिकर्मक जिनमें दो क्रियात्मक समूह (functional group), विक्रियात्मक समूह (bifunctional group) होते है, का उपयोग विकर के विभिन्न अणुओं को आपस में जोड़ने के लिये किया जाता है । इन द्विक्रियात्मक अभिकर्मक (bifunctional reagent) का उपयोग विभिन्न विकर तथा कुछ प्रोटीन्स को निश्चलीकृत करके तथा उसे मेक्रोस्कोपिक कण (macroscopic particles) को बनाने के लिये किया जाता है । यह क्रॉस लिंकिंग या तो एक ही प्रकार के अणुओं के मध्य अथवा विभिन्न प्रकार के अणुओं के मध्य होती है । जब ये लिंकिंग एक ही अणु के भीतर होती है तो अन्त:आणविक तथा जब भिन्न अणुओं के मध्य होती है तो अन्तराणविक क्रॉस लिंकिंग (intramolecular cross) कहलाती है । इस अवस्था में निश्चलीकृत विकर की क्रियात्मकता निम्न बातों पर निर्भर करती है -

- बनने वाले क्रास बंधनी की संख्या ।
- आधार अणु का आकार ।
- काम में लिया गया अभिकर्मक ।
- विकर की सांद्रता ।
- विलायक माध्यम की आयनिक सांद्रता ।
- $H^{+}ion$ अथवा हाइड्रोजन आयन की सांद्रता ।

मुख्यत: दो प्रकार के द्विक्रियात्मक क्रॉस लिंकर (bifunctional cross linkers) होते हैं -

(i) सम-द्विक्रियात्मक (Homo-bifunctional)

जिसमें दो या उससे ज्यादा समान फंक्शनल समूह उपस्थित होते हैं । उदाहरण - ग्लेटेरेल्हाइड, डाइमिथाइल रडीपीमिडेट, फीनॉल-2,4-डाइसल्फोनाइल क्लोराइड ।

(ii) विषम-बाइफंक्शनल (Hetero-bifunctional)

जिसमें दो या अधिक प्रकार के विभिन्न समूह उपस्थित होते हैं । उदाहरण ट्राइक्लोरो-5-ट्रायेजिन, टाऊलिन-2-आइसोसायनेट-4-आइसोथायोसाइनेट आदि ।

विकर अणुओं में उपस्थित यह द्विक्रियात्मक क्रॉस लिंकिंग विकर के भौतिक गुण तथा अन्तिम उत्पाद के कण के आमाप (size) को निर्धारित करती है । यह प्रक्रिया सामान्यत: सरल है किन्तु बहुत से विकर विभिन्न कपलिंग पदार्थ के प्रति संवेदनशील होते हैं अत: परिणामस्वरूप विकर स्वयं की विकरात्मक क्षमता (enzymtic ability) खो देता है ।

विभिन्न प्रकार की औद्योगिक कम्पनी इस प्रकार से विकर का उत्पादन कर रही है जिसमें द्विक्रियात्मक अभिकर्मक (bifunctional reagents) का उपयोग किया जाता है हालांकि यह प्रक्रिया ज्यादा उपयोगी नहीं है क्योंकि इसके लिये अत्यधिक मात्रा में विकर की आवश्यकता होती

है तथा अभिक्रिया क्रिया के अंत उत्पाद को यांत्रिकी (mechanical) रूप से पृथक करना संभव नहीं है ।

विभिन्न सूक्ष्मजीवी की कोशिका भित्ति पर मुक्त अमीनों तथा कार्बोक्सिल समूह उपस्थित होते हैं जो कि द्वि अथवा बहु क्रियात्मक अभिकर्मक (bi or multifunctional reagent) के साथ क्रॉस लिंक बनाते हैं । ये अभिकर्मक मुख्यत: ग्लूटेरेल्डिहाइड अथवा टालूउन डिस्को सायनेट है । इस प्रक्रिया के अलावा कोशिकाओं का निश्चलीकरण आयन क्रॉस लिंकिंग (flocculation mechanism) के द्वारा की जा सकती है जिसमें एक polyelutrolyte को ऊर्णन प्रक्रिया (flocculation mechanism) में जोड़ दिया जाता है । यह प्रक्रिया कोशिका के स्थायीकरण (fixing) के लिये उपयोग में ली जाती है ।

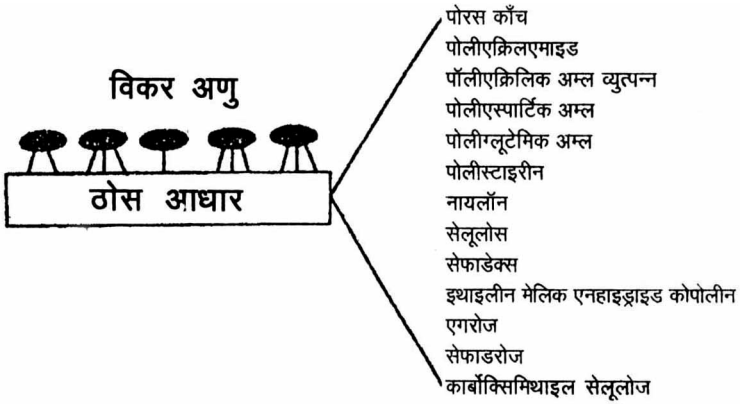

चित्र 11.1 : विकर अणु का एक ठोस आधार, वाहक से सहसंयोजक जुड़ाव

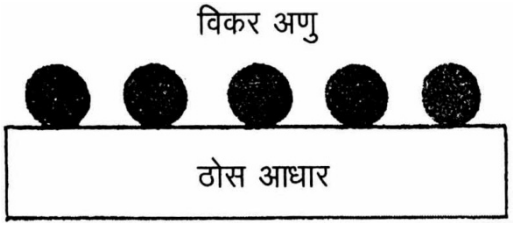

चित्र 11.2 : विकर का ठोस आधार पर

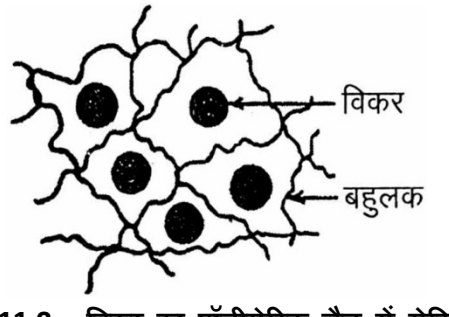

चित्र 11.3 : विकर का पॉलीमेरिक जैल में मेट्रिक्स

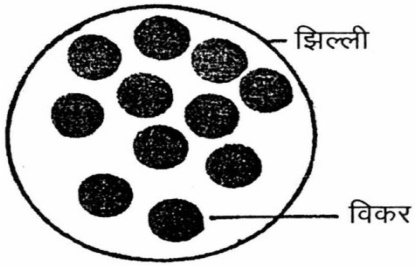

चित्र 11.4 : विकर अणु का संपुटन

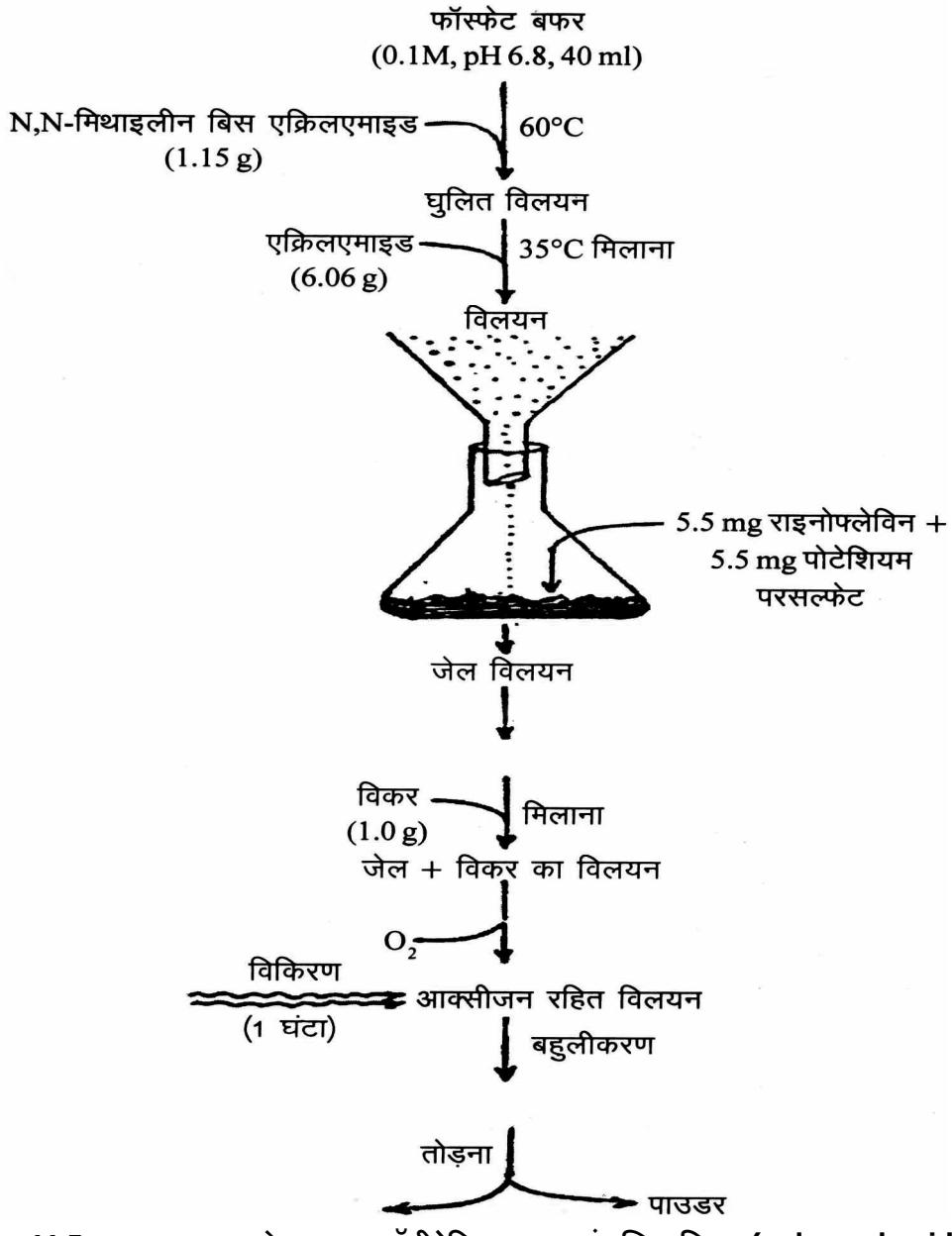

चित्र 11.5 : एक सरल आलेख द्वारा पॉलीऐक्रिलएमाइड संपाशित विकर (polyacrylamide entrapped enzyme) का निर्माण ।

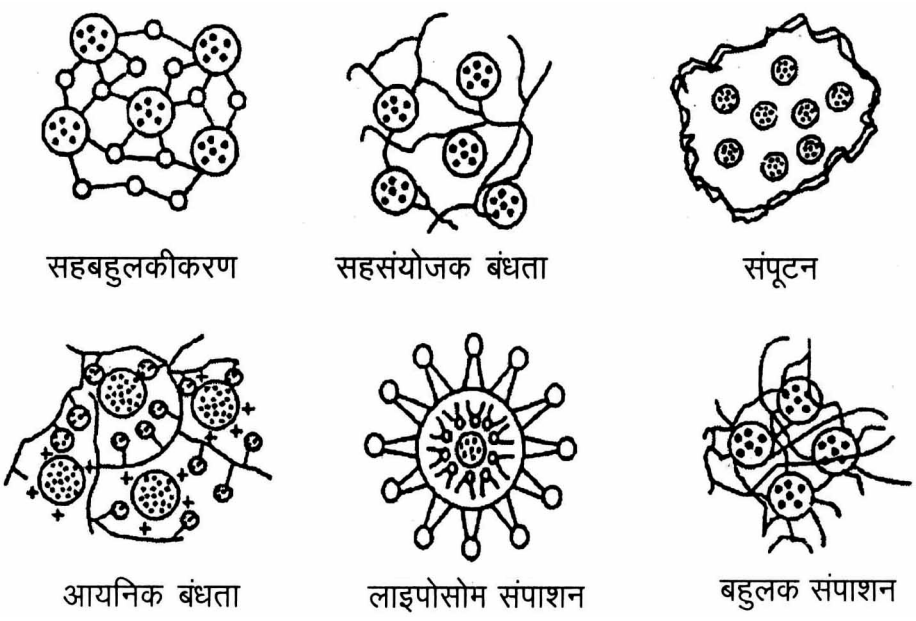

चित्र 11.6 : विभिन्न विकर निश्चलीकरण प्रक्रियाएँ

11.5 निश्चलीकरण (Immobilization) :

विकर निश्चलीकरण वह प्रक्रिया है जिसमें विकर बिना अपनी उत्प्रेरक क्षमता (calalytic activity) खोये हुए किसी अविलेय आधार वाहक (insoluble support carrier) से जुड़ा रहता है । ये निश्चलीकृत विकर अति विशिष्ट विषमांगी उत्प्रेरक (highly specific heterogenous catalyst) है तथा इनको किसी माध्यम में पुन: प्राप्त तथा पुन: कार्य में लिया जा सकता है । किसी भी विकर को निश्चलीकृत करने में निम्न विधियाँ काम में ली जा सकती है -

(i) भौतिक अधिशोषण (Physical adsorption)

(ii) आयनिक बंधता (Ionic binding)

(iii) सहसंयोजक बंधता (Covalent binding)

(iv) जेल संपाशन (Gel entrapment)

(v) सूक्ष्म संपूटन (Microencapsulation)

11.5.1 भौतिक अधिशोषण (Physical adsorption)

वह प्रक्रिया है जिसमें विकर को एक ठोस आधार से भौतिक (कूलम्ब आकर्षण) अथवा रासायनिक (भौतिक रासायनिक) बंध के द्वारा बांधा जाता है । ये बंध जलर्विकषी (hydrophobic), आयनिक (ionic), ध्रुवीय (polar) अथवा हाइड्रोजन (hydrogen) प्रकार के होते हैं ।

सर्वप्रथम 1916 में नेलसन तथा ग्रिफिन (Nelson, Griffin, 1916) ने बताया कि विकर इन्व्रेटेज को बिना उसकी उत्प्रेरक क्षमता खोये हुए सक्रिय चारकोल (activated charcoal) पर अधिशोषित करा दिया जाता है ।

अन्य अकार्बनिक पदार्थ (inorganic meterials) जिनका वाहक (carrier) की तरह उपयोग किया जाता है जैसे मिट्टी (clay), एन्यूमिना (alumina),सिलिका (silica) आदि । कार्बन, कैल्शियम कार्बोनेट, कॉलाइँडान (सेलुलोस नाइट्रेट), कॉलेजन, काओलिनाइट तथा विभिन्न आयन एक्सचेंज रेसिन (ion exchange resin), जैसे कि डाइइथाइलअमीनोइथाइल सेफाडेक्स (DEAE-sephadex), डीइएई-सेलूलोस (DEAE-cellulose) तथा कार्बोक्सीमिथाइल सेलुलोस (carboxymethyl cellulose) आदि ।

इस प्रक्रिया की उपयोगिता मुख्य रूप से इसका सरलीकृत (simplicity) होना है । इस प्रक्रिया में एक विलेय विकर को जब ठोस आधार (solid support) के साथ कुछ मिनिट तक तेजी से मिलाया जाता है तथा इसके पश्चात् धोवन प्रक्रिया (washing) के द्वारा अविलेयक तथा अनअधिशाषित विकर अणुओं को हटा दिया जाता है ।

11.5.2 आयनिक बंधता (Ionic binding)

यह थोड़ी सी विशिष्ट निश्चलीकरण प्रक्रिया है जिसमें विकर को विशेष वाहक जैसे कि DEAE-सेफाडेक्स तथा सी.एम. सेलूलोज को आधार की तरह काम में लिया जाता है । इस प्रक्रिया में विकर आधार से तब तक जुड़ा रहता है जब तक pH तथा आयनिक बंधता को एक अनुकूल मान पर रखा जाता है ।

11.5.3 सहसंयोजक बंधता (Covalent binding)

यह विकर निश्चलीकरण करने की एक सामान्य प्रक्रिया है । हम यह जानते हैं कि विकर अमीनों अम्ल की श्रृंखला के बने होते हैं जिस पर सक्रिय पार्श्व कड़ी (reactive side chains) उपस्थित होती है । यही पार्श्व कड़ी आधार मेट्रिक्स (support matrix) के साथ सहसंयोजक बंध द्वारा जुड़ी रहती है । इस प्रक्रिया में विकर की सक्रिय स्थल (active site) पर अभिकर्मक (reagents) का कोई प्रभाव नहीं पड़ना चाहिए अर्थात् विकर के सक्रिय क्षेत्र अभिकर्मक से अप्रभावित होने चाहिए । सहसंयोजक बंध, आयनिक बंध की तुलना में ज्यादा प्रभावकारी होते हैं क्योंकि ये pH, आयनिक सामर्थ्य (ionic strength) तथा आधार (substrate) से अप्रभावित रहता है ।

इस बंध को बनाने में विकर के कई सक्रिय पार्श्व कड़ी (active site) जैसे कि अमीनो, इमीनो, एमाइड हाइड्राक्सिल, कार्बोक्सिल, थॉयल, मिथाइलथॉयल, गुआनिडाइल, इमिडेजाल तथा फीनॉल आदि सक्रिय ग्रुप (function group) का उपयोग सहसंयोजक बंध बनाने में होता है । इनमें से अमीनो, कार्बोक्सिल तथा फीनाइल समूह का उपयोग सर्वाधिक किया जाता है ।

निश्चलीकृत विकर को सहसंयोजक बंधता के द्वारा बनाने के लिये विभिन्न प्रक्रिया काम में ली जाती है इसमें सर्वाधिक उपयोग किये जाने वाली प्रक्रिया में डायजोनियम सॉल्ट के साथ फीनोलिक इमिडेजॉल तथा अमीनो समूह के साथ सहसंयोजक बंध बनाने में काम लिया जाता है । इस प्रक्रिया का आविष्कार 1951 में कैम्पबेल तथा सहायकों ने निश्चलीकृत एण्टीजन (एल्बूमिन को डायजोटाइज p-अमीनोबेन्याइल सेलूलोज के साथ मिलाकर) बनाने के लिये किया ।

इस प्रक्रिया में आधार मेट्रिक्स के रूप में मुख्यत: अकार्बनिक (जैसे कि पोरस काँच, सेरामिक लोहा, स्टील, मिट्टी तथा चारकोल), प्राकृतिक (सेलूलोस, एगरोस) तथा कृत्रिम बहुलक (नायलॉन, पोलीएक्रिलएमाइड) तथा कभी-कभी धात्विक ऑक्साइड (metallic oxide) का उपयोग भी किया जाता है । इन वाहकों का चुनाव इनमें उपस्थित सक्रिय समूह (functional group), विलेयता, यांत्रिक स्थिरता (mechanical stability), पृष्ठ तनाव, स्थूलन तथा उनके जलस्नेही तथा जलविर्केषी गुणों पर निर्भर करता है, के आधार पर किया जाता है ।

वाहकों को प्रक्रिया के आरम्भ में सर्वप्रथम किसी व्युत्पन्न अवस्था में परिवर्तित (transform) किया जाता है जिसका आधार इस वाहक (carrier) की प्रति सेकण्ड बंध क्षमता है ।

11.5.4 जेल संपाशन (Gel Entrapment)

विकर अणु को जेल लेटिस (gel lattice) की अन्तःस्थानीय स्थानों (interstitial spaces) में संपाशित किया जा सकता है । यह प्रक्रिया सामान्यत: विकर विलयन को धारित करने वाले पदार्थ (material) के बहुलीकरण (polymerization) द्वारा संभव है । इस प्रक्रिया में पॉलीएक्रिलएमाइड जेल का उपयोग किया जाता है । यह मुख्यत: एक्रिलएमाइड नामक एकलक (monomer) तथा N,N'-मिथाइलीन बिस एक्रिलएमाइड नामक क्रॉरा लिंकिंग एजेन्ट का बना होता है । विकर की निश्चलीकरण प्रक्रिया के प्रथम चरण में एन्जाइम को दोनों एकलको (monomers), एक्रिलएमाइड तथा N,N-मिथाइलीन जिस एक्रिलएमाइड के मिश्रण में मिलाया जाता है इसके पश्चात् बहुलकीकरण प्रक्रिया आरम्भ कराई जाती है जो मुरव्वत: तापमान में परिवर्तन करके अथवा जेल-इण्डूसिंग रसायन मिलाकर आरम्भ कराई जाती है । बहुलकीकरण के पश्चात् विकर को पॉलीएक्रिलएमाइड जेल के क्रॉस लिंक तन्तुजाल (network) में संपाशित कराया जाता है । यह जेल सहसंयोजक (एक्रिलएमाइड, N,N-मिथाइलीन बिस एक्रिलएमाइड) अथवा असहसंयोजक (noncovalent) (कापाकारजीनीन तथा कैल्शियम एल्जीनेट) प्रकृति की होती है । मुख्यत: इन दोनों प्रकार की जेलों का ही उपयोग किया जाता है । इसके अलावा विभिन्न उद्योगों में संपाशन पदार्थ (entrapment) के रूप में स्टार्च जेल, सिलिका जेल तथा सिलिकॉन रबर का उपयोग किया जाता है । यह विकर संपाशित जेल लेटिस (lattice) या तो पतली झिल्ली (film) अथवा छोटे खण्डों के रूप में उपयोग किया जाता है । इन खण्डों (blocks)को अभिक्रिया की आवश्यतानुसार छोटे आकर के टुकड़ों में तोड़ (mechanically disperse) कर दिया जाता है ।

इस संपाशन (enterpment) प्रक्रिया में विकर स्वत: किसी भी झिल्ली (membrane) अथवा जेल मेट्रिक्स से बंधित (bind) नहीं होता तथा इस कारण विकर के सक्रिय स्थल (active site) किसी भी रासायनिक बंध से बाधित नहीं होते तथा अपनी प्राकृतिक रूप में मौजूद रहते हैं ।

इस प्रक्रिया के मुख्य लाभ हैं

- विकर की उच्च सांद्रता (high concentration) को बनाये रखा जा सकता है ।
- विकर में बिना रासायनिक परिवर्तन करते हुए उसे संरक्षित रखा जा सकता है ।
- संपाशन द्वारा बहुत सारे विकरों को साथ में रखा जा सकता है ।

इस प्रक्रिया के कुछ हानियां भी हैं -

- पॉलीएक्रिलएमाइड जेल का उपयोग सिर्फ जीवित कोशिका के संवेदी विकर के लिये ही किया जा सकता है ।
- बहुलकीकरण के दौरान विभिन्न विषैले पदार्थ बनते हैं ।
- बहुलकीकरण के लिये उपयोग किये जाने वाले पदार्थ (अगार तथा कैराजीनीन) हल्के तापमान वृद्धि से ही विबहुलीकरण हो जाते हैं ।
- जीवित कोशिकाओं के लिये सिर्फ कैल्शियम एल्जीनेट का उपयोग ही किया जा सकता है ।

उदाहरणत: पेनिसीलिन एसाइलेज (Penicillin acylase) एक तन्तु संपाशित (fibre entrapped) विकर है । इसका निर्माण कृत्रिम तन्तुओं (synthetic fibers) को माइक्रो गुहिका (micro cavities) में संपाशित करके निश्चलीकृत (immobilize) किया जाता है । इसके भौतिक संपाशन (entrapment) प्रक्रिया में एक फाइबर बनाने वाले बहुलक (cellulose triacetate) को एक कार्बनिक जल, अविलेय विलायक (organic water insoluble solvent)में मिलाकर तथा उसके पश्चात् इसको विकर के जलीय विलयन में मिलाकर इमल्सीकरण प्रक्रिया कराई जाती है । इसके पश्चात् इस इमल्शन को एक द्रवीय स्कंदक (coagulant) (टालूइन अथवा पेट्रोलियम ईथर) में मिलाया जाता है तथा इसके अवक्षेप को तन्तुमय अवस्था (filamentous form) में एकत्रित किया जाता है जिसमें विकर विलयन की सूक्ष्म बूंदें (micro droplet) तन्तु में संपाशित (entrapped) होती है ।

11.5.5 सूक्ष्म संपुटन (Microencapsulation)

इस प्रक्रिया की शुरूआत सर्वप्रथम Chang ने 1964 में की । इस प्रक्रिया. में विकर को एक विशिष्ट प्रकार की अर्धपारगम्य झिल्ली से संपुटित अथवा आवरित कर दिया जाता है तथा इस प्रक्रिया को सूक्ष्म संपुटन कहते हैं । इस प्रक्रिया के द्वारा विकर तथा आधार दोनों की अभिक्रिया करने के लिये एक वृहत सतही क्षेत्र मिलती है तथा यह झिल्ली आधार तथा उत्पाद (product) दोनों के लिये ही अर्धपारगम्य होती है । यह प्रक्रिया अन्य प्रक्रियाओं की तुलना में सरल तथा सस्ती है क्योंकि इसमें एक ही पद (step) में बहुत से विकर (multiple enzyme) निश्चलीकृत (immobilize) हो जाते हैं । किन्तु यह प्रक्रिया उच्च अणुभार वाले आधार (substrate) के लिये लागू नहीं होती तथा कभी-कभी इस प्रक्रिया में विकर भी निष्क्रिय (inactivate) हो जाते हैं और कभी-कभी ये विकर झिल्ली से भी जुड़ जाते हैं । इसके अलावा कुछ छोटे अणुभार वाले विकर इन झिल्लीयो से विसरित हो जाते हैं ।

सामान्यत: ये कैप्सूल, इथाइल सेलूलोस, नाइट्रोसेलुलोस, पॉलीसाइरिन पॉलीसिइल एसीटेट, पॉलीएमाइन ग्लाइकॉल आदि के बने होते हैं ।

सामान्यत: सभी विकरों का निश्चलीकरण विकर अभिकारक के बाहर होता है किन्तु कुछ परिस्थितियों में यह प्रक्रिया स्वस्थाने (in situ) कराई जाती है जिसके मुख्य लाभ निम्न हैं -

एक विशेष प्रकार के निश्चलीकरण तंत्र (immobilization plant) की आवश्यकता नहीं होती ।

किसी अभिक्रिया को उत्प्रेरक करने के लिये एक अतिरिक्त विकर निश्चलीकरण (additional enzyme immobilization) कराया जा सकता है ।

किसी भी अभिक्रिया में वाहकों (carrier) का पुनरुद्भवन कराकर पुनःनिश्चलीकरण कराया जा सकता है ।

कम मात्रा में विकर की आवश्यकता होती है । उदाहरण ट्रिपसिन तथा β-गैलेक्टोसाइडेज ।

इन सभी निश्चलीकरण प्रक्रिया (immobilization techniques) के लाभ तथा हानियाँ दोनों हैं तथा इन तंत्र या प्रक्रियाओं का चयन भी उपयोग की आवश्यकता या जरूरत के आधार पर किया जाना चाहिए । उदाहरण के तौर पर कुछ प्रक्रियाओं की पूर्ति के लिये विभिन्न विकरों की आवश्यकता होती है उस अवस्था में विभिन्न विकरों को एक युग्मित तंत्र (coupled system) में ही निश्चलीकृत कर दिया जाता है । यह प्रक्रिया उस अभिक्रिया की गति बढ़ा देती है ।

11.5.6 निश्चलीकृत विकर की विशेषताएं (Properties of immobilized enzyme)

निश्चलीकृत विकर सामान्यत: अपने समान जलीय विकर से भौतिक गुणों (kinetic properties) में भिन्न होते हैं उदाहरणत: ये अत्याधिक स्थायी (stable) तथा तापमान परिवर्तन के प्रति कम संवेदी होते हैं जिसका कारण इनके साथ विभिन्न युग्मन ऊर्जा (coupling reagent) का जुड़ा होना है इसके अलावा इसकी सक्रियता ऊर्जा pH तथा विशिष्टता भी सामान्य विकर की तुलना में भिन्न होती है । विशिष्टता में भिन्नता मुख्यत: इनके ऊपर उपस्थित कुल आवेश (net charge) में परिवर्तन के कारण होती है ।

किसी भी विकर की स्थायीत्वता किसी भी विकर के स्थायित्व से अर्थ है कि वह एक अनुकूल परिस्थितियों (suitable conditions) में संग्रहण के दौरान अपनी सक्रियता को कितने समय तक बचाकर रखता है । उस विकर को गर्म करने पर घट, बढ़ अथवा समान रह सकती है तथा वह इस बात पर निर्भर करती है कि उसका नया सूक्ष्म वातावरण (microenvironment) किसी प्रकार का है । इसी प्रकार एक निश्चलीकृत विकर के pH में 2 इकाई (2 units) का परिवर्तन हो सकता है, वह भी उसके नये सूक्ष्म वातावरण पर निर्भर करता है ।

इसके साथ ही किसी निश्चलीकृत विकर के Km का मान उसके वाहक के स्थिर विद्युत क्षेत्र (electostatic field) पर निर्भर करता है तथा सामान्यत: एक निश्चलीकृत विकर के हम का मान एक सामान्य विकर की तुलना में अधिक होता है ।

निश्चलीकृत विकर का तापमान स्थायित्व सहसंयोजक बंधता तथा संपाशन विधि में बढ़ जाता है किन्तु भौतिक अधिशोषण तथा आयनिक बंधता में यह स्थायित्व कम हो जाता है ।

विकर निश्चलीकरण के उपयोग (Uses of enzyme immobilization)

- इसका उपयोग बायोसेन्सर, बायोइलेक्ट्रोनिक सेन्सर बनाने में किया जाता है जो कि किण्वन प्रौद्योगिकी (fermentation technology) तथा विकर चिकित्सा शास्त्र (therapeutics) के क्षेत्र मे महत्त्वपूर्ण स्थान रखती है ।
- चूंकि निश्चलीकृत विकर को किसी भी प्रक्रिया के पूर्ण होने पर पुन: प्राप्त किया जा सकता है इसलिये इन विकरों का उपयोग किसी भी उद्योग में करने से सारी प्रक्रिया सस्ती पड़ती है ।

- निश्चलीकृत विकर को किसी भी प्रक्रिया में पुन: काम में लिया जा सकता है ।

विभिन्न निश्चलीकरण प्रक्रिया का तुलनात्मक विश्लेषण

(Comparison & evaluation of different immobilization technique)

प्रक्रिया का प्रकार (Type of method	**गुण (Characteristics)**
(i)भौतिक अधिशोषण	इसका निर्माण सरल तथा सौम्य (mild) अवस्था में किया जाता है ।
एवं आयनिक बंधता	किसी भी विलयन की आयनिक सामर्थ्य (ionic strength) तथा pH में परिवर्तन के फलस्वरूप कमजोर विकर-मैट्रिक्स बंध अलग हो जाते है परिणामत: विकर मैट्रिक्स से अलग हो जाता है । इस प्रक्रिया का औद्योगिक उपयोग किसी भी अभिक्रिया को प्रारम्भिक उच्च सक्रियता (initial high activity) तथा कम सक्रियात्मक स्थायित्व (low operational stability) के लिये किया जाता है ।
सहसंयोजक बंधता	यह विकर का रासायनिक परिवर्तन (modification) है जो कि विकर मे ज्यामितीय परिवर्तन (conformational) तथा उसकी सक्रियता (activity) में परिवर्तन लाता है । इन विकरों की सक्रियात्मक स्थायित्व (operational stability) आयनिक बंधता की तुलना में उच्च होती है ।
संपाशन विधि	इस प्रकार से निश्चलीकृत विकर में उच्च विशिष्ट सक्रियता (high specific activity) होती है क्योंकि यहां पर विकर तथा वाहक के मध्य कोई बंध नहीं होता । किन्तु यह तकनीक कम अणुभार वाले विकरों तथा उत्पाद के लिये ही उपयुक्त है ।

तालिका 11.1: विकर के विभिन्न उद्योग में उपयोग

S.No.	**Application**	**विकर**	**उपयोग**
1.	जैविक अपमार्जक	प्रोविऐज	पूर्व अंकुरण अवस्था था तरल अवस्था में उपयोग
		एमाइलेज	बर्जन धोने के अपमार्जक में।
2.	बेकिंग उद्योग	कवक अल्फा - एमाइलेज	आटे में उपस्थित स्टार्च का शर्करा में परिवर्तन ।
		प्रोटीऐजेज	वेत ब्रेड, बन तथा रॉल के निर्माण में बिस्किट निर्माण प्रक्रिया में आटे में प्रोटीन स्तर को कम करने में ।

3.	नवजात के भोजन	ट्रिपसिन	नवजात के भोजन के पूर्व पाचन में ।
4.	मद्य उद्योग	जौ से उत्पन्न विकर	एल्कोहल उत्पादन में ।
		स्ट्रार्च तथा प्रोटीन का सरल शर्करा	तथा अमीनो अम्ल में परिवर्तन ।
		औद्योगिक रूप से उत्पन्न विकर	मेघ निर्माण प्रक्रिया में उपयोग ।
		एमाइलेज, ग्लूकोनेज, प्रोटीऐज	माल्ट में उपस्थित प्रोटीन तथा पोलिसेकेराइड़ को तोड़ना
		बीटाग्लूकानेज	फिल्टरन प्रक्रिया को सुधारना ।
		एमाइलोग्लूकोसाइडेज	कम ऊर्जावान बियर का निर्माण
		प्रोटीऐज	संग्रहण के दौरान बीयर का धुंधलापन दूर करना ।
5.	फल रस	सेलूलेज, पेक्टीनेज	फल रसों का शुद्धिकरण ।
6.	डेयरी उद्योग	रेनिन	चीज का निर्माण
		सूक्ष्मजीवों द्वारा उत्पन्न विकर	मुख्यत: दूध उद्योगिक में अत्यधिक उपयोग
		लाइपेज	ब्लू मोल्ड चीज को पकाने में उपयोगी (डेनिश ब्लू)
		लेक्टेज	लेक्टोस का ग्लूकोज तथा गेलेक्टोस में परिवर्तन
7.	स्टार्च उद्योग	एमाइलेज,एमाइलोग्लूकोसाइडेज तथा	स्टार्च का ग्लूकोज तथा अन्य सीरप में
		ग्लूकोएमाइलेज	परिवर्तन
		ग्लूकोज आइसोमरेज	ग्लूकोज का फ्रक्टोज में परिवर्तन
		निश्चलीकृत विकर(ग्लूकोज आइसोमरेज)	उच्च फ्रक्टोज में सीरप का उत्पादन
8.	रबर उद्योग	केटेलेज	पराक्साइड से ऑक्सीजन उत्पन्न करना जिसका उपयोग लेटेक्स से रबर बनाने में होता है ।
9.	कागज उद्योग	एमाइलेज	स्टार्च को कम श्यानता वाले

उत्पादन में परिवर्तित करना, जिसका उपयोग कागज की कोटिंग मे किया जाता है ।

11.6 विकरों का उद्योगों में उपयोग (Enzymes in Industry):

प्रथम विकर (Enzymes) जिसका औद्योगिक रुप से चिकित्सकीय उद्देश्य से उत्पादन किया गया वह कवक विकर, एमाइलेज टाकाडाइसटेज (Amylase Takadiastase) था जिसका उत्पादन सन् 1894 में अमेरिका में किया गया । इसके पश्चात् 1915 में ओटो रोहम (Otto Roehm's, 1915) ने ट्रिपटिक (Tryptic) विकर तथा उसके योगज (additives) का पेटेन्ट वस्त्र उद्योगों में धुलाई प्रक्रिया (laundary process) के लिये कराया । इसके पश्चात् करीब 1970 तक 80% वस्त्र धुलाई में मुख्यत: विकर (प्रोटियेज) का उपयोग किया गया । इसके अलावा अन्य विकर जैसे लाइपेज, एमाइलेज, पेक्टिनेज तथा आक्सीडोरिडक्टेज आदि का उपयोग अपमार्जक (detergent) उद्योग में किया गया । किन्तु 1971 के आते-आते प्रोटीऐज से एलर्जी (allergy) के कारण उत्पादक, श्रमिक (Production workers) के द्वारा इसका उपयोग अत्याधिक कम हो गया । बाद में सूक्ष्म संपूटन (microencapsulation) तकनीक के विकास के बाद घूलरहित प्रोटिऐज (dustless proteases) का उत्पादन किया जा सका जो कि श्रमिक तथा उपभोक्ता दोनों के लिये ही लाभदायक था ।

इसके पश्चात् बहुत से एन्जाइम जैसे एमाइलेज तथा एमाइलोग्लूकोसाइडेज जिसका उपयोग स्टार्च से ग्लुकोज बनाने में किया जाता है तथा सूक्ष्मजीव रेनिन (microbial renin) जिसका उपयोग बछडे से उत्पन्न रेनिन के स्थान पर चीज (cheese) उद्योग में किया गया, का विकास हुआ ।

खाद्य उद्योग में एमाइलेज तथा निर्जर्मीकरण (Pasturization & serlization) के पश्चात् विभिन्न विकरों की सक्रियता का पता लगा कर यह देखा जाता है कि क्या यह पाश्चुरीकरण तथा निजर्मीकरण की प्रक्रिया पूर्ण रूप से सही हुई है अथवा नहीं । उदाहरणत: दूध में उपस्थित ऐल्केलाइन क्षारीय तथा इन्वेर्टेज (alkaline phosphatase & invertase) लगभग उसी समय निष्क्रिय होते हैं जिस समय पाश्चुरीकरण प्रक्रिया सम्पूर्ण होती है अत: इन दोनों एन्जाइम की सक्रियता के आधार पर यह पता लगाया जाता है कि पाश्चुरीकरण पूर्णत: ठीक हुआ है । इसी प्रकार भोज्य पदार्थों में जीवाणु संदूषण का पता भी लगाया जा सकता है इस प्रक्रिया में सामान्यत: वह एन्जाइम उपस्थित होते हैं जो कि एक शुद्ध भोज्य पदार्थ में उपस्थित नहीं होते । उदाहरण के तौर पर एक शुद्ध दूध में रिडक्टेज (reductase) अतिसूक्ष्म मात्रा में पाया जाता है किन्तु संदूषित दूध में इसकी मात्रा अत्याधिक होती है । यह रिडक्टेज नीले मिथाइलीन ब्लू को, रंगहीन ल्यूकोमिथाइलीन ब्लू में अवायवीय अवस्था में अपचयित कर देती है । मुख्यत: जो एन्जाइम उद्योगों में काम आते हैं वे हैं - एमाइलेज, प्रोटीऐज, केटेलेज, आइसोमरेज तथा पैनिसीलिन एसाइलेज ।

एमाइलेज मुख्यत: तीन प्रकार के होते हैं - α-एमाइलेज, β-एमाइलेज तथा ग्लूकोजएमाइलेज । इन एमाइलेज का मुख्य उपयोग सामान्यत: खाद्य उद्योग में शर्करा उत्पन्न करने का है ।

α-एमाइलेज मुख्यत: जीवाणु जैसे कि बेसिलस सबटिलिस (Bacillus subtilis), बै. सरिसस (B. ceresus), बै पोलिमिक्सा (B. polymyxa), लेक्टोबेसिलस (Lactobacillus), स्यूडोमोनास (Pseudomonas) तथा कुछ कवकों जैसे कि एस्परजिलस (Aspergillus), पेनिसिलियम (Penicellium), म्यूकर (Mucor), न्यूरोस्पोरा (Neurospora) आदि द्वारा उत्पन्न होता है । ये एन्जाइम मुख्यत: अन्तःविकर होते हैं जो कि आधार (substrate) अणु के अन्त:बंधों को तोड़ते हैं ।

β-एमाइलेज मुख्यत: पौधों द्वारा उत्पन्न होते हैं किन्तु कुछ जीवाणुजनित भी है जैसे बी. पॉलीमिक्सा, बी. सिरस मुख्यत: स्टार्च में उपस्थित ग्लूकोज इकाई को उसके अपचयित (nonreducing) सिरे से तोड़ता है । ग्लुकोएमाइलेज मुख्यत: स्टार्च में उपस्थित ग्लुकोज इकाई को उसके अअपचयित (nonreducing) सिरे से तोड़ता है । मुख्यत: एस्परजिलस नाइगर (Aspergillus niger), ए. आराइजे (A. oryzae), राइजोपस निवस (R. niveus) इसके उत्पादक है ।

इन एमाइलेज का मुख्य उपयोग ब्रेड के किण्वन में लिया जाता है जहाँ आटे में उपस्थित स्टार्च जो कि मुख्यत: ग्लूकोज (D-Glucose) की अनेक इकाईयों की बनी होती है । यह एमाइलेज ग्लूकोज में उपस्थित α-1,4 बंध को तोड़ने का कार्य करता है जिसके अंत उत्पाद (end product) के रूप में ग्लूकोज, माल्टोज (a disaccharide) तथा कुछ आलिगोसेकेराइड उत्पन्न होते हैं ।

इन्वर्टेज (Invertase) एक अन्य एन्जाइम है जो यीस्ट कोशिका की कोशिक भित्ति तोड़ने से स्रावित होता है जो कि सुक्रोज को ग्लूकोज तथा फ्रक्टोजू में परिवर्तित करता है ।

इस इन्वर्टेज का उपयोग खाद्य उद्योग में जैम (jam) बनाने में तथा चॉकलेट को मुलायम बनाने में किया जाता है ।

वर्तमान में औद्योगिक परिदृश्य में निश्चलीकृत विकर (immobilized enzyme) का सर्वाधिक उपयोग ग्लूकोज को फ्रक्टोज में परिवर्तित करने में हैं क्योंकि फ्रक्टोज ग्लूकोज के मुकाबले अत्यधिक मीठा होता है । सुक्रोज के उपयोग को प्रतिस्थापित कर देता है क्योंकि फ्रक्टोज सुक्रोज के मुकाबले ज्यादा सस्ता होता है ।

प्रोटीऐज

एमाइलेज के पश्चात् द्वितीय मुख्य रूप से उद्योगों मे काम आने वाला विकर प्रोटीऐज है । करीब 500 टन प्रोटीऐज का उत्पादन हर साल होता है । प्रोटीऐज का मुख्य उपयोग अपमार्जक उद्योग तथा डेयरी उद्योग (Detergent industry and dairy industry) में होता है । इसके अलावा अन्य उद्योग जैसे कि औषध उद्योग, चमड़ा उद्योग तथा खाद्य पदार्थ उद्योग, फिल्म उद्योग और अपशिष्ट उद्योग में किया जाता है ।

प्रोटीऐज के मुख्य उत्पादक जीवाणु तथा कवक है । जीवाणु के मुख्य रूप से बैसिलस जाति जैसे कि बैसिलस लाइकेनिफार्मिस (B. licheniformis), बै. फर्मस (B. firmus), बै. मेगाथीरियम

(B. megatherium) है । कवकों में एस्परजिलस ओराइजे (A. oryzae), ए. सोजे (A. sojae) आदि है जो प्रोटीएज उत्पादित करते हैं । प्रोटीऐज मुख्य रूप से क्षारीय, उदासीन तथा अम्लीय प्रकार के होते हैं । क्षारीय प्रोटीऐज (Alkaline proteases) मुख्य रूप से अपमार्जक उद्योग (Detergent industry) में सूक्ष्मसंपुटकी (microencapsulation) रूप में काम लिये जाते है जिसमें एन्जाइम का गीला पेस्ट बनाकर 50-70°C पर तरलीकृत करने के पश्चात् उसे 'पेग' अर्थात् पॉलीइथाइलीन ग्लाइकोल (polyethylene glycol) के साथ मिला दिया जाता है जो सूखने पर सूक्ष्म कणों में परिवर्तित हो जाता है । ये ठोसीकृत कण, सीधे अपमार्जक में मिलाने पर हानिकारक नहीं होते । उदासीन प्रोटीऐज का मुख्य उपयोग चमड़ा उद्योग में है । वही अम्लीय प्रोटीऐज को रेनिन प्रकार का प्रोटीऐज भी कहते हैं जो कि चीज़ के उत्पादन में काम आता है । इसके अलावा अम्लीय प्रोटीऐज सोया प्रोटीन तथा सोया साँस के उत्पादन में काम आता है ।

आइसोमरेज विकर में ग्लूकोज आइसोमरेज एक महत्त्वपूर्ण विकर है जो ग्लूकोज को फ्रक्टोज शर्करा में परिवर्तित कर देता है । इस विकर का उपयोग आज ज्यादा बढ़ गया है क्योंकि शर्करा (sugar) की बाजार दर में स्टार्च की तुलना में अत्याधिक वृद्धि हो गई है । वर्तमान में जो ग्लूकोज आइसोमरेज काम में लिया जाता है वह वास्तविक रूप से D-जाइलोज आइसोमरेज (D-xylose-isomerase) है । इसका उत्पादन करने वाले कारक मुख्यत: बे. कॉआग्यूलेंस, ई. कोलाई, एयरोबेक्टर एयरोजीन्स (B. coagulans, Escherichia coli, Aerobacter aerogenes) तथा यीस्ट कोशिका है ।

एस्पाराजिनेज (l-Asparaginase) मुख्यत: L-एस्पाराजिनेज अमीनोहाइड्रोलेज (L-Asparagine amidohydrolases) विकर का उपयोग कुछ विशेष प्रकार के ल्यूकेमिया (Leukenias) तथा लिस्फोमा (Lymphoma) के लिये किया जाता है । इस विकर के उपयोग का मुख्य कारण यह है कि यह विकर ट्यूमर कोशिका के अंदर एस्पार्टिक अम्ल (Aspartic acid) तथा अमोनियम ($-NH_4^+$) आयन में तोड़ देता है जो परिणामस्वरूप कैंसर कोशिकाओं को नष्ट कर देता है । इस विकर का उत्पादन मुख्य रूप से ई. कोलाई के म्यूटेंट ATCC9637 (E. coli ATCC9637), सेरेशिया मारर्सिसेन्स (Serratia marcescens ATCC9637) का उपयोग किया जाता है ।

पेक्टिनेज विकर (enzyme) का उपयोग मुख्य रूप से फल रसों तथा अंगूरों के शुद्धिकरण अथवा पृथक्करण (clarify) के लिये किया जाता है । अंगूर तथा शर्करा बीट चूक़ंदर (sugarlet) में पेक्टिन का प्रतिशत 0.2-1% तथा 30% तक होता है । पेक्टिनेज विकर की सहायता से इन फल रसों का उत्पादन अत्याधिक मात्रा में बढ़ाया जा सकता है । वाणिज्यक (commercial) रूप से पेक्टिनेज का उत्पादन कवक मुख्यत: ए. नाइगर (Aspergillus niger) अथवा ए. वेन्टाई (A. wentii) के द्वारा होता है । पेक्टिनेज मुख्यत: छह: विकरों का समूह है जो पेक्टिन अणु को विभिन्न स्थानों पर तोड़ते हैं । इन पेक्टिनेज का वर्गीकरण मुख्यत: उस आधार पर किया जाता है जिस स्थान पर वे पेक्टिन अणु में उपस्थित बंध को तोड़ते हैं ।

एक अन्य विकर लाइपेज (lipase) मुख्यत: बाह्मकोशिकीय विकर है जो वसा को उनके एक अथवा द्विग्लिसराइड (mono or diglyceride) तथा वसीय अम्ल (fatty acid) में तोड़ते हैं । मुख्यत: एस्परजिलस (Aspergillus), म्यूकर (Mucor), राइजोपस (Rhizopus), यीष्ट (Yeast), टारूलोपसिस (Torulopsis) तथा केन्डिडा (Candida) आदि कवक लाइपेज का उत्पादन करती है । जीवाणुओं में स्यूडोमोनास (Pseudomonas), एक्रोमोबेक्टर (Achromobacter) तथा स्टेफाइलोकॉकस (Staphylococcus) लाइपेज के मुख्य उत्पादक है । वाणिज्यक (commercial) रूप से लाइपेज का उपयोग दवा उद्योग (Therapeutic) में पाचनकारी विकर (digestive enzyme) के तौर पर किया जाता है । इसके अलावा इसका कुछ उपयोग डेयरी उद्योग में चीज के महक तथा स्वाद को जानने के लिये किया जाता है । साबुन उद्योग में केन्डिडा सिलेन्डरेसी (Candida cylindraceae) का उपयोग तेल को जल अपघटित करने में किया जाता है ।

लेक्टेज विकर को β-गेलेक्टोसाइडेज (β-galactosidase) भी कहते हैं जो की लेक्टोज को ग्लूकोज तथा गेलेक्टोज में तोड़ता है यह एन्जाइम मुख्य रूप से जीवाणु तथा यीस्ट द्वारा उत्पन्न होता है किन्तु कुछ कवक भी इनका उत्पादन करती है । लेक्टेज का उपयोग पाचनकारी विकर की तरह किया जाता है जहाँ कुछ व्यक्ति लेक्टोज शर्करा के प्रति असहनशील अथवा असक्षम (intolerance) होता है । पैपेन (Papain) मुख्य रूप से वह विकर है जो कि पौधों मुख्यत: पपीते से प्राप्त होता है इसका उपयोग माँस उद्योग में माँस को मुलायम करने (meat tendrizer) में किया जाता है ।

विकर का विश्लेषणात्मक उद्योग में उपयोग (Application of enzyme in analytical industry)

चूंकि हर विकर द्वारा सम्पन्न की जाने वाली अभिक्रिया आधार विशिष्ट (substrate specific) तथा उत्पाद विशिष्ट (product specific) होती है इस कारण से विकरों का विश्लेषणात्मक उद्योग (Analytical industry) में विशिष्ट स्थान है । विकरों का मुख्य उपयोग किसी विशिष्ट उत्पाद जो कि किसी रासायनिक अभिक्रिया के परिणामस्वरूप बनता है किन्तु अल्प मात्रा में बनता है को पहचानने में किया जाता है । ये विकर सामान्य रासायनिक अभिकर्मक (chemical reagent) की तुलना में बेहतर साबित होते हैं क्योंकि सामान्यत: रासायनिक अभिकर्मक एक रासायनिक अभिक्रिया के विभिन्न (रासायनिक रूप से समान) उत्पादों को पृथक करने में असमर्थ होते हैं एवं उनके पृथक्कीकरण (seperation) के लिये बहुत महंगे पृथक्कीकरण प्रक्रम की आवश्यकता होती है । इसके विपरीत विकर आधारित प्रक्रम बहुत ही विशिष्ट (specific) तथा संवेदनशील (sensitive) होते हैं फलस्वरूप हर अभिक्रिया के परिणामस्वरूप विशिष्ट उत्पाद बनते हैं ।

इसके अलावा विकर आधारित अभिक्रिया एक सामान्य तापक्रम तथा उदासीन pH पर भी हो जाती है तथा इसके लिये महंगे तंत्र की आवश्यकता नहीं होती । इसके विपरित विकर आधारित अभिक्रिया की मुख्य कमियों में विकर का अस्थायी (unstable) होना है तथा कुछ अभिक्रिया में

उपयोग किये जाने वाले विकरों का अत्याधिक महँगा होना है । विकर आधारित विश्लेषणात्मक प्रक्रिया का उपयोग आधार की सांद्रता (Conc^{n} of substrate), कोएन्जाइम, सक्रियक (activators) तथा संक्रमक (inhibitors) की सांद्रता का पता लगाने के लिये किया जाता है।

चूंकि ज्यादातर सारे विलेय विकर (soluble enzyme) रासायनिक अभिक्रिया (chemical reaction) में कार्बनिक विलायक (organic solvents) में विकृत (denature) हो जाते हैं । इस दुविधा को विकरों को निश्चलीकृत अथवा निश्चलीकृत विकर (immobilized enzyme) का उपयोग कर के दूर किया जा सकता है । इसके अलावा कार्बनिक विलायक किसी भी विकर माध्यम (enzyme, medium) में उपस्थित ध्रुवता (polarity) को कम कर देता है इसके फलस्वरूप समस्त जलरोधी (hydrophobic) पार्श्व कड़ी (side chain) माध्यम में विसरित अवस्था (dispersed state) में आ जाती है तथा यही विकर के अवलन (unfolding) के लिये जिम्मेदार होती है । यह अवलन (unfolding) विकरों में या तो उनके अत्याधिक हाइड्रेटेट अवस्था (hydrated state) या उस विकर को बहु बंधीय अवस्था में (multiple bonding state) में किसी आधार (substrate) से बॉंध कर दूर किया जा सकता है ।

11.8 विकरों का चिकित्सा में उपयोग (Enzyme in Medical Diagnosis) :

मनुष्यों में ज्यादातर बीमारियों का कारण किसी भी उपापचय तंत्र में विशिष्ट जैव अणुओं की कमी या उसमें विकृति के कारण होती है । इन विकृति को सामान्यत: उपापचय की बीमारी अथवा उपापचय संबंधी रोग (disease of metabolism) कहते हैं । यह उपापचय बीमारी मुख्यत: कुछ विकरों की अनुपस्थिति (absence) या कमी अथवा प्रोटीन की संरचना में परिवर्तन के कारण होती है ।

चिकित्सा में निम्न विभिन्न विकरों का उपयोग विभिन्न बीमारियों के निदानार्थ औजार (diagnostic tool) की तरह किया जाता है ।

लेक्टेट डिहाइड्रोजिनेज (Lactate dehydrogenase LDH)

एल.डी.एच. का उपयोग विभिन्न घातक (serious) बीमारियों का पता लगाने के लिये किया जाता है । LDH सामान्यत: मानव शरीर की समस्त कोशिकाओं में पाया जाता है और मुख्यत: पाँच प्रकार के आइसोएन्जाइम का समूह है । वर्तमान में LDH आइसोएन्जाइम को हृदय माँसपेशियों के रोग विज्ञान (Cardiac muscle pathology) के सूचकाँक (index) की तरह किया जाता है । नोरा (1969) ने देखा कि हृदय प्रत्यारोपण (transplant) ट्रासप्लांट के प्रथम महीने में सीरम LDH-1 का स्तर काफी बढ़ जाता है इसके अलावा LDH आइसोएन्जाइम का उपयोग एक्यूट मायोकाडियल इनफारक्शन (acute myocardial in farction) बीमारी से पीड़ितों में भी किया जाता है । इसमें रोगी के सीरम LDH आइसोएन्जाइम के संरचना में विभिन्नता पाई जाती है जो कि रोगी की रोग अवस्था (pathological condition) पर निर्भर करती है ।

इसके अलावा मैलिग्नेन्ट ट्यूमर (malignant tumor) में LDH-3, LDH-4 तथा LDH-5 आइसोएन्जाइम पाये जाते हैं । इन आइसोएन्जाइम की उपस्थिति सभी ट्यूमर (गाँठ) में वांछित है चाहे वे किसी भी ऊतक से उत्पन्न हो । केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र के मेलीगनेन्ट ट्यूमर में LDH-5 आइसोएन्जाइम की बढ़ी हुई मात्रा पायी जाती है ।

इसके अलावा LDH-5 कम या अधिक मात्रा में पलिया से ग्रस्त व्यक्तियों में पाया जाता है । इसके विपरित ड्चन मस्कूलर डिस्ट्रोफी (Duchenne muscular dystrophy) से ग्रसित महिला रोगियों में LDH-5 का स्तर वांछनीय रूप से कम पाया जाता है ।

तंत्रिका तंत्र (nervous system) की बीमारियों से ग्रसित रोगी में LDH-2 तथा LDH-3 का स्तर ज्यादा पाया जाता है । मनुष्य में गर्भावस्था में ह्यूमन प्लेसेन्टल एक्सट्रेक्ट (Human Placental extract) में LDH-3 तथा LDH-5 का उच्च स्तर पाया जाता है ।

मेलेट डिहाइड्रोजिनेज (Malate dehydrogenase MDH)

उच्चतर MDH सीरम का स्तर उन रोगियों में पाया जाता है जो यकृत तथा मायोकार्डियल सम्बन्धी रोग से ग्रसित होते हैं । मनुष्यों में एपिर्डेमोइड ट्यूमर (epidermoid tumours) से ग्रसित व्यक्तियों में माइट्रोकान्ड्रियल MDH (mitochondrial MDH) का उच्च स्तर पाया जाता है ।

फ्रक्टोज बाइफास्फेटेज (Fructose biphosphatase)

फ्रक्टोज बाइफास्फेटेज एन्जाइम का मुख्य कार्य ग्लूकोनियोजनिक पथरेखा (gluconeogenic pathway) में होता है । इसकी सक्रियता डायबिटीज/मधुमेह से ग्रसित व्यक्तियों के यकृत में अधिक हो जाती है । इन रोगियों में ग्लूकोनियोजनिक विकरों की सक्रियता ग्लूकोलाइटिक विकरों (glycolytic enzyme) की तुलना में अधिक हो जाती है । इसके विपरीत यकृत के ट्यूमर से ग्रसित व्यक्तियों में भी इस एन्जाइम की मात्रा कम हो जाती है ।

एसिड तथा एल्केलाइन फास्फेटेज (Acid and Alkaline Phosphatases)

एक सामान्य व्यक्ति में एसिड फास्फेटेज के इलेक्ट्रोफोरेसिस करने पर तीन जोन्स (three zones) दिखाई देते हैं, वहीं प्रोस्टेट कैंसर (prostatic carcinoma) तथा गोशर रोग (Gaucher's disease) में क्रमश: चार तथा पाँच जोन्स (zones) दृष्टिगत होते हैं । अम्लीय फास्फेटेज (acid phosphatase) सामान्यत: यकृत, लाल रक्त कणिका, बिम्बाणु तथा हड्डी में पाया जाता है । ये सामान्यत: वही अभिक्रिया उत्प्रेरक करते हैं जो क्षारीय फास्फेटेज करता है किन्तु ये अभिक्रिया को अम्लीय pH पर उत्प्रेरक करते हैं । क्षारीय फास्फेटेज मुख्यत: वे आइसोएन्जाइम है जो कार्बनिक फास्फेटेज का क्षारीय pH पर हाइड्रोलिसिस को उत्प्रेरक करते हैं । यह मुख्यत: हड्डी, यकृत, वृक्क, आहारनलिका की दीवार, मैमेरी ग्रंथि तथा प्लेसेन्टा में पाये जाते हैं । क्षारीय pH (8.6) पर इलेक्ट्रोफोरेसिस तथा एक विशिष्ट प्रकार के रंजक (कैलशियम α-नेफ्थाइल फॉस्फेट + डाइएजोनियम सॉल्ट) के द्वारा इनको पृथक किया जा सकता है । एक उच्च सीरम ऐल्केलाइन फास्फेटज का स्तर यकृत सम्बन्धी रोग में देखा जा सकता है । इसके अलावा नेफ्रोटिक सिड्रोम (Nephrotic syndrome) से ग्रसित व्यक्ति में क्षारीय फास्फेटेज की

असामान्य उपस्थिति दृष्टिगोचर होती है तथा इसका उच्चतम स्तर तीव्र नलिकाकार ऊतकक्षय (acute tubular necrosis) से पीड़ित व्यक्ति में दिखाई देता है ।

ग्लूकोज-6-फास्फेट डिहाइड्रोजिनेज (Glucose-6-Phosphatase Dehydrogenase)

यह एन्जाइम एक लिंग सहलग्न विकर है (sex linked) जिसकी दो वेरियेन्ट (variant forms) होती है तथा इसका मुख्य स्थान लाल रक्त कणिका के उपापचय (R.B.C. metabolism) में होता है । विश्व में करीब 100 मिलीयन व्यक्तियों में यह विकर सामान्यत: अनुपस्थित होता है तथा लाल रक्त कणिका की जीविता (longevity) उस में उपस्थित G6-PDH पर निर्भर करती है । सामान्यत: यह उन व्यक्तियों में अनुपस्थित होती हे जो मलेरिया ग्रसित स्थानों पर लम्बे समय से रहते है । यह लिंगसहलग्न विकर सामान्यत: माता से उसके नर शिशु में स्थानान्तरित होती है । यह देखा गया है कि इस विकर की कमी व्यक्ति को मलेरिया रोग से बचाव करती है तथा यही कारण है कि एक व्यक्ति सिकल सेल एनिमीया के जीन पाये जाते है वह व्यक्ति (एक सामान्य व्यक्ति की तुलना में) मलेरिया के प्रति ज्यादा प्रतिरोधी (resist) होता है ।

एस्पार्टेट ट्राँसएमीनेज (Aspartate Transaminase AST)

पूर्व में यह विकर ग्लूटामेट आक्सोलोएसिटेट ट्रांसएमीनेज के नाम से जाना जाता था । यह विकर सम्पूर्ण शरीर में पाया जाता है तथा निम्न अभिक्रिया मैं उत्प्रेरक का कार्य करता है

एस्पार्टेट + 2-आक्सोग्लूटारेट $\rightleftharpoons$ आक्सेलोएसिटेट + ग्लूटामेट

इस विकर का सामान्य से 10-100 गुना उच्च स्तर हृदय कोशिकाओं तथा यकृत कोशिकाओं की तीव्र क्षति को इंगित करता है ।

एलेनिन ट्रांसएमिनेज (ALT)

इस विकर को पहले ग्लूटामेट पायरूवेट ट्रासएमिनेज कहा जाता था तथा यह निम्न अभिक्रिया में उत्प्रेरक का कार्य करता है -

एलेनिन + 2-आक्सीग्लूटारेट $\rightleftharpoons$ पाइरूवेट + ग्लूटामेट

इस विकर की उच्च सांद्रता यकृत कोशिकाओं में पायी जाती है जो कि वाइरल हिपेटाइटिस या टाक्सिक यकृत नेक्रोसिस (Toxic liver necrosis) को इंगित करती है ।

क्रियेटिन काइनेज [Creatine Kinase (CK)]

इसको क्रियेटिन फास्फोकाइनेज (creatine phosphokinase) भी कहते हैं । यह सामान्यत: निम्न अभिक्रिया को उत्प्रेरक करता है -

क्रियेटिन + ए.टी.पी. $\rightleftharpoons$ फास्फोक्रियेटिन + ए.डी.पी

यह विकर मुख्य रूप से हृदय तथा अस्थि तथा मस्तिष्क की मांसपेशियों में पाया जाता है । यह एक डाइमर है जो कि दो तरह की पॉलीपेप्टाइड श्रृंखला (B या M) का बना होता है । इस प्रकार इसके तीन आइसोएन्जाइम पाये जाते हैं BB मस्तिष्क में, MB हृदय माँसपेशियों में तथा अस्थि की माँसपेशियों में पाया जाता है । क्रियेटिन काइनेज की MM अवस्था (form) अस्थि माँसपेशियों की कोशिकाओं की अत्याधिक क्षतिग्रस्त अवस्था में पायी जाती है ।

अन्य विकर (Other Enzymes)

विभिन्न पाचक विकर जैसे कि ट्रिपसिन, ट्राइऐसाइलग्लिसरोल लाइपेज तथा α-एमाइलेज का उत्पादन पेन्क्रियास में होता है । किन्तु प्लाज्मा में इनकी सामान्य से अधिक मात्रा कुछ विशिष्ट बीमारी जैसे कि एक्यूट पेक्यिाटाइटिस (acute pancreatitis) को इंगित करती है ।

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि विभिन्न रोगों में विशेष विकर (enzyme) की उपस्थिति का उपयोग इन विशेष बीमारियों को पहचानने के लिया किया जा सकता है तथा किया जाता है । इसके अलावा विकर चिकित्सा (enzyme therapy) का उपयोग भी वर्तमान में विभिन्न रोगों जैसे कि कैंसर, रक्त के थक्कीकरण (blood clothing), नवजात शिशु में पीलिया आदि रोगों में किया जा सकता है । विकर की जोड़ तोड़ (enzyme manipulations) वास्तव में वह प्रक्रिया है जिसमें किसी विकर की अनुपस्थिति (absence), कमी (deficiency) या विकृति (defect) जो की गंभीर बीमारी का कारण होती है उसे किसी विशेष विकर की सहायता द्वारा दूर करना । इसे ही विकर चिकित्सा (enzyme therapy) कहते हैं ।

हम यह जानते हैं कि विभिन्न विकर किसी विशिष्ट pH तथा तापमान पर ही विशेष प्रभाव छोड़ते है तथा इनके अणु का आकार सामान्यत: बड़ा होता है अत: विभिन्न रोगों में इनका बाह्य उपयोग (exogenous administration) ही प्रभावी होता है तथा यह विकर सिर्फ स्थानीय चिकित्सीय (Local therapeutic) इलाज में ही कारगर सिद्ध हुए है ।

विकर चिकित्सा का उपयोग विभिन्न रोगों के लिये किया जाता है उदाहरणत: (a) कैंसर एक सामान्य कोशिका में विकर एस्पारर्जिन सिन्थेटेज (asparagine synthetase) पर्याप्त मात्रा में पाया जाता है जो एस्पार्जिन नामक अमीनो अम्ल बनाता है । वहीं ट्यूमर कोशिका इस एस्पार्जिन को बनाने में असमर्थ होती है तथा इसकी पूर्ति वह भोजन (diet) से करती है । एन्जाइम चिकित्सा में एस्पारजिनेज (asparaginase) विकर ट्यूमर कोशिका के परिवहन तंत्र में एस्पारर्जिन के स्तर को घटा देता है जो की कैन्सर कोशिका की वृद्धि के लिये आवश्यक होती है इसके फलस्वरूप कैंसर कोशिका की वृद्धि रूक जाती है ।

यह देखा जा चुका है कि ग्लूटेमिनेज तथा एस्पारजिनेज विकर में कैंसररोधी (antitumor) गुण पाये जाते हैं तथा ये मनुष्यों तथा जानवरों में ट्यूमर कोशिका की वृद्धि को रोकते हैं ।

रक्त थक्कीकरण (Blood Clotting)

रक्त के थक्कीकरण के लिये कुछ विशिष ग्लाइकोप्रोटीन की जरूरत होती है । सामान्यत: इन ग्लाइकोप्रोटीन की कमी व्यक्तियों में आनुवांशिकी (genetic) अथवा उपार्जित (acquired) कारणों से होती है । इस विकृति (disorder) में रक्त में फाइब्रिनोलाइटिक तंत्र (Fibrinolytic system) उत्तेजित हो जाता है जिसके फलस्वरूप हीमोस्टेरिक प्लग (haemostatic plug) विलयित (dissolute) हो जाता है । हीमोफीलिया A, हीमोफीलिया B तथा वीन विलब्रेण्ड कारक (Won Willbrand's Factor) इस श्रेणी की विकृतियां है । इनका मुख्य कारण कारक VIII, IX तथा वॉन विलब्रेण्ड कारक के कुछ भाग का अनुपस्थित होना है ।

इस प्रक्रिया में विकर सट्रेप्टोकाइनेस प्लाज्मीनोजन (plasminogen) के साथ जुड़कर उसे प्लाज्मिड के रुप में सक्रिय (activate) कर देता है । इसी प्रकार एक अन्य विकर यूरोकाइनेज

(urokinase) सीधे ही प्लाज्मिनोजन को cleave कर देता है । ये दोनों ही प्रकार के विकर बहुत से प्रोटीन्स (fibrin सहित) को जल अपघटित कर देता है ।

नवजात शिशु पीलिया (Jaundice)

ज्यादातर नवजात शिशुओं में बीलिरूबीन (bilirubin) कोशिका तथा माइटोकोन्ड्रियल झिल्ली के साथ जुड़ कर उन कोशिका के मौत का कारण होती है । जब यह बीलिरूबिन संग्रहण (accumulation) 20% या अधिक हो जाता है तब पीलिया का कारण बनता है । इसकी अधिकता मानसिक अपंगता (retardation) सेरीब्रल पॉलसी (cerebral palsy), बहरापन (deafness) या कभी-कभी मौत का कारण होती है । इस बीमारी का निवारण या तो शिशु को नीले प्रकाश में रखकर दूर किया जा सकता है अथवा नवजात शिशु के रक्त को बीलिरूबिन रहित व्यस्क व्यक्ति के रक्त से आधान (transfusion) द्वारा दूर किया जा सकता है । किन्तु इस तकनीक के परिणामस्वरूप अन्य पार्श्व प्रभाव (side effects) जैसे कि हाइपोग्लाइसिमीया (Hypoglycemia), हाइपोकैलसीमिया (hypocalcemia) आदि हो जाते हैं ।

वर्तमान में एक छोटा रक्त फिल्टर उपयोग में लाया जाता है जिसमें एक निश्चलीकृत (immobilized) बीलिरूबिन ऑक्सीडेज विकर पाया जाता है जो रक्त सीरम में से बीलिरूबिन की सांद्रता को कम कर देता है जो कि करीब 90% तक बीलिरूबिन मात्रा को अपघटित (degrade) कर देता है ।

4. अविषालुता (Toxicity)

हम यह जानते है कि विष, दवाईयाँ तथा विषज (toxins) जैसे कि बारबीट्यूरेट (barbiturates), सेलिसीलेट, कार्बन टेट्राक्लोराइड, लीथियम, इथाइलिन ग्लाइकॉल, ज्यादातर एण्टीबायोटिक्स, मीथेनॉल, ब्रोमाइड, यूरिक एसिड आदि शरीर के लिये घातक (toxic) होते हैं । इनमें से ज्यादातर भेषज, ऊतक तथा प्लाज्मा के प्रोटीन के साथ जुड़ जाते हैं । इन के हानिकारक प्रभाव को नष्ट करने के लिये विभिन्न प्रकार के विकरों का उपयोग किया जाता है क्योंकि इन विकरों की इन ऊतकों तथा प्लाज्मा प्रोटीन्स के लिये अत्याधिक बंधुता (affinity) होती है तथा ये इन विष तथा विषजों से इन प्रोटीन्स से जुड़ने के लिये प्रतिस्पर्धा करते हैं । यूरोप में विकर यूरिनेज का उपयोग ल्यूकेमिया से ग्रसित रोगी में उच्च स्तर के यूरिक अम्ल को कम करने के लिये किया जाता है । कुछ विशिष्ट प्रकार के विकर मशरूम कीटों तथा सर्प में पाये जाने वाले विशेष पेप्टाइड तथा प्रोटीन टाक्सिन्स को अपघटित करने में समर्थ होते हैं ।

वृक्क प्रत्यारोपण (transplantation) के दौरान यूरिपेज तथा केटेलेज तथा अमोनिया अवशोषी का अत्याधिक उपयोग किया जाता है । इसके अलावा द्रव्य झिल्ली संपुटित विकर का उपयोग रक्त में से विषज (toxins) को हटाने के लिये किया जाता है ।

उपरोक्त सभी रोगों में विकरों का बाह्य रूप से (exogenous administrator) उपयोग की अपनी सीमितताएँ (limitations) है क्योंकि जरूरत से ज्यादा उपयोग व्यक्ति में हाइपर सेन्सिटिविटी का कारण होता है तथा इस को दूर करने के लिये एन्जाइम को कुछ वाहकों (carrier) के साथ बांध कर लक्ष्यक (targeted) स्थान पर उपयोग में लाया जाता है ।

कुछ विकरों में उनके जीनिय उत्परिवर्तन (mutation) के कारण वे अपने सामान्य कार्य करने में असमर्थ होते हैं जिसका प्रभाव हमें जन्मजातीय उपापचयी दोष के रूप में देखने को मिलता है (inborn error of metabolism) ये जन्मजातीय दोष बहुत कम होती है किन्तु कभी-कभी व्यक्तियों में मानसिक अविकसितता (mental retardation) तथा नवजात शिशु में मृत्यु का कारण भी होती है ।

प्री-नेटल डायग्नोसिस (Pre-natal diagnosis) में कुछ बीमारियों को गर्भावस्था में ही अमीनोटिक द्रव (ammiotic fluid) की कोशिकाओं का परीक्षण कर के पता लगाया जा सकता है । उदाहरणत: टे-सेच बीमारी (Tay-sachs disease) जो मुख्यत: β-N-एसीटाइल हेक्जोएमिनोडेज की कमी के कारण होती है ।

इसका दूसरा उदाहरण फीनाइलकीटीनयूरिया से ग्रसित रोगी में देखने को मिलता है जहाँ रोगी फीनाइलएलेनिन को टायरोसीन में परिवर्तित करने में असमर्थ होता है क्योंकि उसमें फीनाइलएलेनीन हाइड्रोक्सीलेज (phenylalanine hydroxylase) अपने कार्य करने में असमर्थ होता है ।

अन्त: में यह कहा जा सकता है कि वर्तमान में बहुत से विकरों का उपयोग मनुष्य में विभिन्न बीमारियों अथवा रोगों का पता लगाने तथा उसके निदान करने में किया जा सकता है । कुछ विकरों का उपयोग सीधे ही किया जा सकता है किन्तु कुछ विकरों के लिये और परीक्षण करने की आवश्यकता है ।

बोध प्रश्न

(1) विकर के निश्चलीकरण के लिए क्रॉस लिंकिग प्रक्रिया उपयोग में ली -

(a) क्युओजो तथा रिचर्ड (b) कॉशलैण्ड

(c) क्रेस्टफील्ड (d) कोई भी नहीं ।

(2) बाइफंक्शनल अभिकर्म है ।

(a)जिसमें एक फंक्शनल समूह है (b) दो फंक्शनल समूह है

(c) दो कार्बन अणु है (d) दो जल अणु है ।

(3) विकर को निश्चलीकृत करने की भौतिक अधिशोषण विधि दी -

(a) नेलसन तथा ग्रिफिन (b) नील तथा ग्रिफिथ

(c) कैम्पबैल तथा सहायक (d) उपरोक्त में से कोई नहीं ।

(4) विकर एमाइलेज का उद्योगों में उपयोग है -

(a) प्रोटीन बनाने में (b) वसा बनाने में

(c) शर्करा बनाने में (d) दही जमाने में ।

(5) माइक्रोएन्कैप्सूलेशन की शुरूआत किस वैज्ञानिक ने की?

.....

11.9 सारांश (Summary):

विभिन्न विकरों के औद्योगिक उत्पादन के लिये सूक्ष्मजीवों की अत्याधिक मात्रा की जरूरत होती है तथा यह प्रक्रिया सूक्ष्मजीवों को एक बड़े पात्र में पोषक माध्यम में उगाकर किया जा सकता है ।

विकर संश्लेषण से उत्पन्न विकर अस्थायी होते हैं तथा सूक्ष्मजीवों द्वारा उत्पन्न विकर अत्याधिक सूक्ष्म मात्रा में उत्पन्न होते हैं तथा इनको लम्बे समय तक संग्रहित नहीं रखा जा सकता अत: इनका संग्रहण करने के लिये विकर को रासायनिक रुप से रूपान्तरित किया जाता है । विकर रूपान्तरण के लिये विकर के सक्रिय क्षेत्र पर उपस्थित अमीनो अम्ल पार्श्व श्रृंखला को एल्कलीकरण, प्रोटीऐज विकर द्वारा, स्थल निर्देशित उत्परिवर्तक तथा pH में परिवर्तन द्वारा परिवर्तित कर दिया जाता है । ये रूपान्तरित विकर किसी भी अभिक्रिया के समाप्त होने पर पुन: प्राप्त किया जा सकता है । इसी प्रकार (विभिन्न उद्योगों में) निश्चलीकृत विकर का उपयोग भी किया जाता है । निश्चलीकरण प्रक्रिया में सामान्य विकर को किसी अविलेय वाहक के साथ जोड़ दिया जाता है जिसमें विकर अपनी उत्प्रेरक क्षमता नहीं खोता । विकर को निश्चलीकृत करने के विभिन्न तरीके हैं जैसे भौतिक अधिशोषण, आयनिक बंधता, सहसंयोजक बंधता, संपाशन तथा सूक्ष्म संपूटन आदि । सभी निश्चलीकरण तरीके का उपयोग विकर की रासायनिक प्रकृति को देखकर किया जाता है । इन प्रक्रिया के द्वारा बना निश्चलीकृत विकर सामान्यत: अधिक स्थायी तथा तापमान परिवर्तन के प्रति कम संवेदी होते हैं ।

इस प्रक्रियाओं के द्वारा बने निश्चलीकृत विकर का उपयोग बायोसेन्सर, किण्वक प्रोद्योगिकी तथा चिकित्साशास्त्र में किया जाता है । वर्तमान में विकर का सर्वाधिक उपयोग उद्योगों, विश्लेषणात्मक तथा चिकित्सा विज्ञान में है ।

मुख्यत: उद्योगों में काम में आने वाले प्रमुख विकर, एमाइलेज, प्रोटीऐज, केटेलेज, आइसोमरेज तथा पैनिसिलिन एमाइलेज है । इन विकरों का उपयोग मुख्यत: जैविक अपमार्जक, बेकिंग उद्योग, नवजात के भोजन, मद्य उद्योग, डेयरी उद्योग, स्टार्च उद्योग, रबर उद्योग तथा कागज उद्योग में है ।

इसके अतिरिक्त विकर का विश्लेषणात्मक उद्योग में विशिष्ट स्थान है । इस प्रक्रिया का उपयोग किसी अभिक्रिया में आधार की सांद्रता, कोएन्जाइम, सक्रियक तथा संक्रमक की सांद्रता का पता लगाने के लिये किया जाता है ।

मनुष्यों में ज्यादातर रोग का कारण किसी भी उपापचय तंत्र में विशिष्ट जैव अणुओं की कमी या उसमें विकृति के कारण होती है । यह सभी विकृतियाँ सामान्यत: उपापचय की बीमारी अथवा उपापचयी संबंधी रोग कहलाती है । चिकित्सा में विभिन्न विकरों का उपयोग विभिन्न बीमारियों के निदानार्थ औजार की तरह किया अथवा परीक्षण के लिये किया जाता है जैसे कि लेक्टेट डिहाइड्रोजिनेज, मेलेट डिहाइड्रोजिनेज, फ्रक्टोज बाइफास्फेट, एसिड तथा एल्केलाइन फास्फेटेज तथा अन्य विकर आदि ।

इसके अलावा विकर चिकित्सा का उपयोग विभिन्न रोगों के निदान के लिये किया जाता है जैसे कैंसर, रक्त के थक्कीकरण नवजात शिशुओं में पीलिया तथा आविषालुता आदि । किन्तु इन सभी उद्योगों में विकर के उपयोग की अपनी सीमितताएँ है जिसके लिये भविष्य में अधिक खोज की आवश्यकता है ।

11.10 बोध प्रश्नों के उत्तर:

(1) (a)

(2) (b)

(3) (a)

(4) (c)

(5) चेंग (1964)

11.11 अभ्यासार्थ प्रश्न (Exercise Questions):

1. निश्चलीकृत विकर क्या होते हैं? विकर को निश्चलीकृत करने की विधियों का विस्तार से विवरण दीजिए ।
2. विकर का उद्योगों में उपयोग पर निबंध लिखिये ।
3. विकर का चिकित्सीय उपयोग का विस्तार से विवरण करो ।

11.12 शब्दावली (Glossary)

1. (किण्वक) फैमेन्टर
2. रासायनिक रूपान्तरण
3. निश्चलीकरण
4. (अधिशोषण) एडर्सोपेशन
5. (संपूटन) एन्कैप्सूलेशन
6. (संपाशन) एन्ट्रेपमेन्ट
7. कवक
8. निजर्मीकरण
9. रोग
10. विषज (Toxins)

11.13 सन्दर्भ ग्रन्थ (Reference Books):

(i) पाल्मर, एन्जाइम्स - बायोकैमेस्ट्री, बायोटेक्नोलॉजी, क्लिनिकल कैमिस्ट्री, ईस्ट वेस्ट प्रेस प्रा. लि., नई दिल्ली ।

(ii) पुरोहित, काकरानी एवं सलूजा, फार्मेस्यूटिकल बायोटेक्नोलॉजी, स्टूडेन्ट एडिशन, जोधपुर ।

(iii) त्रिपाठी, एन्जाइम बायोटेक्नोलॉजी, ब्लैकवेल साइन्स, नई दिल्ली ।

(iv) सिंह एवं घोष, इण्डस्ट्रियल बायोटेक्नोलोजी, ग्लोबल विजन पब्लि. हाउस, नई दिल्ली ।

(v) केसिडा, इण्डस्ट्रियल माइक्रोबायोलोजी, न्यू एज इन्टरनेशनल (प्रा.) लि. पब्लिशर्स, नई दिल्ली ।

इकाई 12

औद्योगिक उत्पाद-II

(Industrial Products-II)

इकाई की रूपरेखा

12.0 उद्देश्य

12.1 प्रस्तावना

12.2 L-एस्कोर्बिक अम्ल

12.3 अमीनो अम्ल

12.4 जीवाणुओं द्वारा प्रतिजैविक निर्माण

12.5 बहुलक

12.6 रेस्ट्रिक्शन एण्डोन्यूक्लिएज

12.7 इंडिगो

12.8 सारांश

12.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

12.10 अभ्यासार्थ प्रश्न

12.11 शब्दावली

12.12 संदर्भ ग्रन्थ

12.0 उद्देश्य (Objective):

इस इकाई में हमने औद्योगिक रूप से महत्वपूर्ण कई छोटे जैव अणुओं के वाणिज्यिक निर्माण को दर्शाया है । इस पाठ को पढ़ने के बाद आप L-एस्कोर्बिक अम्ल, अमीनो अम्ल, प्रतिजैविक निर्माण, बहुलक, रेस्ट्रिक्शन-एण्डोन्यूक्लिएज तथा इंडिगो जैसे वाणिज्यिक महत्त्व के उत्पादों के सूक्ष्मजैविय निर्माण के बारे में जान पाएंगे ।

12.1 प्रस्तावना (Introduction) :

लम्बे समय से जैव प्रौद्योगिकी मानव के लिए हितकारी सिद्ध होती आयी है । जीवाणु प्रभेदों की किस्मों को उन्नत बनाने व प्रतिजैविकों समेत अन्य लाभदायक पदार्थों का निर्माण अनेकों वर्षों से इस प्रौद्योगिकी के माध्यम से किया जा रहा है । यह तथ्य अति महत्त्वपूर्ण है कि आज वैज्ञानिक इन तकनीकों का प्रयोग करके टीकों (vaccines), प्रतिजैविकों (antibiotics), विभिन्न अम्लों, एन्जाइम्स (enzymes) आदि तत्त्वों के बड़ी मात्रा में औद्योगिक उत्पादन से जुड़े हुए हैं । इन उत्पादों का व्यापारिक महत्व सीधा मानव कल्याण से जुड़ा है । अतः सूक्ष्मजीवों के रसायन उद्योग में महत्व को नकारा नहीं जा सकता ।

12.2 L-एस्कोर्बिक अम्ल (L-Ascorbic Acid) :

कुछ समय पूर्व तक विटामिनों का वाणिज्यिक उत्पादन पादपों एवं जन्तु ऊतकों के द्वारा होता था । कुछ सूक्ष्मजीवों जैसे बेकर यीस्ट (Baker yeast) को इन विटामिनों का प्रचुर स्त्रोत माना जाता रहा है । वर्तमान में विटामिनों का वाणिज्यिक उत्पादन इन सूक्ष्मजीवों के द्वारा किया जाता है । विटामिन B1 (थायमिन), विटामिन B2 (राइबोफ्लेविन), पाइरोडोक्सीन (pyrodoxin), L-एस्कोर्बिक अम्ल (L-ascorbic acid) इत्यादि वाणिज्यिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण विटामिन सूक्ष्मजीवों के द्वारा उत्पादित किए जाते हैं । इनमें से कुछ प्रत्यक्ष-किण्वन के द्वारा तथा बाकी बायोरूपान्तरण विधि के द्वारा उत्पादित किए जाते हैं । कभी-कभी सयुंक्त रूप से रासायनिक एवं सूक्ष्मजैवीय प्रक्रियाओं का उपयोग कर विटामिनों का उत्पादन किया जाता है ।

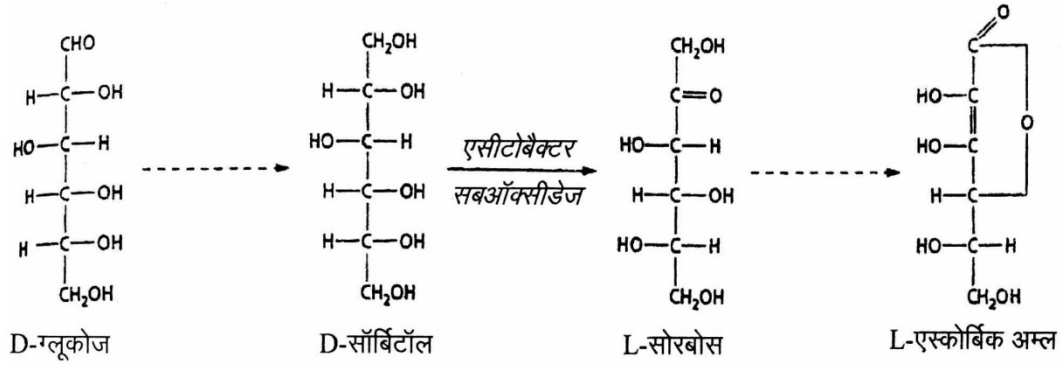

चित्र 12.1 : L-सोरबिट्रोल का L-सोरबोस में सूक्ष्मजैवीय रूपान्तरण ।

L-एस्कोर्बिक अम्ल ऐसा ही एक वाणिज्यिक तौर पर महत्त्वपूर्ण विटामिन है जिसका वार्षिक उत्पादन आज 40,000 टन से ज्यादा है । एस्कोर्बिक अम्ल बनाने के लिए संयुक्त रूप से रासायनिक एवं सूक्ष्मजैवीय प्रक्रियाओं (बायोरूपान्तरण) को उपयोग में लाया जाता है । रासायनिक प्रक्रिया के तहत D-ग्लूकोज (D-Glucose) का उत्प्रेरित अपचयन कर उसे D-सोरबिट्रोल, जो कि एक पॉलीहाइड्रिक ऐल्कोहल है, में बदला जाता है । सूक्ष्मजैवीय रूपान्तरण में सोरबिट्रोल को L-सोरबोस में बदला जाता है । यह रूपान्तरण सामान्यत: एसिटोबेक्टर सबआक्सिडेन्स (Acetobacter suboxydans) या एसिटोबैक्टर जाइलिन्स (Acetobacter xylinum) की मदद से किया जाता है (चित्र 12.1) । इस रूपान्तरण प्रक्रिया में प्रयुक्त होने वाले माध्यम में आवश्यक तौर पर ग्लूकोज, यीस्ट निचोड़ (yeast extract), मक्का का लिकर (Corn liquor), 15-30% (w/v) - डी. सोरबिटोल (D-sorbitol) तथा सामान्य से कुछ अधिक कैल्सियम कार्बोनेट (calcium carbonate) प्रयोग में लिए जाते हैं । इस बायोरूपान्तरण की प्रक्रिया को सामान्यत: 30% तापमान पर सघन वायु-मिश्रण के साथ सम्पन्न किया जाता है । यह प्रक्रिया इतनी तीव्र है कि 1-2 दिन में ही 90-95% तक रूपान्तरण प्राप्त हो सकता है । उचित परिपाक-काल के पश्चात् L-सोरबोस को संवर्धन माध्यम में से फिल्टर कर, निस्पंद को सांद्रित कर सिरप का निर्माण किया जाता है । तत्पश्चात् इस सिरप को ठंडा कर किस्टलीकृत किया जाता है । इस L-सोरबोस को रासायनिक विधियों द्वारा L-एस्कॉर्बिक अम्ल में परिवर्तित किया

जाता है । इस प्रक्रिया में मध्य अणु के तौर पर 2-किटो-L-ग्लुकोनिक अम्ल का निर्माण होता है । 'वर्तमान मे पुर्नसंयुक्त सूक्ष्मजीवों द्वारा बहुत आसानी से एस्कॉर्बिक अम्ल का निर्माण किया जाता है । वैज्ञानिकों द्वारा कॉरिनेबैक्टीरियम तथा इरवानिय जाति के सूक्ष्मजीवों में 2,5 डाइकिटो-Dग्लुकोनिक अम्ल रिडक्टेज उत्पन्न करने वाले जीन को संसर्गित किया गया है । इस कारण यह प्रक्रिया सरल हो मात्र एक बायोरूपान्तरण चरण तक ही सीमित हो गई है । पुर्नसंयुक्त इरवानिय विभेद, ग्लूकोज का 2 किटो-L ग्लुकोनिक अम्ल का निर्माण करते है जिसे बाद में आसानी से एक रासायनिक क्रिया द्वारा एरकोर्बिक अम्ल में परिवर्तित कर दिया जाता है ।

12.3 अमीनो अम्ल (Amino Acid) :

ग्लूटैमिक अम्ल के प्रयोग द्वारा खाना के स्वाद को बढ़ाया जा सकता है जापान में 1908 में इस खोज के पश्चात् ही अमीनो अम्लों का औद्योगिक उत्पादन शुरू हुआ तथा यह वाणिज्यिक उत्पादन काफी हद तक किण्वन प्रक्रिया द्वारा प्राप्त किया जाता था । वर्तमान में कई अमीनों अम्लों का औद्योगिक उत्पादन अति उत्पादन, करने वाले सूक्ष्मजीवों के किण्वन या सूक्ष्मजैविय बायोरूपान्तरण द्वारा किया जाता है । अमीनो अम्ल ज्यादातर खाद्य या जन्तु भोजन में संपूरक (animal feed supplement) के तौर पर प्रयुक्त होते हैं । कुछ अमीनो अम्ल औषध तथा प्रसाधन सामग्री में भी प्रयुक्त होते हैं ।

L-ग्लूटैमिक अम्ल

सभी अमीनों अम्लों में L-ग्लूटैमिक अम्ल का उत्पादन मात्रा के हिसाब से सबसे महत्त्वपूर्ण है । यह अमीनो अम्ल मोनो सोडियम L-ग्लूटैमेट (MSG), खाद्य पदार्थों को सूरूचिक बनाने में प्रयोग लिया जाता है । MSG प्राकृतिक रूप से कुछ खाद्य पदार्थों एवं समुद्री शैवालों में पाया जाता है । इस पदार्थ का सर्वप्रथम पृथक्करण लैमिनेरिया जैपोनिकम नामक समुद्री शैवाल से सन् 1908 किया गया था । सोया प्रोटीन तथा गेहूँ ग्लूटेन को प्रयोग कर उस समय जापान में L-ग्लूटेमिक अम्ल का व्यवसायिक उत्पादन आरम्भ किया गया । सन् 1960 के दशक के शुरू में L-ग्लूटेमिक अम्ल का उत्पादन पादपों की जगह किण्वन के द्वारा शुरू किया गया । वर्तमान में इस विधि द्वारा करीब 4,00,000 टन से ज्यादा L-ग्लूटेमिक अम्ल का निर्माण किया जा रहा है ।

ग्लूटैमिक अस्त के निर्माण में **आथ्रोबैक्टर**, **कोरिनेबैक्टिरियम**, **माइकोबैक्टीरियम** तथा **माइक्रोकोकस** समूह की कुछ जातियों विशेष रूप से महत्त्वपूर्ण है । ये सभी ग्राम-ग्राही तथा अगतिशील होते हैं तथा इनके संवर्धन के लिए बायोटिन की आवश्यकता होती है । इन सभी में ग्लूटामेट डिहाइड्रोजिनेज (glutamate dehydrogenase) की सक्रियता पाई जाती है ।

$$\text{आक्सो ग्लूटारिक अम्ल} + NH_4^+ + NAD(P)H + H^+ \xrightarrow{\text{Glutamate dehydrogenase}} \text{L-ग्लूटारिक अम्ल} + NAD\ (P) + + H_2O$$

ब्रिवेबैक्टिरियम तथा कोरिनेबैक्टिरियम की कुछ जातियां L-ग्लूटेमिक अम्ल के व्यवसायिक उत्पादन में काम आती है । इन दोनों वंश के जीवाणुओं की कई प्रजातियों के उत्पादन विभेदों (production strains) को उत्परिवर्तन तथा वरण प्रक्रिया (selection process) के द्वारा

विकसित किया गया है । जैव प्रौद्योगिकी की अन्य नवीनतम प्रक्रियाओं को उपयोग में लाकर भी कई उत्पादन विभेद तैयार किए गए है । इन सभी विभेदों में खास बात यह है कि ये L-ग्लूटेमिक अम्ल की उच्च साइटोप्लाज्मी सांद्रता (high cytoplasmic concentration) पर भी स्थायी दशा (steady state) बनाए रह सकते हैं ।

सामान्यत: L-ग्लूटेमिक अम्ल का किण्वन स्टील के विलोडक टैंक रिऐक्टर में किया जाता है । यह प्रक्रिया वायुवीय है तथा 30-37°C तापमान पर सम्पन्न होती है हालांकि यह तापमान प्रयुक्त होने वाले सूक्ष्मजीवों के विभेद पर निर्भर करता है । सामान्यत: pH 7-8 तक स्थिर रखा जाता है । कार्बन, नाइट्रोजन के स्त्रोत के अलावा संवर्धन माध्यम में अकार्बनिक तत्व जैसे मैग्नीशियम, फास्फेट, पोटाश तथा बायोटिन भी डाले जाते हैं । कार्बन स्त्रोत के तौर पर ग्लूकोज तथा सुक्रोस को वरीयता दी जाती है । नाइट्रोजन के लिए यूरिया या अमोनियम लवण को प्राथमिकता दी जाती है । L-ग्लूटेमिक अम्ल का क्रिस्टलीकरण pH को HCl की मदद से 3.2 करने के बाद किया जाता है तथा इस प्रक्रिया के बाद ही उत्पादित अम्ल को प्राप्त किया जाता है ।

L-लाइसीन (L-Lysine)

L-लाइसीन मानवों तथा जन्तुओं द्वारा संश्लेषित नहीं की जाती है अत: यह सारभूत अमीनों अम्ल की श्रेणी में आता है तथा वर्तमान में यह बहुत से खाद्य पदार्थो में संपूरक (supplement) के तौर पर काम आता है । आज विश्वभर में सालाना 3, 80,000 टन से ज्यादा L-लाइसीन की आवश्यकता है । व्यवसायिक तौर पर L-लाइसीन का उत्पादन कोरिनेबैक्टीरियम ग्लूटामिक्स (C. glutamicum) द्वारा किया जाता है ।

वाणिज्यिक रूप से L-लाइसीन का उत्पादन वायुवीय तौर से बैच-किण्वन प्रक्रिया रूप में होता है । इस प्रक्रिया में कार्बन स्त्रोत के रूप में केन मोलासिस को तथा सोयाबीन जलापघटनी (soy bean hydrolysate) को संपूरक के तौर पर काम लिया जाता है । तापमान प्राय: 28°C तथा pH 7.0 कायम रखने पर तीव्र गति से उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है । बायोटिन की सांद्रता 30 µg/lit से ऊपर बनाए रखना परम आवश्यक है क्योंकि यदि बायोटिन 30 µg/lit से कम है तो इस स्थिति में L-लाइसीन के स्थान पर L-ग्लूटामेट का संचयन होता है । किण्वन की यह प्रक्रिया करीब 60 घंटे तक, 40-50 g/lit. की दर L-लाइसीन का उत्पादन करने में सक्षम है ।

L-लाइसीन की माध्यम में से प्राप्ति आसानी से की जा सकती है । इसके लिए माध्यम को HCl की मदद से 2.0 pH तक अम्लीकृत किया जाता है । तत्पश्चात् L-लाइसीन को धनायन विनिमय (cation exchange) कालम द्वारा अमोनिया में अधिशोषित किया जाता है । इस अधिशोषण के पश्चात् L-लाइसीन को क्रिस्टलीकृत कर प्राप्त किया जाता है ।

12.4 जीवाणुओं द्वारा प्रतिजैविक निर्माण (Antibiotics Synthesis by Microbes):

सूक्ष्म/जैव वैज्ञानिकों ने एसे सघन उपाय विकसित किये है जिनके द्वारा मानव जाति को अधिकाधिक लाभ उपलब्ध हो सकें । इन सूक्ष्मजीवों की रसायन-उद्योग में महत्ता को नकारा

नहीं जा सकता है, क्योंकि इन जीवाणुओं द्वारा वर्तमान में विभिन्न औषधियाँ, किण्वक, टीके (vaccine) तथा अनेक प्रकार के महत्त्वपूर्ण रासायनिक यौगिकों का थोक में उत्पादन किया जाता है जिसका सीधा सम्बन्ध मानव-कल्याण से है । एन्टीबायोटिक्स अर्थात् प्रतिजैविकों का प्रयोग विभिन्न प्रकार के सूक्ष्मजैविकीय रोगों के उपचार में किया जाता है । एलक्जैनडर फ्लेमिंग (Alexender Fleming) ने सन् 1929 में सर्वप्रथम प्रतिजैविक गतिविधियों का पेनिसिलियम नोटेटम (Penicillin notatum) में अध्ययन किया । लगभग 50 वर्ष पूर्व पेनिसिलियम नोटेटम (Penicillium notatum) का व्यापारिक उत्पादन आरम्भ हुआ । प्रतिजैविकों का व्यापारिक उत्पादन आज औद्योगिक सूक्ष्मजैविकी का सबसे महत्वपूर्ण क्षेत्र है । सन् 1961 तक 513 प्रतिजैविक पहचाने गए थे तथा यह संख्या सन् 1985 में करीब 7650 तक पहुँच गई । वर्तमान में यह एक अरब डॉलर का उद्योग है तथा केवल अमेरिका में ही लगभग 20 लाख किलोग्राम एन्टीबायोटिक्स का प्रतिवर्ष उत्पादन होता है । एक अनुमान के तौर पर एक नई एन्टीबायोटिक को विकसित होने में करीब 8-10 वर्ष तथा $10,000,000-$20,000,000 पूँजी लगती है ।

एन्टीबायोटिक्स निर्माण में प्रयुक्त होने वाले सूक्ष्मजीव

एन्टीबायोटिक का निर्माण जीवाणुओं, एक्टीनोमाइसिटिस (actinomycetes) (तंतुमय जीवाणुओं का एक वंश) तथा कुछ कवकों द्वारा किया जाता है (सारणी 1) ।

कवकों में एस्पर्जिलेसी (Aspergillaceae) तथा मोनीलेसी (Moniliaceae) प्रतिजैविकों के निर्माण में महत्त्वपूर्ण है । व्यापारिक तौर पर केवल 10 कवकीय प्रतिजैविकों का निर्माण किया जाता है । इनमें भी पेनिसिलिन (Penicillin), सिफेलोस्पोरिन्स (Cephalosporins) का चिकित्सा क्षेत्र में विशेष महत्त्व है । जीवाणुओं के बहुत से वर्गिकीय समूह भी प्रतिजैविक निर्माण में महत्त्वपूर्ण स्थान रखते हैं ।

एक्टीनोमाइसिटिज, विशेषकर स्ट्रेप्टोमाइसिस (Streptomyces) वंश के जीवाणुओं का प्रतिजैविक निर्माण में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान है । बैसिलस (Bacillus) वंश के विशिष्ट उपभेदों द्वारा भी कई प्रतिजैविकों का उत्पादन किया जाता है जिनमें पेप्टाइड (peptide) प्रतिजैविक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है । अधिकांश प्रतिजैविक सूक्ष्मजीवों के द्वितीयक उपापचयी उत्पाद (secondary metabolites) होते हैं तथा विभिन्न रचित अंत-उत्पादों का एक बहुत सूक्ष्म अंश होते ।

सारणी 12.1 : सूक्ष्मजीवों द्वारा उत्पादित प्रतिजैविकों की संख्या

वर्गीकीय समूह (Taxonomic Groups)		प्रतिजैविकों की संख्या
1.	जीवाणु (एक्टीनोमाइसिटिज के अलावा)	950
2.	एक्टीनोमाइसिटिज द्वारा	4600
3.	कवकों द्वारा	1600

प्रतिजैविकों का वाणिज्यिक उत्पादन

करीब 100 बीटा-लैक्टम (β-lactum) प्रतिजैविकों, मुख्यत: पेनिसिलिन तथा सिफेलोस्पोरिन का मानव उपयोग के लिए वाणिज्यिक उत्पादन किया जाता है । विश्व में उत्पादित कुल प्रतिजैविकों के उत्पादन का करीब 50% इन दोनों प्रतिजैविकों से प्राप्त होता है ।

1950 के दशक में पेनिसिलिन का उत्पादन पी. नोटेटम द्वारा किया जाता था तथा यह उत्पादन करीब 1 mg प्रतिजैविक प्रतिलीटर संवर्धन माध्यम से कुछ ज्यादा होता था । मक्का के लिकर (liquor) को संवर्धन माध्यम में डालने से यह उत्पादन करीब 20-25 गुणा तक बढ़ जाता है । मक्का लिकर नाइट्रोजन का एक अच्छा स्त्रोत है । वर्तमान में यह उत्पादन पेनिसिलियम के विशिष्ट उत्परिवर्ती विभेदों द्वारा किया जाता है तथा इसी विधि से उत्पादित पेनिसिलिन का उत्पादन करीब 50,000 गुणा बढ़ा है (50 g/lit) । उन्नत विभेदों के प्रयोग तथा जीन-अभियांत्रिकी की विभिन्न तकनीकों द्वारा पेनिसिलिन उत्पादन अपने चरम स्तर तक पहुंचा है । इन दिनों पेनिसिलिन के एक अन्य उपभेद जैसे पी. कराइसोजिनम (P. crysogenum) द्वारा उत्पादन किया जाता है ।

पेनिसिलिन उत्पादन के लिए फेड-बेच (Fed-Batch) किण्वन काम में लिया जाता है । ये किण्वन 40,000-2,00,000 लीटर के किण्वन टंकी (fermentor vessels) में किए जाते हैं । कभी-कभी इस किण्वन हेतु एयरलिफ्ट प्रणाली काम में ली जाती है । इस पूरी क्रिया के दौरान ऑक्सीजन की सान्द्रता 25-60 mmol/लीटर बनाए रखना आवश्यक है । किण्वन की यह प्रक्रिया सामान्यत: 25-27°C तापमान तथा 6.5-7.7 pH पर सम्पन्न की जाती है । ये सभी विशिष्ट परिस्थितियां किण्वन के लिए प्रयुक्त होने वाले पी. कराइसोजिनम (P. chrysogenum) विभेद के अनुसार बदली जा सकती है ।

पेनिसिलीन उत्पादन के लिए अनेकों कार्बन स्त्रोतों को काम में लिया जा सकता है जैसे, ग्लूकोज, लैक्टोज, सुक्रोस, एथेनॉल आदि । मक्का लिकर का प्रयोग नाइट्रोजन स्त्रोत तथा अतिरिक्त पोषण स्त्रोत के तौर पर किया जाता है।

संरोप (inoculum) विकास के लिए हिम शुष्कित (lyophilized) बीजाणुओं को 5 * 10^3 बीजाणु प्रति मिलिलीटर सांद्रता में एक छोटे किण्वक में समारंभित (initiate) किया जाता है । संरोप विकास की प्रक्रिया 6-8 दिनों तक चलती है तथा एक बार संरोप विकसित होने के बाद इसकी उचित मात्रा को किण्वन हेतु प्रयोग में लाया जाता है । पेनिसिलीन किण्वन माध्यम में उत्सर्जित तथा पुन: प्राप्त की जाती है । पुन: प्राप्ति, कोशिका रहित माध्यम के विलायक निष्कर्षण विधि (solvent extraction method) द्वारा की जाती है । किण्वन के पश्चात् अधिकतम 90% प्रतिशत तक पुन: प्राप्ति हो पाती है ।

12.5 बहुलक (Biopolymers) :

वर्तमान दशक में पदार्थ विज्ञान में जैवप्रौद्योगिकी का सर्वाधिक योगदान पॉलीमर बनाने के क्षेत्र में हुआ है । इसका आरम्भ पालीमर बनाने में काम आने वाले जैवउत्प्रेरकों (enzymes) के निर्माण से शुरू हुआ । इन जैवउत्प्रेरकों के निर्माण हेतु वैज्ञानिकों द्वारा ऐसे सूक्ष्मजीवों का सृजन किया जो इन उत्प्रेरकों का वाणिज्यिक उत्पादन करने में सक्षम हो । ये जैव-उत्प्रेरक पॉलीमर श्रृंखला की मूल इकाई अर्थात् 'मोनोमर' के संश्लेषण के दौरान होने वाले रासायनिक परिवर्तनों में उत्प्रेरक की भूमिका निभा सकते हैं ।

डेनिस जी.एच. बालाई तथा उनके सहयोगियों ने स्यूडोमोनास पुटिडा नामक बैक्टीरिया का एक ऐसा विभेद विकसित किया है जो बेन्जीन का अत्यन्त तीव्र गति से ऑक्सीकरण कर पालीफिनाइलीन (polyphenylamine) नामक पालीमर में परिवर्तित करता है । इस जीवाणु का एक अन्य विभेद बेन्जीन को डी.एच.सी.डी. नामक मध्यवर्ती पदार्थ में परिवर्तित करता है । यह डी.एच.सी.डी. बहुलीकृत होकर पॉलीफीनाइलीन नामक पॉलीमर बनाता है ।

मोनोमर तथा पॉलीमर निर्माण में प्रयुक्त होने वाले मध्यतर्वी अणुओं का संश्लेषण कर सकने वाले जीवाणुओं की खोज के बाद जैव वैज्ञानिकों ने जैव प्रौद्योगिकी की मदद से ऐसे जीवाणुओं का निर्माण भी कर लिया है जो संपूर्ण पॉलीमर श्रृंखला का निर्माण जैव संश्लेषण द्वारा करने में समर्थ है । यूट्रोफस, एल्कलिजिन्स, जूगलोइया रेमीजेरा तथा एजोटोबेक्टर बाइजेरीन्की नामक बैक्टीरिया पी.एच.बी. नामक एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण पॉलीईस्टर का संश्लेषण करते हैं । ये सभी जीवाणु कार्बोनिक स्त्रोत को अत्यन्त सक्रिय एसिटाइल CoA में परिवर्तित कर देते हैं । एसिटाईल CoA ऑक्सीजन तथा नाइट्रोजन की उपस्थिति में ट्राइकार्बोआक्सैलिक अम्ल (TCA) बनाने की प्रक्रिया में महत्वपूर्ण योगदान देता है । इस पूरी प्रक्रिया में एसिटाइल समूह का कार्य ऊर्जा प्रदान करना तथा अमीनों अम्ल बनाने के लिए मध्यवर्ती अणु प्रदान करना है । इन जीवाणुओं द्वारा उत्पादित एसिटाइल CoA ऑक्सीजन तथा नाइट्रोजन की न्यूनतम उपलब्धता पर भी पॉलीईस्टर का निर्माण कर सकता है । प्रोपियोनिक अम्ल पर पोषित एल्कलिजिन्स यूट्रोफस की एक अन्य प्रजाति विशेष रूप से 3-हाइड्रोक्सी ब्यूटाइरेट तथा 3-हाइड्रोक्सीवेलेरेट वर्ग के पालीमरो के उत्पादन में प्रयोग की जाती है । इन पालीमरो का व्यावसायिक नाम बायोपाल है ।

जीवाणुओं के अतिरिक्त कुछ यीस्ट (Yeast) की जैव परिवर्तित प्रजातियां भी पॉलीमर बनाने में प्रयुक्त होने वाले मध्यवर्ती पदार्थ बनाने के उपयोग में लायी जा रही है । पर्यावरण जैव प्रौद्योगिक वैज्ञानिक स्टीफेन पिकाटेगियो एवं उनके सहयोगियों ने कैन्डिडा ट्रोपिकेलिस नामक यीस्ट का एक विभेद तैयार किया है जो लम्बी श्रृंखला वाले कार्बनिक अम्लों का निर्माण करते हैं । इन अम्लों का उपयोग नायलॉन तथा पॉलीईस्टर बनाने में किया जाता है । जब इस यीस्ट को वसा अम्ल के माध्यम से उगाया जाता है तो यह अल्फा तथा ओमेगा डाइकार्बोक्सिलिक अम्ल बनाता है । इन अम्लों से बने पॉलीईस्टर का उपयोग सुदृढ़ मिश्रित पदार्थ, नावें तथा वाहनों के ढ़ांचे बनाने में किया जाता है । यीस्ट द्वारा इस पॉलीएस्टर को बनाने का मुख्य लाभ यह है कि इससे असंतृप्त डाइकार्बनिक अम्लों की संरचना में विशेष परिवर्तन नहीं होता है ।

एसपरजिलस पेरासाइटिकस नामक कवक का बायोसंवर्धन कर वैज्ञानिकों द्वारा हाइड्राक्सीकृत एरोमेटिक श्रेणी के मध्यवर्ती अणुओं का उत्पादन भी किया जा रहा है । इस श्रेणी के रसायनों का उपयोग रंग उद्योग, प्लास्टिक तथा द्रव क्रिस्टल बनाने में किया जाता है ।

सूक्ष्मजीवों की सहायता से पॉलीमरों का उत्पादन सुगम हो जाने के साथ-साथ यह लाभ भी हुआ है कि विशेष प्रकार के पुर्नसंयुक्त सूक्ष्मजीवों का प्रयोग करके मनपसंद पॉलीमर का निर्माण किया जा सकता है । इसके साथ ही आरम्भिक अभिकारकों का अनुपात आसानी से परिवर्तित करके अलग-अलग संरचना वाले पॉलीमर प्राप्त हो सकते है । प्राय: जैविक माध्यमों से उत्पादित पॉलीमर की मात्रा रासायनिक तरीकों से प्राप्त मात्रा से अधिक होती है ।

12.6 रेस्ट्रिक्शन एण्डोन्यूक्लिएज (Restriction Endonuclease):

वर्तमान में करीब 100 वाणिज्यिक रूप से महत्त्वपूर्ण रेस्ट्रिक्शन एण्डोन्यूक्लिएज काम में लिए जाते हैं । इन में से अधिकतर सूक्ष्मजीविय उत्पत्ति के है । व्यापारिक रूप से इन रेस्ट्रिक्शन एण्डोन्यूक्लिएज का उत्पादन किण्वन प्रक्रिया के द्वारा किया जाता है । ऐसा कोई भी संवर्धन माध्यम जिसमें कार्बन तथा नाइट्रोजन स्त्रोत उचित मात्रा में उपस्थित हो, एण्डोन्यूक्लिएज उत्पादन के लिए काम में लिया जा सकता है । इन माध्यमों में अकार्बनिक तत्त्वों के स्त्रोतों की उचित सांद्रता पर भी ध्यान देना आवश्यक है । सामान्य रूप से ऐसा किण्वन pH 4.5 से 8.0 के बीच तथा तापमान 30-37°C पर किए जाते हैं हालांकि pH तथा तापमान प्रयुक्त होने वाले सूक्ष्मजीव पर निर्भर करता है । किण्वक बर्तन में शेकिंग कल्चर, एजीटेशन कल्चर तथा वायुवीय कल्चर आदि में से कोई प्रयोग में लिया जा सकता है । इस प्रक्रिया में कुछ सूक्ष्मजीव जैसे हैलोकोकस, ग्लूकोनोबैक्टर आदि ।

एण्डोन्यूक्लिएज एन्जाइम का संचयन जीवाणु कोशिका के अंदर होता है । इन जीवाणुओं को संवर्धन द्रव्य में से पृथक करने के बाद विभिन्न तकनीकों जैसे अपकेन्द्रीकरण (centrifugation) की मदद से एन्जाइम को प्राप्त किया जाता है । अपकेन्द्रीकृत कोशिकाओं का उचित बफर में डालने के बाद अल्ट्राअपकेन्द्रीकृत (ultracentrifugation) किया जाता है तत्पश्चात् अमोनियम सल्फेट द्वारा अवक्षेपित (saft-out) कर एन्जाइम को फास्फेट बफर में विलीन कर प्राप्त किया जाता है । इसके उपरान्त आयन-विनिमय वर्णलेख (ion-exchange chromatography), डी.ई.ए.ई. - सेलुलोस तथा सजातीयक-वर्णलेख (affinity chromatography) द्वारा प्राप्त एन्जाइम को शुद्ध किया जाता है ।

12.7 इंडिगो (Indigo):

प्राकृतिक इंडिगो विश्वभर में पाए जाने वाला सबसे पुराना रंजक है जो करीब 4,000 वर्ष पूर्व से मानव जाति के काम आ रहा है । भारत, मिस्त्र आदि प्राचीन सभ्यताओं में यह रंगने के काम में लिया जाता रहा है । व्यापारिक रूप से इंडिगो पोलीगोनम (Polygonum) नामक पौधे रमे प्राप्त किया जाता है । पालीगोनम के पर्णों को एकत्र कर इनसे किण्वन प्रक्रिया की जाती है । यह किण्वन नमी युक्त, हल्के गरम वातावरण में किया जाता है । हर तीन दिन में पानी मिलाया जाता है तथा फिर इन पर्णों को स्ट्रॉ की सतह से ढक दिया जाता है । यह किण्वन प्रक्रिया तीन माह तक लगातार चलती रहती है । तीन माह के परिपाक काल के बाद एक मिट्टीनुमार पाउडर प्राप्त होता है जिसमें 3-5% तक इंडिगो होती है ।

बोध प्रश्न

1. एल. एरकोर्बिक अम्ल का वार्षिक उत्पादन है -
   (a) 42,000 टन (b) 10,000 टन
   (c) 40,000 टन (d) 80,000 टन

2. एल. एस्कोर्बिक अम्ल के निर्माण के दौरान D-सोरबिट्रोल सूक्ष्मजैवीय रूपान्तरण के बाद निम्न में से किस में बदलता है?

(a) D-ग्लूकोज (b) L-सोरबोस

(c) ग्लिसरोल (d) कोई भी नहीं

3. L-एस्कोर्बिक अम्ल को उत्पन्न करने के लिए निम्न में से किसे काम में लिया जाता है -

(a) कोरिनेबैक्टीरियम (b) ई. कोलाई

(c) बैसिलस (d) ग्लूकोनोबैक्टर

4. किण्वन प्रक्रिया के पश्चात् L-लाइसीन की प्राप्ति हेतु संवर्धन माध्यम के pH में क्या परिवर्तन आता है?

(a) pH अम्लीकृत हो 2.0 हो जाता है ।

(b) pH अम्लीकृत हो 5.0 हो जाता है ।

(c) pH अम्लीकृत हो 3.0 हो जाता है ।

(d) कोई परिवर्तन नहीं आता ।

5. एण्टीबायोटिक्स निर्माण में प्रयुक्त होने वाले तंतुमय जीवाणुओं का वंश.....कहलाता है ।

6. अधिकांश प्रतिजैविक, सूक्ष्मजीवों के ..... उपापचयी उत्पाद होते हैं ?

7. पेनिसिलिन उत्पादन के लिए.....प्रकार का किण्वन काम में आता है ?

8. बेन्जीन को आक्सीकृत कर पालीफिनाइलीन में परिवर्तित करने के लिए डेनिस जी.एच. बालाई द्वारा विकसित बैक्टीरिया कहलाता है .....

9. ..... एक ऐसी यीस्ट है जो लम्बी श्रृंखला वाले कार्बनिक अम्लों का निर्माण करते हैं ।

10. ..... वर्णलेख द्वारा रेस्ट्रिक्शन एण्डोन्यूक्लिएज एन्जाइम का शुद्धिकरण किया जाता है ।

12.8 सारांश (Summary):

सूक्ष्मजीवों द्वारा वर्तमान में विभिन्न औषधियाँ, किण्वक, टीके इत्यादि का वाणिज्यिक निर्माण किया जाता है । मानव कल्याण में प्रयुक्त होने वाले विटामिन, अमीनो अम्ल तथा प्रतिजैविक व्यापारिक तौर पर सूक्ष्मजैवीय किण्वन प्रक्रिया द्वारा उत्पादित किए जाते हैं । बहुत प्रकार के जैव निम्नीकृत बहुलकों का निर्माण भी वर्तमान में सूक्ष्मजीवों द्वारा ही सम्पन्न करवाया जाता है । रीकाम्बीनेन्ट DNA तकनीक में प्रयुक्त होने वाले एन्जाइम भी सूक्ष्मजैवीय किण्वन से ही प्राप्त होते हैं । इस सभी सूक्ष्मजैवीय प्रक्रियाओं से उत्पादित तत्त्व गुणों में श्रेष्ठ प्रकार के होते हैं तथा मानव कल्याण में महत्त्वपूर्ण सहयोग देते हैं । रंजन हेतु इंडिगो रंजक हो या खाद्य संपूरक के

तौर पर प्रयुक्त होने वाला L-एरकोर्बिक अम्ल तथा अमीनों अम्ल या अन्य तत्व, सभी सूक्ष्मजैवीय किण्वन का ही परिणाम है तथा इन के महत्त्व को नकारा नहीं जा सकता ।

12.9 बोध प्रश्नों के उत्तर :

1. 40,000 टन
2. L-सोरबोस
3. कोरिनेबैक्टीरियम
4. pH अम्लीकृत ही 2.0 हो जाता है
5. एक्टीनोमाइसिटिज
6. द्वितीयक
7. फेड- बैच
8. स्यूडोमोनास पुटिडा
9. केन्डिडा ट्रोपिकेलिस
10. आलन विनिमय

12.10 अभ्यासार्थ प्रश्न (Exercise Questions):

1. L-एस्कोर्बिक अम्ल के निर्माण में जीवाणुओं की भूमिका पर लेख लिखिए ।
2. किण्वन प्रक्रिया द्वारा किस प्रकार अमीनो अम्लों का वाणिज्यिक निर्माण किया जाता है ?
3. प्रतिजैविक निर्माण में जीवाणुओं की भूमिका पर लेख लिखिए ।
4. बहुलक निर्माण में प्रयुक्त होने वाले जीवाणुओं के बारे में बताइए ।
5. संक्षेप में रेस्ट्रिक्शन एण्डोम्यूक्लिएज के वाणिज्यिक निर्माण पर लेख लिखिए ।

12.11 शब्दावली (Glossary):

1.	किण्वन	-	Fermentation
2.	प्रतिजैविक	-	Antibiotic
3.	इंडिगो	-	Indigo
4.	पुनर्योगज डी.एन.ए.	-	Recombinant DNA

12.12 संदर्भ ग्रन्थ (References Books):

1. सेलेगल, जनरल माइक्रोबायोलोजी, कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस ।
2. वैट्स, मॉर्गन, रॉकी एवं हिलटन इण्डस्ट्रियल माइक्रोबायोलोजी : एन इण्ट्रोडक्शन, ब्लेकवेल साइन्स, मेल्डन, यू.एस.ए. ।
3. सिंह एवं घोष, इण्डस्ट्रियल बायोटेक्नोलोजी, ग्लोबल विजन पब्लि. हाउस, नई दिल्ली ।

इकाई 13

औद्योगिक उत्पाद-III

(Industrial Product-III)

इकाई की रूपरेखा

13.0 उद्देश्य

13.1 प्रस्तावना

13.2 एल्कोहॉल

13.3 सिट्रिक अम्ल

13.4 विलायक

13.5 विकर

13.6 बीयर

13.7 शराब

13.8 आसवित पेय

13.9 सूक्ष्मजीवीय खाद्य उत्पाद

13.10 सारांश

13.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

13.12 अभ्यासार्थ प्रश्न

13.13 शब्दावली

13.14 संदर्भ ग्रन्थ

13.0 उद्देश्य (Objectives):

औद्यौगिक सूक्ष्मजैविकी से तात्पर्य सूक्ष्मजीवों के द्वारा वांछित उत्पादों का निर्माण करना तथा इन उत्पादों को अन्य संक्रामक सूक्ष्मजीवों से सुरक्षित रखना है । सूक्ष्मजैविकी प्रक्रियाओं द्वारा वाणिज्यिक स्तर पर विभिन्न प्रकार के उत्पादों का निर्माण किया जाता है । इस अध्याय में सूक्ष्मजीवों द्वारा निर्मित होने वाले कुछ महत्त्वपूर्ण औद्योगिक उत्पादों के निर्माण के बारे में बताया गया है ।

13.1 प्रस्तावना (Objectives):

प्राचीनकाल से मानव सूक्ष्मजैविक प्रक्रिया द्वारा खाद्य उत्पादों, औषधियों एवं एल्कोहल व ऐल्कोहलिक उत्पादों का निर्माण करता रहा है । शराब, बीयर, सिरका, पनीर, दही, मक्खन आदि सूक्ष्मजैविकी प्रक्रियाओं द्वारा निर्मित महत्त्वपूर्ण पारम्परिक उत्पाद है । सूक्ष्मजीवों के प्रयोग द्वारा नई-नई सूक्ष्मजैविकीय प्रक्रियाओं से विभिन्न तरह के उत्पादों का निर्माण किया जाता है । इन प्रक्रियाओं मं सूक्ष्मजीव एक महत्वपूर्ण अंग के रूप में प्रयुक्त होते हैं । वर्तमान में विभिन्न

तरह के सूक्ष्मजीवों द्वारा बड़े पैमाने पर उद्योगों में विभिन्न प्रकार के उत्पादों का निर्माण किया जा रहा है तथा सूक्ष्मजैविकी का क्षेत्र औद्योगिक सूक्ष्मजैविकी के रूप में पहचाना जाने लगा है ।

13.2 एल्कोहॉल (Alcohol):

एल्कोहॉल एवं एल्कोहॉल पेय का उत्पादन (Alcohol and Alcoholic Beverages Production)

विभिन्न सूक्ष्मजीवों द्वारा शर्करा या शर्करायुक्त पदार्थों के किण्वन से वाइन (wine), बीयर (bear),विस्की (wisky) एवं अन्य एल्कोहॉलिक पेय पदार्थों का उत्पादन किया जाता है ।

पुराने समय से यीस्ट का उपयोग एल्कोहॉलिक पेय में चला आ रहा है । आज एल्कोहॉलिक पेय संसार में एक बहुत बड़े उद्योग के रुप में पनपा है । वाइन एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण एल्कोहॉलिक पेय है, जिसका निर्माण फल के रस से होता है, बीयर का निर्माण जौ के अंकुरित बीजों से प्राप्त माल्ट से किया जाता है ।

13.3 सिट्रिक अम्ल (Citric Acid) :

एस्पर्जिलस नाइजर ए. वेन्टाई (A. Wentii) , मोलेसेस मक्का के स्टार्च, चुकन्दर इत्यादि को किण्वन द्वारा सिट्रिक अम्ल में बदल देते हैं । किण्वन बड़े बर्तनों में वायवीय परिस्थितियों में होती है । किण्वनटर्स स्टील के बने बर्तन है जिससे कि आयरन निष्कासित न हो, एवं pH कम बनी रहती है । विभिन्न प्रकार के भोज्य पदार्थ जैसे आलू का स्टार्च, सुक्रोज, गन्ने का रस एवं चुकन्दर का मोलेसेस सिट्रिक अस्त आदि औद्योगिक निर्माण हेतु उपयोग में लिया जाता है । किण्वन में एमाइलेज उपयोग में लिया जाता है जो कि स्टार्च को शर्करा में परिवर्तित करता है । शर्करा ग्लाइकोलेटिक चक्र द्वारा अपघटित होकर सिट्रिक आम्ल का निर्माण करती है ।

सिट्रिक अम्ल के औद्योगिक निर्माण हेतु दो विधियां विकसित की गई है -

(1) सतही विधि (Surface Method)

(2) निमग्न विधि (Submerged Method)

आजकल निमग्न विधि आम तौर में उपयोग ली जाती है । ए. नाहजर वायवीय है तथा इस विधि में कल्चर भलीभाँति वायवीय बना रहता है । यह उपयोगी विधि है, इसे एन्टीबायोटिक के निर्माण में भी उपयोग लिया जाता है । ऐतिहासिक तौर पर निमग्न. विधि अतिमहत्वपूर्ण है क्योंकि यह प्रथम औद्योगिक वायवीय किण्वन विधि है । इसके पश्चात् इस तकनीक को पेनिसिलिन के औद्योगिक उत्पादन हेतु उपयोग में लिया गया है ।

13.4 विलायक (Solvent):

विलायक कार्बनिक पदार्थ है जिसमें विभिन्न क्लोरोफिल घुलनशील है । क्लोरोफिल 'ए' एवं 'बी' अनेक विलायक जैसे ईथर, बैन्जोल, क्लोरोफार्म, एसिटॉन, कार्बन डाई सल्फाइड एवं ईथाइल एल्कोहाल में घुलनशील होती है । क्लोरोफिल 'ए' अधिकतम घुलनशील पेट्रोलियम ईथर में एवं क्लोरोफिल 'बी' अधिकतम घुलनशील मिथेनॉल में होती है क्योंकि यह अधिक जलस्नेही होता है ।

क्लोरोफिल 'सी' जलीय एल्कोहॉल, क्लोरोफिल 'डी' अनेक पोलर एवं नॉनपोलर कार्बनिक एल्कोहॉल में अधिकतम घुलनशील होती है जबकि क्लरोफिल 'ई' मिथेनॉल में होती है । कैरोटिन अधिक घुलनशील कार्बन डाई सल्फाइड में होते हैं जबकि जैन्थोफिल आशिक घुलनशील होते हैं ।

13.5 विकर (Enzymes)

प्रत्येक जीव अनेकों ए एन्जाइम्स उत्पन्न करता है, यह एन्जाइम कम मात्रा में बनते हैं व कोशिकीय क्रियाओं हेतु आवश्यक होते हैं । इसके अलावा कुछ एन्जाइम सूक्ष्मजीवों द्वारा अधिक मात्रा में माध्यम में स्रावित होते हैं । कुछ अतिरिक्त कोशिकीय एन्जाइम, सेलुलोज, प्रोटीन, स्टार्च को पचाने में भी सक्षम होते हैं, पाचित उत्पाद कोशिका में गमन कर वृद्धि में उपयोग आते हैं । इसमें से कुछ एक अतिरिक्त कोशिकीय एन्जाइम्स पोषण, डेयरी, औषधी व टेक्सटाइल उद्योग में उपयोग आते हैं तथा यह अधिक मात्रा में सूक्ष्मजीवों के संश्लेषण द्वारा उद्योग में उपयोग आते हैं ।

प्रोटिऐजेज एवं एमाइलेजेज

कवक व जीवाणु व्यापारिक रूप से भी एन्जाइम्स उत्पन्न करते हैं । सबसे अधिक मात्रा में प्रोटिएजेज सूक्ष्मजीवों द्वारा औद्योगिक रूप से निर्मित होते हैं । आज लाउन्ड्री साबुनों में अधिकतर प्रोटिऐज होता है परन्तु एमाइलेज, लाइपेज व अन्य विकर भी होते हैं । इनमें से अधिकतर एन्जाइम क्षारीय जीवाणु जिसमें बेसिलस जाति मुख्य है जैसे बे. लाइचेनिफोरमिस (Bacillus licheniformis) से पृथक किये जाते हैं । यह एन्जाइम लाउन्ड्री द्रव में अनुकूलतम pH 9-10 पर सक्रिय रहते हैं ।

अन्य विकर एमाइलेजू व ग्लूकोएमाइलेज है जो व्यापारिक रूप से उपयोग में आते हैं, यह स्टार्च से ग्लूकोज का निर्माण करते हैं । ग्लूकोज आइसोमरेज ग्लूकोज को फ्रक्टोज में परिवर्तित करता है जो कि मुख्य रूप से सॉफ्ट पेय पदार्थों में उपयोग आते हैं ।

मक्का स्टार्च को अधिक फ्रक्टोज द्रव्य में परिवर्तित करने हेतु तीन क्रियाएं भिन्न विकरों द्वारा नियन्त्रित होती है ।

1. विकर α-एमाइलेज पॉलीसेकेराइड की छोटी श्रृंखला निर्मित करता है ।
2. विकर ग्लुकोएमाइलेज ग्लूकोज मोनोमर्स निर्मित करता है ।
3. विकर ग्लुकोज आइसोमरेज अंत में ग्लूकोज को फ्रक्टोज में परिवर्तित करता है ।

उपरोक्त तीनों विकर सूक्ष्मजीवों से किण्वन द्वारा औद्योगिकी रूप में निर्मित होते हैं ।

13.6 बीयर (Beer)

बीयर का उत्पादन स्टार्च के कि प्रक्रिया द्वारा होता हे स्टार्च हेतु अंकुरित जो (germinated barley) से प्राप्त माल्ट से किया जाता हे माल्ट के किण्वन हेतु यीस्ट सैकेरोमाइसिस (Seccharomyces) कि विभिन्न जातियों को उपयोग मे लिया जाता हे

बीयर मे एक परिरक्षक (preservative) जिसे हॉप्स (hops) कहते हे उपयोग आता हे जो कड़वा (bitter) स्वाद भी प्रदान करता हे हॉप्स एक विशेष पादप के सूखे पुष्पों से प्राप्त होता हे

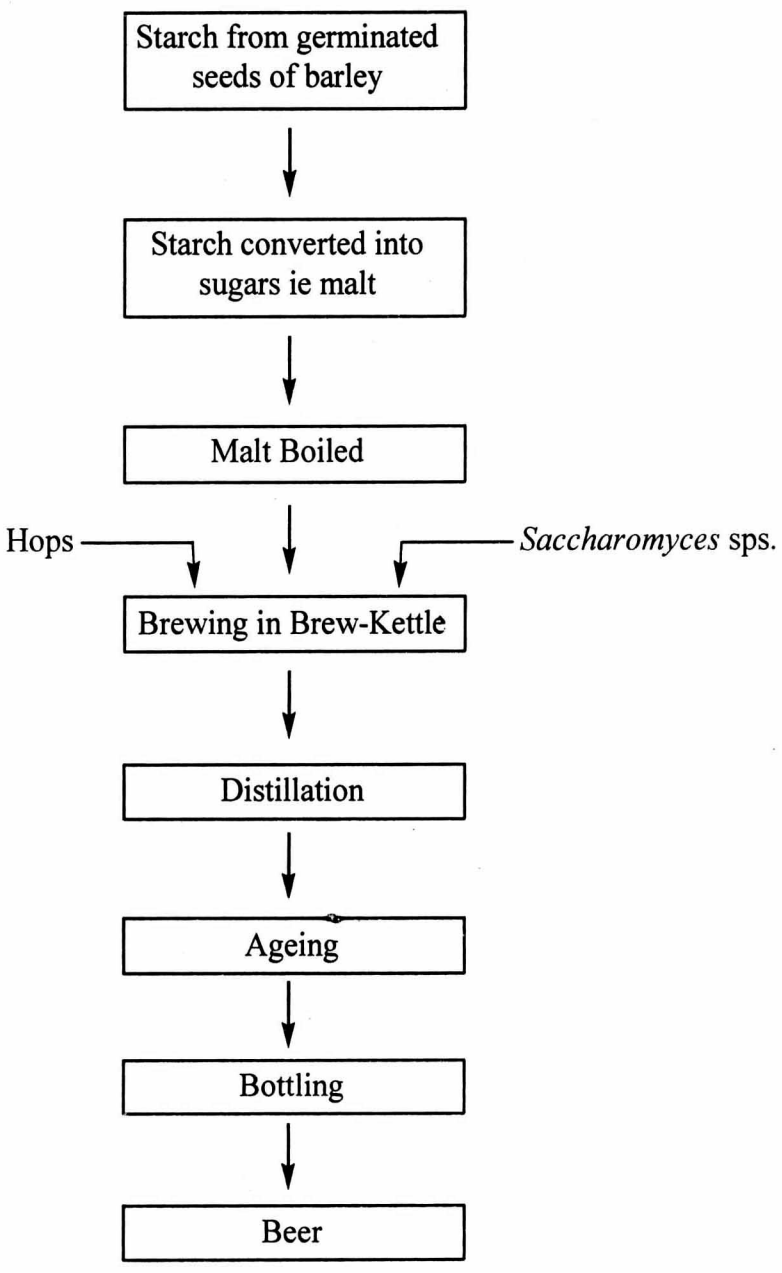

विधि

(i) अनाज में उपस्थिति स्टार्च को सर्वप्रथम सरल शर्कराओं में परिवर्तित किया जाता है । क्योंकि यीस्ट की किण्वन अभिक्रिया शर्करा पर होती है । स्टार्च को शर्करा में परिवर्तित करने की क्रिया माल्टिंग (malting) कहलाती है । अंकुरित अनाज को गर्म जल में भिगोया जाता है

जिसके फलस्वरूप माल्ट का निचोड़ (malt extract) प्राप्त होता है, जो कि शर्करा एवं अन्य उपयोगी तत्वों युक्त होता है एवं यीस्ट की वृद्धि हेतु उपयुक्त माध्यम होता है माल्ट निचोड़ को माल्ट-वार्ट भी कहा गया है ।

(ii) माल्ट निचोड़ को जीवाणुरहित करके सर्वप्रथम उबाला जाता है तत्पश्चात् इसमें यीस्ट डाला जाता है । किण्वन हेतु यीस्ट की विशिष्ट जाति का उपयोग किया जाता है । यीस्ट के साथ हॉप्स को मिश्रित किया जाता है जो इसे विशिष्ट स्वाद व परिरक्षण का कार्य करता है, हॉप्स अन्य हानिकारक जीवाणुओं की वृद्धि को भी रोकते हैं । बीयर की किण्वन प्रक्रिया ब्रूइंग (Brewing) कहलाती है एवं किण्वन बर्तन ब्रू-केटल (Brew Kettle) कहलाता है ।

(iii) बीयर का अवसादन किया जाता है तथा स्वच्छ बीयर को निथार कर पृथक किया जाता है ।

(iv) इसके पश्चात् निथारी हुई बीयर का परिपक्वन (Ageing) की जाती है एवं CO2 को मिलाकर बोतलों में पैकिंग की जाती है ।

बीयर में एल्कोहॉलिक मात्रा 33 से 62 प्रतिशत तक होती है । आजकल बाजार में अधिक एल्कोहॉलिक मात्रा 8-10 प्रतिशत की भी उपलब्ध है ।

13.7 शराब (wine) :

वाइन, एल्कोहोलिक किण्वन का उत्पाद जो यीस्ट द्वारा फलों के रस से निर्मित होता है । अधिकतर वाइन अंगूरों द्वारा निर्मित होती है । सबसे अधिक वाइन इटली, फ्रांस, स्पेन, अल्जीरिया अर्जेन्टाइना, अमेरिका आदि देशों में उत्पन्न होती है । वाईन कई प्रकार की होती है, ड्राई वाइन वह वाइन है जिसमें रस की पूर्ण शर्करा का किण्वन किया जाता है जबकि स्वीट वाइन में कुछ शर्करा को छोड़ दिया जाता है अथवा किण्वन के पश्चात् शर्करा मिलाई जाती है । शैम्पेन (champagne) में CO2 की मात्रा अधिक होती है ।

वाइन के निर्माण में दो प्रकार की यीस्ट उपयोग में ली जाती है । एक वाइल्ड यीस्ट होती है जो कि अंगूर में स्वत: ही उपस्थित होती है दूसरी यीस्ट सेकेरोमाइसिस एलिपसॉयड (Sacchromyces ellipsoideus) है जिसे रस में किण्वन प्रारम्भ करने हेतु डाला जाता है । वाइल्ड यीस्ट में एल्कोहल यह 4% होने पर किण्वन प्रक्रिया रुक जाती है जबकि सेक्रोमाइसिस में 14% एल्कोहल होने पर किण्वन प्रक्रिया रूकती है ।

वाइन उत्पादन (Wind Production)

अंगूरों को उपयुक्त मौसम में तोड़कर, मशीनों द्वारा रस निष्कासित किया जाता है जिसे मस्ट (must) कहते हैं । सफेद अथवा लाल वाइन अंगूरों की प्रकार पर निर्भर करता है । लाल वाइन बनाने हेतु पोमेस (Pomece) (अर्थात् skin, बीज व स्तम्भ के टुकड़े) को किण्वन प्रक्रिया में बनाये रखा जाता है । लाल वाइन में टेनिन की मात्रा अधिक होती है । प्रायोगिकी में मस्ट में वाइल्ड यीस्ट को SO2, डालकर नष्ट कर दिया जाता है जबकि से एलिपसॉयड SO2, का प्रतिरोधक होता है तथा इसे प्रारम्भ कल्वर के रूप में मस्ट में डाला जाता है । किण्वन प्रक्रिया को वेट्स (vats) में करवाया जाता है जो कि विभिन्न आमाप के होते हैं, यह 50 गैलेन से 55000 गैलेन तक के टैंक हैं जो कि ओक, सीमेन्ट, पत्थर अथवा धातु द्वारा निर्मित होते हैं ।

फर्मेन्टर्स इस प्रकार के बने होते हैं, जिसमें से CO2 , निष्कासित हो सकती है परन्तु वायु प्रवेश नहीं कर सकती, इनमें विशिष्ट प्रकार के वाल लगे होते हैं ।

लाल वाइन के 3-5 दिन किण्वन के पश्चात्, जब पर्याप्त टेनिन एवं रंग निष्कासित हो जाते हैं तब वाइन को एक अन्य टैंक में स्थानान्तरित कर देते हैं तथा 1-2 सप्ताह पश्चात् एक यीस्ट युक्त टैंक में स्थानान्तरित करते हैं, तत्पश्चात् निम्न तापक्रम पर 'aging ' हेतु रखते हैं जहां गंध (flaver) विकसित होती है तत्पश्चात् झिल्ली फिल्टर आदि द्वारा छानी जाती है । वाइन को अब बोतलों में भरा जाता है ।

ब्रूइंग (Brving)

एल्कोहोलिक पेय जो कि माल्टेड अनाजों से बनाया जाता है ब्रूइंन कहलाता है । माल्ट जौ के अंकुरित बीजों से तैयार किया जाता है, इसमें प्राकृतिक एन्जाइम होता है जो कि स्टार्च को शर्करा में परिवर्तित करता है । मैशिंग (Meshing) वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा किण्वन द्रव्य जिससे बीयर एवं एल (ale) बनाये जाते हैं ।

ताप काल में, माल्ट के एन्जाइम स्टार्च को शर्करा में परिवर्तित कर देती है, शर्करा का यीस्ट किण्वन कर देती है । प्रोटीन एवं अमीनो अम्ल भी निष्कासित होते हैं, जो कि यीस्ट की वृद्धि हेतु भी आवश्यक होते हैं ।

परिपक्व होने के पश्चात् रस (Extract) जिसे वार्ट (Wort) कहते हैं, को छानकर पृथक किया जाता है तथा मेश (Mesh) के अवशेष रह जाते हैं । होप्स (Hops) जो एक Herb पादप के मादा पुष्पों से प्राप्त होता है, इसमें डाला जाता है जो कि इसे गंध (flavor) प्रदान करता है तथा यह सूक्ष्मजीवों के प्रति प्रतिरोधकता भी दर्शाता है । कीपर के बर्तन में वार्ट को कई घंटे उबाला जाता है तथा अवांछित पदार्थ हटाये जाते हैं एवं वार्ट को निर्जर्मीकृत (sterilise) किया जाता है । वार्ट को छानकर पुन: किण्वन बर्तन में स्थानान्तरित करते हैं । सैकेरोमाइसीज सर्विताई डालकर उच्च तापक्रम पर (23 ० C) इसका किण्वन किया जाता है । अब बीयर को एक पम्प की सहायता से एक टैंक में निम्न तापक्रम (लगभग 1०C) पर एकत्र किया जाता है तत्पश्चात् बॉटलिंग की जाती है ।

13.8 आसवित एल्कोहॉलिक पेय (Distilled Alcoholic Beverages):

किण्वन द्रव्य को उच्च तापक्रम पर गर्म करने पर आसवित एल्कोहॉलिक पेय तैयार किये जाते हैं, जो कि अधिकतर एल्कोहॉल को वाष्पित कर देते हैं । एल्कोहॉल को तत्पश्चात् संघनित कर एकत्रित किया जाता है, इस प्रक्रिया को डिस्टिलेशन कहते हैं । इस प्रक्रिया से निर्मित उत्पाद में एल्कोहॉल की मात्रा, साधारण किण्वन द्वारा प्राप्त एल्कोहाल से अधिक होती है । माल्ट बू (Brew) के डिस्टिलेशन से विस्की (whisky) प्राप्त होती है, वाइन के डिस्टिलेशन से ब्रेन्डी (Brandy)प्राप्त होती है, मोलेसेज किण्वन के डिस्टिलेशन से रम (Rum),जुनोपर के फलों का किण्वन कर डिस्टिलेश्न से जिन (Gin) बनती है । डिस्टिलेशन के फलस्वरूप कुछ वांछित व कुछ

अवांछित तत्त्व होते है, अवांछित तत्वों को फ्यूजल ऑयल (Fusel oils) कहते हैं । Aging प्रक्रिया के फलस्वरूप फ्यूजल ऑयल को हटाया जाता है तथा इच्छित गंध तत्व विकसित होते हैं । अंतिम उत्पाद के लक्षण aging प्रक्रिया पर निर्भर करती है । आसवित एल्कोहॉलिक पेय का निर्माण एक अत्यन्त जटिल प्रक्रिया है ।

सिरका या ऐसिटिक अम्ल (Vinegar or Acetic Acid)

सिरका का निर्माण शर्करा या स्टार्चयुक्त पदार्थों के किण्वन से होता है । सर्वप्रथम यीस्ट का प्रयोग कर एल्कोहॉल बनाया जाता है । ईथाइल एल्कोहॉल को जीवाणु एसिटोबैक्टर एसिटिक अम्ल में बदल देता है । सिरके का उपयोग भोजन, अचार आदि को सुरक्षित करने में किया जाता है । सिरका निर्माण हेतु तीन विधियाँ हैं -

1. Open Vat Method — खुला वेट विधि
2. Trickle Method — ट्रिकिल विधि
3. Bubble Method — बुलबुला

1. खुला वेट विधि

यह विधि सबसे पुरानी है, यह विधि फ्रांस में विकसित की गई है तथा आज भी वहां उपयोग में लाई जाती है । इस विधि में वाइन को वेट में लेते हैं व वायु प्रदान करते हैं तथा द्रव्य की सतह पर एसिटिक अस्त जीवाणु विकसित होते हैं ।

2. ट्रिकिल विधि

इस विधि में वायु जीवाणु एवं भोज्य पदार्थ का सम्पर्क भलीभाँति होता है । इसमें एल्कोहॉलिक द्रव्य ऊपर से टपकता है एवं वायु वेट के नीचे से प्रवेश करती है । जीवाणु काष्ठ के टुकड़ों पर उगते हैं तथा वायु व एल्कोहॉल के सम्पर्क में भलीभांति आते हैं ।

3. बुलबुला विधि

इस विधि में वायु आदान-प्रदान प्रभावी रूप से होता है । यह विधि लगातार चलती रहती है । इस विधि की दक्षता (eficiency) अधिक है, 90-98% एल्कोहल सिरके में परिवर्तित हो जाती है । इस विधि का उपरोक्त दोनों विधियों की तुलना में यह नुकसान है कि इसमें प्राप्त सिरके को छानना पड़ता है, जिससे जीवाणु को पृथक किया जा सकें ।

13.9 सूक्ष्मजीवीय खाद्य उत्पाद (Microbial Food Products) :

शब्द 'Food' का अर्थ है मनुष्य द्वारा खाने योग्य पदार्थ, जिनमें से कुछ किण्वन द्वारा निर्मित होते है । इन पोषक पदार्थों के निर्माण हेतु इच्छित सूक्ष्मजीवों की रासायनिक क्रियाएं आवश्यक होती है । कुछ महत्त्वपूर्ण खाने योग्य उत्पाद है -

सोर्करॉट (Sauerkraut)

यह गोभी (cabbage) द्वारा उत्पन्न होती है । यह लैक्टिक अन्त किण्वन द्वारा बनती है । अमेरिका में यह डिब्बाबंद सब्जी के रूप में उपयोग होती है । यह उत्पाद स्थाई बना रहता है, यदि इसे ठण्डे स्थान पर अवायवीय परिस्थितियों में बनाये रखा जावें ।

सोर्करॉट विटामिन सी का अच्छा स्रोत है । यह ज्ञात किया गया है कि 67% 70 % नमूनों में 10-25 कह कृत' 100 D एस्कोर्बिक अन्त पाया जाता है । गोभी का चयन कर लिया जाता है, इन्हें पूर्ण वायुमुक्त स्थान पर संरक्षित करते हैं काटने से पूर्व गोभी के हरे पत्ते व रोगमुक्त भागों को हटा दिया जाता है । गोभी को फिर मशीन की सहायता से लगभग 2 तुम मोटाई के टुकड़े में काटा जाता है । सोर्करॉट बनाने हेतु काष्ठ का उपयुक्त आमाप का बर्तन उपयोग में लिया जाता है । गोभी के टुकड़ों को साल्ट के साथ, किण्वन बर्तन में रखा जाता है तथा इसे किसी भी भार की सहायता से दबाया जाता है व यीस्ट की सहायता से किण्वन प्रक्रिया होती है । आजकल किण्वन क्रिया प्लास्टिक शीट से बनाये गये बर्तन में करवाई जाती है जो कि अनुकूल परिणाम देती है । मुख्य रूप से जीवाणु ल्यूकोनस्टॉक मिजनटराइडिस (Leuconostoc mesenteroides) व लेक्टोबेसिलस ब्रेविस (Lactobacillus brevis) आदि का उपयोग किण्वन प्रक्रिया में किया जाता है ।

बुल्गारियन छाछ (Bulgarian Milk)

यह डयेरी उत्पाद है जो कि किण्वन द्वारा बनाया जाता है । इसका किण्वन जीवाणु लैक्टोबेसिलस बुलगेरिकस (Lactobacillus bulgaricus) द्वारा किया जाता है । योगहर्ट तरुण अवस्था बनाये रखने में, रुधिर कोलेस्ट्रॉल कम करने, हृदय स्वस्थ बनाये रखने में सहायक है ।

योगहर्ट के व्यापारिक उत्पादन हेतु जीवाणु स्ट्रेप्टोकोकस थर्मोफिलसव लैक्टोबेसिलस बुलगेरिकस द्वारा दूध का किण्वन करवाया जाता है ।

योगहर्ट निर्माण हेतु निम्न प्रक्रिया अपनाई जाती है -

1. दूध का चयन
2. वसा को हटाना
3. गर्म करना
4. ऊष्मा उपचारित करना
5. 50०C तक ठंडा करना
6. योगर्ट कल्चर द्वारा उपचारित करना
7. पैकेजिंग
8. गर्म कमरे (42-44०C) पर रखना
9. वायु में ठंडा करना
10. ठंडे स्थान पर संग्रहण ।

बुरगेरियम छाछ में खनिजों की मात्रा पर्याप्त होती है । प्रोटीन की मात्रा में बढ़ोत्तरी 85.4-90.2% तक हो जाती है, प्रोटीन, पेप्टोन, पेप्टाइड्स व अमीनों अम्ल में अपघटित हो जाते हैं ।

पनीर (Cheese)

दूध से केसीन प्रोटीन को पृथक कर पनीर निर्मित किया जाता है । अनेकों प्रकार के पनीर है जो कि भिन्न-भिन्न सूक्ष्मजीवों की क्रिया से बनाये जाते हैं । पनीर का स्वाद, गंध, कठोरता, कोमलता आदि सूक्ष्मजीवों पर निर्भर करती है । निम्नलिखित प्रकार से पनीर बनाया जाता है -

दही बिलोना (Curdling)

दही को बिलो कर केसीन प्रोटीन को पृथक करते हैं । दूध की प्रारम्भिक pH 6.8 होती है परन्तु दूध से दही जमाने हेतु दही प्रारम्भिक कल्चर के रूप में डालने पर लेक्टिक अम्ल उत्पन्न होता है जिससे कि pH 4.6-9.6 हो जाती है एवं केसीन पृथक हो जाता है ।

दही को निथारना

इसे निथारने पर (whey) यह पृथक हो जाता है, कितनी सांद्रता बनी रहती है, जिस पर पनीर की क्वालिटी निर्भर करती है । दाब द्वारा केसीन को हटाने पर पनीर की सख्त क्वालिटी अन्यथा कोमल क्वालिटी निर्मित होती है

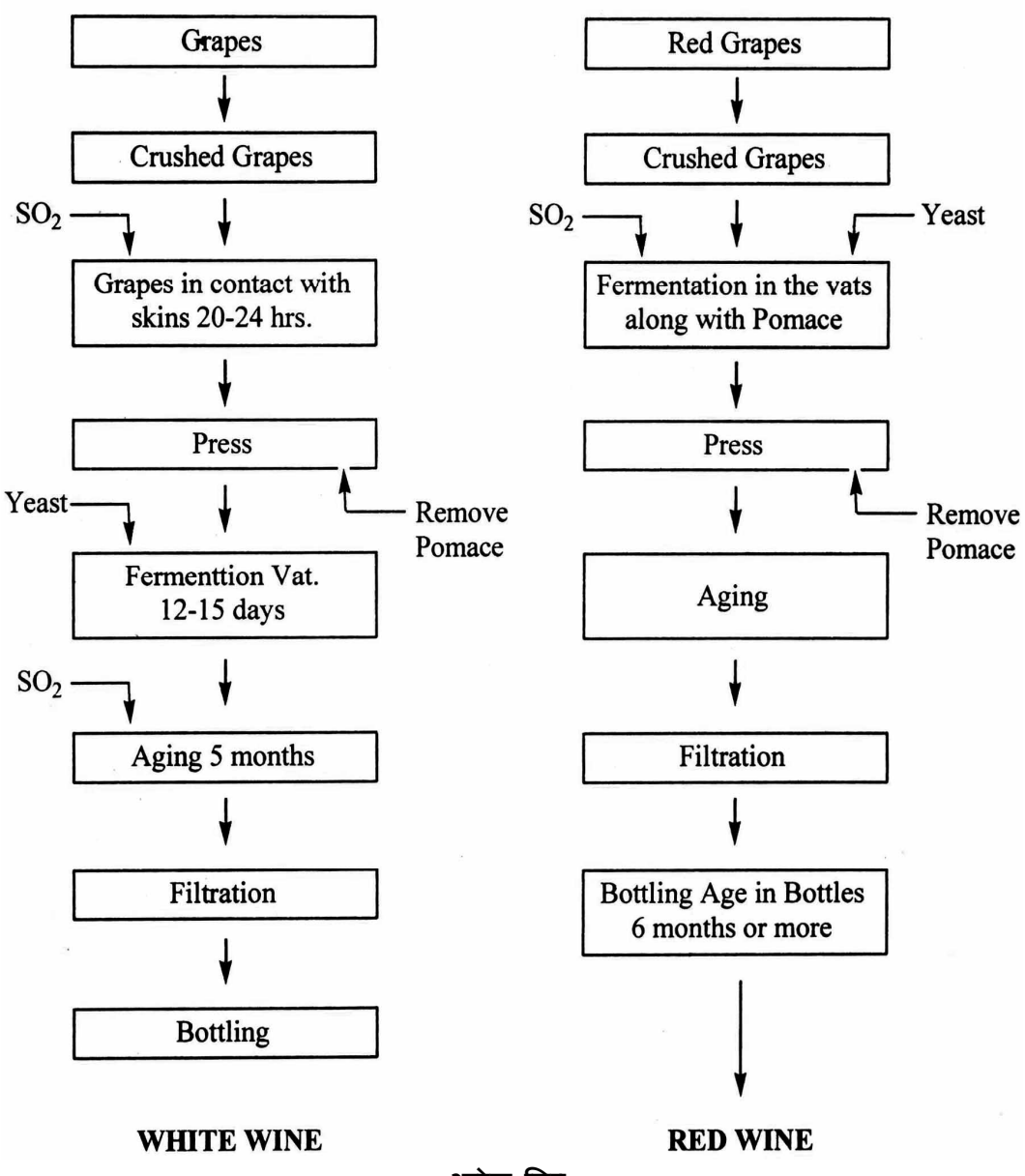

आरेख चित्र

साल्टिंग (Salting)

सभी प्रकार के पनीर बनाने हेतु नमक डाला जाता है Salting करने से पनीर मे सूक्ष्मजीव उत्पन्न नहीं होते यह स्वाद बढ़ता है तथा संरक्षित करने हेतु भी उपयोगी होता है ।

पकाना (Ripening)

सभी प्रकार के पनीरों को पकाने की आवश्यकता पड़ती है । पकाने हेतु जीवाणुओं को भी उपयोग मे लिया जाता है, कुछ कवक भी अत्यंत उपयोगी सिद्ध हुई है ।

मक्खन (Butter)

पाश्चुरीकृत दही को बिलोकर उससे मक्खन प्राप्त किया जाता है । मक्खन में लगभग वसा 80%, कम मात्रा में प्रोटीन एवं लेक्टोज व 20% नमक तथा शेष जल पाया जाता है । मक्खन में स्वाद एवं गंध निम्न जीवाणुओं के कारण होती है - ल्युकोनॉस्टाक साइट्रीवोरम (Leuconsostoc citrivorum), स्ट्रेप्टोकोकस लेक्टिस (streptococcuslactis) । मक्खन को एस्पर्जिलस, म्यूकर, राइजोपस, स्युडोमोनारन आदि नष्ट करते हैं ।

आजकल यह एक साधारण चलन है कि पाश्चुरीकृत क्रीम में मक्खन का कल्चर प्रारम्भ कल्चर के रूप में डाला जाता है जिससे कि मक्खन की मात्रा में बढ़ोत्तरी होती है तथा एक विशिष्ट प्रकार की गंध निर्मित होती है ।

योगर्ट दही (Yoghurt Dahi)

यह अत्यन्त उत्तम सूक्ष्मजीवों द्वारा प्राप्त दुग्ध उत्पाद है । यह उत्पाद गाय, बकरी, भेड़ व भैंस के दूध से निर्मित होता है । किण्वन हेतु इसे बनाने में जीवाणु स्ट्रेप्टोकोकस थर्मोफिलिस (Streptococcus thermophilis) एवं लेक्टोबेसिलस बुल्गेरिकस (Lactobacillus bulgaricus) द्वारा किया जाता है ।

योगर्ट दही के निर्माण हेतु निवेशित दूध को उष्मायित करने पर प्राप्त होता है । यह एक गाढ़ा पदार्थ है, इसमें 1-3% लेक्टिक अम्ल होता है ।

बोध प्रश्न

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें -

1. ..... एवं ए। वेंटाई मक्का के स्टार्च, चुकुंदर इत्यादि को किण्वन द्वारा सिट्रिक अम्ल मे बादल देता है ।
2. माल्ट के किण्वन हेतु यीस्ट .....की विभिन्न जातियों को उपयोग मे लिया जाता है ।
3. बीयर के किण्वन प्रक्रिया ..... कहलाती है ।

निम्न प्रश्नों के उत्तर एक पंक्ति में लिखिए -

4. लाउंड्री साबुनों में कोन -कोन से एंजाइम्स होते है ?
5. वाइन का निर्माण किसके किण्वन के द्वारा होता है ?

13.10 सारांश (summary)

औद्योगिक सूक्ष्मजैविकी के उपयोग द्वारा विभिन्न एल्कोहॉलिक पेय पदार्थों जैसे शराब, बीयर, विस्की, जिन एवं रम इत्यादि का उत्पादन किया जाता है । एस्पर्जिलस नाइजर एवं ए. वेन्टाई

का उपयोग सिट्रिक अम्ल के औद्योगिक उत्पादन हुए किया जाता है । इसी प्रकार विभिन्न कवक व जीवाणु व्यापारिक रूप से एंजाइम्स उत्पन्न करते हैं । इनमें से अधिकतर एंजाइम्स क्षारीय जीवाणु जिसमें बेसीलस जाति प्रमुख हैं जैसे - बे. लाइचेनिफोरमिस से पृथक किये जाते हैं । विभिन्न सूक्ष्मजीवीय खाद्य उत्पाद जैसे - सोर्करॉट, बुलग़रियन छाछ, पनीर, मक्खन एवं योगर्ट दही के औद्योगिक निर्माण हेतु इच्छित सूक्ष्मजीवों की रासायनिक क्रियाएं आवश्यक, होती है । अत: विभिन्न खाद्य व पेय पदार्थों के औद्योगिक निर्माण में सूक्ष्मजीवों के महत्त्व को नकारा नहीं जा सकता है ।

13.11 बोध प्रश्नों के उत्तर:

1. एस्पर्जिलस नाइजर
2. सैकेरोमाइसीज
3. ब्रूइंग
4. प्रोटिएजेज, लाइपेज एवं एमाइलेज
5. फलों के रस मुख्यत: अंगूर के रस के किण्वन द्वारा ।

13.12 अभ्यासार्थ प्रश्न (Exercise Questions) :

1. सिरका निर्माण की विधियों का उल्लेख करिये ।
2. आसवित एल्कोहॉलिक पेय की जानकारी दीजिये ।
3. संक्षिप्त टिप्पणी लिखिये ।
   (a) सोर्करॉट
   (b) योगर्ट दही
   (c) सिट्रिक अम्ल

13.13 शब्दावली (Glossary) :

एल्कोहॉल	-	Alcohol
वाइन	-	Wine
बीयर	-	Beer
विस्की	-	Whisky
विकर	-	Enzyme
सिरका	-	Vineger
किण्वन	-	Fermentation
योगर्ट	-	Yoghurt
पाश्चुरीकरण	-	Pasteurization

13.14संदर्भ ग्रंथ (Reference Books)

1. ब्रोक बायोलोजी ऑफ माइक्रोऑर्गेनिजम्स पीयरसन एजूकेशन, यू.एस.ए. ।
2. त्रेहान, बायोकेमेस्ट्री, न्यू एज इन्टरनेशलन प्रा. लि., नई दिल्ली ।
3. गुप्ता, एलीमेन्ट्स ऑफ बायोटेक्नोलोजी, रस्तोगी एण्ड कम्पनी, मेरठ ।
4. शर्मा, माइक्रोबायोलोजी, रस्तोगी एण्ड कम्पनी, मेरठ ।
5. दुबे, द टेक्सट बुक ऑफ बायोटेक्नोलॉजी एस. चांद एण्ड कम्पनी, नई दिल्ली ।
6. टारो एवं वर्गीस, एप्लाइड माइक्रोबॉयोलोजी, बायोसाइन्सेस बुक डिस्ट्रीब्यूटर ।

इकाई 14

जैविक नाइट्रोजन स्थिरीकरण

(Biological Nitrogen Fixation)

इकाई की रूपरेखा

14.0 उद्देश्य

14.1 प्रस्तावना

14.2 नाइट्रोजन स्थिरीकरण एवं डाइएजोट्रॉफी

14.3 डाइएजोट्रोफ की पारिस्थितिकी

14.4 सहजीवी एवं असहजीवी नाइट्रोजन स्थिरीकरण

14.5 नाइट्रोजन स्थिरीकरण के स्थान

14.6 नाइट्रोजीनेज. प्रकार तथा लक्षण

14.7 नाइट्रोजीनेज की भूमिका

14.8 नाइट्रोजन स्थिरीकरण की क्रियाविधि

14.9 लेग्युमोनस पादपों में सहजीवन की स्थापना

14.10 डाइएजोट्रॉफी की आनुवंशिकी (आण्विक नाइट्रोजन स्थिरीकरण)

14.10.1 सिम प्लाज्मिड

14.10.2 नोड जीन

14.10.3 निफ जीन

14.10.4 हप जीन

14.11 नाइट्रोजन स्थारक जैव इनोकूलेन्ट्स का उत्पादन

14.12 सारांश

14.13 बोध प्रश्नों के उत्तर

14.14 अभ्यासार्थ प्रश्न

14.15 शब्दावली

14.16 संदर्भ ग्रन्थ

14.0 उद्देश्य (Objectives):

इस इकाई को पढ़कर ज्ञात होगा कि -

(1) सजीव वायुमंडल से किस प्रकार नाइट्रोजन प्राप्त करते हैं ।

(2) सजीवों में डाइएजोट्राफी किस प्रकार की होती है ?

(3) डाइएजोट्राफी में नाइट्रोजन स्थिरीकरण के स्थल कौनसे है ' नाइट्रोजीनेज की क्या भूमिका है तथा इस प्रक्रिया की क्या क्रियाविधि है ?

(4) नाइट्रोजन स्थिरीकरण की आनुवंशिकी क्या है ?

(5) नाइट्रोजन स्थारक जैव इनोकूलेन्ट्स के उत्पादन विधि क्या है तथा इससे क्या लाभ है ?

14.1 प्रस्तावना (Introduction):

नाइट्रोजन सभी सजीवों में पाया जाने वाला एक महत्त्वपूर्ण तत्त्व है । श्वसन के दौरान ग्रहण की गई वायु में 78% नाइट्रोजन होती है साथ ही मुक्त की गई वायु में भी 78% ही नाइट्रोजन उपस्थित होती है । इस प्रकार हम पादप एवं जन्तु जगत के प्रारूपित सदस्य है जो इस गैस को जैविक रूप से उपयोगी रूप में नहीं बदल पाते । सजीवों में कार्बन, हाइड्रोजन व ऑक्सीजन के बाद नाइट्रोजन ही अत्यधिक महत्त्वपूर्ण तत्त्व है जो प्रोटीन, विटामिन साइटोक्रोम हार्मोन्स तथा न्यूक्लिक अस्त आदि में पाया जाता है । सजीवों को नाइट्रोजन दो स्त्रोतों से प्राप्त होती है ।

1. मृदा
2. वायुमंडल

मृदा में नाइट्रोजन नाइट्राइट, नाइट्रेट, अमोनियम लवण तथा कार्बनिक नाइट्रोजनी पदार्थों के रूप में उपस्थित होती है जिनमें से नाइट्रेट अत्यधिक उपयोगी है जो पादपों द्वारा अवशोषित किया जाता है । इसके अतिरिक्त नाइट्राइट अमोनियम लवण भी तीव्रता से अवशोषित किये जाते हैं लेकिन ये मृदा को अम्लीय बना देते हैं ।

14.2 नाइट्रोजन स्थिरीकरण एवं डाइएजोट्रॉफी (Nitrogen Fixation and Diazotrophy):

वायुमंडलीय नाइट्रोजन वास्तव में आण्विक नाइट्रोजन (Z=N) है जो अत्यधिक स्थाई होती है तथा रासायनिक रूप से निष्क्रिय होती हैं । यह नाइट्रोजन कुछ तत्त्वों या यौगिकों से अनुकूल परिस्थितियों में क्रिया करके नाइट्रोजनी लवण या यौगिक बनाती है । वायुमंडलीय मुक्त नाइट्रोजन से नाइट्रोजनी यौगिकों के परिवर्तन की क्रिया नाइट्रोजन स्थिरीकरण (N2 fixation) कहलाती है । इन नाइट्रोजनी यौगिकों को पादप आसानी से अवशोषित कर पाते हैं । नाइट्रोजज स्थिरीकरण की यह क्रिया तीन प्रकार से हो सकती है ।

1. भौतिक नाइट्रोजन स्थिरीकरण
2. रासायनिक नाइट्रोजन स्थिरीकरण
3. जैविक नाइट्रोजन स्थिरीकरण

1. भौतिक नाइट्रोजन स्थिरीकरण (Physical N2 fixation)

प्राकृतिक तरीकों से होने वाले नाइट्रोजन स्थिरीकरण का लगभग 15% भाग भौतिक क्रियाओं द्वारा होता है जैसे - तड़ित, मेघ गर्जन, आँधी और पर्यावरणीय प्रदूषण आदि । तूफान एवं तड़ित के दौरान नाइट्रोजन एवं ऑक्सीजन परस्पर क्रिया करके नाइट्रिक ऑक्साइड का निर्माण करती है जो नाइट्रोजन डाइऑक्साइड (NO2) या नाइट्रोजन पराक्साइड में ऑक्सीकृत हो जाती है । ये जल की उपस्थिति में नाइट्रस व नाइट्रिक अम्ल का निर्माण करते हैं ।

$$N_2 + O_2 \xrightarrow[\text{मेघ गर्जन}]{\text{तड़ित}} NO$$

$$2NO + O_2 \xrightarrow{\text{ऑक्सीकरण}} 2NO_2$$

$$NO_2 + H_2O \longrightarrow HNO_2 + HNO_3$$

ये अम्ल क्षारीय मूलकों से क्रिया करके घुलनशील नाइट्राइट अम्ल तथा नाइट्रेट लवण बनाते हैं जो पादपों की जड़ों द्वारा अवशोषित कर लिए जाते हैं ।

2. रासायनिक नाइट्रोजन स्थिरीकरण (Chemical N2 Fixation)

रासायनिक क्रियाओं के दौरान हैबर्स प्रक्रिया द्वारा नाइट्रोजन अमोनिया (N=N) में अपचयित हो जाती है । इस प्रक्रिया में N2 व H2 अति उच्च दाब (200 atm) एवं ताप (- 200 c) पर मिलकर परस्पर क्रिया करते हैं तथा अमोनिया (NH3) का निर्माण करते हैं । अमोनिया से कृषि एवं अन्य उद्योगों के लिए विभिन्न उपयोगी उत्पादों का निर्माण होता है ।

$$N_2 + 3H_2 \xrightarrow[200\ \text{Atm}]{200°C} 2NH_3$$

3. जैविक नाइट्रोजन स्थिरीकरण अथवा डाइएजोट्रॉफी (Biological N2 Fixtion or Diazotrophy)

सजीवों द्वारा वायुमण्डलीय नाइट्रोजन (N=N) का इसके अकार्बनिक अथवा कार्बनिक यौगिकों में परिवर्तन की क्रिया जैविक नाइट्रोजन स्थिरीकरण कहलाती है । वे सभी सजीव जो नाइट्रोजन का उपयोग कर सकते हैं तथा वायुमण्डलीय नाइट्रोजन का स्थिरीकरण करते हैं जगत प्रोकैरियोट से सम्बन्धित होते हैं इन सभी में समान अभिक्रियाएँ दिखाई देती है जिनमें एन्जाइम (उत्प्रेरक) संकुल नाइट्रोजिनेस की उपस्थिति में नाइट्रोजन अपचयित होकर NH4. अथवा अमोनिया का निर्माण करती है ।

नाइट्रोजन स्थिरीकारक सजीव अमोनिया का निर्माण करने के लिए प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से प्रकाश ऊर्जा का उपयोग करते हैं । क्योंकि ये सजीव वातावरण से डाइनाइट्रोजन (N=N) का उपभोग करते हैं तथा NH4' अथवा अमोनिया बनाते हैं । इन प्रोकेरियोटिक जीवों द्वारा वायुमण्डलीय डाइनाइट्रोजन के स्थिरीकरण की प्रक्रिया **डाइएजोट्रोफी** (diazotrophy) कहलाती है तथा ये जीव **डाइएजोट्रोफ** (diazotroph) कहलाते हैं । पृथ्वी पर कुल नाइट्रोजन का लगभग 60 प्रतिशत अंश जैविक कारकों द्वारा यौगिकीकृत किया जाता है ।

14.3 डाइएजोट्रॉफ की पारिस्थितिकी (Ecology of Diazotrophs):

N2 स्थिरीकरण की क्षमता युक्त प्रोकेरियोटिक सूक्ष्मजीव मुक्त जीवी अथवा सहजीवी के रूप में रहते हैं । ये मुक्तजीवी वायवीय, अवायवीय अथवा अल्पवायवीय (microaerobic) हो सकते हैं । किन्तु सभी में एक बात समान रूप से पायी जाती है कि ये सभी N2 से अमोनिया बनाते हैं

तथा NH3 का उपयोग विभिन्न नाइट्रोजनी पदार्थों यथा प्रोटीन, न्यूकिलिक अम्ल, उनके व्युत्पन्न तथा वर्णक के निर्माण के लिए करते हैं । अधिशेष (excess) नाइट्रोजनी पदार्थ मृदा अथवा जल में विमुक्त हो जाते हैं जिसमें अमोनिया एवं अमीनो अम्ल मुख्य है माध्यम (मिट्टी/जल) में इनका अपघटन हो जाता है अथवा अन्य सूक्ष्मजीव अथवा पादप इनका अवशोषण कर उपयोग कर लेते हैं । राइजोबियम लेग्यूम अथवा अन्य सूक्ष्मजीव उच्च पादप सहजीवी संबंधों में सूक्ष्म जीव द्वारा संश्लेषित अमोनिया का उपयोग उच्च पादप एस्पार्जिन (asparagine)अथवा ग्लूटेमिन के संश्लेषण के लिए करते हैं जिनका अन्य अमीनों अम्लों में आवश्यकतानुसार परिवर्तन होता रहता है ।

मुक्तजीवी सूक्ष्म जीवों की मृत्यु एवं मूल ग्रंथिकाओं के मृत हो जाने पर इनमें उपस्थित प्रोटीन आदि का अपघटन होता है तथा अमीनो अम्ल एमाइड आदि मृदा में अथवा अन्य माध्यम में विसरित हो जाते हैं एवं मृदा की उर्वरा शक्ति बढ़ाने में सहायक होते हैं ।

14.4 सहजीवी एवं असहजीवी नाइट्रोजन स्थिरीकरण (Symbiotic and Nonsymbiotic N2 Fixation):

नाइट्रोजन स्थिरीकारक प्रोकेरियोटिक सूक्ष्मजीवों में से अनेक जीव मुक्तजीवी होते हैं तथा अनेक उच्च वर्ग के पादपों के साथ मिलकर सहजीवी संबंध स्थापित करते हैं । विभिन्न डाइएजोट्रोफ को मुख्यत: दो वर्गों में बांटा जा सकता है ।

I. असहजीवी नाइट्रोजन स्थिरकारी जीव (Asymbiotic or nonsymbiotic N2 fixing organisms)

II. सहजीवी नाइट्रोजन स्थिरकारी जीव (Symbiotic N2 fixing organisms)

कुछ लोगों के अनुसार एक अन्य वर्ग भी बनाया जा सकता है जिन्हें **साहचर्य नाइट्रोजन यौगिककारी जीव** (Symbiotic N_2 fixing organisms) कहते है । ये जीव अनाज वर्ग के पादपों एवं घास की जड़ों के साथ घनिष्ठ संपर्क में रहते है तथा पादप के मूल परिवेश (rhizosphere) में पाए जाते हैं । इनमें से कुछ ल, का यौगिकीकरण करते हैं तथा बदले में इन्हें पादपों द्वारा स्त्रावित कार्बोहाइड्रेट से भोजन मिलता है जैसे गन्ने के साथ बीजरिंकिया (Bijerinckia) तथा अनाज के साथ एजोस्पारिलम ब्रेजिलेंस (Azospirillum brasilense) ।

I. असहजीवी नाइट्रोजन यौगिककारी जीव (Asymbiotic N_2 fixing organisms)

इसमें मुख्य रूप से मुक्त जीवी (free living), वायवीय (aerobic) अथवा अवायवीय (anaerobic), प्रकाश पोषित (phototrophic) तथा परपोषित (heterotrophic) जीवाणु एवं नील हरित शैवाल या सायनोबैक्टीरिया (blue-green) शामिल है ।

1. **अविकल्पी वायवीय जीवाणु (obligate aerobic bacteria) -** एजोटोबैक्टर (Azotobacter), ऐजोमोनास (Azomonas), बीजरिन्कया (Beijerinkia) ।
2. **अवायवीय जीवाणु (Anaerobic bacteria) -** क्लोस्ट्रीडियम पैस्ट्यूरिएनम (Clostridium pasteurianum), डिसल्फोविब्रियों (Desulfovibrio) ।

3. **विकल्पी अवायवीय जीवाणु (Facultative anaerobic bacteria)** - क्लैबसिएला नीमोनी (klebbsiella pneumoniae), बेसिलस पोलीमिक्सा (Bacillus polymyxa) इत्यादि ।
4. **प्रकाशसंश्लेषी जीवाणु (Photosynthetic bacteria) -** क्लोरोबियम (chlorobium), क्रोमेशियम (Chromatium), रोडोसूडोमोनास (Rhdopseudomonas) ।
5. **एक्टिनोमाइसिटीज (Actinomycetes) -** ये एक प्रकार के जीवाणु होते है उदाहरण फ्रैन्क्रिया (Frankia) - यह भी कुछ पादपों के साथ सहजीवी के रूप में रहती है ।
6. **सायनोबैक्टीरिया अथवा नील-रहित शैवाल (Cyanobacteria or Blue-green algae) -** इनमें हेटेरोसिस्ट युक्त (heterocysted) अथवा हेटेरोसिस्ट रहित (non-heterocyted) दोनों प्रकार के शैवाल आते हैं तथा लगभग 40 प्रजातियों में नाइट्रोजन यौगिकीकरण होता है ।

हैटेरोसिस्ट युक्त शैवाल (Heterocysted) - एनाबीना (Anabaena), ऑलोसीरा (Aulosira), नॉस्टाक (Nostoc) ।

हेटेरोसिस्ट रहित शैवाल (Non-heterocysted) - ओसिलेटोरिया (Oscillatoria), प्लैक्टोनीमा (Plectonema) ।

II. सहजीवी नाइट्रोजन यौगिकीकरण (Symbiotic N_2 fixation)

जब वायुमंडलीय नाइट्रोजन का यौगिकीकरण करने वाले सूक्ष्मजीव पादपों के साथ सहजीवी संबंध स्थापित कर लेते हैं तब यह सहजीवी नाइट्रोजन यौगिकीकरण कहलाता है । सहजीवी संबंधों में दो प्रकार के संबंध देखने को मिलते हैं -

1. ग्रंथिका युक्त सहजीवी संबंध (Nodulated symbiosis)
2. ग्रंथिका विहीन सहजीवी संबंध (Non-nodulated symbiosis)

1. ग्रंथिका युक्त सहजीवी संबंध (Nodulated symbiosis)

अधिकांश सहजीवी संबंधों में पादप मूल में ग्रंथिकाएं (nodule) बनती है । इन्हें हम मोटे तौर पर दो भागों में बांट सकते हैं -

(i) लेग्यूमी पादपों में ग्रंथिका निर्माण द्वारा नाइट्रोजन यौगिकीकरण (Nirogen fixation by nodule formation in legumes)

लेग्यूमिनोसी कुल के लगभग 2500 पादपों में मूल ग्रंथिकाएं (root nodules) पाई जाती है जो राइजोबियम (Rhizobium) के कारण होती है, उदाहरणत: मेथी (Trigonella foenum graceum), चना (Cicer arietinum), मटर (Pisum sativum), सोयाबीन (Glycin max), मूंगफली (Arachis hypogaea) इत्यादि ।

राइजोबियम इन पादपों की जड़ों के चारों ओर मृदा में. मृतोपजीवी (saprohyte) के रूप में रहते हैं परन्तु नाइट्रोजन यौगिकीकरण पादप मूल में रहकर ही करते हैं, स्वतंत्र अवस्था में नहीं करते । ये जीवाणु पादप को अमोनियम लवण प्रदान करते हैं तथा बदले में पादप मूल से इन्हें कार्बोहाइड्रेट एवं आश्रय मिलता है ।

(ii) अलेग्यूमी पादपों में ग्रंथिकाएं (Nodules in non-leguminous plants)

अनेक अलेग्यूमी पादपों में भी नाइट्रोजन यौगिककारी सूक्ष्मजीवों के द्वारा मूल ग्रंथिकाओं का निर्माण होता है तथा ये सहजीवी संबंध स्थापित करते है ।

(A) फ्रैंकिया (Frankia) - यह एक्टिनोमाइसिटीज वर्ग की सदस्य है तथा लगभग 170 पादपों जैसे केजूराइना (Casuarina), एलनस (Alnus), एलिग्नस (Eleagnus) एवं मिरीका (Myrica) इत्यादि में मूल ग्रंथिकाएं बनाती है ।

(B) कुछ पादपों में पत्तियों में भी ग्रंथिकाएं पाई जाती है ।

(C) राइजोबियम भी कुछ अलेग्यूमी पादपों जैसे पैरास्पोनिया (Parasponia) एवं ट्रेमा (Trema sp) में ग्रंथिकाएं बनाते हैं ।

2. ग्रंथिका विहीन सहजीवी संबंध (Non-nodulated symbiosis)

इन में अनेक ऐसे सहर्जीवी संबंध शामिल है जिनमें मूल ग्रंथिकाएं अथवा ग्रंथिकाएं नहीं पाई जाती परन्तु सूक्ष्मजीवी पादपों के साथ सहजीवी संबंध स्थापित करते हुए नाइट्रोजन यौगिकीकरण का कार्य करते हैं ।

(A) सायनोबैक्टीरिया अथवा नील हरित शैवाल (Cyanobactria or Blue green algae)

ये लगभग प्रत्येक वर्ग के अनेक पादपों के साथ सहजीवी संबंध स्थापित करते हैं तथा नाइट्रोजन यौगिकीकरण का कार्य करते हैं ।

(i) कुछ शैवाकों में शैवालाश सायनोफाइसी के सदस्य होते हैं यथा - नॉस्टाक (Nostoc), रिवुलेरिया (Rivularia) एवं ग्लोईओकैप्सा (Gloeocapsa) ।

अजोला (Azolla) नामक फर्न में एनाबीना अजोली(Anabaena azollae), सायकस (Cycas) एक अनावृतबीजी वृक्ष में एनाबीना अथवा नॉस्टाक, एन्थोसीरोस (Anthoceros) में नॉस्टाक, आवृतबीजी गन्नेरा (Gunnera sp.) के तने में नॉस्टॉक सहजीवी के रूप में उपस्थित होते हैं । इनके अतिरिक्त कुछ जीवाणु भी सहजीवी के रूप में रहते है ।

3. साहचर्य नाइट्रोजन यौगिकीकरण (Associative nitrogen fixation)

अनेक जीवाणु उच्च वर्ग के पादपों के मूल परिवेश (rhizosphere) में पादप मूल के अत्यधिक निकट रहते हैं व कभी-कभी ऊतकों में प्रवेश कर जाते हैं व नाइट्रोजन यौगिकीकरण का कार्य करते. हैं । जैसे पेस्पेलम नोटेटम (Paspalum notatum) के साथ एजोटोबेक्टर पैस्पलई (Azotobacter paspali) एवं गन्ने के साथ बीजरिकिन्या (Beijerinckia) आदि ।

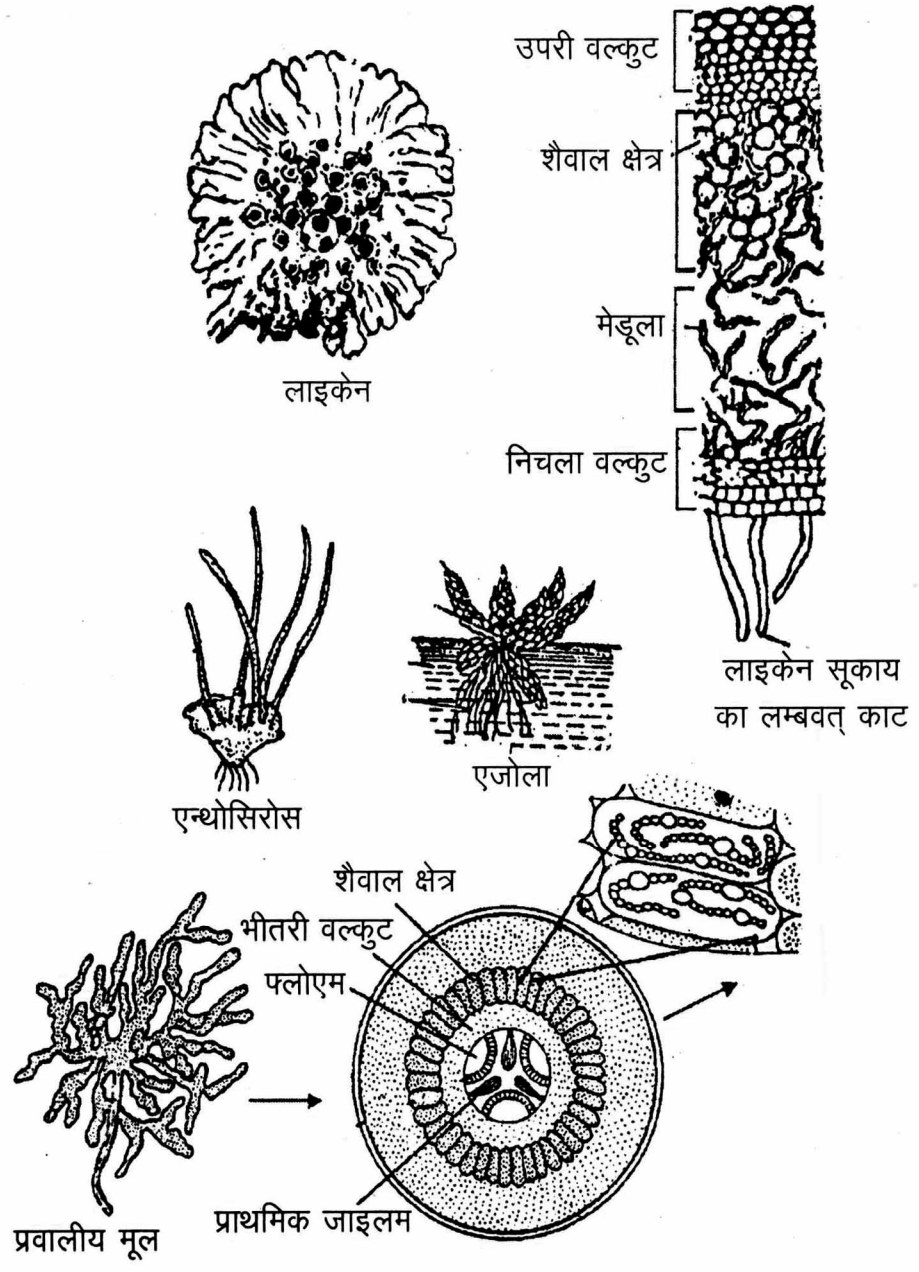

चित्र 14.1 : विभिन्न प्रकार के नाइट्रोजन यौगिककारी जीव एवं सहजीवी तंत्र

14.5 नाइट्रोजन स्थिरीकरण के स्थल (Sites of N_2 Fixation) :

नाइट्रोजन स्थिरकारी जीव की प्रकृति के अनुसार N_2 स्थिरीकरण के स्थल भिन्न-भिन्न होते हैं । नाइट्रोजन का स्थिरीकरण अवायवीय परिस्थिति में ही हो सकता है । अत: नाइट्रोजन स्थिरीकरण अवायवीय परिस्थिति में रहने वाले प्रोकेरियोटिक जीवों में होता है । वायवीय प्रोकेरियोटिक सूक्ष्मजीवों में उन्हें विशिष्ट आंतरिक अवायवीय वातावरण निर्मित करना पड़ता है । उदाहरणत: नील हरित शैवाल अथवा सायनोबैक्टीरिया में मोटी भित्ति युक्त

हैटेरोसिस्ट नामक विशिष्ट कोशिकाओं में N_2 स्थिरीकरण होता है । बहुधा NH_3 की उपस्थिति में हेटेरोसिस्ट विभेदन नहीं होता । हैटेरोसिस्ट में फोटोसिस्टम-II अनुपस्थिति के कारण O_2 उत्पादन नहीं होता । इसकी भित्ति में O_2 संयोजी ग्लाइकोप्रोटीन होते हैं जिससे अंदर O_2 की मात्रा बहुत ही कम होती है । हैटेरोसिस्ट रहित अनेक सायनोबैक्टीरिया अवायवीय परिस्थिति में N_2 स्थिरीकरण करते हैं । ऐसी परिस्थिति धान के जलमग्न खेतों में बहुधा ही रहती है । अनेक हैटेरोसिस्ट विहीन सायनोबैक्टीरिया -जैसे ऑसिलेटोरिया प्लैक्टोनीमा में N_2 स्थिरीकरण सामान्य कोशिका में ही विशिष्ट कक्षों में होता है जहां लगभग O_2 रहित परिस्थिति कायम रहती है । लेग्यूम-राइजोबियम सहजीवी संबंध में लेग्यूम पादपों की जड़ों में गांठे अथवा ग्रंथिकाएं (nodules) बन जाती हैं । N_2 स्थिरकारी जीवाणु इन गांठों की कोशिकाओं में N_2 स्थिरीकरण करते हैं । ये जीवाणु जीवाणुसम के रूप में पादप कोशिका में होते हैं तथा एक झिल्ली के कारण पादप जीवद्रव्य से सीधे संपर्क में नहीं होते । इन ग्रंथिकाओं में हीमोग्लोबिन के समान संरचना एवं गुणयुक्त वर्णक **लैगहीमोग्लोबिन** होता है जो ग्रंथिकाओं में ऑक्सीजन की मात्रा को नियंत्रित करता है ताकि नाइट्रोजिनेज एन्जाइम भली-भांति N_2 स्थिरीकरण कर सकें । इसी प्रकार **फ्रैंकिया** द्वारा भी N_2 स्थिरीकरण संबंधित सहजीवी पादप की मूल ग्रंथिकाओं में होता है ।

14.6 नाइट्रोजिनेज - प्रकार एवं लक्षण (Nitrogenase - Types and Properties) :

डाइएजोट्रोफ द्वारा वायुमंडलीय नाइट्रोजन को अमोनिया में परिवर्तित करने की प्रक्रिया नाइट्रोजिनेज एन्जाइम के कारण सम्पन्न होती है । यह एक संकुल (complex) माना जाता है जो नाइट्रोजिनेज (nitrogenase)एवं रिडक्टेज (reductase) से मिलकर बना होता है । यह एन्जाइम दो उपइकाइयों (subunits) से मिलकर बनता है ।

1. वृहत मोलिब्डो आयरन प्रोटीन (MoFe प्रोटीन) अथवा नाइट्रोजिनेज अंश
2. छोटा आयरन प्रोटीन (Fe प्रोटीन) - रिडक्टेज अंश

MoFe प्रोटीन (कुछ के अनुसार शुद्ध नाइट्रोजिनेज एन्जाइम) का अणुभार 2, 20,000 dalton तथा Fe प्रोटीन का अणुभार लगभग 55,000 dalton होता है । विभिन्न सूक्ष्म जीवों में इनका अणुभार एवं प्रकृति भिन्न-भिन्न होती है ।

विभिन्न सूक्ष्मजीवों से नाइट्रोजिनेज विलग किये गये है तथा प्रोटीन के आकार में भिन्नता दर्शाते हैं । इनमें से कुछ निम्न हैं -

1. Cp प्रकार (Cp type) का नाइट्रोजिनेज

यह क्लोस्ट्रीडियम पेस्टरिएनम (Clostridium pasteurianum) में पाया जाता है । इसमें एक MoFe प्रोटीन (Cp_1) तथा एक Fe प्रोटीन (Cp_2) होती है जिनका अणुभार क्रमश: 2,20,000 तथा 55,000 डाल्टन होता है । इसकी अर्थ आयु (half life) बहुत कम होती है अर्थात् यह शीघ्र ही विघटित हो जाता है ।

2. Kp प्रकार (Kp type) का नाइट्रोजिनेज

यह क्लेबसिएला नीमोनी (Klebsiella Pneumoniae) में होता है । इसमें भी MoFo प्रोटीन (Kp1, अणुभार 2,18,000 डाल्टन) तथा Fe प्रोटीन (Kp_2 अणुभार 66700 डाल्टन) होते हैं ।

3. Ac प्रकार (Ac type) का नाइट्रोजिनेज

यह एजोटोबैक्टर क्रूकॉकम(Azotobacter chroococcum) में पाया जाता है इसके Fe(Ac_2) एवं MoFe घटकों (Ac_1) का अणुभार क्रमश: लगभग 76,000 तथा 2,27,000 डाल्टन होता है ।

4. V-नाइट्रोजिनेज (V-nitrogenase)

इसके अतिरिक्त एजोटोबेक्टर विनलैण्डाई (Azotobacter vinelandii) में अलग प्रकार का नाइट्रोजिनेज पाया जाता है । इसे दो प्रोटीन होते हैं एक वृहत एवं विषम अवयवी अणु तथा दूसरी Fe प्रोटीन के समान होती है । बडी प्रोटीन में Fe-Mo के स्थान पर Fe-Va होता है अर्थात् मोलीबिडनम के स्थान पर वैनेडियम (Vanadium)होता है । यह एन्जाइम भी एसिटाइलिन का अपचयन (reduction) कर सकता है । Mo की उपस्थिति में इस एन्जाइम का संदमन (inhibition) हो जाता है संभवत: Mo की अनुपस्थिति में N_2 के अपचयन हेतु यह वैकल्पिक व्यवस्था हे जो इस प्रजाति में पाई जाती है । बाद में ए क्रूकॉकस में भी इसकी खोज की गई थी ।

नाइट्रोजिनेज जटिल के विशिष्ट लक्षण (Specific Properties of Nitrogenase Complex)

नाइट्रोजिनेज एन्जाइम Fe एवं MoFe प्रोटीनों से मिलकर बनता है । इसके कुछ अति विशिष्ट गुण हैं जिसके कारण इसका विलगन भी कठिन है ।

1. Fe-Mo प्रोटीन एवं Fe प्रोटीन में से MoFe प्रोटीन अपेक्षाकृत अधिक स्थायी है । इसका अर्ध जीवन (half life) 4 मिनट है जबकि Fe प्रोटीन का अर्थ जीवन मात्र 1/2 मिनट होता है ।
2. Fe प्रोटीन ऑक्सीजन की उपस्थिति में स्थायी रूप से निष्क्रिय हो जाता है ।
3. नाइट्रोजिनेज की सक्रियता के लिए ATP की अधिक मात्रा में उपस्थिति आवश्यक है । ADP नाइट्रोजिनेज के लिए प्रतियोगी संदमक (competitive inhibition) का कार्य करता है ।
4. Fe प्रोटीन O^0C पर अत्यधिक अस्थिर (labile) होती है किंतु 20°C पर यह प्रोटीन अपेक्षाकृत स्थायी होती है ।
5. विभिन्न स्त्रोतों से विलगित MoFe एवं Fe प्रोटीन लगभग एक समान ही होती है ।

वैज्ञानिक वर्षों से अनाज फसलों के पादपों में N_2 स्थिरीकरण क्षमता स्थानांतरित करने के लिए प्रयासरत है । इसके लिए 17 निफ जीनों के अतिरिक्त ATP एवं इलेक्ट्रॉन की आवश्यकता की आपूर्ति एवं मूल ग्रंथिका निर्माण संबंधी जीन आदि भी स्थानांतरित करने पड़ेंगे जो एक जटिल एवं कठिन कार्य है ।

14.7 नाइट्रोजिनेज की भूमिका (Role of Nitrogenase):

नाइट्रोजिनेज एन्जाइम वास्तव में दो असमान प्रोटीनों Fe प्रोटीन तथा MoFe प्रोटीन से निर्मित नाइट्रोजिनेज एन्जाइम संकुल है । ये दोनों प्रोटीन अलग किये जा सकते हैं किन्तु विलगित

अवस्था में ये किसी प्रक्रिया का प्रेरित नहीं कर सकते अर्थात् निष्क्रिय होते हैं । एन्जाइम संकुल (enzyme complex) में FeMo उपइकाई का सक्रियताकाल (half life) Fe प्रोटीन इकाई से अधिक होती है । Fe-Mo प्रोटीन नाइट्रोजिनेज संकुल का नाइट्रोजिनेज घटक तथा Fe प्रोटीन रिडक्टेज घटक को निरूपित करता है । नाइट्रोजिनेज घटक (Fe-Mo प्रोटीन) एक चतुष्टय (tetramer) होता है जिसमें दो प्रकार की श्रृंखलाएं α एवं β की दो-दो श्रृंखलाएं होती है । Fe-Mo सहकारक ही नाइट्रोजन यौगिकीकरण का स्थल होता है । इसमें Fe के 6 परमाणु इस प्रकार जुड़े होते है कि N=N के परमाणु इस के केन्द्र में स्थित हो जाते हैं तथा सहकारक Fe इस के साथ अनेक बन्ध (multiple bonds) बनाते हैं इससे N=N के आपसी बन्ध कमजोर हो जाते हैं तथा इनका आसानी से अपचयन हो सकता है एवं अमोनिया NH_4^+ के रूप में मुक्त होती है ।

रिडक्टेज घटक (Fe प्रोटीन) दो प्रोटीन अणुओं से बना द्वितीय वृहत अणु है इसका कार्य मुख्यत: इलेक्ट्रॉन दाता का है जैसे अपचयित फैरेडॉक्सिन (ferredoxin)से इलेक्ट्रॉन को नाइट्रोजिनेज घटक तक स्थानांतरित करना है । ATP के ADP में परिवर्तन के फलस्वरूप यह Fe-Mo प्रोटीन के निकट आ जाता है तथा इलेक्ट्रॉन का स्थानान्तरण होता है |

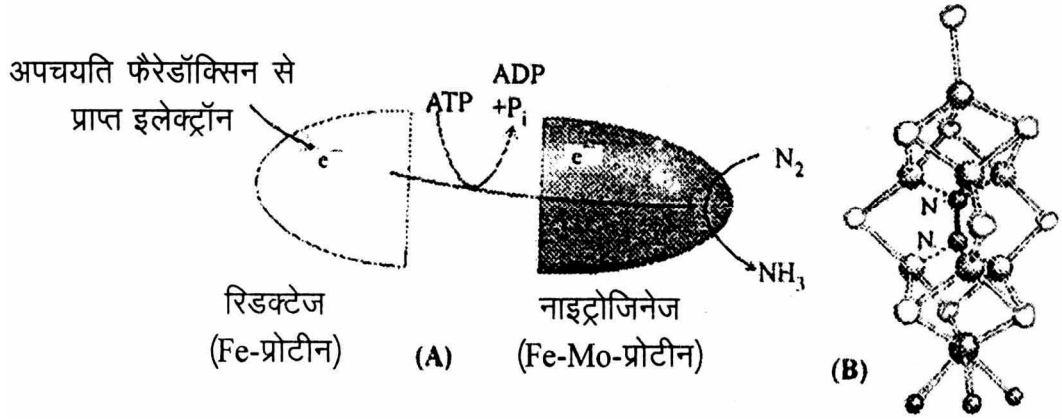

चित्र 14.2 (A) नाइट्रोजिनेस संकुल में रिडक्टेस एवं नाइट्रोजिनेज घटक एवं (B) नाइट्रोजन-अपचयन विस्थल

14.8 नाइट्रोजन स्थिरीकरण की क्रियाविधि (Mechanism of N_2 Fixation):

नाइट्रोजन के जैविक स्थिरीकरण की प्रक्रिया के बारे में सभी तथ्यों की जानकारी अभी तक प्राप्त नहीं हो पाई है । नाइट्रोजन स्थिरीकरण के लिए निम्नलिखित आवश्यक होते हैं -

1. नाइट्रोजिनेज एन्जाइम एवं हाइड्रोजिनेज एन्जाइम अथवा नाइट्रोजिनेज संकुल
2. कोबाल्ट एवं मोलिविडनम (Co and Mo) की उपस्थिति
3. ऑक्सीजन से बचाव के लिए उपयुक्त प्रक्रिया
4. इलेक्ट्रॉन वाहक (e^- carrier)
5. इलेक्ट्रॉन दाता अथवा हाइड्रोजन दाता (जैसे पाइरवेट, हाइड्रोजन, ग्लूकोज इत्यादि)

6. ATP की निरंतर आपूर्ति

7. सहविकर एवं सहकारक जैसे CoA,Mg^{2+} एवं TPP इत्यादि ।

8. अमोनिया से अभिक्रिया हेतु कार्बनिक पदार्थ

नाइट्रोजन के यौगिकीकरण के लिए आवश्यक ऊर्जा फास्फोरिलीकरण (phosphorylation) से प्राप्त होती है । प्रकाशसंश्लेषी जीवों में चक्रीय प्रकाशफास्फोरिलीकरण (photophosphorylation) से तथा अन्य परिस्थितियों में ऑक्सीफास्फोरिलीकरण (oxidative phosphorylation) अथवा पाइरूवेट से एसिटाइल CoA में परिवर्तन से प्राप्त ATP के रूप में प्राप्त होती है ।

इलेक्ट्रॉन के वाहक फैरोडॉक्सिन एवं फ्लेवोडॉक्सिन होते हैं ।

N^{15} से लेबल की गई नाइट्रोजन (N=N) के उपयोग द्वारा किये गये कोशिका रहित नाइट्रोजन यौगिकीकरण द्वारा पाया गया कि प्रथम स्थायी उत्पाद अमोनिया (NH_3) बनता है ।

$$N_2 + 6H^+ + 6e^-2 \rightarrow NH_3$$

परन्तु प्रयोगों में अमोनिया के साथ हाइड्रोजन गैस भी मोचित होती है जो एन्जाइम के हाइड्रोजिनेस अवयव के कारण होती है ।

$$N_2 + 8H^+ + 8e^- + 16ATP \rightarrow 2NH_3 + H_2 + 16ADP + 16Pi$$

नाइट्रोजन से पहले डाइडमाइड (Diimide) (HN=NH), फिर हाइड्राजिन (Hydrazine $H_2N - NH_2$) तथा अंत में अमोनिया बनते हैं परन्तु स्थायी उत्पाद अमोनिया के अतिरिक्त मध्यवर्ती उत्पाद नहीं देखे गए हैं ।

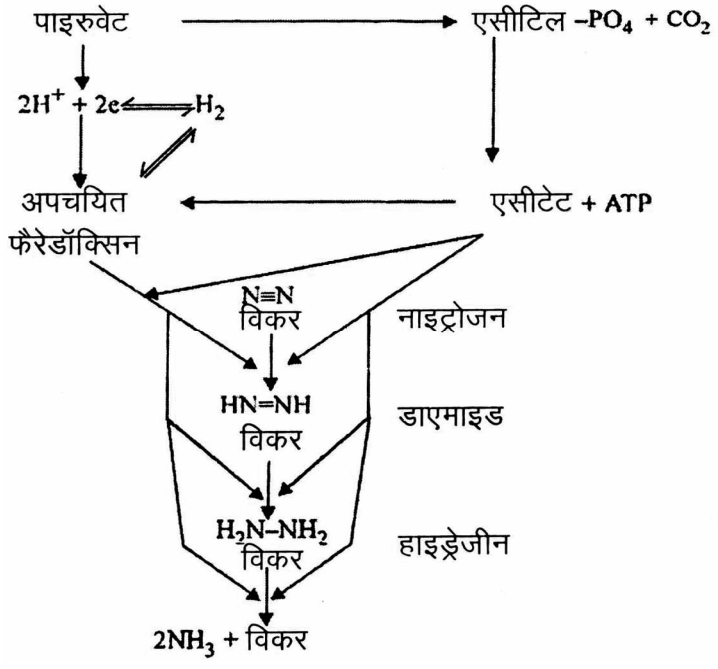

चित्र 14.3 बारिस के अनुसार नाइट्रोजन के अपचयन में प्रत्येक चरण पर ATP और फेरेडॉक्सिन की भूमिका एवं मध्यवर्ती उत्पाद

मैकनरी एवं बारिस (McNary and Burris, 1962)तथा मार्टिनसन (Mortenson,1964) ने क्लोस्ट्रीडियम पेस्टूरिएनम (Clostridium pasteurianum) के कोशिका रहित निस्सारों (extracts) के अध्ययन कर बताया कि N_2 स्थिरीकरण के लिए ATP की आवश्यकता होती है ।

मुक्तजीवी प्राणियों में नाइट्रोजन स्थिरीकरण में विभिन्न चरण (Various steps in N_2 fixation in free living organisms)

(1) सबसे पहले ग्लूकोज के अपघटन से पाइरूविक अम्ल बनता है तथा इससे एसिटाइल फास्फेट, Co_2 एवं हाइड्रोजन (H_2) बनते हैं । इसमें प्रथम चरण में एसिटाइल CoA तथा Co_2 एवं H_2 बनते हैं ।

(2) द्वितीय चरण में एसिटाइल CoA फास्फोरिक अम्ल से क्रिया करके एसिटाइल फास्फेट बनाता है ।

(3) हाइड्रोजन से इलेक्ट्रॉन फैरॉडाक्सिन को स्थानांतरित हो जाते हैं तथा उस का अपचयन होता है ।

(4) एसिटाइल फास्फेट ADP से क्रिया करके ATP एवं एसिटेट बनाते हैं । इस ATP का नाइट्रोजिनेज एन्जाइम के अपचयन के दौरान उपयोग होता है । प्रकाश संश्लेषण जीवाणुओं एवं नील हरित शैवाल में यह ATP चक्रिक फोटोफास्फोरिलीकरण के माध्यम से उपलब्ध होता है । इस के अतिरिक्त आक्सीकारी फास्फोरिलीकरण (oxidative phosphorylation) के द्वारा भी ATP उपलब्ध होते हैं ।

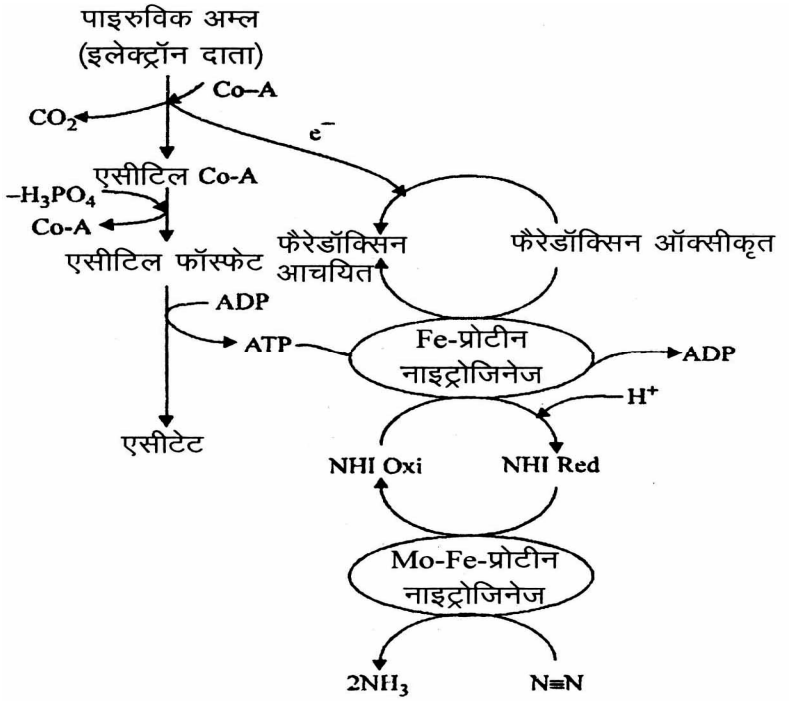

चित्र 14.4 : मुक्तजीवी प्राणियों में नाइट्रोजन स्थिरीकरण में इलेक्ट्रॉन वाहक

(5) फैरोडॉक्सिन से इलेक्ट्रॉन एवं माध्यम से हाइड्रोजन का स्थानांतरण होने से नाइट्रोजिनेज की लौहप्रोटीन (Fe-protein) का अपचयन होता है ।

(6) इसके साथ ही Mg^{2+} की उपस्थिति में ATP इसके साथ संलग्न होता है तथा एन्जाइम का यह अंश सक्रिय (activate) हो जाता है एवं Mo-Fe प्रोटीन को अपचयित कर देता है ।

(7) अपचायित Mo-Fe प्रोटीन नाइट्रोजन को अमोनिया में अपचयित कर देता है ।

(8) अमोनिया का तेजी से कार्बनिक उत्पाद जैसे ग्लूटेमिन आदि में परिवर्तन होता जाता है ।

सहजीवी लेग्यूमी पादपों में नाइट्रोजन स्थिरीकरण के विभिन्न चरण (Various steps in N_2 fixation in symbiotic legumes)

लेग्यूमी मूल गंथियों में N_2 स्थिरीकरण जीवाणुसम (bacteroids) में होता है । नाइट्रोजन उनमें उपस्थित नाइट्रोजिनेज एन्जाइम के साथ जुड़ जाती है । हालांकि यह माना जाता है कि इससे पहले डाइइमाइड (HN-NH), फिर हाइड्रेजीन ($H_2N=NH_2$) बनते हैं परन्तु एन्जाइम से मात्र अमोनिया (NH_3) ही मुक्त होती है । लेग्यूमी पादपों की मूल ग्रंथियों में भी नाइट्रोजन यौगिकीकरण के विभिन्न चरण उपरोक्त बताई गई विधि जैसे ही है परन्तु प्रारंभिक अवस्था कुछ भिन्न होती है ।

इसमें इलेक्ट्रॉन स्त्रोत पाइरूवेट के स्थान पर ग्लूकोज़-6-फास्फेट होता है । पादपों में उपस्थित शर्करा सूक्रोज का जड़ों में स्थानान्तरण हो जाता है । यहाँ सूक्रोज ग्लूकोज एवं फ्रक्टोज में अपघटित हो जाता है । ग्लाइकोलिसिस परिपथ एन्जाइमों के द्वारा ग्लूकोज का फास्फोरिलीकरण हो जाता है एवं ग्लूकोज 6-Po_4 बनता है । यह जल से क्रिया कर 6-फास्फोग्लूकोनिक अम्ल में परिवर्तित हो जाता है एवं साथ ही इलेक्ट्रॉन एवं हाइड्रोजन आयन $NADP^+$ को स्थानान्तरित हो जाते हैं ।

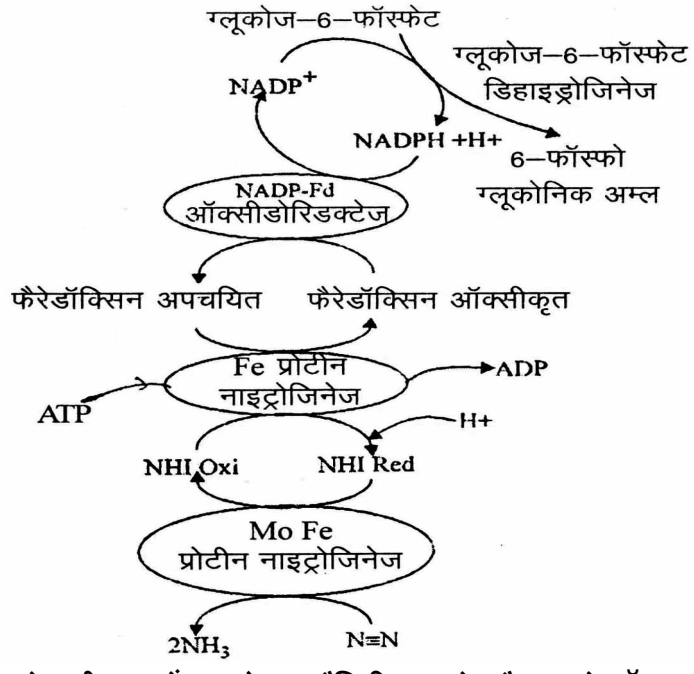

चित्र 14.5 लेग्यूमी मूल में नाइट्रोजन यौगिकीकरण के दौरान इलेक्ट्रॉन स्थानांतरण

ग्लूकोज 6.PO_4 + $NADP^+$ + H_2O $\rightarrow$ 6 फास्फोग्लूकोनिक अम्ल + NADPH + H^+

NADPH से इलेक्ट्रॉन फैराडॉक्सिन को स्थानांतरित हो जाते हैं तथा प्रोटीन (H^+) कोशिकाद्रव्य अथवा माध्यम में आ जाता है । इसके बाद की प्रक्रिया पहले के समान ही है ।

अमोनियम स्वांगीकरण (Ammonium Assimilation)

अमोनियम आयन सामान्यत: नाइट्रेट स्वांगीकरण अथवा सूक्ष्मजीवों के द्वारा नाइट्रोजन यौगिकीकरण के दौरान बनते हैं । इसके अतिरिक्त मृदा में उपस्थित अमोनियम आयन पादप द्वारा अवशोषित कर लिए जाते हैं । इनको पादपों द्वारा अमिनो अम्ल में परिवर्तित किया जाता है । अमोनियम आयन की उच्च सान्द्रता पादप व जन्तु सभी के लिए हानिकारक होती है । अत: NH_4^+ बनने के स्थल अथवा अवशोषण स्थल पर अथवा उसके पास ही इनका कार्बनिक रूप में परिवर्तन कर दिया जाता है । अमोनियम स्वांगीकरण सामान्यत: दो परिपथों (pathways) के माध्यम से होता है -

1. ग्लूटेमिन सिन्थेटेस (GS) एवं

ग्लूटमेट सिन्थेस अथवा ग्लूटेनिन आक्सोग्लूटरेट अमिनो ट्रांसफरेस (GOGAT) परिपथ

1. अमोनियम आयन (NH_4^+) ग्लूटमेट के साथ ग्लूटेमिन सिन्थेटेज एन्जाइम की उपस्थिति में मिलकर ग्लूटेमिन बनाते हैं इसके लिए वांछित ऊर्जा ATP से प्राप्त होती है तथा Mg^{2+}, Mn^{2+} अथवा Co^{2+} सहकारक के रूप में कार्य करते हैं ।
2. ग्लूटेमिन ग्लूटमेट सिन्थेस (GOGAT) की उपस्थिति में 2 ऑक्सीग्लूटरेट के साथ अभिक्रिया. करते हैं तथा NaDH + H^+ की उपस्थिति में अपचयन के द्वारा 2 ग्लूटमेट के अणु प्राप्त होते हैं । क्लोरोप्लास्ट में ग्लूटामिन की अधिक मात्रा ग्लूटमेट सिन्थेस की सक्रियता को प्रेरित करती है । पादप मूल में उपस्थित गोगेट (GOGAT) एन्जाइम इलेक्ट्रॉन एवं हाइड्रोजन दाता के रूप में NADH का उपयोग करते हैं ।

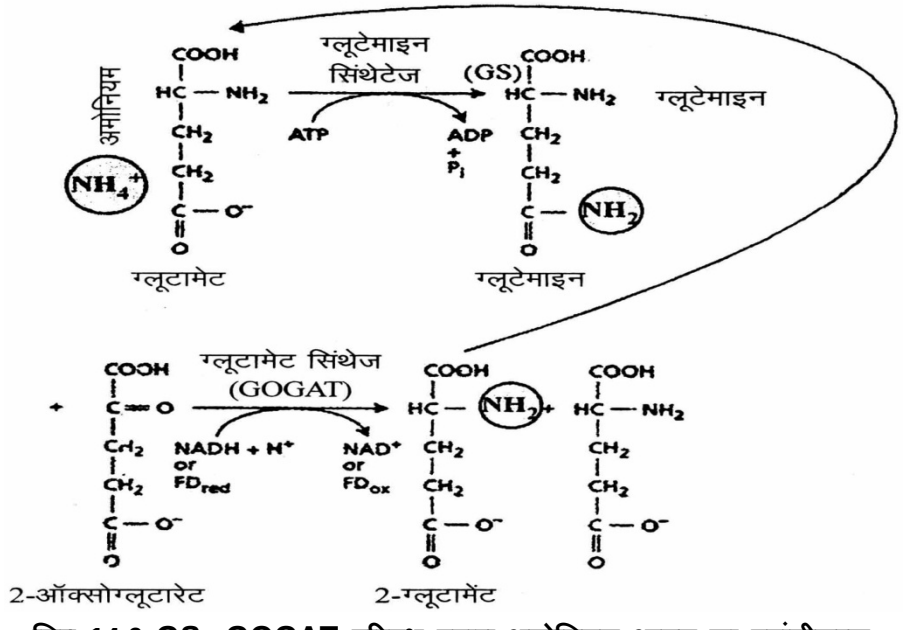

चित्र 14.6 GS- GOGAT परिपथ द्वारा अमोनियम आयन का स्वांगीकरण

2. GDH परिपथ (Glutamate dehydrogenase)

ग्लूटमेट डिहाइड्रोजिनेस (GDH) एन्जाइम ग्लूटमेट के संश्लेषण एवं विअमोनीकरण (deamination) दोनों को प्रेरित करता है तथा उस प्रक्रिया में NADH अथवा NADPH का उपयोग होता है ।

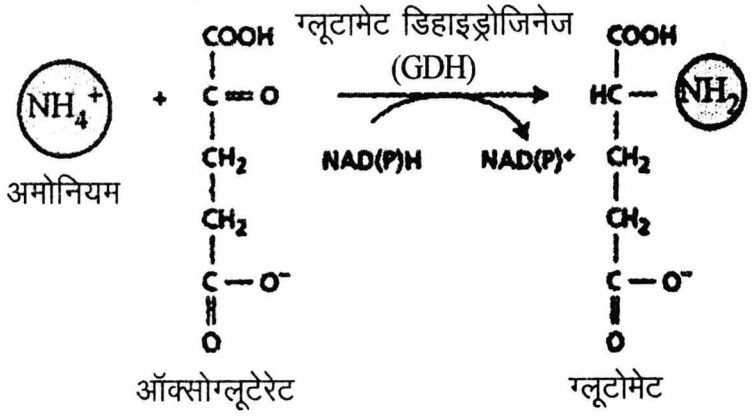

चित्र 14.7 GDH द्वारा अमोनियम का अमिनो अन्त में स्वांगीकरण

प्रयोगों द्वारा यह देखा गया है कि अमोनियम स्वांगीकरण मुख्यत: GS-GOGAT परिपथ द्वारा ही होता है, GDH परिपथ इसका स्थान (replace) नहीं ले सकता । GDH मुख्यत: ग्लूटमेट के विअमोनीकरण (deamination)के लिए ही प्रयुक्त होता है ।

14.9 लेग्यूमीनस पादपों में सहजीवन की स्थापना (Establishment of Symbiosis in Leguminous Plants) :

लेग्यूमिनोसी कुल के पौधों की जड़ों में राइजोबियम (Rhizobium) नामक सहजीवी जीवाणु पाये जाते हैं जो सामान्यतया अनियमित (irregular) आकृति की गांठे सी बनाते हैं जिन्हें ग्रंथिका (nodule)कहते है । राइजोबियम छोड़ाकर 1.2-3μ लंबे एवं 0.5-0.9μ चौड़े, ग्राम अग्राही (gram negative), चलनशील, एक कशाभिका (flagellum) युक्त जीवाणु होते हैं एवं वृत्ताकार उत्तल, उभरी हुई श्लेष्मी निवह (colony) बनाते है । सेक्बेनिया(Sesbania) में तने पर ग्रंथिकाएं (nodules) पाये जाते हैं । सामान्यतया दो प्रकार के राइजोबिया पाये जाते हैं ।

1. ब्रेडीराइजोबियम (Bradyrhizobium) - धीमी वृद्धि करने वाले जीवाणु

ये जीवाणु सोयाबीन, चना, अकेशिया(Acacia), शीशम (Dalbergia sisoo) इत्यादि में पाये जाते हैं ।

2. राइजोबियम (Rhizobium) - तीव्र वृद्धि करने वाले जीवाणु

उदाहरण - मेलीलोटस (Melilotus) में रा. मोलीलोटाई (R.Meliloti), ट्राईफोलियम(Trifolium), फेजीओलस (Phaseolus) में रा. लेग्यूमिनोसेरम(R.Leguminosarum)

ये जीवाणु मृदा में स्वतंत्र रूप से रहते हैं परन्तु मात्र लेग्यूमी पादपों में ही ग्रंथिका बनाते हैं । लेग्यूमी मूल एवं जीवाणु में सहसंबंध स्थापित होने की प्रक्रिया जटिल है एवं कई चरणों में पूरी

होती है जिसमें उपयुक्त जीवाणु की पहचान, जीवाणु को प्रवेशन, ग्रन्थिका का निर्माण, विकास एवं जीवाणु का जीवाणुसम (bacteroids)में परिवर्तन इत्यादि शामिल है । इसके विभिन्न चरण निम्न प्रकार है -

(i) उपयुक्त जीवाणु एवं परपोषी की परस्पर पहचान (Recognition of suitable host and bacteria)

ग्रंथिका के विकास में पहला चरण पहचानने (recognition) का होता है जिसमें पादप द्वारा स्त्रावित (secreted) पदार्थों में उपस्थित लैक्टिन (lectins) की मुख्य भूमिका होती है जो उपयुक्त जीवाणुओं को आकर्षित करते हैं तथा इनमें विभिन्न वृद्धिकारी पदार्थ जैसे अमीनो अम्ल, बायोटिन थायमिन इत्यादि भी होते हैं जो उपयुक्त जीवाणु की वृद्धि में सहायता करते हैं ।

जीवाणु के बहुशर्करा (polysaccharide)उन्हें मूल की सतह पर चिपकने (attachement) में सहायता करते हैं । वे मूल के निकट एकत्रित हो जाते हैं ।

(ii) मूलरोम का कुंतलन (Curling of root hairs)

पादप के मूल नि:स्त्राव (exudates) राइजोबिया को अपनी ओर आकर्षित करते हैं तथा वे मूल के चारों ओर एकत्रित हो जाते हैं । जीवाणु मूल नि:स्त्राव में उपस्थित ट्रिप्टोफेन (tryptophan) को इनडोल एसिटिक अम्ल (Indole acetic acid, IAA) में परिवर्तित कर देते हैं । जीवाणु कुछ एन्जाइम (enzymes) तथा सायटोकाइनिन (cytokinins) भी स्त्रावित करते हैं । IAA तथा सायटोकाइनिन मूलरोम कुंतलन को प्रेरित (induce) करते हैं ।

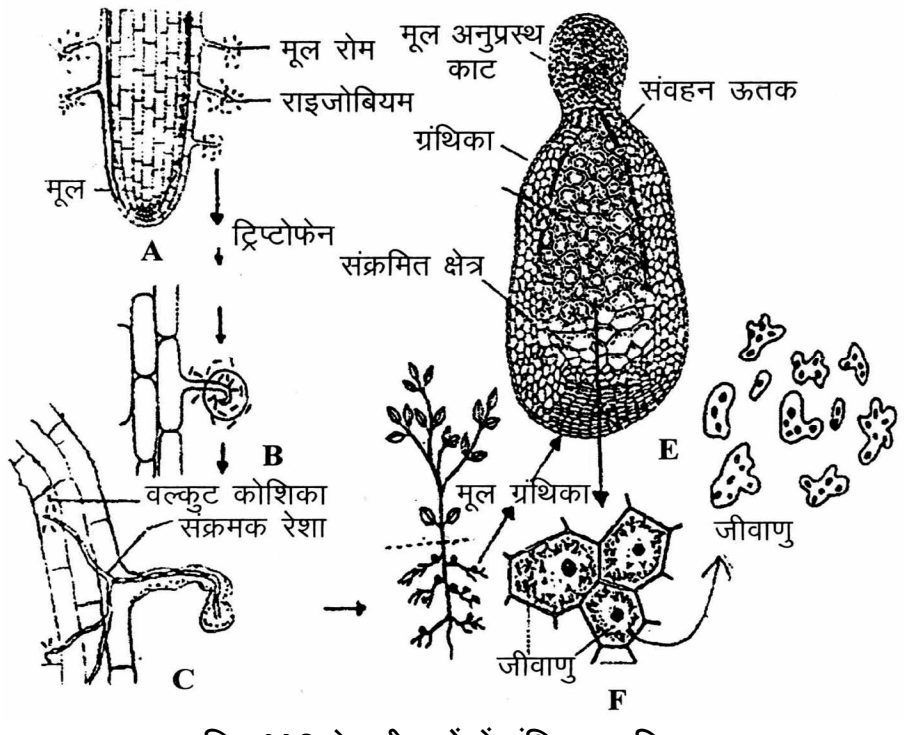

चित्र 14.8 लेग्यूमी मूलों में ग्रंथिका का विकास

(iii) प्रवेशन एवं संक्रमण तंतु का बनना (Penetration and formation of infection thread)

जीवाणु मूल रोम के कुंतलित सिर से होते हुए -अंदर प्रविष्ट होते हैं तथा मूल रोम की भित्ति अत:र्वलयित (invaginate) हो जाती है एवं संक्रमण तंतु (Infection thread) बनाती है जिसमें जीवाणु होते हैं संक्रमण तंतु की वृद्धि कोशिका केन्द्रक द्वारा निर्देशित होती है । जब यह वल्कुट के लगभग केन्द्र में पहुँच जाता है तब इसमें से जीवाणु मोचित (release) हो जाते हैं ।

(iv) ग्रंथिका का विकास (Development of nodule)

संक्रमण तंतु चतुर्गुणित (tetraploid) कोशिकाओं तक पहुँच जाता है। मूल वल्कुट की कोशिकाएं बारम्बार विभाजित होती है । इन्हीं कोशिकाओं में जीवाणुओं का मोचन होता है । यहाँ इनकी कशाभिका झड़ जाती है वे बड़े हो जाते हैं तथा उनकी आकृति अनियमित हो जाती है । इस अवस्था में उन्हें जीवाणुसम (bacteroids) कहते हैं । जीवाणुओं द्वारा स्रावित सायटोकाइनिन के कारण वल्कुट कोशिकाओं के बारम्बार विभाजन के फलस्वरूप ग्रंथिका बनती है । ग्रंथिका के केन्द्रीय भाग में जीवाणुसम से भरी हुई कोशिकाएं होती है जिसके चारों ओर वल्कुट की परतें होती है । जीवाणुसम चारों ओर परिजीवाणु झिल्ली (peribacteroid membrane) से घिरे रहते हैं तथा इन दोनों के मध्य का स्थान लेगहीमोग्लोबीन (leghaemoglobin)से भरा रहता है । प्रभावी (effective) अथवा क्रियाशील ग्रथिकायें बडी व लेगहीमोग्लोबीन की उपस्थिति के कारण गुलाबी रंग की होती है उसमें जननक्षम (viable) जीवाणुसम होते है जो नाइट्रोजन का स्थिरीकरण करते हैं । ग्रंथिका बनने के बाद, इसमें संवहन ऊतक विकसित हो जाते हैं तथा मूल के संवहन ऊतक से जुड़ जाते हैं । कुछ समय बाद ग्रंथिका मृत हो जाती है तथा जीवाणु मिट्टी में मोचित हो जाते हैं । मृत ग्रंथिकाएं श्वेत अथवा हल्की पीली रंग की होती है ।

लेगहीमोग्लोबिन (Leghaemoglobin)

लेगहीमोग्लोबिन रक्त में पाये जाने वाले हीमोग्लोबिन के समान ही लाल रंग का वर्णक (pigment) होता है तथा ग्रंथिका में ऑक्सीजन की आपूर्ति (supply) को नियंत्रित करता है । 'लैग शब्द लैग्यूम मूल को प्रदर्शित करता है । यह परिजीवाणु झिल्ली तथा जीवाणुसम के बीच में स्थित होता है । यह हीम प्रोटीन है जिससे लौह युक्त हीम अर्धांश (moiety) पेप्टाइड चेन से जुड़ा होता है । लेगहीमोग्लोबिन की उपस्थिति ग्रंथिका को गुलाबी रंगत देती है । किसी ग्रंथिका में लैगहीमोग्लोबिन की मात्रा एवं उस के द्वारा यौगिक में परिवर्तित नाइट्रोजन की मात्रा में सीधा संबंध होता है । लैगहीमोग्लोबिन के निम्न मुख्य कार्य है -

1. यह नाइट्रोजन अवशोषण एवं यौगिक में परिवर्तन स्थल को निरूपित करता है ।
2. यह टर्मिनल ऑक्सीडेज द्वारा O_2 ग्रहण करने में सहायता करता है तथा नाइट्रोजिनेज की सक्रियता के लिये इलेक्ट्रॉन वाहक के रूप में कार्य करता है तथा ATP उत्पादन में सहायक होता है ।
3. ग्रंथिका में ऑक्सीजन की मात्रा को नियंत्रित करता है । यह मात्र इतनी ही O_2 को भीतर प्रविष्ट होने देता है जितनी श्वसन के लिए पर्याप्त भर हो परन्तु नाइट्रोजिनेज तक न पहुँच सकें इस प्रकार नाइट्रोजिनेज के लिए O_2 रहित वातावरण निर्मित करता है ।

4. ऑक्सीजन वाहक के रूप में कार्य करता है ।

14.10 डाइएजोट्रोफों की आनुवांशिकी (Genetics of Diazotrops):

अनेक मुक्तजीवी एवं सहजीवी प्रोकेरियोटिक सूक्ष्मजीव से सम्बन्धित जीनों के अध्ययन के प्रयास किये गये है । उनमें राइजोबियम - लेग्यूम संबंध का सर्वाधिक अध्ययन हुआ है ।

14.10.1 सिम प्लाज्मिड (Sym plasmid)

राइजोबियम-लेग्यूम सहजीवी सम्बन्धों के विभिन्न प्रक्रियाओं से सम्बन्धित विभिन्न जीन (जैसे जीवाणु या मूलरोम पर संलग्न होना (adhesion), जीवाणु एवं पादप की परस्पर पहचान, संक्रमण तंतु निर्माण तथा नाइट्रोजन स्थिरीकरण, ग्रंथिका निर्माण आदि जीवाणु में एक वृहत प्लाज्मिड पर स्थित होते हैं । यह प्लास्टिड 'सिम प्लाज्मिड' (Sym plasmid) कहलाता है जिसका आकार लगभग 20-30 kb तक हो सकता है । उदाहरणत: रा. लेग्यूगिनोसेरम में सिम प्लाज्मिड pRL1JI होता है । इन्हें ग्रंथिका प्लाज्मिड अथवा नोडलीकरण प्लाज्मिड (nodulation plasmid) भी कहा जाता है ।

इसमें राइजोबियम से मूल ग्रंथिका के निर्माण से संबंधित नोड्यूल सम्बन्धी अथवा नॉड जीन (nod genes), नाइट्रोजन स्थिरकारी जीन (nitrogen fixing genes or Nif genes) तथा कुछ राइजोबियम जीवाणुओं में उपस्थित हाइड्रोजन हाइड्रोजन अंतर्ग्रहण अथवा 'हप' (Hydrogen uptake or Hup genes) मुख्य है । मिनॉड एवं निफ जीन युक्त एक प्लाज्मिड pRL1JI का राइजोबियम लेग्यूमिसेरम के एक प्रभेद से विलगन भी किया जाता है । इनके जीनों के बारे में संक्षिप्त वर्णन दिया जा रहा है ।

14.10.2 ग्रंथिका निर्माण संबंधी जीन अथवा नॉड जीन (Nod gene)

नॉड जीन्स विशिष्ट राइजोबियम एवं विशिष्ट पादप के मूल के आपसी विशिष्ट सम्बन्ध (specific interaction) तथा ग्रंथिका के निर्माण को नियंत्रित करते हैं । नॉड जीन राइजोबियम जीवाणु में उपस्थित वृहत आकार के प्लाज्मिड (megaplasmid) पर स्थित होते हैं । इनके निकट ही निफ जीन्स (nif genes) भी स्थित होते हैं ।

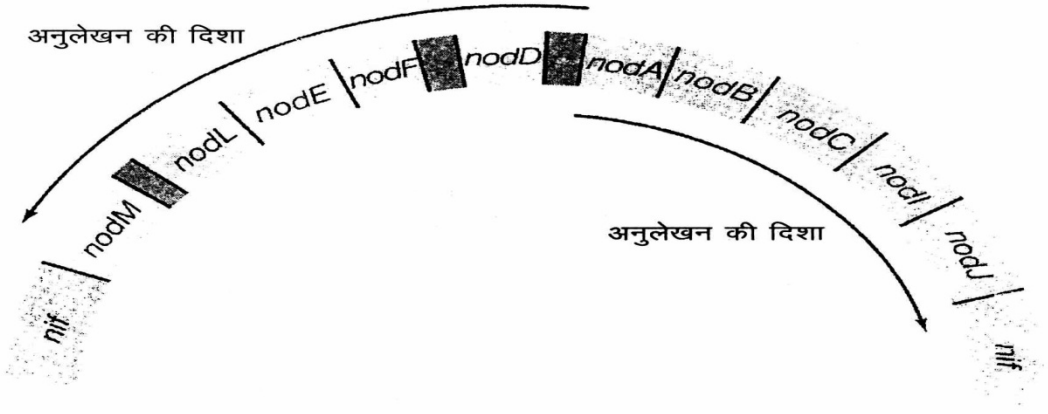

चित्र 14.9 : राइजोबियम लैग्यूमिनोसेरस के प्लाज्मिड में स्थित नॉड जीन समूह

सभी नॉड जीन्स की कुल लम्बाई लगभग 11 .5 किलोबेस पहचानी गई है । राइजोबियम लग्यूमिनोसेरम (Rhizobium leguminosarum) के विभिन्न प्रभेदों (strains) में इस मेगाप्लाज्मिड की लम्बाई 50-1500 kb तक आँकी गई है । नॉड जीन क्षेत्र में 4 जीन्स होते हैं जिन्हें A,B,C एवं D कहा जाता है ये विभिन्न प्रोटीनों का संश्लेषण करते हैं जिनमें क्रमश: 196,217,402 एवं 311 अमीनो अम्ल होते हैं । नॉड जीनों का नियंत्रण नॉड D(nod D) जीन द्वारा होती है तथा लगभग सभी राइजोबियम प्रभेदों में एक अथवा अधिक कॉपी में पाया जाता है।

अनेक राइजोबियम प्रभेदों में अध्ययन से इन जीनों में 69-72% समजात क्षेत्रों की पहचान की गई है जिन्हें उभयनिष्ठ नॉड जीन्स (comman nod genes) कहा गया । इन्हीं के आधार पर सभी आवश्यक नॉड जीन युक्त पुनर्योगज प्लाज्मिड(recombinant plasmid) p^{pp346} निर्मित किया गया है ।

14.10.3 नाइट्रोजन स्थिरकारी जीन अथवा 'निफ जीन (Nif genes)

नाइट्रोजन स्थिरकारी जीन मुक्तजीवी एवं सहजीवी दोनों प्रकार के नाइट्रोजन स्थिरकारी सूक्ष्मजीवों में पाये जाते हैं । राइजोबियम की विभिन्न प्रजातियों एवं प्रभेदों में **निफं जीन**, नॉड जीनों के निकट ही स्थित होते हैं । अधिकांश मुक्तजीवी डाइएजोट्रोफों में 'निफ जीन' गुणसूत्र पर स्थित होते हैं ।

सबसे पहले 'निफ जीन का अध्ययन क्लेबसिएला नीमोनी (Klebsiella pneumoniae) में किया गया था । इन जीनों को ई. कोलाई (E.coli) में स्थानान्तरित कर इनके कार्य के बारे में सुनिश्चित किया गया । कालांतर में विभिन्न सायनोबैक्टीरिया अन्य N_2 स्थिरकारी सूक्ष्मजीव एवं राइजोबियम प्रजातियों में भी 'निफ जीनों की खोज की गई । क्लैबसिएला नीमोनी में 'निफ जीन वास्तव में 17 जीनों से बना समूह होता है जो 7 अथवा 8 ऑपेरोंन (operns) के रूप में व्यवस्थित होते हैं । इनमें सात ऑपेरॉन क्रमश:QB,AL,FM,VSUX,NE,YKDH एवं J हैं । इन सभी जीनों का एक साथ अनुलेखन (transcription)होता है तथा एक बहुसमपारी दूत RNA(polycistronic mRNA) बनता है । इन जीनों के उत्प्रेरण अध्ययनों (mutational studies) के द्वारा विभिन्न जीन उत्पादों की प्रकृति के बारे में भी जानकारी एकत्रित की गई है । जीन LA का नियंत्रण संबंधी कार्य है जबकि H,D,K,Y जीन नाइट्रोजिनेज को कोड करते हैं । H,D एवं K जीन Fe, प्रोटीन तथा Mo-Fe प्रोटीन की उपइकाइयों (Subunits) के लिए कोड करते हैं ।

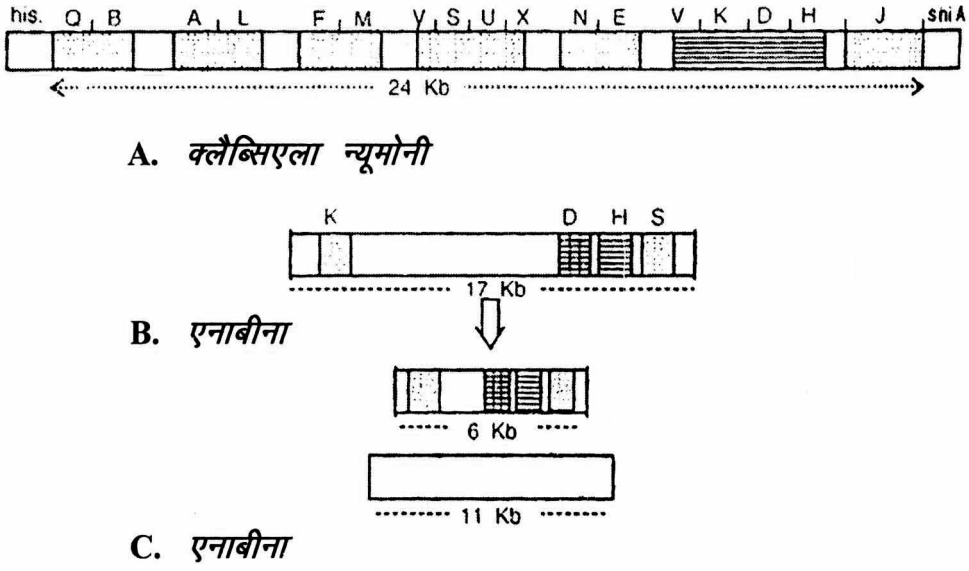

चित्र 14.10 : क्लैबसिएला एवं एनाबीना में निफ जीन समूह की व्यवस्था (A) क्लैबसिएला (B) एनाबीना कायिक कोशिका, एवं (C) एनाबीना - हेटेरोसिस्ट में जीन व्यवस्था

(ii) एनाबीना (Anabaena) प्रभेद 7120 में क्लैबसिएला निमोनी (Klebsiella pneumoniae) के DNA प्रोब (probe) की सहायता से निफ H,D एवं K जीनों की पहचान की गई है । हालांकि एनाबीना की कायिक कोशिकाओं एवं क्लैबसिएला जीनों की व्यवस्था भिन्न होती है । क्लैबसिएला विपरीत एनाबीना जीन S,H एवं D एक साथ संलग्न (contiguous) होते है तथा K जीन D जीन से लगभग 11 kb की दूरी पर स्थित होता है । एनाबीना हेटेरोसिस्ट में भी इन जीनों की व्यवस्था कायिक कोशिकाओं से भिन्न होती है । जीन प्रोब द्वारा ज्ञात हुआ कि इस पूरे जीन समूह (D, H, S एवं K) का आकार कायिक कोशिकाओं में 17 Kb होता है किन्तु हेटेरोसिस्ट में इस समूह का आकार मात्र 6 Kb रह जाता है तथा एवं K तथा D जीन अधिक निकट हो जाते हैं ।

हाल ही में एजोस्पाइरिलम (Azospirillum) के विभिन्न प्रभेदों एवं के नीमोनी (K.pneumoniae) के जीनोम के संकरण, प्रयोगों के आधार पर एजोस्पाइरिलम के कुछ प्रभेदों में 'निफ' HDK समूह एवं 'निफ' A जीन की खोज की गई है । इन्हीं प्रयोगों के आधार पर यह माना जाता है कि राइजोबियम एवं एजोस्पाइरिलम संभवत: एक ही पूर्वज से 'मॉड' जीन की स्थानान्तरण हुआ है एवं दोनों में ही मेगाप्लाज्मिड होता है ।

14.10.4 हाइड्रोजन अंतर्ग्रहण अथवा हप जीन (Hydrogen uptake gen, Hup gene)

राइजोबियम की कुछ प्रजातियों में नॉड एवं 'निफ' जीन समूहों के अतिरिक्त 'हप जीन' भी पाये जाते हैं । ये प्रभेद इस विकर के कारण $N_2 \rightarrow NH_3$ प्रक्रिया के दौरान विमुक्त हुई H_2 का पुन:उपयोग कर पुन: नाइट्रोजिनेज जटिल' को प्रदान कर सकते हैं ।

अधिकांश लेग्यूमी पादपों में लगभग 30-50% ऊर्जा H_2 गैस के रूप में नष्ट हो जाती है जिससे नाइट्रोजन स्थिरीकरण की क्षमता कम हो जाती है । वैज्ञानिकों ने आनुवांशिकी अभियांत्रिकी तकनीक द्वारा रा. लेग्यूमिनोसेरम से हप जीन -ve (Hup negative) राइजोबियम स्पी. जीवाणुओं में स्थानान्तरित किया एवं 'हप' जीन के कारण चने की मूल ग्रंथिकाओं में लगभग 8-13% तक ऊर्जा क्षति में कमी दर्ज की ।

विभिन्न देशों के वैज्ञानिक विशेषत: एकबीजपत्री पादपों (यथा धान्य पादपों) में 'निफ जीन' स्थानान्तरित करने के लिए प्रयासरत है ताकि धान्य फसलों में भी प्रोटीन की मात्रा बढ़ाई जा सकें ।

14.11 नाइट्रोजन स्थारक जैवसंरोप्य का उत्पादन (Production of N_2 Fixing Bionoculants) :

नाइट्रोजन स्थारक सूक्ष्मजीव वायुमंडलीय अक्रिय N_2 स्थिरीकरण के महत्त्वपूर्ण गुण के कारण अप्रत्यक्ष रूप से उनकी मृत्यु के उपरांत अथवा पादपों में नाइट्रोजनी पदार्थ के स्थानान्तरण माध्यम से जैव उर्वरकों के रूप में उपयोगी हो सकते हैं । इन्हें **जैव संरोप्य** (biomoculants) कहा जाता है । राइजोबियम, एजोटोबैक्टर, एजोस्पाइरिलम तथा कुछ सायनोबैक्टीरिया महत्त्वपूर्ण जैवसंरोप्य रूप में उपयोगी कुछ सूक्ष्मजीव है ।

14.11.1 राइजोबियम (Rhizobium)

राइजोबियम के विभिन्न प्रभेदों को वृहत स्तर पर संवर्धित कर लेग्यूमी बीजों में संरोपित किया जाता है । इसके लिए यीस्ट निस्सार मैनीटॉल ब्रॉथा/यूष (broth) माध्यम का उपयोग किया जाता है जिसका संघटन निम्न प्रकार है-

यीस्ट निस्सार	1 g
मैनीटॉल	10g
K_2HPO_4	0.5g
$MgSO_4.7H_2O$	0.2g
NaCl	0.1g
$CaCl_2$	3.0gm
$FeCl_3$	0.001gm
आसुत जल	1000ml
pH	6.5-7.0

माध्यम को निजर्मित कर उपयुक्त राइजोबियम प्रभेद से संरोपित करके $30-32°C$ पर 3-4 दिन तक उष्मायन के लिए रखा जाता है । इस दौरान वातन (aeration) की उपयुक्त व्यवस्था रखना आवश्यक है । इसके पश्चात् संवर्धन में निजर्मित वाहक जैसे- पीट, चारकोल, लिग्नाइट अथवा फार्मयार्ड खाद भी मिलाई जाती है । इन्हे प्लास्टिक की थैली में पैक कर पहले $25°C$ पर फिर $4°C$ पर सुरक्षित रखा जाता है । भारत में अधिकांशत: वाहक के रूप में फार्मयार्ड खाद

अथवा चारकोल पाउडर का उपयोग किया जाता है । अच्छे वाहक संवर्द्ध में लगभग $1-4 \times 10^9$, राइजोबियम 1g होने चाहिये ।

लेग्यूमी बीजों का संरोपण (Inoculation of Leguminous Seeds)

राइजोबियम संवर्द्ध द्वारा संरोपण से पूर्व गुड़ एवं गोंद का 10% घोल बनाया जाता है फिर इसमें वाहक युक्त संवर्द्ध अच्छी तरह हिलाते हुए मिलाया जाता है । इस संरोपण कर्दम (slurry) में बीजों का डालकर मिलाया जाता है सजा छाया में बीजों को सुखा दिया जाता है । इन बीजों की तुरंत बुवाई करनी चाहिये अन्यथा $4°C$ पर सुरक्षित रखें फिर बुवाई करें । इस प्रकार संरोपित लेग्यूमी बीजों में लगभग 10^5-10^6 जीवाणु प्रति बीज होने चाहिये । एक हैक्टेयर भूमि के लिए लगभग 400 g वाहक संवर्द्ध की आवश्यकता होती है ।

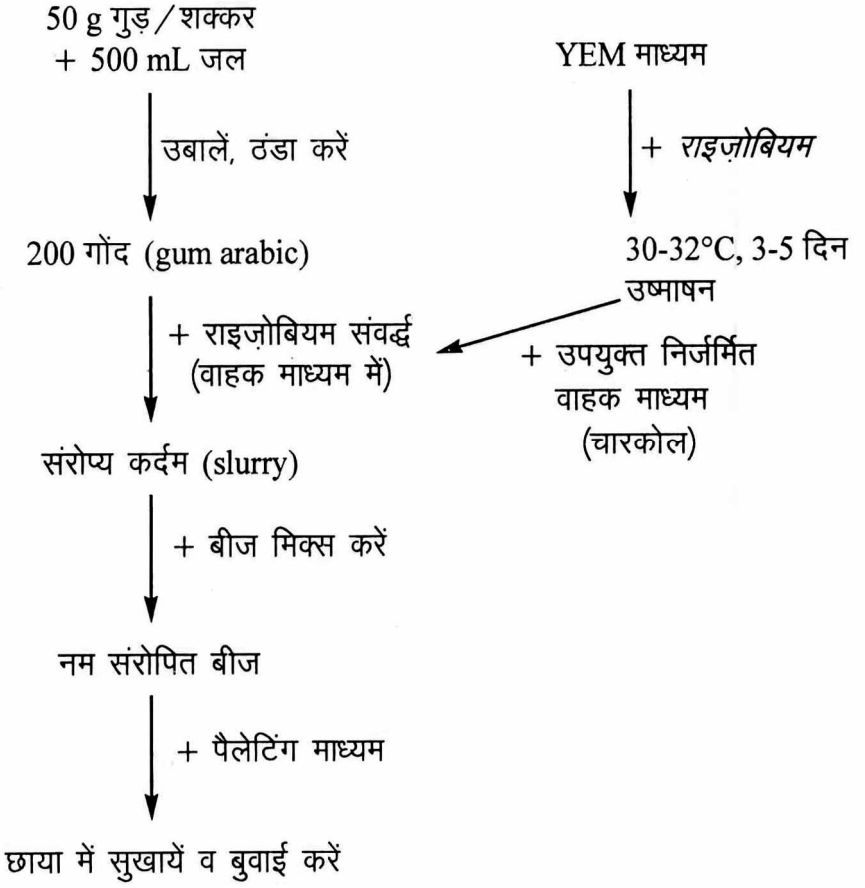

चित्र 14.11 : राइजोबियम संवर्द्ध द्वारा लेग्यूमी बीज संरोपण विधि

कभी-कभी राइजोबियम संरोप को मृदा की अवांछित परिस्थितियों जैसे शुष्कता, अधिक उर्वरक अथवा पीड़कनाशियों की उपस्थिति से बचाव के लिए पैलेटिंग (pelleting) प्रक्रिया अपनायी जाती है । इसमें प्रक्रिया समान रखते हुए स्तरी (slurry) में गोंद की मात्रा, लगभग 40% डाली जाती है । बीजों में भली प्रकार मिलाने के बाद सुखाने से पहले नम बीजों में ही उपयुक्त पैलेटिंग कारक (pelleting agent) जैसे $CaCO_3$, जिप्सम, रॉक फास्फेट, चारकोल पाउडर आदि

मिलाये जाते हैं ताकि बीजों पर इनकी एक समान परत बन जाये । छाया में सुखाने के बाद उन बीजों की बुवाई की जा सकती है ।

प्रायोगिक तौर पर उपयुक्त राइजोबियम प्रभेद द्वारा लेग्यूमी बीजों के संरोपण के बाद बुवाई के फलस्वरूप इनमें विभिन्न कृषि क्षेत्रों कें बीज उत्पादन में लगभग 2-40% तक, चना में 67% प्रतिशत तक वृद्धि पाई गई तथा लेग्यूमी फसल के बाद इसी क्षेत्र में लगाई गई रबी फसल (गेहूं) में भी उत्पादन में वृद्धि पाई गई है ।

14.11.2 एजोबैक्टर एवं एजौस्पाइरीलम आदि जैवसंरोप्यों का उत्पादन

राइजोबियम के समान एजोटोबैक्टर एवं एजोस्पाइरिलम को भी बीज संरोपण हेतु उपयोग किया जाता है । इन सूक्ष्मजीवों की निर्जमित माध्यम में $30-35°C$ पर 4-5 दिन तक संवर्धित किया जाता है । कुछ पादपों का प्रतिरोपण किया जाता है ऐसे पादपों की जड़ों को सीधे ही वाहक संवर्द्ध के विलयन में कुछ देर डुबोकर रोपित किया जा सकता है । इन सूक्ष्मजीवों के लिए भी फार्मयार्ड की खाद, चारकोल अथवा कभी-कभी समभाग अनुपात में मृदा एवं फार्मयार्ड का मिश्रण भी उपयोग किया जाता है ।

इन सूक्ष्मजीवों के उपचार से अनेक फसलों के उत्पादन में वृद्धि पाई गई है । कुछ वैज्ञानिकों (टीन Tien एवं साथियों, 1979) के अनुसार यह वृद्धि इन सूक्ष्मजीवों द्वारा IAA, जिबरैलिन एवं सायटोकाइनिन के समान पदार्थों के स्त्रवण एवं प्रभाव के कारण होती है ।

14.11.3 सायनोबैक्टीरिया का उत्पादन (production of Cyanobacteria)

इनके अतिरिक्त सायनोबैक्टीरिया जैसे ऑलोसीरा नॉस्टॉक एनाबीना आदि का विशेष रूप से जलमग्न. परिस्थितियों (जैसे धान के खेतों में) बहुत महत्त्व है । ये सायनोबैक्टीरिया वायुमंडलीय N_2 का स्थिरीकरण करते हैं तथा इनसे जीवित 7मृत अवस्था में अमीनों अस्त, प्रोटीन एवं अन्य सहायक पदार्थों की विमुक्ति जल में होती है जिन्हें पादप ग्रहण करते हैं । वेंकटरमन (Venkataraman, 1961)ने सायनोबैक्टीरिया / नील हरित शैवाल संवर्द्ध द्वारा खेत के उपचार को शेवालीकरण (algalization) नाम दिया तथा इसके लिए वृहत स्तर पर शैवाल संवर्धन तकनीक जापानी वैज्ञानिक बाटानावे एवं साथियों (Watannabe et al.) ने विकसित की । वेंकटरमन ने भारत में इस तकनीक का विकास किया ।

वर्तमान में इस प्रक्रिया का उपयोग भारत के अनेक राज्यों के विभिन्न क्षेत्रों में किया जा रहा है । वर्तमान में बृहत स्तर पर संवर्धन हेतु संबंधित क्षेत्र के लिए उपयुक्त सायनोबैक्टीरिया (एनाबीना ऑलोसीरा सिलिन्डोस्पर्मम, नॉस्टॉक प्लेक्टोनिमा आदि) के 5-6 प्रभेदों को प्रारंभिक संरोप्य के लिए उपयोग किया जाता है । इन्हें सीमेन्ट टैंको में, प्लास्टिक शीट लगे गढ्ढे में, धातु के ट्रफ में अथवा खेत में गढ्ढे में संवर्धित किया जाता है । लागत के अनुसार गढ्ढे में प्लास्टिक शीट के उपयोग वाली विधि उपयुक्त होती है ।

गढ्ढे या टैंक की चौड़ाई लगभग 15 मी. रखी जाती है ताकि कार्य करने में आसानी रहे । इसमें लगभग 2-3 किग्रा मिट्टी एवं 100 g सुपरफास्फेट डालकर लगभग 10 सेमी गहरा पानी से भर दिया जाता है । जल का pH 7.0 होना चाहिये । -इसमें मच्छर को पनपने से रोकने के लिए 2

ml। कीटनाशी भी डाला जाता है । जल को अच्छी तरह हिलाने के बाद जब मिट्टी बैठ जाती है तब संरोप्य (100g) साफ पानी में छिड़का जाता है । संवर्धन हेतु उपयुक्त तापमान $30-40°C$ होता है । सूखने के बाद शैवालीय जाल मिट्टी से पपड़ी के रूप में अलग हो जाता है । इन्हें एकत्र करके, पाउडर के रूप प्लास्टिक की थैलियों में कृषकों को भेजा जाता है ।

14.11.4 जैवसंरोप्य से लाभ (Benefits from Bioinoculants)

1. इनकी लागत कम होती है तथा संवर्धन तकनीक भी सरल होती है एवं छोटे किसान भी सरलता से इनका संवर्धन व उपयोग कर सकते हैं ।
2. रासायनिक उर्वरकों के विपरीत मृदा की उर्वरता एवं कृषि उपज बढ़ाने की यह विधि प्रदूषण रहित है ।
3. इनमें से अनेक सूक्ष्मजीव जैसे सायनोबैक्टीरिया तथा कुछ जीवाणु कुछ बृद्धिकारक पदार्थो जैसे IAA, प्रोटीन, अमीनों अम्ल, विटामिन आदि का स्त्रवण करते हैं जो पादपों की वृद्धि दर बढ़ाते हैं ।
4. एजोटोबैक्टर व सूक्ष्मजीव जैसे सायनोबैक्टीरिया तथा जीवाणु कुछ प्रतिजैविक पदार्थों का विमोचन करते हैं जो पादपों की कुछ रोगकारकों एवं पीड़कों (pests) से रक्षा करते हैं ।
5. राइजोबियम, एजोटोबैक्टर आदि के उपयोग से न केवल उपज बढ़ती है बल्कि मृदा में भी नाइट्रोजनी पदार्थों की मात्रा बढ़ती है । राइजोबियम से प्रतिवर्ष लगभग 50-150 प्रति हैक्टेयर तक नाइट्रोजन का स्थिरीकरण होता है ।
6. अनेक जैवसंरोप्यों से मृदा की प्रकृति में भी परिवर्तन हो जाता है । इसकी जल धारण क्षमता, pH एवं वातन आदि में परिवर्तन होता है । मृदा में कार्बनिक तत्वों की मात्रा भी बढ़ जाती है ।

बोध प्रश्न

1. N_2 स्थिरीकरण में समर्थ एक कवक, जो कि उच्च पादपों के साथ सहजीवी संबंध में स्थापित करती है, कौन सी है?
   (A) एल्ब्यूगो (Albugo) (B) पॉलीपोरस (Polyporus)
   (C) फ्रौंकिया (Frankia) (C) उपरोक्त कोई नहीं
2. निम्न में से कौन एक सामान्य मुक्तजीवी, N_2, स्थिरीकरण करने वाला जीवाणु है?
   (A) क्लोस्ट्रीडियम (Clostridium) (B) अजोटोबैक्टर (Azotobactor)
   (C) फ्रेंकिया (Frankia) (C) एनाबीना (Anabaena)
3. N_2 स्थिरीकरण करने वाले प्राणियों को क्या कहते हैं?
   (A) प्रकाशपोषित जीव (Phototrophs) (B) डाएजोट्रॉफ (Diazotrophs)
   (C) परपोषी जीव (Heterotrophs) (D) एजोट्राफ (Azotrophs)
4. हेटेरोसिस्ट रहित नील-हरित शैवाल का उदाहरण कौन सा है?
   (A) ऑसिलेटेरिया (Oscillatoria) (B) प्लैक्टोनीमा (Plectonema)

(C) उपरोक्त दोनों (D) एनाबीना (Anabaena)

5. कौन सी नील-हरित शैवाल विभिन्न समूहों (डा००98) के कई पादपों के साथ संबंधित (associate) होती है?

(A) ऑलोसिरा (Aulosira) (B) ऑसीलेटोरिया (Oscillatoriaa)

(C) प्लैक्टोनिमा (Plectonema) (C) एनाबीना (Anabaena)

6. N_2 स्थिरकारी विकर को O_2 से बचाने वाला वर्णक (पदार्थ) कौन सा है?

(A) हीमोग्लोबिन (B) लेगहीमोग्लोबिन

(C) ग्लोब्यूलिन (D)उपरोक्त में से कोई नहीं ।

7. दण्डाकार, ग्राम अग्राही तेजी से वृद्धि करने वाले लेग्यूमी पादपों की जड़ों के साथ सहजीवी के रूप में रहने वाले जीवाणु है

(A) ब्रेडीराइजोबियम (B) ब्रेकी राइजोबियम

(C) राइजोंबियम (D) उपरोक्त में से कोई नहीं ।

8. नाइट्रोजन यौगिकीकरण हेतु कौन सा सहजीवी संबंध सबसे अधिक पाया जाता है -

(A) माइकोराइजा (B) राइजोबियम-लेग्यूम मूल

(C) राइजोबियम-सायकस (D) नॉस्टॉक-न्थोसिरोस

9. GS-GOGAT से क्या तात्पर्य है?

(A) ग्लूकोसेमिन 2 आक्सोग्लूटरेट अमीनो ट्रांसफरेस

(B) ग्लूटेनिन सिन्थेस का दूसरा नाम

(C) ग्लूटेमिन 2 आक्सोग्लूटरेट अमाइड ट्रांसकीटोलेस

(D) उपरोक्त में से कोई नहीं ।

10. राइजोबियम ग्रंथिका के निर्माण के समय मूल रोम कुंतलन किस के कारण होता है -

(A)राइजोबियम स्त्रावित एन्जाइम के कारण (B) लेक्टिन के कारण

(C) IAA एवं सायटोकाइनिन के कारण (D) लेगहीमोग्लोबिन के कारण

11. लेगहीमोग्लोबिन का क्या कार्य है?

(A) ग्रंथिकाओं को गुलाबी रंग देना (B) नाइट्रोजिनेस विकर की रक्षा करना

(C) नाइट्रोजिनेस विकर के लिए O_2 मोचित करना (D) उपरोक्त सभी

रिक्त स्थान भरो / एक शब्द दे / सत्य अथवा असत्य लिखें

12. पादपों के लिए नाइट्रोजन का मुख्य स्त्रोत..... है ।

13. संक्रमण तंतु से जीवाणुओं का मोचन..... कोशिकाओं में होता है ।

14. जैविक नाइट्रोजन यौगिकीकरण का प्रथम मुक्त उत्पाद..... होता है ।

15. लेग्यूमी पादपों की मूल ग्रंथियों में इलेक्ट्रॉन दाता..... होता है ।

16. नाइट्रोजिनेज एन्जाइम एक..... होता है ।

17. नाइट्रोजिनेज संकुल में क्या होता है?

18. रासायनिक विधि में N_2 का अमोनिया में परिवर्तन किस प्रक्रिया से होता है?
19. अमोनिया का स्वांगीकरण सबसे ज्यादा किस परिपथ से होता है?
20. नाइट्रेट से जन्तुओं में कौन सा रंग हो जाता है?
21. मनुष्य में अधिक नाइट्रेट से नाइट्रासेमिन बन जाता है जो कैंसरजन होता है । (सत्य / असत्य)
22. नाइट्रेट की उपस्थिति में नाइट्रेट रिडक्टेस एन्जाइम का संश्लेषण प्रारंभ हो जाता है । (सत्य / असत्य)
23. नाइट्रोजिनेज एन्जाइम के लिए अनाक्सी वातावरण की कोई आवश्यकता नहीं होती । (सत्य / असत्य)
24. अमोनियम आयन की अधिक सान्द्रता सभी के लिए हानिकारक होती है । (सत्य / असत्य)
25. अमोनिया की उपस्थिति में नाइट्रोजिनेज की सक्रियता बढ़ जाती है । (सत्य / असत्य)
26. नाइट्रोजन के नाइट्रोजिनेज द्वारा अपचयन में 8 हाइड्रोजन परमाणुओं का उपयोग होता है । (सत्य / असत्य)

14.12 सारांश (Summary):

नाइट्रोजन सभी सजीवों का महत्त्वपूर्ण घटक है । यह वायुमंडल में मुक्त N_2, तथा मृदा में नाइट्रोजन अमोनिया एवं कार्बनिक पदार्थों के रुप में पायी जाती है । मुक्त नाइट्रोजन, अमोनिया एवं कार्बनिक पदार्थों के रूप में पायी जाती है । मुक्त नाइट्रोजन का भौतिक, रासायनिक एवं जैविक विधि द्वारा स्थिरीकरण होता है।

जैविक नाइट्रोजन स्थिरीकरण मुख्यत: प्रोकेरियोटिक जीवाणु एवं सायनोबैक्टीरिया द्वारा किया जाता है । ये जीव डाइएजोट्रोफ कहलाते हैं । ये जीव मुक्तजीवी अथवा उच्चवर्गीय पादपों के साथ सहजीवी के रुप में पाये जाते हैं । ये डाइएजोट्रोफ में राइजोबियम लेग्यूम सहसंबंध मुख्य है इसके अतिरिक्त नॉस्टॉक एवं एनाबीना अनेक समूहों के पादपों के साथ सहजीवी संबंध स्थापित करते हैं ।राइजोबियम लेग्यूमी पादपों की जड़ों में मूलग्रथिकाओं में रहते हैं । नाइट्रोजन स्थिरीकरण के लिए उत्तरदायी नाइट्रोजिनेज एन्जाइम संकुल अवायवीय परिस्थिति में ही सक्रिय रह सकता है अत: N_2, स्थिरीकरण भी ऐसी परिस्थिति में ही होती है । मूल ग्रंथिकाओं में लेगहींमुाएग्लोबिन ग्रंथिकाओं में O_2 की मात्रा को नियंत्रित करता है जबकि सायनोबैक्टीरिया में हेटेरोसिस्ट एवं अन्य कोशिकाओं में मोटी भित्ति O_2 के भीतर प्रवेश से रोकते हैं ।

नाइट्रोजिनेज संकुल के दो मुख्य घटक होते हैं वृहत मोलिब्डो आयरन प्रोटीन (Mo-Fe protein) अथवा नाइट्रोजिनेज घटक तथा छोटा आयरन (Fe) प्रोटीन-रिडक्टेज घटक । ये दोनों साथ होने पर ही सक्रिय होते हैं तथा इनमें से Mo-Fe प्रोटीन अधिक स्थायी रहती है । विभिन्न सूक्ष्मजीवों में इन प्रोटीनों के अणुभार एवं गुणों में थोड़ी बहुत भिन्नता पाई जाती है ।

नाइट्रोजिनेज एन्जाइम नाइट्रोजन को ग्रहण कर इसे अमोनिया (NH_4^+) में परिवर्तित कर देता है । नाइट्रोजन स्थिरीकरण के लिए एन्जाइम के अतिरिक्त इलेक्ट्रॉन वाहक, हाइड्रोजन दाता

(पाइरवेट, H_2,, ग्लूकोज आदि), ATP एवं कुछ सहकारकों तथा अवायवीय परिस्थिति की आवश्यकता होती है । नाइट्रोजन स्थिरीकरण से प्राप्त NH_4^+ ग्लूटेमिन सिन्थेस एवं ग्लूटमेअ सिन्थेस अथवा ग्लूटेनिन ऑक्सोग्लूटरेट अमीनो ट्रांसफरेस (GOGAT) परिपथ द्वारा अथवा ग्लूटमेट डीहाइड्रोजिनेज (GDH) परिपथ द्वारा स्वांगीकरण होता है तथा उससे अमिनो अम्ल अथवा एमीन बनते हैं जिसका पादप / सूक्ष्मजीव उपभोग करते हैं ।

डाइएजोफ जीवों में से राइजोबियम का सर्वाधिक अध्ययन हुआ है । जिसमें सहजीवन हेतु 'सिम' प्लाज्मिड होता है जिस पर ग्रंथिका निर्माण संबंधी नॉड (nod) जीन, N_2 स्थिरकारी निफ (nif) जीन्स, हाइड्रोजन अंतग्रहण संबंधित हप (hup) जीन एवं अन्य सहयोगी जीन्स भी होते हैं जो सहजीवी संबंध स्थापित करने एवं N_2 स्थिरीकरण में मदद करते हैं ।

वर्तमान में कुछ N_2, स्थिरकारी जीवों को जैवसंरोप्य (bioioculants) के रुप में उपयोग किया जाता है उससे फसल के उत्पादन एवं मृदा में नाइट्रोजनी पदार्थों की मात्रा बढ़ने से मृदा की उर्वरता एवं गुणवत्ता में भी वृद्धि होती है । राइजोबियम को यीस्ट निस्सार मैनीटॉल ब्राथ में संवर्धित कर संरोपण कर्दम बनाकर उनसे लेग्यूमी बीजों को संरोपित किया जाता है । इसी प्रकार एजोटोबेक्टर एवं एजोस्पाइरिलम को भी बीज संरोपण के लिए संवर्धित कर उपयोग किया जाता है । इनके अतिरिक्त एनाबीना, नॉस्टॉक प्लैक्टोनीमा आदि सायनोबैक्टीरिया को भी जल में संवर्धित किया जाता है । उनसे उत्पादन वृद्धि के साथ रोग प्रतिरोध क्षमता भी बढ़ती है ।

14.13 बोध प्रश्नों के उत्तर :

1.C 2.A 3.B 4.C 5.D 6.B 7.C 8.B 9.A 10.C 11.B

12. नाइट्रेट, 13. चतुर्गुणित, 14. अमोनिया, 15. ग्लूकोज $6PO_4$, 16. चतुष्टय,

17. Fe प्रोटीन / Fe-Mo प्रोटीन, 18. हैबर प्रक्रिया, 19.GS-GOGAT, 20. मैटहीमोग्लोबिनेमिया

21. सत्य, 22. सत्य, 23. असत्य, 24. सत्य, 25. असत्य, 26. सत्य

14.14 अभ्यासार्थ प्रश्न (Exerices Questions):

1. नाइट्रोजन का पादपों के लिए क्या महत्त्व है?
2. भौतिक एवं जैविक नाइट्रोजन यौगिकीकरण में क्या अंतर है?
3. N_2 स्थिरीकरण करने वाले दो मुक्तजीवी जीवाणुओं के नाम बताइये ।
4. N_2 स्थिरीकरण करने वाली नील-हरित शैवाल के कुछ उदाहरण दीजिये ।
5. स्थिरीकरण करने वाले सहजीवी संबंध (symbiotic associations) क्या हैं?
6. ग्रंथिकाओं (nodules) के गुलाबी रंग के लिए कौन सा पदार्थ जिम्मेदार हैं?
7. लेग्यूम के सामान्य ग्रंथिका जीवाणु (Common nodule bacterium) की संरचना संक्षिप्त में समझाइये ।
8. जीवाणुसम क्या होते हैं?

9. लेगहीमोग्लोबीन (Leghaemoglobin) क्या होता है '
10. नॉस्टॉक (Nostoc) के हेटेरोसिस्ट व इसके तंतु की अन्य कोशिकाओं में क्या अन्तर है?
11. नॉस्टॉक में N_2 स्थिरीकरण कहां पर होता है?
12. नाइट्रोजन यौगिकीकरण अथवा स्थिरीकरण (nitrogen fixation) से आप क्या समझते है विस्तार से लिखे।
13. सहजीवी नाइट्रोजन यौगिकीकरण के बारे में लिखें ।
14. असहजीवी नाइट्रोजन यौगिकीकरण के बारे में बताइये ।
15. नाइट्रोजिनेज एन्जाइम की प्रक्रिया के बारे में बताइये ।
16. संक्षिप्त टिप्पणी लिखिये
    (i) नाइट्रोजिनेज संकुल
    (ii) राइजोबियम
    (iii) नाइट्रोजन यौगिकीकरण के दौरान इलेक्ट्रॉन स्थानान्तरण
    (iv) नॉड जीन
    (v) निफ जीन
    (vi) नाइट्रोजन स्थिरीकरण विस्थल
17. नाइट्रोजन स्थारक जैवसंरोप्य (bionoculants) के उत्पादन के बारे में संक्षेप में बताइये ।
18. विभिन्न सूक्ष्मजीवों में नाइट्रोजिनेज विकर के बारे में बताइये ।

14.15 शब्दावली (Glossry):

नाइट्रोजन स्थरीकरण	-	Nitrogen fixation
डाइएजोट्रोफ	-	Diazotroph
डाइएजोट्रोफी	-	Diazotrophy
लेगहीमोग्लोबिन	-	Leghaemoglobin
नाइट्रोजिनेज	-	Nitrogease
जीवाणुसम	-	Bacteroids
जैव संरोप्य	-	Biomoculants
हप जीन	-	Hup gene
नॉड जीन	-	Nod gene

14.16 संदर्भ ग्रन्थ (Reference Books):

1. स्प्रेंट, द बायलॉजी ऑफ नाइट्रोजन - फिक्सिंग ऑरगनिज्स मेक्ग्रा-हिल बुक कम्पनी (यू.के.) लि. ।
2. एटलस एवं बर्था, माइक्रोबियल इकोलोजी पियरसन एडूकेशन ।

3. कॉन, स्टम्फ, बुइनिंग एवं डोय आउट लाइन्स ऑफ बॉयोकैमेस्ट्री जॉन विले एण्ड एन्स, न्यूयार्क ।
4. दुबे एवं माहेश्वरी, माइक्रोबॉयोलोजी, एस. चाँद एण्ड कम्पनी लि., नई दिल्ली ।
5. पुरोहित एवं माथुर, बायोटेक्नोलॉजी, एग्रो बोटानिका बीकानेर ।

इकाई 15

पुनर्संयुक्त सूक्ष्मजैविक जैवभार के अनुप्रयोग

(Applications of Recombinant Microbial Biomass)

इकाई की रूपरेखा

15.0 उद्देश्य

15.1 प्रस्तावना

15.2 जीनोबायोटिक्स का सूक्ष्मजैविक अपघटन

15.3 जैव उर्वरक

15.4 समेकित पोषण प्रबन्ध

15.5 सारांश

15.6 बोध प्रश्नों के उत्तर

15.7 शब्दावली

15.8 अभ्यासार्थ प्रश्न

15.9 संदर्भ गन्ध

15.0 उद्देश्य (Objectives):

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप पुर्नसंयुक्त जैवभार से सम्बन्धित निम्न तथ्यों को जान जाएंगे -

1. जीनोबायोटिक्स का सूक्ष्मजीवीय अपघटन
2. जैव उर्वरक के रूप में जैवभार का उपयोग तथा
3. संकलित पोषण प्रबन्ध

15.1 प्रस्तावना (Introduction) :

मानव की विशिष्ट आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए बहुत सारे सूक्ष्मजीवों (विशिष्टतः जीवाणुओं) को जीन अभियांत्रिकी (genetic engineering) तकनीक के माध्यम से रूपान्तरित किया गया । ये जीन अभियांत्रिक या जैव पुर्नसंयुक्त (bio recombinant) जीवाणु बहुत सारे क्षेत्रों में लाभप्रद सिद्ध हुए है जैसे -

1. फसल उत्पादन तथा फसल सुरक्षा
2. जीनोबायोटिक्स का जैव अपघटन
3. ईधन तथा रसायनों का उत्पादन तथा
4. अयस्कों से खनिजों का निष्कर्षण

इस पुर्नसंयोजन तकनीक (recombinant techonolgy) के माध्यम से पर्यावरण में कितने ही लाभदायक कारक विमुक्त किए जा सके है । ये आशा की जाती है कि यदि सुरक्षित रूप से इन जीन अभियांत्रिक सूक्ष्म जीवों को विमुक्त किया जाए तो पर्यावरण तंत्र के प्रबन्धन में ये महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकते हैं ।

ऐसे ही पुर्नसंयुक्त जीवाणुओं के कुछ उदाहरणों एवं उनके लाभ का अध्ययन हम इस अध्याय में करेंगे ।

15.2 जीनोबायोटिक्स का सूक्ष्मजैविक अपघटन (Microbial Biodegradation of Xenobiotics)

जीनोबायोटिक्स ऐसे प्रदूषक रसायनों को कहा जाता है जो प्राकृतिक रुप से किसी जैव तंत्र से उत्पन्न नहीं होते, दूसरे शब्दों में कहा जाए तो विभिन्न मानव निर्मित तंत्रों से उत्पन्न होने वाले घातक रसायनों को जीनोबायोटिक्स कहा जाता है ।

जीनीय रुप से जीवाणुओं को जीनोबायोटिक्स के अपघटन के लिए रूपान्तरित किया जा सकता है । इस हेतु ऐसे अवशिष्टों के ढेर के आसपास से विलगित किए हुए जीवाणुओं से इनके अपघटन के उत्तरदायी जीन को विलगित कर इनका बहुगुणन किया जाता है तथा जीवाणुओं के विभिन्न प्रभेदों को स्थानान्तरित कर जीनोबायोटिक्स के अपघटन हेतु पुर्नसंयुक्त जीवाणु (recombinant bacteria) तैयार कर लिये जाते हैं । ऐसे ही कुछ जीवाणुओं के प्रभेदों की सूची निम्न प्रकार है

	जीवाणु	**अपघटित होने वाले पदार्थ**
1.	स्यूडोमोनॉस केपेसिया (Psedomonas capacia)	2,4,5 ट्राइक्लोरो फीनॉक्सी एसीटिक अम्ल
2.	स्यूडोमोनॉस प्यूटिडा एवं अन्य जातियाँ (P.putida & other spp.) (Also E. coli)	2,2,5डाइक्लोरोप्रोपिऑनेट तथा डाइक्लोरोऐरोथिक्स
3.	एल्केलिजेन्स प्रजातियाँ (Alcaligenes spp.)	डाइक्लोरोफीनोक्सी एसीटिक अम्ल, मिश्रित क्लोरोफीनोलन,1,4डाइक्लोरोबेंजीन
4.	ऐसीनेटोबेक्टर प्रजातियाँ (Acinetobacter sp.	4क्लोरोबेन्तीन

15.3 जैव उर्वरक (Biofertilizer):

उर्वरकों के उपयोग के संदर्भ में भारत विश्व का चौथा देश बन गया है । रासायनिक उर्वरकों की सहायता से यद्यपि हम कृषि उत्पादन में पर्याप्त वृद्धि कर सके हैं किन्तु रासायनिक उर्वरक महंगे होने के साथ-साथ भूमि की उर्वराशक्ति को कम करके पर्यावरण को प्रदूषित -करने का कार्य करते हैं । अत: यह आवश्यक हो जाता है कि हम कुछ ऐसे उर्वरक का प्रयोग करें जिससे इन हानिकारक प्रभावों से बचा जा सकें । जैवउर्वरक ऐसे ही उर्वरक है ।

वायुमण्डल में 79 प्रतिशत नाइट्रोजन गैस अक्रिय अवस्था में विद्यमान है । जीवाणु (राइजोबियम, एजोटोबैक्टर एजोस्पाइरिलम, बेसिलस स्यूडोमोनास, साइनोजीवाणु माइक्रोवाइरस, थायोबैसिलस माइक्रोबैक्टीरिया आदि), एजोला, नील हरित शैवाल, माइकोराइजा आदि इस गैस का स्थिरीकरण कर मृदा व पौधों को पोषण प्रदान करते हैं और इसकी उत्पादकता में वृद्धि करती है । ऐसे सूक्ष्मजीवों को जैव-उर्वरक कहते हैं । ये पौधों के लिए समन्वय आपूर्ति प्रणाली के अन्तर्गत सस्ते एवं सार्थक विकल्प है ।

उर्वरको के रूप में रसायनों के स्थान पर जीवों पर आधारित पदार्थों का उपयोग जैवप्रौद्योगिकी के कृषि में उपयोगों के अन्तर्गत बहुत महत्व रखता है । जैव उर्वरक वास्तव में ऐसे सूक्ष्मजीव, जीवाणु फर्न, शैवाल, कवक आदि है जो खेत में विभिन्न पोषक तत्त्व जैसे नाइट्रोजन, फास्फोरस और सल्फर आदि को वातावरण से प्राप्त करके फसलों को उपलब्ध कराते हैं ।

रासायनिक उर्वरकों के ज्यादा उपयोग से जमीन की उर्वरा शक्ति पर प्रभाव पड़ता है - अत: फसलों की नाइट्रोजन आवश्यकता की पूर्ति के लिए पूर्ण रूप से रासायनिक उर्वरकों पर निर्भर रहना तर्कसंगत नहीं होता इसलिए जैव उर्वरकों का प्रयोग महत्त्वपूर्ण है ।

जैव उर्वरकों को मुख्य रूप से तीन भागों में बांटा जाता है -

(1) नाइट्रोजनयुक्त जैवउर्वरक

(2) फास्फोरसयुक्त जैव उर्वरक

(3) सल्फरयुक्त जैवउर्वरक

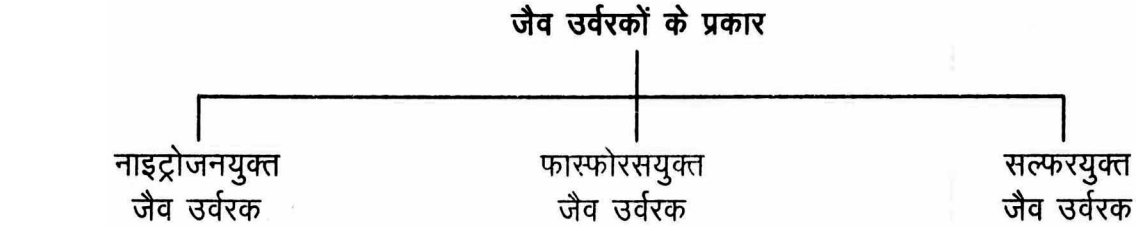

(1) राइजोबियम

दलहन जैसे : अरहर, मूंग उड़द, मटर, लोबिया, सोयाबीन, राजमा, आदि

बैसिलस सूडोमोनास

थायोबेसिलस

माइक्रो वायल

कवक - सभी फसलों मे प्रयुक्त होते हैं

(2) एजोबैक्टर

अनाज जैसे : गेहूँ जौ, ज्वार, बाजरा

तिलहन जैसे - सूरजमुखी, सरसों

सब्जियों जैसे - आलू प्याज, गोभी, बैंगन आदि

वानिकी जैसे - यूकेलिप्टस

बागवनी जैसे - केला, पपीता, अमरूद आदि

अन्य - गन्ना, कपास, तम्बाकू आदि

(3) नील हरित शैवाल

धान (जलमग्न)

(4) एजोस्पाइरिलम

गेहूँ बाजरा, धान, राई, ज्वार, सूरजमुखी, गन्ना, कपास, आलू जूट, तम्बाकू केला, अगर, तरबूज आदि ।

नाइट्रोजन के जैविक संश्लेषण में विभिन्न सूक्ष्मजीव भाग लेते हैं । कुछ सूक्ष्मजीव पौधों में सहजीवनयापन करते हुए नाइट्रोजन को कार्बनिक रूप से संश्लेषित करते हैं जो पौधों द्वारा खनिज लवणों के अवशोषण के बाद ग्रहण कर ली जाती है । नाइट्रोजन जैव उर्वरक में सर्वप्रथम स्थान राइजोबियम का आता है । राइजोबियम सिर्फ दलहनों में नाइट्रोजन का स्थिरीकरण कर पाता है । राइजोबियम के बाद एजोटोबैक्टर, एजोस्पारीलम नील हरित शैवाल और एजोला का स्थान आता है । राइजोबियम सूक्ष्म जीवाणु है जो पौधों की जड़ों में गाँठ बनाते हैं और वायु से नाइट्रोजन ग्रहण कर उसे भूमि में स्थिरीकृत करते हैं । राइजोबियम संवर्धन के माध्यम से बीज शोधन करने से दलहनी फसल के उत्पादन में 10 से 15 प्रतिशत की वृद्धि होती है । उत्तम किस्म के राइजोबियम जैव उर्वरक के उपयोग से सोयाबीन के फसल की उपज लगभग दोगुनी हो जाती है । यह भूमि में 20 से 40 किलोग्राम नाइट्रोजन का स्थिरीकरण करता है । राइजोबियम का एक पैकेट (250 ग्राम) एक एकड भूमि के लिए पर्याप्त होता है ।

प्रभावी राइजोबियम जैव उर्वरक से दलहनी फसलों की नाइट्रोजन आवश्यकता की 80-90 प्रतिशत तक पूर्ति हो जाती है ।

राइजोबियम की निम्न प्रजातियाँ

	प्रसंकर निवेशित समूह	**राइजोबियम प्रजातियों का वर्गीकरण**	**विभिन्न दलहनी फसलें**
1.	मेडी समूह	राइजोबियम मेलीलोटी	लूर्सन (अल्फाल्फा) मेथी
2.	क्लोवर समूह	राइजोबियम ट्राईफोलि	बरसीम, बम मेथी
3.	सेम समूह	राइजोबियम फेजियोलि	सेम, राजमा
4.	मटर समूह	राइजोबियम लेग्यूमिनीसेरम	मटर, मसूर, खेसारी
5.	न्यूपिन समूह	राइजोबियम ल्थूपिनी	ल्यूपिन
6.	सोयाबीन समूह	राइजोबियम जोपोनिकम	सोयाबीन, जंगली सोयाबीन
7.	काउपी समूह	राइजोबियम काउपी	मूँग, मूँगफली, अरहर, उरद, सनई, काबूली चना इत्यादि ।

राइजोबियम प्रजातियों का नया वर्गीकरण

	राइजोबियम प्रजातियाँ	**दलहन प्रजातियाँ**
1.	राइजोबियम लेग्युमिनीसेरम	विसीया समूह, ट्राईफोलिस समूह, फेलियोलत
2.	राइजोबियम मेलीलोटी	मैंडिकागो समूह
3.	राइजोबियम लोटी	लोटस समूह
4.	राइजोबियम फाइडी	ग्लाइसीन (सोयाबीन)
	(ए) ब्रेडी राइजोबियम जोपोनिकम	
	(बी) ब्रेडी राइजोबियम प्रजातियाँ	चना, अरहर, मूँग आदि

नील-हरित शैवाल एक प्रकार की काई है । यह नीले-हरे रंग की होती है, जो वायुमंडल में उपलब्ध लगभग 78 प्रतिशत नाइट्रोजन को जैविक नाइट्रोजन यौगिकीकरण द्वारा अमोनिया में बदल देने की क्षमता रखती है । इस कार्य हेतु ऊर्जा, सूर्य के प्रकाश व एडिनोसिन ट्राईफास्फेट के एडिनोसिन डाइ-फास्फेट में परिवर्तन द्वारा उत्सर्जित फॉस्फेट तथा लोह से प्राप्त होती है । इसलिए नील हरित शैवाल वायुमण्डलीय नाइट्रोजन का यौगिकीकरण कर लगातार धान (जलमग्न) की फसल को नाइट्रोजन उपलब्ध कराता है ।

नील हरित शैवाल एक प्रकर्ति प्रदत्त शैवाल है । इसको जीवाणुओं से अधिक समानता के कारण इसे साइनोजीवाणु भी कहते हैं । इसकी लगभग 40 प्रजातियों में नाइट्रोजन यौगिकीकरण का गुण होता है । इनमें एनाबिना नॉस्टॉक, साइटोनिमा आलोसाइरिया आदि प्रमुख है । नील हरित शैवाल जैव उर्वरक की 12.5 किग्रा. मात्रा प्रति हेक्टेयर का प्रयोग धान की रोपाई के 5-6 दिन बाद स्थिर पानी में करना चाहिए । शैवालीकरण के 4-5 दिन बाद भी पानी खेत में लगा रहना आवश्यक है । इससे फसल को 25-30 किग्रा. नाइट्रोजन प्रति हेक्टेयर प्राप्त हो जाती है । इसके प्रयोग से 12- 13 क्विंटल प्रति हेक्टेयर तक धान की उपज में वृद्धि देखी गई है । नील हरित शैवाल नाइट्रोजन यौगिकीकरण के साथ-साथ सूर्य की ऊर्जा से वायुमण्डलीय कार्बनडाईऑक्साइड को शर्करा में भी परिवर्तित कर देता है ।

एजोला तीव्र गति से विकसित होने वाले फर्न की एक प्रजाति है जो पानी में तैरती रहती है । इसकी पत्तियों की गुहाओं में 'एनाबिना एजोली नामक साइनोबीजाणु निवास करता है यह वायुमण्डल से नाइट्रोजन लेकर पोषक पदार्थों का निर्माण करता है । एजोला 40-60 किग्रा. प्रति हेक्टेयर नाइट्रोजन का यौगिकीकरण करता है ।

एजोटोबैक्टर जीवाणु की खोज 1901 में 'बीजरिंग' ने की थी तथा एजोस्पाइरिलम जीवाणु की खोज 1922 में हालैण्ड के सूक्ष्मजीव वैज्ञानिक ने की थी और 1978 में इसका नाम एजोस्पाइरिलम रखा गया । एजोस्पाइरिलम बाजरा व मक्का आदि में नाइट्रोजन स्थिरीकरण करता है । एजोटोबैक्टर गेहूँ, जौ, बाजरा आदि में नाइट्रोजन स्थिरीकरण का कार्य करता है ।

फास्फोरस घुलनशील सूक्ष्मजीव (पी.सी.बी. फास्फेट सोलुबिलाइजिंग बैक्टीरिया) को जैवप्रौद्योगिकी द्वारा विकसित करने के लिए आनुवंशिक विधियों से जैव उर्वरकों की क्षमता बढ़ाई जा सकती है । बागवानी फसलों में नाइट्रोजन स्थिरीकरण कारकों, जैसे - राइजोबियम, एजोस्पाइरीलम, एजोटोबैक्टर, एजोला तथा कुछ सायनों जीवाणु जैसे नॉस्टॉक तथा एनाबीना की जाति द्वारा

आपूर्ति की जा सकती है । साथ ही फास्फेट घुलनशील जीवाणु स्यूडोमोनास और बेसिलस तथा पेनीसीलियम और एस्पर्जिलस द्वारा आपूर्ति होती है । आम, केला, अनार, पपीता तथा नींबू वर्गीकीय फलों में माइकोराइजा फफूँदी के जीन संरचना का पता लगाया जा रहा है जिससे बागवानी फसलें और अधिक खुशहाल हो सकें । इसी प्रकार लीची में एण्डो माइकोराइजा द्वारा काफी लाभ पहुँचता है ।

भाभा परमाणु अनुसंधान केन्द्र मुम्बई से इस बात पर शोध चल रहा है कि विकिरण का प्रयोग करके दलहन पौधों का कुछ ऐसा रूपान्तरण किया जाए कि यह व्यापक पैमाने पर हवा से मुक्त नाइट्रोजन ग्रहण कर उसे जमीन से संग्रहीत कर सकें । इस क्रम में सेस्बोनिया रास्ट्रेटा नामक फली वाले पौधे का रूपान्तरण किया गया है इस नये पौधों की न केवल जड़ बल्कि तना में भी ऐसी गाँठ मौजूद है जिसमें एजोराइजोबियम कोलिनोडस जीवाणु रहता है । यह नया पौधा 50 दिन के भीतर एक हेक्टेयर भूमि में 120 से व 160 किलोग्राम नाइट्रोजन का संग्रह कर देता है ।

पौधों के पोषक तत्वों में फास्फोरस लवण जल में अघुलनशील होते हैं । अतएव पौधों द्वारा मृदा से ग्रहण किए जाए पोषक पदार्थो में आमतौर से वे मौजूद नहीं होते । विभिन्न जीवाणु जैसे - बेसिलस स्यूडोमोनास माइक्रोबैक्टीरियम, माइक्रोवायल कवक आदि अनुपलब्ध फास्फोरस लवणों को घुलनशील एवं गतिशील बनाने में सहायक है ।

सल्फर जैवउर्वरक में थायोबैसिलस नामक जीवाणु मौजूद होता है जो कार्बनिक सल्फर को अकार्बनिक सल्फर के रूप में परिवर्तित कर पौधों को उपलब्ध कराता है । नाइट्रोजन स्थिरीकरण करने वाला एजोला खेतों के लिए कार्बनिक पदार्थों को उपलब्ध कराने का एक बढ़िया स्रोत है ।

टाटा ऊर्जा शोध संस्थान (TERI) नई दिल्ली के वैज्ञानिकों ने एक ऐसी जैव खाद जिसे वैज्ञानिक भाषा में माइकोराइजा कहते हैं का विकास किया है जो कई प्रकार की सब्जियों, फलों, चारों की फसलों के उत्पादन बढ़ाने में सक्षम होगा । अनुमान के अनुसार उत्पादकता की यह दर 30 से 50 प्रतिशत तक हो सकती है । माइकोराइजा वस्तुत: कवकों का मिश्रण होता है जो स्वयं को पौधों की जड़ों से सम्बन्धित रखकर उनसे एक तरह का सहजीवी सम्बन्ध बना लेता है । वह वायुमण्डल से नाइट्रोजन लेकर उसे पौधों के लिए उपयोगी बनाने का काम लेता है । साथ ही यह फास्फोरस को अवशोषित करने में सहायक होता है । ध्यान रहें कि ये दोनों ही पदार्थ नाइट्रोजन तथा फास्फोरस क्रमश: वायुमण्डल तथा मिट्टी में मौजूद तो रहते हैं, लेकिन इन्हें पौधे प्रत्यक्ष रूप से लेने में समर्थ नहीं होते । लेकिन माइकोराइजा इन पदार्थो को ग्रहण कर उन्हें पौधों को स्थानान्तरित कर देते हैं । टाटा ऊर्जा शोध संस्थान के वैज्ञानिकों ने इस नये जैव खाद की कई विशेषताओं का उल्लेख किया है । इनका मानना है कि इसकी बहुत कम मात्रा का प्रयोग कर ही अच्छी उत्पादकता हासिल की जा सकती है ।

इसमें रासायनिक तत्वों की प्रतिशतता काफी कम होती है इस कारण यह वातावरण के अनुकूल हो बनी रहती है तथा इससे प्रदूषण की सम्भावना कम होती है । यह मिट्टी की क्षमता, उसकी उर्वरता तथा पौधों की जड़ों द्वारा मिट्टी को पकड़ रखने की क्षमता में विशेष रूप से सहायक होती है । यह कई प्रकार के सूक्ष्मजीवों को नष्ट कर पौधों को विभिन्न प्रकार के व्याधियों से बचाने का कार्य करती है । यद्यपि ये कवक वातावरण में मौजूद होते है किन्तु इन्हें जैविक खाद का रूप नहीं दिया जाए तो ये पौधों के लिए उपयोगी नहीं बन पाते हैं ।

15.4 फसलों के लिए समेकित पोषण प्रबन्ध (Integrated nutrient management for Crops):

बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में रासायनिक उर्वरकों के माध्यम से पूरे विश्व में फसल उत्पादन में एक महती वृद्धि अर्जित की । दुर्भाग्यवश इस उपलव्यि के साथ मृदा के सूक्ष्मजीवी तथा पोषण अपघटनों के उन्नयन के लिए कोई महत्त्वपूर्ण कदम नहीं उठाया गया । फसल उत्पादन में किसानों ने अपेक्षाकृत महंगे फॉस्फेट (P) तथा पौटेशियम (K) उर्वरकों का उपयोग भी कम किया परिणामस्वरूप मृदा में कितने ही पोषक तत्वों की क्रमशः कमी होती चली गई । इन सभी कारकों की वजह से रासायनिक उर्वरकों का उपयोग कम करने तथा जैव उर्वरक, फसल अवशिष्ट एवं कार्बनिक खाद में संयुक्त उपयोग को बढ़ाने के सुझाव वैज्ञानिकों ने दिए । यह प्रस्तावित विधि ही 'समेकित पोषण प्रबन्ध' (Integrated Nutrient Management) कहलाती है ।

समेकित पोषण प्रबन्ध एक ऐसी विधि है जिसमे पोषण प्रदान करने हेतु विभिन्न स्रोतों को ईष्टतम् (optimum) अनुपात में काम में लेते हैं । यह एक तुलनात्मक रूप से सरल विधि है जो न सिर्फ रासायनिक खादों का उपयोग कम करता है बल्कि मृदा की उर्वरकता और कृषक का लाभ भी बढ़ाता है । संकलित पोषण प्रबन्ध हेतु निम्न पाँच सिद्धान्त सुझाए गए हैं ।

1. फसल उत्पादन कम हुए रसायनों का मृदा में पुर्नःस्थापन ।
2. मृदा में हयूमस स्तर को बरकरार रखना ।
3. खरपतवार, कीट तथा रोगों से बचाव ।
4. मृदा की अम्लता तथा विषाक्तता नियंत्रण
5. मृदा अपरदन का नियंत्रण

समेकित पोषण प्रबंधक के हेमरसन (Hamersen 1995) ने निम्न उद्देश्य बताए -

1. उत्पादन सत्र में, मृदा में मौजूद प्रत्येक पोषण स्रोत की उपलब्धता बढ़ाना ।
2. फसल की पोषण माँग का निर्धारण तथा उसका मृदा क्षमता से तुलना कर बाहय स्रोत से पोषण आपूर्ति ।
3. मृदा - सजीव अंतः-क्रिया का ईष्टतमीकरण (optimization)
4. मृदा से पोषण पदार्थों की हानि को रोकना तथा रासायनिक उर्वरकों के पर्यावरण पर हानिकारक प्रभावों को कम करना ।

समेकित पोषण प्रबन्धन हेतु हालांकि रासायनिक उर्वरकों को काम में लेने की सलाह नहीं दी जाती है फिर भी मृदा परीक्षण के आधार N:P:K के आवश्यकता आधारित उपयोग का सुझाव दिया जाता है । प्रयोगों के आधार पर यह भी देखा गया है कि उर्वरकों के साथ 50% मात्रा में फसल अपशिष्ट भी फसल उत्पादन में अच्छे परिणाम देते हैं । भातरवर्ष में तो कार्बनिक अपशिष्ट जैसे गोबर, बोन मील, घरेलू अवशिष्ट आदि के खाद के रूप में उपयोग की विरासत रही है । हरित खाद के रूप में शिम्ब फलों के अपशिष्ट भी समेकित पोषण प्रबन्ध के महत्त्वपूर्ण भाग है। वर्तमान युग में वर्मीकम्पोस्ट के रूप में समेकित पोषण प्रबन्धन को नए आयाम मिले हैं जो गन्ने जैसे फसलों के लिए ज्यादा उपयोगी है ।

15.5 सारांश (Summary):

पुनर्संयुक्त जैव भार, सूक्ष्मजीवों के उपयोगों के क्लेवर को बढ़ाता है । जैव भार के इस रूपान्तरित रूप के उपयोग से उन सभी क्षेत्रों में भी जैव भार को उपयोगी बनाया है जिनमें अभी तक इसे अनुपयोगी समझा जाता था ।

जैव उर्वरक के रूप में उपयोग ने जहाँ रासायनिक उर्वरकों के हानिकारक प्रभावों से बचाया है वहीं समेकित पोषण प्रबन्ध ने तो कृषि उत्पादन को नयी ऊचाईयाँ प्रदान की है । जीनोबायोटिक्स के जैव अपघटन के रूप में पर्यावरणीय समस्याओं से निबटने में एक महत्त्वपूर्ण उपचार के रूप में पुनर्संयुक्त जैव भार सामने आया है ।

15.6 बोध प्रश्नों के उत्तर :

1. B
2. D
3. A
4. सत्य
5. असत्य

15.7 अभ्यासार्थ प्रश्न (Exercies Question):

1. जीनोबायोटिक्स को परिभाषित करें ।
2. जैव उर्वरक से आप क्या समझते हैं ? विभिन्न प्रकार के जैव उर्वरकों पर एक विस्तृत लेख लिखें ।
3. समेकित पोषण प्रबन्ध क्या है? टिप्पणी लिखिये ।

15.8 शब्दावली (Glossary):

पुनर्संयुक्त जैव भार	-	Recombinant Biomass
जीनोबायोटिक्स	-	Xenobiotics
जैवउर्वरक	-	-Biofertilizer
समेकित पोषण प्रबन्ध	-	Integrated Nutrient Management

15.9संदर्भ ग्रन्थ (Reference Books):

1. केसिडा इण्डस्ट्रियल माइक्रोबायोलोजी, न्यू एज इन्टरनेशनल (प्रा.) लि. पब्लिशर्स, नई दिल्ली ।
2. दुबे एवं माहेश्वरी, टैक्सट बुक ऑफ माइक्रोबायोलॉजी, एस. चाँद एण्ड कं., नई दिल्ली ।
3. गुप्ता, एलीमेन्टस ऑफ बायोटेक्नोलॉजी, रास्तोगी पब्लिकेशन्स, मेरठ ।